

1605  
बृहत्स्तोत्ररत्नाकरः

== प्रथमो भागः == Pl. I

स्तोत्रसंख्या २११

Acc. No.

1605



नारायण राम आचार्य, काव्यतीर्थ

इत्येतैः संकलय्य संशोधितः

Sa 2 B h

Ach

चतुर्दशं संस्करणम् १९५२

निर्णयसागर प्रेस, मुंबई २

मूल्यं ३ रूप्यकाः

[ All rights reserved ]

— प्रिंटर पब्लिशर —

श्रीमती लक्ष्मीबाई नारायण चौधरी, निर्णयसागर प्रेस,  
२६।२८ कोलभाट स्ट्रीट, मुंबई नं. २

CENTRAL

LIBRARY

Acc. No. 1605

Date. 4-6-54

Call No. 5a 200k / Ach



## निवेदन



कलौ पापैकबहुले धर्मानुष्ठानवर्जिते ।

नामानुकीर्तनं मुक्त्वा नृणां नान्यत्परायणम् ॥

—ब्रह्मांडपुराण.

इस धर्म-आन्वारहीन कलियुगमें सांसारिक दुःखसे छुटनेका सिर्फ एकमेव साधन—भगवान् का नामग्रहण है, और कोई नहीं. चार तरहके लोग इस साधनका उपयोग करते हैं; गीतामें श्रीकृष्ण भगवानने भी कहा है: 'चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन'—आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी ये चार किसमके भक्त मेरा ध्यान, पूजन या स्तवन करते हैं. जैसे आर्त—ग्राहग्रस्त गजेन्द्र, द्यूतसभामें अपना अंगवस्त्र खींचनेपर लाजके मारे पुकार करती हुयी सती द्रौपदी; जिज्ञासु—मुचुकुंद, राजा जनक और उद्धव; अर्थार्थी—अचल सर्वोत्तम स्थानका अभिलाषी परम भक्त ध्रुव, विभीषण, सुग्रीव; ज्ञानी—नारद, सनकादिक, शुक, और पृथु. भगवानने इन सभीको 'ये यथा मां प्रपद्यन्ते, तांस्तथैव भजाम्यहम्' इस अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार अभयदान देकर तुरंत मुक्त किये हैं. यह नितांत भक्तियुक्त स्तुतिका परिणाम है. इस ग्रंथमें ऐसी सेकड़ों स्तोत्रें हैं जो भक्तिभावसे पठनेवालेका मनोरथ जल्द पूर्ण करनेमें समर्थ हैं. इन स्तोत्रोंका पाठ ऐहिक ऋद्धि-सिद्धिकी प्राप्ति और विपत्तिमें फँस हुए शङ्खशको तुरंतही बचानेवाला है और पारत्रिक सिद्धिके लिए तो इसके सरिखा अन्य कोई उपायही नहीं है.

इस समय स्तोत्रोंकी संख्या बढ़नेके कारण इस ग्रंथको दो भागोंमें विभक्त करना क्रमप्राप्त हुआ है. प्रथम भागमें गणेश विष्णु, शिव, गायत्री, सूर्य, कार्तिकेय और देवी (अपूर्ण) इन स्तोत्रोंका संग्रह किया है और दूसरे भागमें लक्ष्मी, सरस्वती, नवग्रह, दत्तात्रेय, दस अवतार, गंगाप्रभृति पवित्र तीर्थ, पांडुरंग और वेदांत वगैरा एवं अनुभवसिद्ध स्तोत्रोंका अठारह पुराण तथा उपपुराण आदि ग्रंथोंसे चुन चुन कर संग्रह किया है.

इस चौदहवाँ संस्करणमें प्राचीन हस्तलिखित और अलभ्य ग्रंथोंके सहायसे अत्यंत रहस्यमय एवं तुरंत लाभप्रद सैंकड़ों स्तोत्रोंका समावेश किया है. अत एव हमें पूर्ण श्रद्धा है, कि यह संस्करण सर्वोपयोगी एवं सर्वप्रिय अवश्य होगा.

**नारायण राम आचार्य**

# बृहत्स्तोत्ररत्नाकरानुक्रमः ।

( प्रथमो भागः )

स्तोत्रनाम	पृ.	स्तोत्रनाम	पृ.
मंगलाचरणम्	१	१७ गणेशशतनामार्चन-	
❧ १ गणेशस्तोत्राणि ❧		स्तोत्रम्	३४
१ गणेशन्यासः	३	१८ दुण्डिभुजंगप्रयात-	
२ गणेशकवचम्	४	स्तोत्रम्	३७
३ गणेशमानसपूजा	६	१९ विघ्ननिवारकं गणपति-	
४ गणेशबाह्यपूजा	१३	स्तोत्रम्	३८
५ गणेशमहिम्नः स्तोत्रम्	१७	२० मयूरेश्वरस्तोत्रम्	३९
६ गणेशाष्टोत्तरशतनाम-		❧ २ विष्णुस्तोत्राणि ❧	
स्तोत्रम्	२१	२१ नारायणवर्म	४२
७ संकष्टनाशनगणेश-		२२ विष्णुपञ्जरस्तोत्रम्	४५
स्तोत्रम्	२२	२३ श्रीमदच्युताष्टकम्	४७
८ गणेशाष्टकम्	२३	२४ अच्युताष्टकम्	४८
९ एकदन्तस्तोत्रम्	२५	२५ आचार्यकृतषट्पदी	४८
१० महागणपतिस्तोत्रम्	२६	२६ मधुसूदनस्तोत्रम्	४९
११ गणेशद्वादशनामस्तोत्रम्	२९	२७ विष्णुस्तवराजः	५०
१२ गणेशस्तवराजः	२९	२८ विष्णवष्टकम्	५२
१३ गणेशपंचरत्नस्तोत्रम्	३०	२९ नारायणस्तोत्रम्	५३
१४ गजाननस्तोत्रम्	३१	३० विष्णुभुजंगप्रयात-	
१५ गणपतिस्तवः	३२	स्तोत्रम्	५४
१६ गणेशभुजंगप्रयातम्	३३	३१ जितं ते स्तोत्रम्	५६

स्तोत्रनाम	पृ.
३२ मुकुन्दमाला	६४
३३ भगवच्छरणस्तोत्रम्	६६
३४ परमेश्वरस्तुतिसार- स्तोत्रम्	६८
३५ हरिनाममालास्तोत्रम्	७०
३६ विष्णुशतनामस्तोत्रम्	७१
३७ शालिग्रामस्तोत्रम्	७२
३८ विष्णुपादादिकेशान्त- वर्णनस्तोत्रम्	७४
३९ विष्णोरष्टाविंशतिनाम- स्तोत्रम्	८१
४० अच्युतनामाष्टकम्	८२
४१ श्रीविष्णोः षोडशनाम- स्तोत्रम्	८२
४२ हरिमीडेस्तोत्रम्	८३
४३ श्रीविष्णुमहिम्नः स्तोत्रम्	८६
४४ श्रीहरिस्तोत्रम्	९०
४५ श्रीहरिनामाष्टकम्	९१
४६ श्रीहरिशरणाष्टकम्	९२
४७ श्रीवीनबन्धवष्टकम्	९३
४८ श्रोगोविंदाष्टकम्	९४
४९ रमापत्यष्टकम्	९५
५० कमलापत्यष्टकम्	९५
५१ संकष्टनाशनविष्णु- स्तोत्रम्	९६

स्तोत्रनाम	पृ.
५२ नारायणहृदयम्	९७
५३ भगवद्ध्यानसोपानम्	९९
५४ श्रीनाराणाष्टोत्तरशतनाम- स्तोत्रम्	१०१
५५ त्रैलोक्यमंगलकवचम्	१०३
५६ विष्णोरपामार्जन स्तोत्रम्	१०६
५७ लक्ष्मीनृसिंहाष्टोत्तरशत- नामस्तोत्रम्	११६
५८ श्रीमद्वादशस्तोत्रम्	११७
५९ संकष्टनाशनलक्ष्मीनृसिंह- स्तोत्रम्	१२६
६० गोविन्दाष्टकम्	१२७
६१ लक्ष्मीनरसिंहपंचरत्न- स्तोत्रम्	१२८
६२ ध्रुवकृता भगवत्स्तुतिः	१२९
६३ शिवकृतं भगवत्स्तोत्रम्	१३१
६४ अभीतिस्तवः	१३३
६५ मुरारिपंचरत्नम्	१३७
६६ श्रीहरिप्रातःस्मरणम्	१३७
६७ जगन्नाथाष्टकम्	१३८
६८ रमापतिस्मरणम्	१३९
६९ जगन्नाथपंचकम्	१४०
७० भक्तेच्छापूर्तिकरं हरिस्तोत्रम्	१४०

स्तोत्रनाम	पृ.
ॐ ३ शिवस्तोत्राणि ॐ	
७१ शिवकवचस्तोत्रम्	१४३
७२ शिवमानसपूजा	१४८
७३ शिवापराधक्षमापन- स्तोत्रम्	१४९
७४ शिवताण्डवस्तोत्रम्	१५१
७५ शिवमहिम्नः स्तोत्रम्	१५२
७६ शिवपंचाक्षरस्तोत्रम्	१५७
७७ शिवषडक्षरस्तोत्रम्	१५७
७८ उपमन्युकृतशिव- स्तोत्रम्	१५८
७९ द्वादशज्योतिर्लिंग- स्तोत्रम्	१६०
८० शिवभुजंगस्तोत्रम्	१६१
८१ शिवस्तोत्रम्	१६२
८२ महारुद्रस्तोत्रम्	१६३
८३ वेदसारशिवस्तवः	१६४
८४ लिङ्गाष्टकस्तोत्रम्	१६५
८५ सदाशिवेन्द्रस्तुतिः	१६६
८६ शिवस्तुतिः	१६९
८७ अनादिकल्पेश्वर- स्तोत्रम्	१७०
८८ शिवानन्दलहरी	१७१
८९ सदाशिवपञ्चरत्नम्	१७३

स्तोत्रनाम	पृ.
९० पशुपत्यष्टकम्	१७३
९१ विश्वेश्वरनीराजनम्	१७४
९२ विश्वनाथाष्टकम्	१७५
९३ शिवनामावल्यष्टकम्	१७६
९४ प्रदोषस्तोत्राष्टकम्	१७७
९५ चंद्रशेखराष्टकम्	१७८
९६ निर्वाणदशकम्	१७९
९७ शिवरक्षास्तोत्रम्	१८०
९८ महामृत्युञ्जयस्तोत्रम्	१८१
९९ मृत्युञ्जयमानसपूजा- स्तोत्रम्	१८२
१०० काशीविश्वनाथ- स्तोत्रम्	१८६
१०१ शिवाष्टोत्तरनाम- शतकम्	१८९
१०२ शिवस्तवराजः	१९०
१०३ गौरीगिरीशस्तोत्रम्	१९५
१०४ शिवपादादिकेशान्तः वर्णनस्तोत्रम्	१९७
१०५ अर्धनारीनटेश्वर- स्तोत्रम्	२०२
१०६ शिवकेशादिपादान्तः वर्णनस्तोत्रम्	२०३
१०७ अपराधभंजन- स्तोत्रम्	२०७

स्तोत्रनाम	पृ.
१०८ निर्वाणषट्कम्	२१०
१०९ भक्तशरणस्तोत्रम्	२११
११० श्रीकालांतकाष्टकम्	२११
१११ श्रीशंभुस्तवः	२१२
११२ परमात्माष्टकम्	२१२
११३ शिवजयवादस्तोत्रम्	२१३
११४ कालभैरवाष्टकम्	२१४
११५ शिवभुजङ्गप्रयात- स्तोत्रम्	२१५
११६ शङ्कराष्टकम्	२१६
११७ हिमालयकृतशिव- स्तोत्रम्	२१७
११८ शिवाष्टकम्	२१८
११९ द्वादशज्योतिर्लिंग- स्मरणम्	२१९
१२० दारिद्र्यदहनशिव- स्तोत्रम्	२१९
१२१ ईश्वरप्रार्थनास्तोत्रम्	२२०
१२२ कलिकृतशिव- स्तोत्रम्	२२१
१२३ सदाशिवाष्टकम्	२२१
१२४ अक्षितकृतशिव- स्तोत्रम्	२२२

स्तोत्रनाम	पृ.
१२५ चन्द्रचूडालाष्टकम्	२२३
१२६ शिवभक्तिकल्पलता- स्तोत्रम्	२२४
१२७ सुवर्णमालास्तुतिः	२२६
१२८ विश्वेशलहरी	२२९
१२९ विष्णुकृतशिव- स्तोत्रम्	२३३
१३० चन्द्रमौलीश- स्तोत्रम्	२३४
१३१ जन्मसागरोत्तारण- स्तोत्रम्	२३५
१३२ अभिलाषाष्टक- स्तोत्रम्	२३५
१३३ श्रीदूर्वेशस्तोत्रम्	२३७
१३४ शशांकमौलीश्वर- स्तोत्रम्	२३७
१३५ विश्वमूर्तिस्तोत्रम्	२३८
१३६ भवभंजनस्तोत्रम्	२३८
१३७ अष्टमूर्तिस्तोत्रम्	२३९
१३८ इन्दुमौलिस्मरण- स्तोत्रम्	२४०
१३९ ईशानस्तवः	२४०
ॐ ४ गायत्रीस्तोत्राणि ॐ	
१४० गायत्रीशापोद्धार- स्तोत्रम्	२४३

स्तोत्रनाम	पृ.
१४१ गायत्रीकवचम्	२४४
१४२ गायत्रीस्तोत्रम्	२४७
१४३ गायत्रीकवचम्	२४९
१४४ सावित्रीपञ्जरस्तोत्रम्	२५३
१४५ गायत्रीस्तोत्रम्	२५८
१४६ गायत्रीनामाष्टा- विंशतिस्तोत्रम्	२६०
१४७ गायत्रीहृदयस्तोत्रम्	२६२
१४८ गायत्रीस्तवराजः	२६६
१४९ गायत्रीस्तोत्रम्	२७०
❧ ५ सूर्यस्तोत्राणि ❧	
१५० त्रैलोक्यसंगलं सूर्य- कवचम्	२७३
१५१ आदित्यहृदयम्	२७४
१५२ सूर्यकवचस्तोत्रम्	२८७
१५३ अगस्त्योक्तमादित्य- हृदयम्	२८८
१५४ सूर्यस्तोत्रम्	२९०
१५५ सूर्याष्टोत्तरशतनाम- स्तोत्रम्	२९१
१५६ युधिष्ठिरकृतं सूर्य- स्तोत्रम्	२९२
१५७ सूर्यशतकम्	२९५
१५८ सूर्यायास्तोत्रम्	३१०

स्तोत्रनाम	पृ.
१५९ सूर्याष्टकम्	३११
१६० साम्बपञ्चाशिका	३११
१६१ सूर्यस्तोत्रम्	३१८
१६२ सूर्याथर्वशीर्षम्	३१९
❧ ६ कार्तिकेयस्तोत्राणि ❧	
१६३ सुब्रह्मण्यस्तोत्रम्	३२१
१६४ सुब्रह्मण्यभुजंग- प्रयातम्	३२१
१६५ कार्तिकेयस्तोत्रम्	३२३
१६६ सुब्रह्मण्याष्टकम्	३२४
१६७ सुब्रह्मण्याष्टोत्तरशत- नामस्तोत्रम्	३२५
❧ ७ देवीस्तोत्राणि ❧	
१६८ देव्यथर्वशीर्षम्	३२७
१६९ देव्यपराधक्षमापन- स्तोत्रम्	३२९
१७० आनन्दलहरी	३३१
१७१ त्रिपुरसुंदरीस्तोत्रम्	३३३
१७२ शीतलाष्टकम्	३३४
१७३ वाराहीनिग्रहाष्टकम्	३३५
१७४ वाराह्यनुग्रहाष्टकम्	३३६
१७५ चण्डीकवचम्	३३७
१७६ अर्गलास्तोत्रम्	३४०

स्तोत्रनाम	पृ.	स्तोत्रनाम	पृ.
१७७ भगवत्याः कीलक-		१९७ नवरत्नमालिका	३९३
स्तोत्रम्	३४२	१९८ मीनाक्षीपंचरत्न-	
१७८ पुराणोक्तं रात्रि-		स्तोत्रम्	३९४
सूक्तम्	३४३	१९९ मीनाक्षीस्तोत्रम्	३९५
१७९ शक्रादिकृता देवी-		२०० देवीशतकम्	३९६
स्तुतिः	३४४	२०१ त्रिपुरसुन्दरीप्रातः-	
१८० नारायणीस्तुतिः	३४७	स्मरणम्	४०४
१८१ ललितासहस्रनाम	३५१	२०२ त्रिपुरसुन्दरीसाञ्जिध्य-	
१८२ भगवत्यष्टकम्	३७२	स्तवः	४०६
१८३ संकष्टनाशनस्तोत्रम्	३७३	२०३ त्रिपुरसुन्दरीषोडशोप-	
१८४ श्रीकुञ्जिकास्तोत्रम्	३७५	चारपूजा	४०८
१८५ लघुसप्तशतीस्तोत्रम्	३७६	२०४ त्रिपुरसुन्दरीविजय-	
१८६ देवीक्षमापनस्तोत्रम्	३७८	स्तवः	४०९
१८७ अंबाष्टकम्	३७८	२०५ त्रिपुरसुन्दरीपुष्पाञ्जलि-	
१८८ भ्रमरांबास्तोत्रम्	३७९	स्तवः	४११
१८९ तांत्रिकं देवीसूक्तम्	३८१	२०६ त्रिपुरसुन्दरीचक्रराज-	
१९० प्राधानिकरहस्यम्	३८३	स्तवः	४१३
१९१ वैकृतिकं रहस्यम्	३८५	२०७ त्रिपुरसुन्दर्यपराधक्षमा-	
१९२ मूर्तिरहस्यम्	३८७	पनस्तवः	४१५
१९३ भगवतीस्तोत्रम्	३८९	२०८ त्रिपुरसुन्दरीवेदसार-	
१९४ देव्यष्टकम्	३९०	स्तवः	४१७
१९५ देवीस्तोत्रम्	३९०	२०९ श्रेयस्करीस्तोत्रम्	४१९
१९६ कल्याणवृष्टिस्तवः	३९१	२१० दुर्गापदुद्धारस्तोत्रम्	४२०
		२११ वाग्वादिनीस्तोत्रम्	४२१



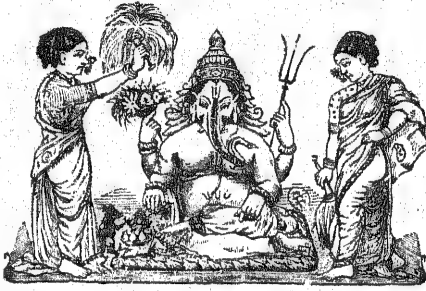
गणेश - विष्णु - शिव - गायत्री - सूर्य - कार्तिकेय - देवी -  
लक्ष्मी - सरस्वती - नवग्रह - दत्तात्रेय - अवतार -  
राम - हनुमत् - कृष्ण - पाण्डुरङ्ग - गंगा -  
वेदान्त - संकीर्ण - स्तोत्राणां -  
समुच्चयात्मको

भागद्वयात्मको  
बृहत्स्तोत्ररत्नाकरः

(प्रथमो भागः)

स्तोत्रसंख्या २११

## गणेशस्तोत्राणि ।



कल्याणं वो विधत्तां करटमदधुनीलोलकल्लोलमाला-  
खेलल्लोलंबकोलाहलमुखरितदिवचक्रवालांतरालम् ।  
प्रत्नं वेतंडरत्नं सततपरिचलत्कर्णतालप्ररोह-  
द्वातांकूराजिहीर्षादरविवृतफणाशृंगभूषाभुजंगम् ॥

# बृहत्स्तोत्ररत्नाकरः

## मंगलाचरणम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ स जयति सिंधुरवदनो  
देवो यत्पादपंकजस्मरणम् । वासरमणिरिव तमसां राशिं नाशयति  
विघ्नानाम् ॥ १ ॥ सुमुखश्चैकदंतश्च कपिलो गजकर्णकः । लंबो-  
दरश्च विकटो विघ्ननाशो गणाधिपः ॥ २ ॥ धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो  
भालचंद्रो गजाननः । द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुया-  
दपि ॥ ३ ॥ विद्यारंभे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा । संग्रामे  
संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥ ४ ॥ शुक्लांबरधरं देवं शशिवर्णं  
चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ ५ ॥ व्यासं  
वासिष्ठनक्षत्रं शक्तेः पौत्रमकल्मषम् । पराशरात्मजं वंदे शुक्लातं  
तपोनिधिम् ॥ ६ ॥ व्यासाय विष्णुरूपाय व्यासरूपाय विष्णवे ।  
नमो वै ब्रह्मनिधये वासिष्ठाय नमो नमः ॥ ७ ॥ अचतुर्वदनो  
ब्रह्मा द्विबाहुरपरो हरिः । अभाललोचनः शंभुर्भगवान् बादरा-  
यणः ॥ ८ ॥

## अथ गणेशस्तोत्राणि

### १. गणेशन्यासः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ आचम्य प्राणायामं कृत्वा, दक्षिणहस्ते  
चक्रतुंडाय नमः । वामहस्ते शूर्पकर्णाय नमः । ओष्ठे विघ्नेशाय  
नमः । अधरोष्ठे चिंतामणये नमः । संपुटे गजाननाय नमः ।  
दक्षिणपादे लंबोदराय नमः । वामपादे एकदंताय नमः ।

शिरसि एकदंताय नमः । चिबुके ब्रह्मणस्पतये नमः । दक्षिण-  
नासिकायां विनायकाय नमः । वामनासिकायां ज्येष्ठराजाय नमः ।  
दक्षिणनेत्रे विकटाय नमः । वामनेत्रे कपिलाय नमः । दक्षिणकर्णे  
धरणीधराय नमः । वामकर्णे आशापूरकाय नमः । नाभौ महो-  
दराय नमः । हृदये धूम्रकेतवे नमः । ललाटे मयूरेशाय नमः ।  
दक्षिणबाहौ स्वानंदवासकारकाय नमः । वामबाहौ सच्चित्सुख-  
धात्रे नमः ॥ इति गणेशन्यासः ॥

## २. गणेशकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः । गौर्युवाच । एषोऽतिचपलो दैत्यान्बाल्येऽपि  
नाशयत्यहो । अग्रे किं कर्म कर्तेति न जाने मुनिसत्तम ॥ १ ॥  
दैत्या नानाविधा दुष्टाः साधुदेवद्रुहः खलाः । अतोऽस्यकंठे किंचित्त्वं  
रक्षार्थं बद्धुमर्हसि ॥ २ ॥ मुनिरुवाच ॥ ध्यायेत्सिंहगतं विनायक-  
ममुं दिग्बाहुमाद्ये युगे त्रेतायां तु मयूरवाहनममुं षड्बाहुकं  
सिद्धिदम् । द्वापारे तु गजाननं युगभुजं रक्तांगरागं विभुं तुर्यं  
तु द्विभुजं सितांगरुचिरं सर्वार्थदं सर्वदा ॥ ३ ॥ विनायकः  
शिखां पातु परमात्मा परात्परः । अतिसुंदरकायस्तु मस्तकं  
सुमहोत्कटः ॥ ४ ॥ ललाटं कश्यपः पातु भ्रूयुगं तु महोदरः ।  
नयने भालचंद्रस्तु गजास्यस्त्वोष्ठपल्लवौ ॥ ५ ॥ जिह्वां पातु गण-  
क्रीडश्चिबुकं गिरिजासुतः । वाचं विनायकः पातु दंतान् रक्षतु  
विघ्नहा ॥ ६ ॥ श्रवणौ पाशपाणिस्तु नासिकां चितितार्थदः ।  
गणेशस्तु मुखं कंठं पातु देवो गणजयः ॥ ७ ॥ स्कंधौ पातु  
गजस्कंधः स्तनौ विघ्नविनाशनः । हृदयं गणनाथस्तु हेरंबो जठरं  
महान् ॥ ८ ॥ धराधरः पातु पाश्र्वौ पृष्ठं विघ्नहरः शुभः । लिंगं

गुह्यं सदा पातु वक्तुंढो महाबलः ॥ ९ ॥ गणक्रीडो जानुजंघे  
 ऊरु मंगलमूर्तिमान् । एकदंतो महाबुद्धिः पादौ गुल्फौ सदाऽ-  
 वतु ॥ १० ॥ क्षिप्रप्रसादनो बाहू पाणी आशाप्रपूरकः । अंगुलीश्च  
 नखान्पातु पद्महस्तोऽरिनाशनः ॥ ११ ॥ सर्वाङ्गानि मयूरेशो  
 विश्वव्यापी सदाऽवतु । अनुक्तमपि यत्स्थानं धूम्रकेतुः सदाऽ-  
 वतु ॥ १२ ॥ आमोदस्त्वग्रतः पातु प्रमोदः पृष्ठतोऽवतु । प्राच्यां  
 रक्षतु बुद्धीश आग्नेय्यां सिद्धिदायकः ॥ १३ ॥ दक्षिणस्यामुमापुत्रो  
 नैर्ऋत्यां तु गणेश्वरः । प्रतीच्यां विघ्नहर्ताऽव्याध्यायव्यां गज-  
 कर्णकः ॥ १४ ॥ कौबेर्यां निधिपः पायादीशान्यामीशनंदनः ।  
 दिवाऽव्यादेकदंतस्तु रात्रौ संध्यासु विघ्नहृत् ॥ १५ ॥ राक्षसा-  
 सुरवेतालग्रहभूतपिशाचतः । पाशांकुशधरः पातु रजःसत्त्वतमः-  
 स्मृतिः ॥ १६ ॥ ज्ञानं धर्मं च लक्ष्मीं च लज्जां कीर्तिं तथा  
 कुलम् । वपुर्धनं च धान्यं च गृहान्दाराः सुतान् सखीन् ॥ १७ ॥  
 सर्वायुधधरः पौत्रान् मयूरेशोऽवतात्सदा । कपिलोऽजाविकं पातु  
 गजाश्वान्विकटोऽवतु ॥ १८ ॥ भूर्जपत्रे लिखित्वेदं यः कंठे धारये-  
 त्सुधीः । न भयं जायते तस्य यक्षरक्षःपिशाचतः ॥ १९ ॥ त्रिसंध्यं  
 जपते यस्तु वज्रसारतनुर्भवेत् । यात्राकाले पठेद्यस्तु निर्विघ्नेन  
 फलं लभेत् ॥ २० ॥ युद्धकाले पठेद्यस्तु विजयं प्राप्नुयाद्भुतम् ।  
 मारणोच्चाटनाकर्षस्तंभमोहनकर्मणि ॥ २१ ॥ सप्तवारं जपेदेतद्दिना-  
 नामेकविंशतिम् । तत्फलमवाप्नोति साधको नात्र संशयः ॥ २२ ॥  
 एकविंशतिवारं च पठेत्तावद्दिनानि यः । कारागृहगतं सद्यो राज्ञा  
 वध्यं च मोचयेत् ॥ २३ ॥ राजदर्शनवेलायां पठेदेतद्विवारतः ।  
 स राजानं वशं नीत्वा प्रकृतीश्च सर्वां जयेत् ॥ २४ ॥ इदं  
 गणेशकवचं कश्यपेन समीरितम् । मुद्रलाय च तेनाथ मांडव्याय

महर्षये ॥ २५ ॥ मह्यं स प्राह कृपया कवचं सर्वसिद्धिदम् । न  
देयं भक्तिहीनाय देयं श्रद्धावते शुभम् ॥ २६ ॥ यस्यानेन कृता  
रक्षा न बाधाऽस्य भवेत्कचित् । राक्षसासुरचेतालदैत्यदानव-  
संभवा ॥ २७ ॥

इति श्रीगणेशपुराणे गणेशकवचं संपूर्णम् ॥

### ३. गणेशमानसपूजा ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीसर्वप्रदाय नमः ॥ गृत्समद उवाच । विघ्नेश-  
वीर्याणि विचित्रकाणि बन्दीजनैर्मागधकैः स्मृतानि । श्रुत्वा समुत्तिष्ठ  
गजानन त्वं ब्राह्मे जगन्मंगलकं कुरुष्व ॥ १ ॥ एवं मया  
प्रार्थितो विघ्नराजश्चित्तेन चोत्थाय बहिर्गणेशः । तं निर्गतं वीक्ष्य  
नमन्ति देवाः शंभवादयो योगिमुखास्तथाहम् ॥ २ ॥ शौचादिकं  
ते परिकल्पयामि हेरंब वै दंतविशुद्धिमेवम् । वस्त्रेण संप्रोक्ष्य  
मुखारविंदं देवं सभायां विनिवेशयामि ॥ ३ ॥ द्विजादि सर्वै-  
रभिवंदितं च शुकादिभिर्मोदसुमोदकाद्यैः । संभाष्य चालोक्य  
समुत्थितं तं सुमंडपं कल्प्य निवेशयामि ॥ ४ ॥ रत्नैः सुदीप्तैः  
प्रतिबिंबितं तं पश्यामि चित्तेन विनायकं च । तत्रासनं रत्न-  
सुवर्णयुक्तं संकल्प्य देवं विनिवेशयामि ॥ ५ ॥ सिद्धया च बुद्ध्या  
सह विघ्नराज पाद्यं कुरु प्रेमभरेण सर्वैः । सुवासितं नीरमथो गृहाण  
चित्तेन दत्तं च सुखोष्णभावम् ॥ ६ ॥ ततः सुवस्त्रेण गणेश-  
मादौ संप्रोक्ष्य दूर्वादिभिरर्चयामि । चित्तेन भावप्रिय दीनबंधो  
मनो विलीनं कुरु ते पदाब्जे ॥ ७ ॥ कर्पूरकैलादिसुवासितं तु  
सुकल्पितं तोयमथो गृहाण । आचम्य तेनैव गजानन त्वं कृपा-  
कटाक्षेण त्रिलोकयाशु ॥ ८ ॥ प्रवालमुक्ताफलहाटकाद्यैः सुसंस्कृतं

ह्यंतरभावकेन । अनर्घ्यमर्घ्यं सफलं कुरुष्व मया प्रदत्तं गणराज  
 हुंडे ॥ ९ ॥ सौगंध्ययुक्तं मधुपर्कमाद्यं संकल्पितं भावयुतं गृहाण ।  
 पुनस्तथाचम्य विनायक त्वं भक्तांश्च भक्तेश सुरक्षयाशु ॥ १० ॥  
 सुवासितं चंपकजातिकाद्यैस्तैलं मया कल्पितमेव हुंडे । गृहाण  
 तेन प्रविमर्दयामि सर्वांगमेवं तव सेवनाय ॥ ११ ॥ ततः  
 सुखोष्णेन जलेन चाहमनेकतीर्थाहतकेन हुंडे । चित्तेन शुद्धेन  
 च स्नापयामि स्नानं मया दत्तमथो गृहाण ॥ १२ ॥ ततः पयः-  
 स्नानमर्चित्यभाव गृहाण तोयस्य तथा गणेश । पुनर्दधिस्नानमना-  
 मय त्वं चित्तेन दत्तं च जलस्य चैव ॥ १३ ॥ ततो घृतस्नान-  
 मपारवंद्य सुतीर्थजं विघ्नहर प्रसीद । गृहाण चित्तेन सुकल्पितं  
 तु ततो मधुस्नानमथो जलस्य ॥ १४ ॥ सुशर्करायुक्तमथो गृहाण  
 स्नानं मया कल्पितमेव हुंडे । ततो जलस्नानमघापहंतु विघ्नेश  
 मायाभ्रमं वारयाशु ॥ १५ ॥ सुयक्षपकं त्वमथो गृहाण स्नानं  
 परेशाधिपते ततश्च । कौमंडलीसंभवजं कुरुष्व विशुद्धमेवं परि-  
 कल्पितं तु ॥ १६ ॥ ततस्तु सूक्तैर्मनसा गणेशं संपूज्य दूर्वादि-  
 भिरल्पभावैः । अपारकैर्मंडलभूतब्रह्मणस्पत्यकैस्तं ह्यभिषेचयामि  
 ॥ १७ ॥ ततः सुवस्त्रेण तु प्रोच्छन्नादि गृहाण चित्तेन मया  
 सुकल्पितम् । ततो विशुद्धेन जलेन हुंडे ह्याचांतमेवं कुरु विघ्न-  
 राज ॥ १८ ॥ अग्नौ विशुद्धे तु गृहाण वस्त्रे ह्यनर्घ्यमौल्ये मनसा  
 मया ते । दत्ते परिच्छाद्य तिजात्मदेहं ताभ्यां मयूरेश जनांश्च  
 पालय ॥ १९ ॥ आचम्य विघ्नेश पुनस्तथैव चित्तेन दत्तं सुख-  
 मुत्तरीयम् । गृहाण भक्तप्रतिपालक त्वं नमोऽथ ते तारकसंयुतं  
 तु ॥ २० ॥ यज्ञोपवीतं त्रिगुणस्वरूपं सौवर्णमेवं ह्यहिनाथभूतम् ।  
 भावेन दत्तं गणनाथ तत्त्वं गृहाण भक्तोद्धृतिकारणाय ॥ २१ ॥

आचांतमेवं मनसा प्रदत्तं कुरुष्व शुद्धेन जलेन हुंढे । पुनश्च  
 कौमंडलकेन पाहि विश्वं प्रभो खेलकरं सदा ते ॥ २२ ॥ उद्यद्दि-  
 नेशाभमथो गृहाण सिंदूरकं ते मनसा प्रदत्तम् । सर्वांगसंलेपन-  
 मादराद्वै कुरुष्व हेरंब च तेन पूर्णम् ॥ २३ ॥ सहस्रशीर्षं मनसा  
 मया त्वं दत्तं किरीटं तु सुवर्णजं वै । अनेकरत्नैः खचितं गृहाण  
 ब्रह्मेश ते मस्तकशोभनाय ॥ २४ ॥ विचित्ररत्नैः कनकेन हुंढे  
 युतानि चित्तेन मया परेश । दत्तानि नानापदकुंडलानि गृहाण  
 शूर्पश्रुतिभूषणाय ॥ २५ ॥ शृङ्गाविभूषार्थमनंतखेलिन् सुवर्णजं  
 कंचुकमागृहाण । रत्नैश्च युक्तं मनसा मया यद्दत्तं प्रभो तत्सफलं  
 कुरुष्व ॥ २६ ॥ सुवर्णरत्नैश्च युतानि हुंढे सदैकदंताभरणानि  
 कल्प्य । गृहाण चूडाकृतये परेश दत्तानि दंतस्य च शोभना-  
 र्थम् ॥ २७ ॥ रत्नैः सुवर्णेन कृतानि तानि गृहाण चत्वारि मया  
 प्रकल्प्य । संभूषय त्वं कटकानि नाथ चतुर्भुजेषु ह्यज विघ्नहारिन्  
 ॥ २८ ॥ विचित्ररत्नैः खचितं सुवर्णसंभूतकं गृह्य मया प्रदत्तम् ।  
 तथांगुलीष्वंगुलिकं गणेश चित्तेन संशोभय तत्परेश ॥ २९ ॥  
 विचित्ररत्नैः खचितानि हुंढे केयूरकाणि ह्यथ कल्पितानि । सुवर्ण-  
 जानि प्रमथाधिनाथ गृहाण दत्तानि तु बाहुषु त्वम् ॥ ३० ॥  
 प्रवालमुक्ताफलरत्नजास्त्वं सुवर्णसूत्रैश्च गृहाण कंठे । चित्तेन दत्ता  
 विविधाश्च माला ऊरुदरे शोभय विघ्नराज ॥ ३१ ॥ चंद्रं ललाटे  
 गणनाथ पूर्णं वृद्धिक्षयाभ्यां तु विहीनमाद्यम् । संशोभय त्वं  
 वरसंयुतं ते भक्तिप्रिय त्वं प्रकटीकुरुष्व ॥ ३२ ॥ चिंतामणिं  
 चितितदं परेश हृद्देशां ज्योतिर्मयं कुरुष्व । मणिं सदानंदसुखप्रदं  
 च विघ्नेश दीनार्थदं पालयस्व ॥ ३३ ॥ नाभौ फणीशं च सहस्र-  
 शीर्षं संवेष्टेनेनैव गणाधिनाथ । भक्तं सुभूषं कुरु भूषणेन वर-



प्रदानं सफलं परेश ॥ ३४ ॥ कटीतटे रत्नसुवर्णयुक्तां कांचीं  
 सुचित्तेन च धारयामि । विघ्नेश ज्योतिर्गणदीपनीं ते प्रसीद भक्तं  
 कुरु मां दयाब्धे ॥ ३५ ॥ हेरंब ते रत्नसुवर्णयुक्ते सुनूपुरे मंजिरके  
 तथैव । सुकिंकिणीनादयुते स्वबुद्ध्या सुपादयोः शोभय मे प्रदत्ते  
 ॥ ३६ ॥ इत्यादिनानाविधभूषणानि तवेच्छया मानसकल्पितानि ।  
 संभूषयास्येव त्वदंगकेषु विचित्रधातुप्रभवाणि हुंदे ॥ ३७ ॥  
 सुचंदनं रक्तममोघवीर्यं सुघर्षितं ह्यष्टकगंधमुख्यैः । युक्तं मया  
 कल्पितमेकदंतं गृहाण ते त्वंगविलेपनार्थम् ॥ ३८ ॥ लिप्तेषु  
 वैचित्र्यमथाष्टगंधैरंगेषु तेऽहं प्रकरोमि चित्रम् । प्रसीद चित्तेन  
 विनायक त्वं ततः सुरक्तं रविमेव भाले ॥ ३९ ॥ घृतेन वै  
 कुंकुमकेन रक्तान् सुतंदुलांस्ते परिकल्पयामि । भाले गणाध्यक्ष  
 गृहाण पाहि भक्तान्सुभक्तिप्रिय दीनबंधो ॥ ४० ॥ गृहाण भो  
 चंपकमालतीनि जलपंकजानि स्थलपंकजानि । चित्तेन दत्तानि  
 च मल्लिकादिपुष्पाणि नानाविधवृक्षजानि ॥ ४१ ॥ पुष्पोपरि त्वं  
 मनसा गृहाण हेरंब मंदारशमीदलानि । मया सुचित्तेन च कल्पि-  
 तानि ह्यपारकाणि प्रणवाकृते तु ॥ ४२ ॥ दूर्वांकुरान्वै मनसा  
 प्रदत्तांस्त्रिपंचपत्रैर्युतकार्द्रस्निग्धान् । गृहाण विघ्नेश्वर संख्यया त्वं  
 हीनांश्च सर्वोपरि वक्तुं ॥ ४३ ॥ दशांगभूतं मनसा मया ते  
 धूपं प्रदत्तं गणराज हुंदे । गृहाण सौरभ्यकरं परेश सिद्धया च  
 बुद्धया सह भक्तपाल ॥ ४४ ॥ दीपं सुवर्त्या युतमादरात्ते दत्तं  
 मया मानसकं गणेश । गृहाण नानाविधजं घृतादितैलादिसंभूत-  
 ममोघदृष्टे ॥ ४५ ॥ भोज्यं च लेह्यं गणराज पेयं चोष्यं च  
 नानाविधषड्रसाढ्यम् । गृहाण नैवेद्यमथो मया ते सुकल्पितं  
 पुष्टिपते महात्मन् ॥ ४६ ॥ सुवासितं भोजनमध्यभागे जलं मया

दत्तमथो गृहाण । कमंडलुस्थं मनसा गणेश पिबस्व विश्वादिक-  
 तृप्तिकारिन् ॥ ४७ ॥ इतः करोद्वर्तनकं गृहाण सौगंध्ययुक्तं  
 मुखमार्जनाय । सुवासितेनैव सुतीर्थजेन सुकल्पितं नाथ गृहाण  
 हुंडे ॥ ४८ ॥ पुनस्तथाचम्य सुवासितं च दत्तं मया तीर्थजलं  
 पिबस्व । प्रकल्प्य विघ्नेश ततः परं ते संप्रोञ्छनं हस्तमुखे करोमि  
 ॥ ४९ ॥ द्राक्षादिरंभाफलचूतकानि खार्जूरकार्कशुकदाडिमानी ।  
 सुस्वादयुक्तानि मया प्रकल्प्य गृहाण दत्तानि फलानि हुंडे ॥ ५० ॥  
 पुनर्जलेनैव करादिकं ते संक्षालयेऽहं मनसा गणेश । सुवासितं  
 तोयमथो पिबस्व मया प्रदत्तं मनसा परेश ॥ ५१ ॥ अष्टांगयुक्तं  
 गणनाथ दत्तं तांबूलकं ते मनसा मया वै । गृहाण विघ्नेश्वर  
 भावयुक्तं सदा सकृत्तुंडविशोधनार्थम् ॥ ५२ ॥ ततो मया कल्पि-  
 तके गणेश महासने रत्नसुवर्णयुक्ते । मंदारकूर्पासकयुक्तवस्त्रैरनर्घ्य-  
 संछादितके प्रसीद ॥ ५३ ॥ ततस्त्वदीयावरणं परेश संपूज-  
 येऽहं मनसा यथावत् । नानोपचारैः परमप्रियैस्तु त्वत्प्रीति-  
 कामार्थमनाथबंधो ॥ ५४ ॥ गृहाण लंबोदर दक्षिणां ते ह्यसंख्यभूतां  
 मनसा प्रदत्ताम् । सौवर्णमुद्रादिकमुख्यभावां पाहि प्रभो विश्व-  
 सिद्धं गणेश ॥ ५५ ॥ राजोपचारान्विविधान् गृहाण हस्त्यश्व-  
 छत्रादिकमादराद्वै । चित्तेन दत्तान् गणनाथ हुंडे ह्यपारसंख्यान्  
 स्थिरजंगमांस्ते ॥ ५६ ॥ दानाय नानाविधरूपकांस्ते गृहाण दत्ता-  
 न्मनसा मया वै । पदार्थभूतान् स्थिरजंगमांश्च हेरंब मां तारय  
 मोहभावात् ॥ ५७ ॥ मंदारपुष्पाणि शमीदलानि दूर्वाकुरांस्ते  
 मनसा ददामि । हेरंब लंबोदर दीनपाल गृहाण भक्तं कुरु मां  
 पदे ते ॥ ५८ ॥ ततो हरिद्रामबिरं गुलालं सिंदूरकं ते परि-  
 कल्पयामि । सुवासितं वस्तु सुवासभूतैर्गृहाण ब्रह्मेश्वर शोभ-

नार्थम् ॥ ५९ ॥ ततः शुकाद्याः शिवविष्णुमुख्या इन्द्रादयः शेष-  
 सुखास्तथान्ये । मुनीन्द्रकाः सेवकभावयुक्ताः सभासनस्थं प्रणमंति  
 हुंढिम् ॥ ६० ॥ वामांगके शक्तियुता गणेशं सिद्धिस्तु नाना-  
 विधसिद्धिभिस्तम् । अत्यन्तभावेन सुसेवते तु मायास्वरूपा  
 परमार्थभूता ॥ ६१ ॥ गणेश्वरं दक्षिणभागसंस्था बुद्धिः कलाभिश्च  
 सुबोधिकाभिः । विद्याभिरेवं भजते परेश मायासुसांख्यप्रदचित्त-  
 रूपाः ॥ ६२ ॥ प्रमोदमोदादयः पृष्ठभागे गणेश्वरं भावयुता  
 भजंते । भक्तेश्वरा मुद्रालशंभुमुख्याः शुकादयस्तं स्म पुरो भजंते  
 ॥ ६३ ॥ गंधर्वमुख्या मधुरं जगुश्च गणेशगीतं विविधस्वरूपम् ।  
 नृत्यं कलायुक्तमथो पुरस्ताच्चकुस्तथा ह्यप्सरसो विचित्रम् ॥ ६४ ॥  
 इत्यादिनानाविधभावयुक्तैः संसेवितं विघ्नपतिं भजामि । चित्तेन  
 ध्यात्वा तु निरंजनं वै करोमि नानाविधदीपयुक्तम् ॥ ६५ ॥ चतु-  
 र्भुजं पाशधरं गणेशं तथांकुशं दंतयुतं तमेवम् । त्रिनेत्रयुक्तं  
 त्वभयंकरं तं महोदरं चैकरदं गजास्यम् ॥ ६६ ॥ सर्पोपवीतं  
 गजकर्णधारं विभूतिभिः सेवितपादपद्मम् । ध्याये गणेशं विविध-  
 प्रकारैः सुपूजितं शक्तियुतं परेशम् ॥ ६७ ॥ ततो जपं वै मनसा  
 करोमि स्वमूलमंत्रस्य विधानयुक्तम् । असंख्यभूतं गणराजहस्ते  
 समर्पयाम्येव गृहाण हुंढे ॥ ६८ ॥ आरातिकां कर्पूरकादिभूताम-  
 पारदीपां प्रकरोमि पूर्णाम् । चित्तेन लंबोदरं तां गृहाण ह्यज्ञान-  
 ध्वांताघहरां निजानाम् ॥ ६९ ॥ वेदेषु वैश्वेश्वरकैः सुमंत्रैः सुमंत्रितं  
 पुष्पदलं प्रभूतम् । गृहाण चित्तेन मया प्रदत्तमपारवृत्त्या त्वथ  
 मंत्रपुष्पम् ॥ ७० ॥ अपारवृत्त्या स्तुतिसेकदंतं गृहाण चित्तेन  
 कृतां गणेश । युक्तां श्रुतिस्मार्तभवैः पुराणैः सर्वैः परेशाधिपते  
 मया ते ॥ ७१ ॥ प्रदक्षिणा मानसकल्पितास्ता गृहाण लंबोदर

भावयुक्ताः । संख्याविहीना विविधस्वरूपा भक्तान्सदा रक्ष  
 भवार्णवाद्गै ॥ ७२ ॥ नतिं ततो विघ्नपते गृहाण साष्टांगकाद्यां  
 विविधस्वरूपाम् । संख्याविहीनां मनसा कृतां ते सिद्ध्या च बुद्ध्या  
 परिपालयाशु ॥ ७३ ॥ न्यूनातिरिक्तं तु मया कृतं चेत्तदर्थमेते  
 मनसा गृहाण । दूर्वाकुरान् विघ्नपते प्रदत्तान् संपूर्णमेव कुरु  
 पूजनं मे ॥ ७४ ॥ क्षमस्व विघ्नाधिपते मदीयान् सदापराधान्  
 विविधस्वरूपान् । भक्तिं मदीयां सफलां कुरुष्व संप्रार्थयेऽहं मनसा  
 गणेश ॥ ७५ ॥ ततः प्रसन्नेन गजाननेन दत्तं प्रसादं शिरसाभि-  
 वंद्य । स्वमस्तके तं परिधारयामि चित्तेन विघ्नेश्वरमानतोऽस्मि  
 ॥ ७६ ॥ उत्थाय विघ्नेश्वर एव तस्माद्गतस्ततस्त्वंतरधानशक्त्या ।  
 शिवादयस्तं प्रणिपत्य सर्वे गताः सुचित्तेन च चिंतयामि ॥ ७७ ॥  
 सर्वाङ्गमस्कृत्य ततोऽहमेव भजामि चित्तेन गणाधिपं तम् ।  
 स्वस्थानमागत्य महानुभावैर्भक्तैर्गणेशस्य च खेलयामि ॥ ७८ ॥  
 एवं त्रिकालेषु गणाधिपं तं चित्तेन नित्यं परिपूजयामि । तेनैव  
 तुष्टः प्रददातु भावं विश्वेश्वरो भक्तिमयं तु मह्यम् ॥ ७९ ॥  
 गणेशपादोदकपानकं च उच्छिष्टगंधस्य सुलेपनं तु । निर्माल्य-  
 संधारणकं सुभोज्यं लंबोदरस्यास्तु हि भुक्तशेषम् ॥ ८० ॥ यं यं  
 करोम्येव तदेव दीक्षा गणेश्वरस्यास्तु सदा गणेश । प्रसीद नित्यं  
 तव पादभक्तं कुरुष्व मां ब्रह्मपते दयालो ॥ ८१ ॥ ततस्तु शय्यां  
 परिकल्पयामि मंदारकूर्पासकवस्त्रयुक्ताम् । सुवासपुष्पादिभिरर्चितां  
 ते गृहाण निद्रां कुरु विघ्नराज ॥ ८२ ॥ सिद्ध्या च बुद्ध्या सहितं  
 गणेशं सुनिद्रितं वीक्ष्य तथाहमेव । गत्वा स्ववासं च करोमि  
 निद्रां ध्यात्वा हृदि ब्रह्मपतिं तदीयः ॥ ८३ ॥ एतादृशं सौख्य-  
 ममोघशक्ते देहि प्रभो मानसजं गणेश । मह्यं च तेनैव कृतार्थरूपो

भवामि भक्त्यमृतलालसोऽहम् ॥ ८४ ॥ गार्ग्य उवाच । एवं नित्यं  
महाराज गृत्समदो महायशः । चकार मानसीं पूजां योगीन्द्राणां  
गुरुः स्वयम् ॥ ८५ ॥ य एतां मानसीं पूजां करिष्यति नरोत्तमः ।  
पठिष्यति सदा सोऽपि गाणपत्यो भविष्यति ॥ ८६ ॥ श्रावयि-  
ष्यति यो मर्त्यः श्रोष्यते भावसंयुतः । स क्रमेण महीपाल  
ब्रह्मभूतो भविष्यति ॥ ८७ ॥ यद्यदिच्छति तत्तद्वै सफलं तस्य  
जायते । अंते स्वानंदगः सोऽपि योगिवंद्यो भविष्यति ॥ ८८ ॥  
इति श्रीमदांले मौद्गलपुराणे मानसपूजा समाप्ता ॥

#### ४. गणेशबाह्यपूजा ।

श्रीगणेशाय नमः । ऐल उवाच । बाह्यपूजां वद विभो गृत्समद-  
प्रकीर्तिताम् । येन मार्गेण विघ्नेशं भजिष्यसि निरंतरम् ॥ १ ॥  
गार्ग्य उवाच । आदौ च मानसीं पूजां कृत्वा गृत्समदो मुनिः ।  
बाह्यां चकार विधिवत्तां शृणुष्व सुखप्रदाम् ॥ २ ॥ हृदि ध्यात्वा  
गणेशानं परिवारादिसंयुतम् । नासिकारंध्रमार्गेण तं बाह्यां  
चकार ह ॥ ३ ॥ आदौ वैदिकमंत्रं स गणानां त्वेति संपठन् ।  
पश्चाच्छ्लोकं समुच्चार्य पूजयामास विघ्नपम् ॥ ४ ॥ गृत्समद  
उवाच । चतुर्बाहुं त्रिनेत्रं च राजास्यं रक्तवर्णकम् । पाशांकुशादि-  
संयुक्तं मायायुक्तं प्रचितयेत् ॥ ५ ॥ आगच्छ ब्रह्मणां नाथ सुरासुर-  
वरार्चित । सिद्धिबुद्ध्यादिसंयुक्त भक्तिग्रहणलालस ॥ ६ ॥ कृता-  
र्थोऽहं कृतार्थोऽहं तवागमनतः प्रभो । विघ्नेशानुगृहीतोऽहं सफलो  
मे भवोऽभवत् ॥ ७ ॥ रत्नसिंहासनं स्वामिन् गृहाण गणनायक ।  
तत्रोपविश्य विघ्नेश रक्ष भक्तान्विशेषतः ॥ ८ ॥ सुवासिता-  
भिरङ्घ्रिश्च पादप्रक्षालनं प्रभो । शीतोष्णांभः करोमि ते गृहाण  
पाद्यमुत्तमम् ॥ ९ ॥ सर्वतीर्थाहृतं तोयं सुवासितं सुवस्तुभिः ।

आचमनं च तेनैव कुरुष्व गणनायक ॥ १० ॥ रत्नप्रवाल-  
 मुक्ताद्यैरनघ्यैः संस्कृतं प्रभो । अर्घ्यं गृहाण हेरंब द्विरदानन  
 तोषकम् ॥ ११ ॥ दधिमधुघृतैर्युक्तं मधुपर्कं गजानन । गृहाण  
 भावसंयुक्तं मया दत्तं नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥ पाद्ये च मधुपर्के च  
 स्नाने वस्त्रोपधारणे । उपवीते भोजनांते पुनराचमनं कुरु ॥ १३ ॥  
 चंपकाद्यैर्गणाध्यक्ष वासितं तैलमुत्तमम् । अभ्यंगं कुरु सर्वेश  
 लंबोदर नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥ यक्षकर्मकाद्यैश्च विघ्नेश भक्त-  
 वत्सल । उद्धर्तनं कुरुष्व त्वं मया दत्तैर्महाप्रभो ॥ १५ ॥ नाना-  
 तीर्थजलैर्दुंदे सुखोष्णभावरूपकैः । कमंडलुद्भवैः स्नानं कुरु दुंदे  
 समर्पितैः ॥ १६ ॥ कामधेनुसमुद्भूतं पयः परमपावनम् । तेन  
 स्नानं कुरुष्व त्वं हेरंब परमार्थवित् ॥ १७ ॥ पंचामृतानां मध्ये  
 तु जलैः स्नानं पुनः पुनः । कुरु त्वं सर्वतीर्थेभ्यो गङ्गादिभ्यः समा-  
 हृतैः ॥ १८ ॥ दधि धेनुपयोद्भूतं मलापहरणं परम् । गृहाण  
 स्नानकार्यार्थं विनायक दयानिधे ॥ १९ ॥ धेनुदुग्धोद्भवं दुंदे घृतं  
 संतोषकारकम् । महामलापघातार्थं तेन स्नानं कुरु प्रभो ॥ २० ॥  
 सारधं संस्कृतं पूर्णं मधु मधुरसोद्भवम् । गृहाण स्नानकार्यार्थं  
 विनायक नमोऽस्तु ते ॥ २१ ॥ इक्षुदण्डसमुद्भूतां शर्करां मल-  
 नाशिनीम् । गृहाण गणनाथ त्वं तया स्नानं समाचर ॥ २२ ॥  
 यक्षकर्मकाद्यैश्च स्नानं कुरु गणेश्वर । अंत्यं मलहरं शुद्धं सर्व-  
 सौगंध्यकारकम् ॥ २३ ॥ ततो गंधाक्षतादींश्च दूर्वाकुरान् गजानन ।  
 समर्पयामि स्वल्पांस्त्वं गृहाण परमेश्वर ॥ २४ ॥ ब्रह्मणस्पत्य-  
 सूक्तैश्च ह्येकविंशतिवारकैः । अग्निषेकं करोमि ते गृहाण द्विर-  
 दानन ॥ २५ ॥ तत आचमनं देव सुवासितजलेन च । कुरुष्व  
 गणनाथ त्वं सर्वतीर्थभवेन वै ॥ २६ ॥ वस्त्रयुग्मं गृहाण त्वम-

नर्घ्यं रक्तवर्णकम् । लोकलज्जाहरं चैव विघ्ननाथ नमोऽस्तु ते  
 ॥ २७ ॥ उत्तरीयं सुचित्रं वै नभस्तारांकितं यथा । गृहाण सर्व-  
 सिद्धीश मया दत्तं सुभक्तितः ॥ २८ ॥ उपवीतं गणाध्यक्ष  
 गृहाण च ततः परम् । त्रैगुण्यमयरूपं तु प्रणवग्रन्थिबंधनम् ॥ २९ ॥  
 ततः सिंदूरकं देव गृहाण गणनायक । अंगलेपनभावार्थं सदानंद-  
 विवर्धनम् ॥ ३० ॥ नानाभूषणकानि त्वमंगेषु विविधेषु च ।  
 भासुरस्वर्णरत्नैश्च निर्मितानि गृहाण भो ॥ ३१ ॥ अष्टगंधसमा-  
 युक्तं गंधं रक्तं गजानन । द्वादशांगेषु ते हुंडे लेपयामि सुचित्र-  
 वत् ॥ ३२ ॥ रक्तचंदनसंयुक्तानथवा कुंकुमैर्युतान् । अक्षतान्  
 विघ्नराज त्वं गृहाण भालमंडले ॥ ३३ ॥ चंपकादिसुवृक्षेभ्यः  
 संभूतानि गजानन । पुष्पाणि शमीमंदारदूर्वादीनि गृहाण च  
 ॥ ३४ ॥ दशांगं गुग्गुलं धूपं सर्वसौरभकारकम् । गृहाण त्वं  
 मया दत्तं विनायक महोदर ॥ ३५ ॥ नानाजातिभवं दीपं  
 गृहाण गणनायक । अज्ञानमलजं दोषं हरंतं ज्योतिरूपकम्  
 ॥ ३६ ॥ चतुर्विधाञ्जसंपन्नं मधुरं लड्डुकादिकम् । नैवेद्यं ते मया  
 दत्तं भोजनं कुरु विघ्नप ॥ ३७ ॥ सुवासितं गृहाणेदं जलं  
 तीर्थसमाहृतम् । भुक्तिमध्ये च पानार्थं देवदेवेश ते नमः ॥ ३८ ॥  
 भोजनांते करोद्वर्तं यक्षकर्दमकेन च । कुरुष्व त्वं गणाध्यक्ष पिब  
 तोयं सुवासितम् ॥ ३९ ॥ दाडिमं खजूरं द्राक्षां रंभादीनि फलानि  
 वै । गृहाण देवदेवेश नानामधुरकाणि तु ॥ ४० ॥ अष्टांगं देव  
 तांबूलं गृहाण मुखवासनम् । असकृद्विघ्नराज त्वं मया दत्तं  
 विशेषतः ॥ ४१ ॥ दक्षिणां कांचनाद्यां तु नानाधातुसमुद्भवाम् ।  
 रत्नाद्यैः संयुतां हुंडे गृहाण सकलप्रिय ॥ ४२ ॥ राजोपचारकाद्यानि  
 गृहाण गणनायक । दानानि तु विचित्राणि मया दत्तानि विघ्नप

॥ ४३ ॥ तत् आभरणं तेऽहमर्पयामि विधानतः । विविधैरुपचारैश्च  
 तेन तुष्टो भव प्रभो ॥ ४४ ॥ ततो दूर्वांकुरान् हुण्डे एकविंशति-  
 संख्यकान् । गृहाण न्यूनसिद्ध्यर्थं भक्तवात्सल्यकारणात् ॥ ४५ ॥  
 नानादीपसमायुक्तं नीराजनं गजानन । गृहाण भावसंयुक्तं सर्वा-  
 ज्ञानादिनाशन ॥ ४६ ॥ गणानां त्वेति मंत्रस्य जपं साहस्रकं परम् ।  
 गृहाण गणनाथ त्वं सर्वसिद्धिप्रदो भव ॥ ४७ ॥ आर्तिक्यं च सुकर्पूरं  
 नानादीपमयं प्रभो । गृहाण ज्योतिषां नाथ तथा नीराजयाम्य-  
 हम् ॥ ४८ ॥ पादयोस्ते तु चत्वारि नामौ द्वे वदने प्रभो । एकं  
 तु सप्तचारं वै सर्वांगेषु निरंजनम् ॥ ४९ ॥ चतुर्वेदभवेर्मन्त्रैर्गणि-  
 पत्यैर्गजानन । मंत्रितानि गृहाण त्वं पुष्पपत्राणि विघ्नप ॥ ५० ॥  
 पंचप्रकारकैः स्तोत्रैर्गणपत्यैर्गणाधिप । स्तौमि त्वां तेन संतुष्टो भव  
 भक्तिप्रदायक ॥ ५१ ॥ एकविंशतिसंख्यं वा त्रिसंख्यं वा गजानन ।  
 प्रादक्षिण्यं गृहाण त्वं ब्रह्मन् ब्रह्मेशभावन ॥ ५२ ॥ साष्टांगां प्रणतिं  
 नाथ एकविंशतिसंमिताम् । हेरंब सर्वपूज्य त्वं गृहाण तु मया  
 कृताम् ॥ ५३ ॥ न्यूनातिरिक्तभावार्थं किञ्चिद्दूर्वांकुरान्प्रभो ।  
 समर्पयामि तेन त्वं सांगां पूजां कुरुष्व ताम् ॥ ५४ ॥ त्वया दत्तं  
 स्वहस्तेन निर्माल्यं चिंतयाम्यहम् । शिखायां धारयाम्येव सदा सर्वप्रदं  
 च तत् ॥ ५५ ॥ अपराधानसंख्यातान् क्षमस्व गणनायक ।  
 भक्तं कुरु च मां हुण्डे तव पादप्रियं सदा ॥ ५६ ॥ त्वं माता त्वं पिता मे  
 वै सुहृत्संबंधिकादयः । त्वमेव कुलदेवश्च सर्वं त्वं मे न संशयः  
 ॥ ५७ ॥ जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिभिर्देहवाङ्मानसैः कृतम् । सांसर्गिकेण  
 यत्कर्म गणेशाय समर्पये ॥ ५८ ॥ बाह्यं नानाविधं पापं महोग्रं  
 तल्लयं व्रजेत् । गणेशपादतीर्थस्य मस्तके धारणात्किल ॥ ५९ ॥  
 पादोदकं गणेशस्य पीतं नरेण तत्क्षणात् । सर्वातर्गतजं पापं नश्यति



गणनातिगम् ॥ ६० ॥ गणेशोच्छिष्टगंधं वै द्वादशांगेषु चर्चयेत् ।  
 गणेशतुल्यरूपः स दर्शनात्सर्वपापहा ॥ ६१ ॥ यदि गणेशपूजादौ  
 गंधभस्मादिकं चरेत् । अथवोच्छिष्टगंधं तु नो चेत्तत्र विधिं  
 चरेत् ॥ ६२ ॥ द्वादशांगेषु विघ्नेशं नाममंत्रेण चार्चयेत् । तेन  
 सोऽपि गणेशेन समो भवति भूतले ॥ ६३ ॥ आदौ गणेश्वरं मूर्ध्नि  
 ललाटे विघ्ननायकम् । दक्षिणे कर्णमूले तु वक्रतुंडं समर्चयेत् ॥ ६४ ॥  
 वामे कर्णस्य मूले वै चैकदंतं समर्चयेत् । कंठे लंबोदरं देवं  
 हृदि चिंतामणिं तथा ॥ ६५ ॥ बाहौ दक्षिणके चैव हेरंबं वाम-  
 बाहुके । विकटं नाभिदेशे तु विनायकं समर्चयेत् ॥ ६६ ॥  
 कुक्षौ दक्षिणगायां तु मयूरेशं समर्चयेत् । वामकुक्षौ गजास्यं वै पृष्ठे  
 स्वानंदवासिनम् ॥ ६७ ॥ सर्वांगलेपनं शस्तं चित्रितं ह्यष्टगंधकैः ।  
 गाणेशानां विशेषेण सर्वभद्रस्य कारणात् ॥ ६८ ॥ ततोच्छिष्टं तु  
 नैवेद्यं गणेशस्य भुनज्म्यहम् । भुक्तिमुक्तिप्रदं पूर्णं नानापापनिहंत-  
 नम् ॥ ६९ ॥ गणेशस्मरणेनैव करोमि कालखंडनम् । गाणपत्यैश्च  
 संवासः सदाऽस्तु मे गजानन ॥ ७० ॥ गार्ग्य उवाच ॥ एवं  
 गृत्समदश्चैव चकार बाह्यपूजनम् । त्रिकालेषु महायोगी सदा  
 भक्तिसमन्वितः ॥ ७१ ॥ तथा कुरु महीपाल गाणपत्यो भवि-  
 व्यसि । यथा गृत्समदः साक्षात्तथा त्वमपि निश्चितम् ॥ ७२ ॥  
 इति श्रीमदांत्ये मौद्गल्यपुराणे गणेशबाह्यपूजा समाप्ता ॥

#### ५. गणेशमहिम्नः स्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अनिर्वाच्यं रूपं स्तवननिकरो यत्र गलित-  
 स्तथा वक्ष्ये स्तोत्रं प्रथमपुरुषस्यात्र महतः । यतो जातं विश्वं स्थित-  
 मपि सदा यत्र विलयः स कीदृग्गीर्वाणः सुनिगमनुतः श्रीगणपतिः  
 ॥ १ ॥ गणेशं गाणेशाः शिवमिति च शैवाश्च विबुधा रविं सौरा

विष्णुं प्रथमपुरुषं विष्णुभजकाः । वदंत्येकं शाक्ता जगदुदयमूलां  
 परशिवां न जाने किं तस्मै नम इति परं ब्रह्म सकलम् ॥ २ ॥  
 तथेशं योगज्ञा गणपतिमिमं कर्म निखिलं समीमांसा वेदांतिन  
 इति परं ब्रह्म सकलम् । अजां सांख्यो ब्रूते सकलगुणरूपां च  
 सततं प्रकर्तारं न्यायस्त्वथ जगति बौद्धा धियमिति ॥ ३ ॥ कथं  
 ज्ञेयो बुद्धेः परतर इयं बाह्यसरणिर्यथा धीर्यस्य स्यात्स च तदनुरूपो  
 गणपतिः । महत्कृत्यं तस्य स्वयमपि महान् सूक्ष्ममणुवङ्कनिर्ज्योति-  
 र्बिंदुर्गगनसदृशः किं च सदसत् ॥ ४ ॥ अनेकास्योऽपाराक्षिकर-  
 चरणोऽनंतहृदयस्तथा नानारूपो विविधवदनः श्रीगणपतिः । अनं-  
 ताह्नः शक्त्या विविधगुणकर्मैकसमये त्वसंख्यातानंताभिमतफलदो-  
 ऽनेकविषये ॥ ५ ॥ न यस्यांतो मध्यो न च भवति चादिः सुमह-  
 तामलिप्तः कृत्वेत्थं सकलमपि खंवत् स च पृथक् । स्मृतः संस्म-  
 र्तृणां सकलहृदयस्थः प्रियकरो नमस्तस्मै देवाय सकलसुरवंद्याय  
 महते ॥ ६ ॥ गणेशाद्यं बीजं दहनवनितापल्लवयुतं मनुश्चैकार्णोऽयं  
 प्रणवसहितोऽभीष्टफलदः । सर्बिंदुश्चांगाद्यां गणकऋषिछंदोऽस्य च  
 निचृत् स देवः प्राग्बीजं विपदपि च शक्तिर्जपकृताम् ॥ ७ ॥ गकारो  
 हेरंबः सगुण इति पुंनिर्गुणमयो द्विधाऽप्येको जातः प्रकृतिपुरुषो  
 ब्रह्म हि गणः । स चेशश्चोत्पत्तिस्थितिलयकरोऽयं प्रथमको यतो  
 भूतं भव्यं भवति पतिरीशो गणपतिः ॥ ८ ॥ गकारः कंठोर्ध्वं  
 गजमुखसमो मर्त्यसदृशो णकारः कंठाधो जठरसदृशाकार इति च ।  
 अधोभावः कठ्यां चरण इति हीशोऽस्य च तनुर्विभातीत्यं नाम  
 त्रिभुवनसमं भूर्भुवःसुवः ॥ ९ ॥ गणेशेति त्र्यर्णात्मकमपि वरं  
 नाम सुखदं सकृत्प्रोच्चैरुच्चारितमिति नृभिः पावनकरम् । गणेश-  
 स्यैकस्य प्रतिजपकरस्यास्य सुकृतं न विज्ञातो नाम्नः सकलमहिमा

कीदृशविधः ॥ १० ॥ गणेशेत्याहं यः प्रवदति मुहुस्तस्य पुरतः  
 प्रपश्यंस्तद्वक्त्रं स्वयमपि गणस्तिष्ठति तदा । स्वरूपस्य ज्ञानं त्वमुक्त  
 इति नाज्ञाऽस्य भवति प्रबोधः सुप्तस्य त्वखिलमिह सामर्थ्यममुना  
 ॥ ११ ॥ गणेशो विश्वेऽस्मिन्स्थित इह च विश्वं गणपतौ गणेशो  
 यत्रास्ते धृतिमतिरमैश्वर्यमखिलम् । समुक्तं नामैकं गणपतिपदं  
 मंगलमयं तदेकास्ये दृष्टे सकलविबुधास्येक्षणसमम् ॥ १२ ॥ बहु-  
 क्लेशैर्व्याप्तिः स्मृत उत गणेशे च हृदये क्षणात्क्लेशान्मुक्तो भवति  
 सहसा त्वभ्रचयवत् । वने विद्यारंभे युधि रिपुभये कुत्र गमने  
 प्रवेशे प्राणांते गणपतिपदं चाशु विशति ॥ १३ ॥ गणाध्यक्षो  
 ज्येष्ठः कपिल अपरो मंगलनिधिर्दयालुर्हेरंबो वरद इति चिंतामणि-  
 रजः । वरानीशो दुर्दिर्गजवदननामा शिवसुतो मयूरेशो गौरी-  
 तनय इति नामानि पठति ॥ १४ ॥ महेशोऽयं विष्णुः सकवि-  
 रविरिंदुः कमलजः क्षितिस्तोयं वह्निः श्वसन इति खं त्वद्विरुद्धिः ।  
 कुजस्तारः शुक्रो गुरुरुद्धुधोऽगुश्च धनदो यमः पाशी काव्यः  
 शनिरखिलरूपो गणपतिः ॥ १५ ॥ मुखं वह्निः पादौ हरिरपि  
 विधाता प्रजननं रविर्नेत्रे चंद्रो हृदयमपि कामोऽस्य मदनः ।  
 करौ शक्रः कव्यामवनिरुदरं भाति दशनं गणेशस्यासन्वै क्रतुमय-  
 चपुश्चैव सकलम् ॥ १६ ॥ अनर्घ्यालंकारैररुणवसनैर्भूषिततनुः  
 करींद्रास्यः सिंहासनमुपगतो भाति बुधराद् । स्मितास्यात्तन्मध्येऽप्यु-  
 दितरविर्बिंबोपमरुचिः स्थिता सिद्धिर्वामे मतिरितरगा चामरकरा  
 ॥ १७ ॥ समंतात्तस्यासन् प्रवरमुनिसिद्धाः सुरगणाः प्रशंसंतीत्यग्रे  
 विविधनुतिभिः सांजलिपुटाः । बिडौजाद्यैर्ब्रह्मादिमिरनुवृत्तो भक्त-  
 निकरैर्गणक्रीडामोदप्रमदविकटाद्यैः सहचरैः ॥ १८ ॥ वशित्वाद्यष्टा-  
 ष्टादशदिग खिलालोलमनुवाग्धृतिः पादूः खड्गोजनरसबलाः सिद्धय

इमाः । सदा पृष्ठे तिष्ठत्यनिमिषदृशस्तन्मुखलया गणेशं सेवंतेऽप्यति-  
निकटसूपायनकराः ॥ १९ ॥ मृगांकास्या रंभाग्रभृतिगणिका यस्य  
पुरतः सुसंगीतं कुर्वत्यपि कुतुकगंधर्वसहिताः । मुदः पारो नात्रेत्य-  
नुपमपदे दौर्विगलिता स्थिरं जातं चित्तं चरणमवलोक्यास्य विम-  
लम् ॥ २० ॥ हरेणायं ध्यातस्त्रिपुरमथने चासुरवधे गणेशः पार्वत्या  
बलिविजयकालेऽपि हरिणा । विधात्रा संसृष्टावुरगपतिना क्षोणि-  
धरणे नरैः सिद्धौ मुक्तौ त्रिभुवनजये पुष्पधनुषा ॥ २१ ॥ अयं  
सुप्रासादे सुर इव निजानंदभुवने महान् श्रीमानाद्यो लघुतरगृहे  
रंकसदृशः । शिवद्वारे द्वाःस्थो नृप इव सदा भूपतिगृहे स्थितो  
भूत्वोमांके शिशुगणपतिर्लालनपरः ॥ २२ ॥ अमुष्मिन्संतुष्टे गज-  
वदन एवापि विबुधे ततस्ते संतुष्टास्त्रिभुवनगताः स्युर्बुधगणाः ।  
दयालुर्हेरंबो न च भवति यास्मिंश्च पुरुषे वृथा सर्वं तस्य प्रजननमतः  
सांद्रतमसि ॥ २३ ॥ वरेण्यो भ्रूशुंढिर्भृगुगुरुकुजा मुद्गलमुखा ह्यपा-  
रास्तद्भक्ता जपहवनपूजास्तुतिपराः । गणेशोऽयं भक्तप्रिय इति च  
सर्वत्र गदितं विभक्तिर्यत्रास्ते स्वयमपि सदा तिष्ठति गणः ॥ २४ ॥  
मृदः काश्चिद्वातोश्छदविलिखिता वापि दृषदः स्मृता व्याजान्भूर्तिः  
पथि यदि बहिर्येन सहसा । अशुद्धोऽद्धा द्रष्टा प्रवदति तदाह्वां  
गणपते श्रुता शुद्धो मर्त्यो भवति दुरिताद्विस्मय इति ॥ २५ ॥  
बहिर्द्वारस्योर्ध्वं गजवदनवर्ष्मधनमयं प्रशस्तं वा कृत्वा विविध-  
कुशलैस्तत्र निहतम् । प्रभावात्तन्मूर्त्या भवति सदनं मंगलमयं विलो-  
क्यानंदस्तां भवति जगतो विस्मय इति ॥ २६ ॥ सिते भाद्रे  
मासे प्रतिशरदि मध्याह्नसमये मृदो मूर्तिं कृत्वा गणपतितिथौ  
हुंटिसदृशीम् । समर्चत्युत्साहः प्रभवति महान् सर्वसदने विलो-  
क्यानंदस्तां प्रभवति नृणां विस्मय इति ॥ २७ ॥ तथा ह्येकः श्लोको

वरयति महिम्नो गणपतेः कथं स श्लोकेऽस्मिन् स्तुत इति भवेत्सं-  
 प्रपतिते । स्मृतं नामास्यैकं सकृदिदमनन्ताह्वयसमं यतो यस्यैकस्य  
 स्तवनसदृशं नान्यदपरम् ॥ २८ ॥ गजवदन विभो यद्वर्णितं वैभवं  
 ते त्विह जनुषि ममेत्थं चारु तद्दर्शयाशु । त्वमसि च करुणायाः  
 सागरः कृत्स्नदाताप्यति तव भृतकोऽहं सर्वदा चित्तकोऽस्मि ॥ २९ ॥  
 सुस्तोत्रं प्रपठतु नित्यमेतदेवं स्वानन्दं प्रति गमनेऽप्ययं सुमार्गः ।  
 संचिन्त्यं स्वमनसि तत्पदारविन्दं स्थाप्याग्रे स्तवनफलं नतीः करिष्ये  
 ॥ ३० ॥ गणेशदेवस्य माहात्म्यमेतद् यः श्रावयेद्वापि पठेच्च तस्य ।  
 क्लेशा लयं यांति लभेच्च शीघ्रं स्त्रीपुत्रविद्यार्थगृहं च मुक्तिम् ॥ ३१ ॥  
 इति श्रीपुष्पदंतविरचितं श्रीगणेशमहिम्नः स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ६. गणेशाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यम उवाच । गणेश हेरंब गजाननेति महोदर  
 स्वानुभवप्रकाशिन् । वरिष्ठ सिद्धिप्रिय बुद्धिनाथ वदंतमेवं त्यजत  
 प्रभीताः ॥ १ ॥ अनेकविघ्नांतक वक्रतुंड स्वसंज्ञवासिंश्च चतुर्भुजेति ।  
 कवीश देवांतकनाशकारिन् वदंतमेवं त्यजत प्रभीताः ॥ २ ॥  
 महेशसूनो गजदैत्यशत्रो वरेण्यसूनो विकट त्रिनेत्र । परेश पृथ्वीधर  
 एकदंत वदंत० ॥ ३ ॥ प्रमोद मोदेति नरांतकारे षड्भूमिहंतर्गजकर्ण  
 दुंदे । द्वन्द्वारिसिन्धो स्थिरभावकारिन् वदंत० ॥ ४ ॥ विनायक  
 ज्ञानविघातशत्रो पराशरस्यात्मज विष्णुपुत्र । अनादिपूज्याऽऽखुग  
 सर्वपूज्य वदंत० ॥ ५ ॥ विद्येज्य लंबोदर धूम्रवर्ण मयूरपालेति  
 मयूरवाहिन् । सुरासुरैः सेवितपादपद्म वदंत० ॥ ६ ॥ वरिन्महा-  
 खुध्वज शूर्पकर्ण शिवाज सिंहस्थ अनंतवाह । दितौज विघ्नेश्वर  
 शेषनाभे वदंत० ॥ ७ ॥ अणोरणीयो महतो महीयो रवेर्ज योगे-

शज ज्येष्ठराज । निधीश मंत्रेश च शेषपुत्र वदंत० ॥ ८ ॥ वरप्र-  
 दातरदितेश्च सूनो परात्परज्ञानद तारवक्र । गुहाग्रज ब्रह्मप  
 पार्श्वपुत्र वदंत० ॥ ९ ॥ सिन्धोश्च शत्रो परशुप्रपाणे शमीशपुष्पप्रिय  
 विघ्नहारिन् । दूर्वाभरैरर्चित देवदेव वदंत० ॥ १० ॥ धियः  
 प्रदातश्च शमीप्रियेति सुसिद्धिदातश्च सुशांतिदातः । अमेयमाया-  
 मितविक्रमेति वदंत० ॥ ११ ॥ द्विधाचतुर्थीप्रिय कश्यपाच्च धनप्रद  
 ज्ञानपदप्रकाश । चिन्तामणे चित्तविहारकारिन् वदंत० ॥ १२ ॥  
 यमस्य शत्रो अभिमानशत्रो विधेर्जहंतः कपिलस्य सूनो । विदेह  
 स्वानंद अयोगयोग वदंत० ॥ १३ ॥ गणस्य शत्रो कमलस्य शत्रो  
 समस्तभावश्च च भालचंद्र । अनादिमध्यांतमयप्रचारिन् वदंत०  
 ॥ १४ ॥ विभो जगद्रूप गणेश भूमन् पुष्टेःपते आखुगतेति बोधः ।  
 कर्तुश्च पातुश्च तु संहरेति वदंत० ॥ १५ ॥ इदमष्टोत्तरशतं नाम्नां  
 तस्य पठंति ये । शृण्वंति तेषु वै भीताः कुरुध्वं मा प्रवेशनम्  
 ॥ १६ ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदं दुर्द्धर्धनधान्यप्रवर्धनम् । ब्रह्मभूतकरं स्तोत्रं  
 जपंतं नित्यमादरात् ॥ १७ ॥ यत्र कुत्र गणेशस्य चिह्नयुक्तानि वै  
 भटाः । धामानि तत्र संभीताः कुरुध्वं मा प्रवेशनम् ॥ १८ ॥ इति  
 श्रीमदाल्ये मौद्गल्यपुराणे गणेशाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं समाप्तम् ॥

### ७. संकष्टनाशनगणेशस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नारद उवाच । प्रणम्य शिरसा देवं गौरीपुत्रं  
 विनायकम् । भक्तावासं स्मरेन्नित्यमायुःकामार्थसिद्धये ॥ १ ॥  
 प्रथमं वक्रतुंडं च एकदंतं द्वितीयकम् । तृतीयं कृष्णपिङ्गाक्षं गज-  
 वक्रं चतुर्थकम् ॥ २ ॥ लंबोदरं पंचमं च षष्ठं विकटमेव च ।  
 सप्तमं विघ्नराजं च धूम्रवर्णं तथाष्टमम् ॥ ३ ॥ नवमं भालचंद्रं च

दशमं तु विनायकम् । एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम् ॥ ४ ॥ द्वादशैतानि नामानि त्रिसंख्यं यः पठेन्नरः । न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिकरं प्रभोः ॥ ५ ॥ विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी लभते धनम् । पुत्रार्थी लभते पुत्रान्मोक्षार्थी लभते गतिम् ॥ ६ ॥ जपेद्वृणपतिस्तोत्रं षड्भिर्मसैः फलं लभेत् । संवत्सरेण सिद्धिं च लभते नात्र संशयः ॥ ७ ॥ अष्टभ्यो ब्राह्मणेभ्यश्च लिखित्वा यः समर्पयेत् । तस्य विद्या भवेत्सर्वा गणेशस्य प्रसादतः ॥ ८ ॥ इति श्रीनारदपुराणे संकटनाशनं गणेशस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

#### ८. गणेशाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सर्वे ऊचुः । यतोऽनंतश्चेरनंताश्च जीवा यतो निर्गुणादप्रमेया गुणास्ते । यतो भाति सर्वं त्रिधा भेदमिश्रं सदा तं गणेशं नमामो भजामः ॥ १ ॥ यतश्चाविरासीज्जगत्सर्वमेतत्तथा-  
ब्जासनो विश्वगो विश्वगोप्ता । तथ्यद्रादयो देवसंधा मनुष्याः सदा तं गणेशं नमामो भजामः ॥ २ ॥ यतो वह्निभान् भवो भूर्जलं च यतः सागराश्चंद्रमा व्योम वायुः । यतः स्थावरा जंगमा वृक्षसंधाः सदा तं गणेशं नमामि भजामः ॥ ३ ॥ यतो दानवाः किन्नरा यक्षसंधा यतश्चारणा वारणाः श्वपदाश्च । यतः पक्षिकीटा यतो वीरू-  
धश्च सदा तं गणेशं नमामो भजामः ॥ ४ ॥ यतो बुद्धिरज्ञाननाशो मुमुक्षोर्यतः संपदो भक्तसंतोषिकाः स्युः । यतो विघ्ननाशो यतः कार्यसिद्धिः सदा तं गणेशं नमामो भजामः ॥ ५ ॥ यतः पुत्रसंप-  
द्यतो वांछितार्थो यतोऽभक्तविघ्नास्तथानेकरूपाः । यतः शोकमोहौ यतः काम एव सदा तं गणेशं नमामो भजामः ॥ ६ ॥ यतोऽनंत-  
शक्तिः स शेषो बभूव धराधारणेऽनेकरूपे च शक्तः । यतोऽनेकधा स्वर्गलोका हि नाना सदा तं गणेशं नमामो भजामः ॥ ७ ॥ यतो

वेदवाचो विकुंठा मनोभिः सदा नेति नेतीति यत्ता गृणन्ति ।  
 परब्रह्मरूपं चिदानंदभूतं सदा तं गणेशं नमामो भजामः ॥ ८ ॥  
 श्रीगणेश उवाच । पुनरुचे गणाधीशः स्तोत्रमेतत्पठेन्नरः । त्रिसंध्यं  
 त्रिदिनं तस्य सर्वं कार्यं भविष्यति ॥ ९ ॥ यो जपेदष्टदिवसं  
 श्लोकाष्टकमिदं शुभम् । अष्टवारं चतुर्थ्यां तु सोऽष्टसिद्धीरवामुयात्  
 ॥ १० ॥ यः पठेन्मासमात्रं तु दशवारं दिने दिने । स मोक्षयेद्बन्ध-  
 गतं राजवध्यं न संशयः ॥ ११ ॥ विद्याकामो लभेद्विद्यां पुत्रार्थी  
 पुत्रमामुयात् । वांछितौल्लभते सर्वानेकविंशतिवारतः ॥ १२ ॥ यो  
 जपेत्परया भक्त्या गजाननपरो नरः । एवमुक्त्वा ततो देवश्चांत-  
 र्धानं गतः प्रभुः ॥ १३ ॥ इति श्रीगणेशपुराणे उपासनाखंडे  
 श्रीगणेशाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ९. एकदंतस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मदासुरं सुशांतं वै दृष्ट्वा विष्णुमुखाः सुराः ।  
 भृग्वादयश्च मुनय एकदंतं समाययुः ॥ १ ॥ प्रणम्य तं प्रपूज्यादौ  
 पुनस्तं नेमुरादरात् । तुष्टुवुर्हर्षसंयुक्ता एकदंतं गणेश्वरम् ॥ २ ॥ देवर्षय  
 ऊचुः ॥ सदात्मरूपं सकलादिभूतममायिनं सोऽहमर्चित्यबोधम् । अना-  
 दिमध्यांतविहीनमेकं तमेकदंतं शरणं ब्रजामः ॥ ३ ॥ अनंतचिद्रूपमयं  
 गणेशं ह्यभेदभेदादिविहीनमाद्यम् । हृदि प्रकाशस्य धुरं स्वधीस्थं  
 तमेकदंतं शरणं ब्रजामः ॥ ४ ॥ विश्वादिभूतं हृदि योगिनां वै  
 प्रत्यक्षरूपेण विभांतमेकम् । सदा निरालंबसमाधिगम्यं तमेकदंतं  
 शरणं ॥ ५ ॥ स्वर्बिंबभावेन विलासयुक्तं बिंबस्वरूपा रचिता  
 स्वमाया । तस्यां स्ववीर्यं प्रददाति यो वै तमेकदंतं ॥ ६ ॥  
 त्वदीयवीर्येण समर्थभूता माया तथा संरचितं च विश्वम् । नादा-



त्मकं ह्यात्मतया प्रतीतं तमेकदंतं श० ॥ ७ ॥ त्वदीयसत्ताधरमेक-  
दंतं गणेशमेकं त्रयबोधितारम् । सेवंत आपुस्तमजं त्रिसंस्थास्तमे-  
कदंतं ॥ ८ ॥ ततस्त्वया प्रेरित एव नादस्तेनेदमेवं रचितं जगद्वै ।  
आनंदरूपं समभावसंस्थं तमेक० ॥ ९ ॥ तदेव विश्वं कृपया तवैव  
संभूतमाद्यं तमसा विभातम् । अनेकरूपं ह्यजमेकभूतं तमेक०  
॥ १० ॥ ततस्त्वया प्रेरितमेव तेन सृष्टं सुसूक्ष्मं जगदेकसंस्थम् ।  
सत्त्वात्मकं श्वेतमनंतमाद्यं तमेक० ॥ ११ ॥ तदेव स्वप्नं तपसा गणेश  
संसिद्धिरूपं विविधं बभूव । सदेकरूपं कृपया तवापि तमेक०  
॥ १२ ॥ संप्रेरितं तच्च त्वया हृदिस्थं तथा सुसृष्टं जगदंशरूपम् ।  
तेनैव जाग्रन्मयमप्रमेयं तमेक० ॥ १३ ॥ जाग्रत्स्वरूपं रजसा  
विभातं विलोकितं तत्कृपया यदैव । तदा विभिन्नं भवत्येकरूपं  
तमेक० ॥ १४ ॥ एवं च सृष्ट्वा प्रकृतिस्वभावात्तदंतरे त्वं च  
विभासि नित्यम् । बुद्धिप्रदाता गणनाथ एकस्तमेक० ॥ १५ ॥  
त्वदाज्ञया भान्ति ग्रहाश्च सर्वे नक्षत्ररूपाणि विभांति खे वै ।  
आधारहीनानि त्वया धृतानि तमेक० ॥ १६ ॥ त्वदाज्ञया सृष्टि-  
करो विधाता त्वदाज्ञया पालक एव विष्णुः । त्वदाज्ञया संहारको  
हरोऽपि तमेक० ॥ १७ ॥ यदाज्ञया भूर्जलमध्यसंस्था यदाज्ञ-  
याऽऽपः प्रवहन्ति नद्यः । सीमां सदा रक्षति वै समुद्रस्तमेक०  
॥ १८ ॥ यदाज्ञया देवगणो दिविस्थो ददाति वै कर्मफलानि  
नित्यम् । यदाज्ञया शैलगणोऽचलो वै तमेक० ॥ १९ ॥ यदाज्ञया  
शेष इलाधरो वै यदाज्ञया मोहप्रदश्च कामः । यदाज्ञया काल-  
धरोऽर्यमा च तमेक० ॥ २० ॥ यदाज्ञया वाति विभाति वायु-  
र्यदाज्ञयाऽभिर्जठरादिसंस्थः । यदाज्ञया वै सचराचरं च तमेक०  
॥ २१ ॥ सर्वांतरे संस्थितमेकगूढं यदाज्ञया सर्वमिदं विभाति ।

अनंतरूपं हृदि बोधकं वै तमेक० ॥ २२ ॥ यं योगिनो योगबलेन  
 सार्धं कुर्वति तं कः स्तवनेन स्तौति । अतः प्रणामेन सुसिद्धिदोऽस्तु  
 तमेक० ॥ २३ ॥ गृत्समद उवाच । एवं स्तुत्वा च प्रह्लादो देवाः  
 समुनयश्च वै । तूष्णींभावं प्रपद्येव न नृनुर्हर्षसंयुताः ॥ २४ ॥ स  
 तानुवाच प्रीतात्मा ह्येकदंतः स्तवेन वै । जगाद तान्महाभागान्  
 देवर्षीन्भक्तवत्सलः ॥ २५ ॥ एकदंत उवाच ॥ प्रसन्नोऽस्मि च  
 स्तोत्रेण सुराः सर्विगणाः किल । वृणुत वरदोऽहं वो दास्यामि  
 मनसीप्सितम् ॥ २६ ॥ भवत्कृतं मदीयं वै स्तोत्रं प्रीतिप्रदं मम ।  
 भविष्यति न संदेहः सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥ २७ ॥ यं यमिच्छति  
 तं तं वै दास्यामि स्तोत्रपाठतः । पुत्रपौत्रादिकं सर्वं लभते धन-  
 धान्यकम् ॥ २८ ॥ गजाश्वादिकमत्यंतं राज्यभोगं लभेद्भवम् । भुक्तिं  
 मुक्तिं च योगं वै लभते शांतिदायकम् ॥ २९ ॥ मारणोच्चाटनादीनि  
 राज्यबंधादिकं च न । पठतां शृण्वतां नृणां भवेच्च बंधहीनता  
 ॥ ३० ॥ एकविंशतिवारं च श्लोकांश्चैकविंशतिम् । पठते नित्यमेवं  
 च दिनानि त्वेकविंशतिम् ॥ ३१ ॥ न तस्य दुर्लभं किंचिन्निषु  
 लोकेषु वै भवेत् । असाध्यं साधयेन्मर्त्यः सर्वत्र विजयी भवेत्  
 ॥ ३२ ॥ नित्यं यः पठते स्तोत्रं ब्रह्मभूतः स वै नरः । तस्य दर्शनतः  
 सर्वे देवाः पूता भवंति वै ॥ ३३ ॥ एवं तस्य वचः श्रुत्वा प्रहृष्टा  
 देवतर्षयः । ऊचुः करपुटाः सर्वे भक्तियुक्ता गजाननम् ॥ ३४ ॥  
 इति एकदंतस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १०. महागणपतिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ योगं योगविदां विधूतविविधव्यासंगशुद्धाशय-  
 प्रादुर्भूतसुधारसप्रसूमरध्यानास्पदाध्यासिनाम् । आनन्दप्लवमान-

१ स्तोत्रस्यास्य टीका काव्यमालायाः प्रथमगुच्छे द्रष्टव्या ।

बोधमधुरामोदच्छटामेदुरं तं भूमानमुपास्महे परिणतं दंतावलास्या-  
 त्मना ॥ १ ॥ तारश्रीपरशक्तिकामवसुधारूपानुगं यं विदुस्तस्मै  
 स्तात्प्रणतिर्गणाधिपतये यो रागिणाम्यर्थ्यते । आमन्त्र्य प्रथमं वरेति  
 वरदेत्यार्तेन सर्वं जनं स्वामिन्मे वशमानयेति सततं स्वाहादिभिः  
 पूजितः ॥ २ ॥ कल्लोलांचलचुंबितांबुदतताविभ्रुदवांभोनिधौ द्वीपे  
 रत्नमये सुरद्रुमवनामोदैकमेदस्विनि । मूले कल्पतरोर्महामणिमये  
 पीठेऽक्षरांभोरुहे षट्कोणाकलितत्रिकोणरचनास्तत्कर्णिकेऽमुं भजे  
 ॥ ३ ॥ चक्रप्रासरसालकर्मुकगदासद्बीजपूरद्विजप्रीह्यप्रोत्पलपाश-  
 पंकजकरं शुंडाग्रजाग्रद्वटम् । आश्लिष्टं प्रियया सरोजकरया रत्नस्फुर-  
 न्मूषया माणिक्यप्रतिमं महागणपतिं विश्वेशमाशास्महे ॥ ४ ॥  
 दानांभःपरिमेदुरप्रसृसरव्यालंबिरोलंबभृत्सिंदूरारुणगंडमंडलयुग-  
 व्याजात्प्रशस्तिद्वयम् । त्रैलोक्येष्टविधानवर्णसुभगं यः पद्मरागोपमं  
 धत्ते स श्रियमातनोतु सततं देवो गणानां पतिः ॥ ५ ॥ आस्य-  
 न्मंदरघूर्णनापरवशक्षीराब्धिबीचिच्छटासच्छायाश्चलचामरव्यतिकर-  
 श्रीगर्वैसर्वकषाः । दिक्कांताघनसारचंदनरसासाराः श्रयंतां मनः  
 स्वच्छंदप्रसरप्रलिसवियतो हेरंबदंतत्विषः ॥ ६ ॥ मुक्ताजालकरंबित-  
 प्रविकसन्माणिक्यपुंजच्छटाकांताः कंबुकदंबचुंबितघनांभोजप्रवा-  
 लोपमाः । ज्योत्स्नापूरतरंगमंथरतरत्संध्यावयस्याश्विरं हेरंबस्य  
 जयंति दंतकिरणाकीर्णाः शरीरत्विषः ॥ ७ ॥ शुंडाग्राकलितेन  
 हेमकलशेनावर्जितेन क्षरच्चानारत्नचयेन साधकजनान्संभावयन्  
 कोटिशः । दानामोदविनोदलुब्धमधुपप्रोत्सारणातिर्भवत्कर्णान्दोलन-  
 खेलनो विजयते देवो गणग्रामणीः ॥ ८ ॥ हेरंबं प्रणमामि यस्य  
 पुरतः शांडिल्यमूले श्रिया विभ्रत्यांबुरुहे समं मधुरिपुस्ते शंखचक्रे  
 वहन् । न्यग्रोधस्य तले सहाद्रिसुतया शंभुस्तथा दक्षिणे बिभ्राणः

परशुं त्रिशूलमितया पाशाङ्कुशाभ्यां सह ॥ ९ ॥ पश्चात्पिप्पल-  
माश्रितो रतिपतिर्देवस्य रत्योत्पले बिभ्रत्या सममैक्षवं धनुरिषू-  
न्पौष्पान्वहन्पंच च । वामे चक्रगदाधरः स भगवान्कोडः प्रियङ्गो-  
स्तले हस्तोद्यच्छुक्कशालिमंजरिकया देव्या धरण्या सह ॥ १० ॥  
षट्कोणाश्रिपु षट्सु षड् गजमुखाः पाशाङ्कुशाभीवरान्विभ्राणाः  
प्रमदासखाः पृथुमहाशोणाश्मपुंजत्विषः । आमोदः पुरतः  
प्रमोदसुमुखौ तं चाभितो दुर्मुखः पश्चात् पार्श्वगतोऽस्य विघ्न इति  
यो यो विघ्नकर्तेति च ॥ ११ ॥ आमोदादिगणेश्वरप्रियतमास्तत्रैव  
नित्यं स्थिताः कांताश्लेषरसज्ञमंथरदृशः सिद्धिः समृद्धिस्ततः । कांतिर्या  
मदनावतीत्यपि तथा कल्पेषु या गीयते साऽन्या यापि मदद्रवा  
तदपरा द्राविण्यमूः पूजिताः ॥ १२ ॥ आश्लिष्टौ वसुधेत्यथो  
वसुमती ताभ्यां सितालोहितौ वर्षन्तौ वसुपार्श्वयोर्विलसतस्तौ  
शंखपद्मौ निधी । अंगान्यन्वथ मातरश्च परितः शक्रादयोऽब्जा-  
श्रयास्तद्वाह्ये कुलिशादयः परिपतत्कालानलज्योतिषः ॥ १३ ॥  
इत्थं विष्णुशिवादितत्त्वतनवे श्रीवक्रतुंडाय हुंकाराक्षिसमस्तदैत्य-  
पृतनावाताय दीप्तत्विषे । आनंदैकरसावबोधलहरीविध्वस्तसर्वोर्मये  
सर्वत्र प्रथमानमुग्धमहसे तस्मै परस्मै नमः ॥ १४ ॥ सेवाहेवाकि-  
देवासुरनरनिकरस्फारकोटीरकोटीकोटिव्याटीकमानद्युमणिसममणि-  
श्रेणिभावेणिकानाम् । राजनीराजनश्रीसखचरणनखद्योतविद्योत-  
मानः श्रेयः स्थेयः स देयान्मम विमलदृशो बंधुरं सिंधुरास्यः  
॥ १५ ॥ एतेन प्रकटरहस्यमंत्रमालागर्भेण स्फुटरसंविदा स्तवेन ।  
यः स्तौति प्रचुरतरं महागणेशं तस्येयं भवति वशंवदा त्रिलोकी  
॥ १६ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यवर्यश्रीराघवचैतन्य-  
विरचितं महागणपतिस्तोत्रं समाप्तम् ॥

## ११. गणेशद्वादशनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।  
 प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ १ ॥ अभीप्सितार्थ-  
 सिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः । सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः  
 ॥ २ ॥ गणानामधिपश्चंडो गजवक्त्रस्त्रिलोचनः । प्रसन्नो भव मे  
 नित्यं वरदातर्विनायक ॥ ३ ॥ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गज-  
 कर्णकः । लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥ ४ ॥ धूम्रकेतु-  
 र्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः । द्वादशैतानि नामानि गणेशस्य  
 यः पठेत् ॥ ५ ॥ विद्यार्थी लभते विद्यां धनार्थी विपुलं धनम् ।  
 इष्टकामं तु कामार्थी धर्मार्थी मोक्षमक्षयम् ॥ ६ ॥ विद्यारंभे  
 विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा । संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न  
 जायते ॥ ७ ॥ इति मुद्गलोक्तं श्रीगणेशद्वादशनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## १२. गणेशस्तवराजः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ गणेशस्य स्तवं वक्ष्ये कलौ  
 ह्यदिति सिद्धिदम् । न न्यासो न च संस्कारो न होमो न च तर्पणम्  
 ॥ १ ॥ न मार्जनं च पञ्चाशत्सहस्रजपमात्रतः । सिद्धयत्यर्चनतः  
 पञ्चशतब्राह्मणभोजनात् ॥ २ ॥ अस्य श्रीमहागणपतिस्तोत्रमंत्रस्य  
 भगवान् सदाशिव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहागणपतिर्देवता,  
 श्रीमहागणपतिप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥ विनायकैकभावनासमर्च-  
 नासमर्पितं प्रमोदकैः प्रमोदकैः प्रमोदमोदमोदकम् । यदर्पितं  
 सदर्पितं नवान्यधान्यनिर्मितं न कण्डितं न खण्डितं न खण्डमण्डनं  
 कृतम् ॥ ३ ॥ सजातिकृद्विजातिकृत्स्वनिष्ठभेदवर्जितं निरञ्जनं च  
 निर्गुणं निराकृति ह्यनिष्क्रियम् । सदात्मकं चिदात्मकं सुखात्मकं परं

पदं भजामि तं गजाननं स्वमाययात्तविग्रहम् ॥ २ ॥ गणाधिप  
 त्वमष्टमूर्तिरीशसूचुरीश्वरस्त्वमम्बरं च शम्बरं धनञ्जयः प्रभञ्जनः ।  
 त्वमेव दीक्षितः क्षितिर्निशाकरः प्रभाकरश्चराचरप्रचारहेतुरन्तराय-  
 शान्तिकृत् ॥ ३ ॥ अनेकदं तमालनीलमेकदन्तसुन्दरं गजाननं  
 नमोऽगजाननामृताब्धिचन्द्रिरम् । समस्तवेदवादसत्कलाकलाप-  
 मन्दिरं महान्तरायकृत्तमोऽर्कमाश्रितोन्दुहं परम् ॥ ४ ॥ सरत्नहेम-  
 घण्टिकानिनादनूपुरस्वनैर्मृदङ्गतालनादभेदसाधनानुरूपतः । धिमि-  
 द्विमित्तथोङ्गथोङ्गथैथैथैथिशब्दतो विनायकः शशाङ्कशेखरः  
 प्रहृष्य नृत्यति ॥ ५ ॥ सदा नमामि नायकैकनायकं कलाकलाप-  
 कल्पनानिदानमादिपूरुषम् । गणेश्वरं गुणेश्वरं महेश्वरात्मसंभवं  
 स्वपादपद्मसेविनामपारवैभवप्रदम् ॥ ६ ॥ भजे प्रचण्डतुन्दिलं  
 सद्दन्दशूकभूषणं सनन्दनादिवन्दितं समस्तसिद्धसेवितम् । सुरा-  
 सुरौवयोः सदा जयप्रदं भयप्रदं समस्तविघ्नघातिनं स्वभक्तपक्ष-  
 पातिनम् ॥ ७ ॥ कराम्बुजातकङ्कणः पदाब्जकिङ्किणीगणो गणेश्वरो  
 गुणार्णवः फणीश्वराङ्गभूषणः । जगन्नयान्तरायशान्तिकारकोऽस्तु  
 तारको भवार्णवस्थवोरदुर्गहा चिदेकविग्रहः ॥ ८ ॥ यो भक्तिप्रवण-  
 श्वराचरगुरोः स्तोत्रं गणेशाष्टकं शुद्धः संयतचेतसा यदि पठेन्नित्यं  
 त्रिसन्ध्यं पुमान् । तस्य श्रीरतुला स्वसिद्धिसहिता श्रीशारदा  
 सर्वदा स्यातां तत्परिचारिके किल तदा काः कामनानां कथाः ॥ ९ ॥  
 इति श्रीरुद्रयामलोक्तो गणेशस्तवराजः संपूर्णः ॥

### १३. गणेशपंचरत्नस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मुदा करात्तमोदकं सदा विमुक्तिसाधकं  
 कलाधराव्रतंसकं विलासिलोकरक्षकम् । अनायकैकनायकं विना-  
 शितेभदैत्यकं नताशुभाशुनाशकं नमामि तं विनायकम् ॥ १ ॥

नतेतरातिभीकरं नवोदितार्कभास्वरं नमत्सुरारिनिर्जरं नताधिकाप-  
 दुद्धरम् । सुरेश्वरं निधीश्वरं गजेश्वरं गणेश्वरं महेश्वरं तमाश्रये परात्परं  
 निरंतरम् ॥ २ ॥ समस्तलोकशंकरं निरस्तदैत्यकुंजरं दरेतरोदरं  
 वरं वरेभवक्त्रमक्षरम् । कृपाकरं क्षमाकरं मुदाकरं यशस्करं मन-  
 स्करं नमस्कृतां नमस्करोमि भास्वरम् ॥ ३ ॥ अर्किचनार्तिमार्जनं  
 चिरंतनोक्तिभाजनं पुरारिपूर्वनन्दनं सुरारिगर्वचर्वणम् । प्रपञ्च-  
 नाशभीषणं धनं जयादिभूषणं कपोलदानवारणं भजे पुराण-  
 वारणम् ॥ ४ ॥ नितांतकांतदंतकांतिमंतकांतकात्मजमर्चित्य-  
 रूपमंतहीनमंतरायकृतनम् । हृदंतरे निरंतरं वसंतमेव योगिनां  
 तमेकदंतमेव तं विचिन्तयामि संततम् ॥ ५ ॥ महागणेश-  
 पंचरत्नमादरेण योऽन्वहं प्रगायति प्रभातकं हृदि स्मरन् गणेश्वरम् ।  
 अरोगतामदोषतां सुसाहितीं सुपुत्रतां समाहितायुरष्टभूतिमपैभ्युति  
 सोऽचिरात् ॥ ६ ॥ इति श्रीगणेशपंचरत्नस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १४. गजाननस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जय देव गजानन प्रभो जय सर्वासुरगर्व-  
 भेदक । जय संकटपाशमोचन प्रणवाकार विनायकाऽव माम् ॥ १ ॥  
 तव देव जयन्ति भूतयः कलितागण्यसुपुण्यकीर्तयः । मनसा  
 भजतां हतार्तयः कृतशीघ्राधिककामपूर्तयः ॥ २ ॥ तव रम्यकथा-  
 स्वनादरः स नरो जन्मलयैकमन्दिरम् । न परत्र न चेह सौख्य-  
 भाङ् निजदुष्कर्मवशाद्विमोहभाक् ॥ ३ ॥ गजवक्त्र तवांप्रिपङ्कजे  
 ध्वजवज्राङ्कयुते सदा भजे । तव मूर्तिमहं परिष्वजे त्वयि हन्मेऽस्तु  
 सुमूषकध्वजे ॥ ४ ॥ त्वदृते हि गजानन प्रभो न हि भक्तौघसुखौ-  
 घदायकः । सुदृढा सम भक्तिरस्तु ते चरणाब्जे विबुधेश विश्वपाः  
 ॥ ५ ॥ फलपूरगदेक्षुकार्मुकैर्युत खच्चक्रधराब्जपाशधृक् । अव

वारिजशालिमञ्जरीरदध्रप्रलघटाढ्यशुण्ड भाम् ॥ ६ ॥ करयुग्म-  
 सुहेमशृङ्खल द्विजराजाढ्यक तुदिलोदर । शशिसुप्रभ विद्यया युत  
 स्तनभारानमितेढ्य रक्ष माम् ॥ ७ ॥ शशिभास्करवीतिहोत्रदक् शुभ-  
 सिन्दूररुचे विनायक । द्विपवक्त्र महाहिभूषण त्रिविवेशासुरवन्द्य  
 पाहि माम् ॥ ८ ॥ सृणिपाशवरद्विजैर्युत द्विजराजार्धक मूषक-  
 ध्वज । शुभलोहितचन्दनोक्षित श्रुतिवेद्याभयदायकाऽव माम् ॥ ९ ॥  
 स्मरणात्तव शंभुविध्यजेंद्रिनशक्रादिसुराः कृतार्थताम् । गणपा-  
 ऽऽपुरघौघभञ्जन द्विपराजाऽस्य सदैव पाहि माम् ॥ १० ॥ शरणं  
 भगवान्विनायकः शरणं मे सततं च सिद्धिका । शरणं पुनरेव  
 तावुभौ शरणं नान्यदुपैमि दैवतम् ॥ ११ ॥ गलद्दानगण्डं महा-  
 हस्तिगुण्डं सुपर्वप्रचण्डं धृतार्धेन्दुखण्डम् । करास्फोटिताण्डं  
 महाहस्तदण्डं हृताढ्यारिमुण्डं भजे वक्रगुण्डम् ॥ १२ ॥ गणनाथ  
 निबन्धसंस्तवं कृपयाङ्गीकुरु मत्कृतं ह्यमुम् । इदमेव सदा प्रदीयतां  
 करुणा मय्यतुलाऽस्तु सर्वदा ॥ १३ ॥ इति गजाननस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ।

### १५. गणपतिस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऋषिस्वाच ॥ अजं निर्विकल्पं निराकारमेकं  
 निरानन्दमानन्दमद्वैतपूर्णम् । परं निर्गुणं निर्विशेषं निरीहं परब्रह्म-  
 रूपं गणेशं भजेम ॥ १ ॥ गुणातीतमानं चिदानन्दरूपं चिदाभासकं  
 सर्वगं ज्ञानगम्यम् । मुनिध्येयमाकाशरूपं परेशं परब्रह्मरूपं गणेशं  
 भजेम ॥ २ ॥ जगत्कारणं कारणज्ञानरूपं सुरादिं सुखादिं गणेशं  
 गुणेशम् । जगद्व्यापिनं विश्ववन्द्यं सुरेशं परब्रह्मरूपं गणेशं भजेम  
 ॥ ३ ॥ रजोयोगतो ब्रह्मरूपं श्रुतिज्ञं सदा कार्यसकं हृदाऽचिन्त्य-



रूपम् । जगत्कारणं सर्वविद्यानिदानं परब्रह्मरूपं गणेशं नताः स्मः  
 ॥ ४ ॥ सदा सत्ययोग्यं मुदा क्रीडमानं सुरारीन्हरतं जगत्पाल-  
 यंतम् । अनेकावतारं निजज्ञानहारं सदा विश्वरूपं गणेशं नमामः  
 ॥ ५ ॥ तमोयोगिनं रुद्ररूपं त्रिनेत्रं जगद्धारकं तारकं ज्ञानहेतुम् ।  
 अनेकागमैः स्वं जन्म बोधयन्तं सदा सर्वरूपं गणेशं नमामः ॥ ६ ॥  
 नमः स्तोमहारं जनाज्ञानहारं त्रयीवेदसारं परब्रह्मसारम् । मुनि-  
 ज्ञानकारं विदूरे विकारं सदा ब्रह्मरूपं गणेशं नमामः ॥ ७ ॥  
 निजैरोषधीस्तर्पयन्तं कराद्यैः सुरौघान्कलाभिः सुधास्त्राविणीभिः ।  
 दिनेशांशुसंतापहारं द्विजेशं शशांकस्वरूपं गणेशं नमामः ॥ ८ ॥  
 प्रकाशस्वरूपं नमो वायुरूपं विकारादिहेतुं कलाभारभूतम् । अनेक-  
 क्रियानेकशक्तिस्वरूपं सदा शक्तिरूपं गणेशं नमामः ॥ ९ ॥  
 प्रधानस्वरूपं महत्तत्त्वरूपं धराचारिरूपं दिगीशादिरूपम् । असत्स-  
 त्त्वरूपं जगद्धेतुरूपं सदा विश्वरूपं गणेशं नताः स्मः ॥ १० ॥  
 त्वदीये मनः स्थापयेदंद्रियुग्मे जनो विघ्नसंचातपीडां लभेत ।  
 लसत्सूर्यबिम्बे विशाले स्थितोऽयं जनो ध्वान्तपीडां कथं वा लभेत  
 ॥ ११ ॥ वयं भ्रामिताः सर्वथाऽज्ञानयोगादलब्धास्तवांग्रि  
 बहून्वर्षपूर्गान् । इदानीमवाप्तास्तवैव प्रसादात्प्रपन्नान्सदा पाहि  
 विश्वभराद्य ॥ १२ ॥ एवं स्तुतो गणेशस्तु संतुष्टोऽभून्महामुने ।  
 कृपया परयोपेतोऽभिधातुमुपचक्रमे ॥ १३ ॥ इति ऋषिप्रणीतो  
 गणपतिस्तवः संपूर्णः ॥

### १६. गणेशभुजंगप्रयातम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ रणत्क्षुद्रघंटानिनादाभिरामं चलत्ताडवोहंड-  
 चत्पद्मतालम् । लसत्तुंदिलाङ्गोपरिख्यालहारं गणाधीशमीशान-

सूनुं तमीडे ॥ १ ॥ ध्वंसिध्वंसवीणालयोह्लासिवक्त्रं स्फुरच्छुड-  
दंडोलसद्बीजपूरम् । गल्दपैसांगंध्यलोलालिमालं गणाधीशमीशा-  
नसूनुं तमीडे ॥ २ ॥ प्रकाशजपारत्तरत्नप्रसूनप्रवालप्रभातारुणज्यो-  
तिरेकम् । प्रलम्बोदरं वक्रतुंडैकदंतिं गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे  
॥ ३ ॥ विचित्रस्फुरद्रत्नमालाकिरीटं किरीटोलसच्चन्द्रेखाविभूषम् ।  
विभूषैकभूषं भवध्वंसहेतुं गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे ॥ ४ ॥ उद-  
ञ्जुजावल्लरीदृश्यमूलोच्चलद्भ्रूलताविभ्रमभ्राजदक्षम् । मरुत्सुन्द-  
रीचामरैः सेव्यमानं गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे ॥ ५ ॥ स्फुरन्नि-  
धुरालोलपिङ्गाक्षितारं कृपाकोमलोदारलीलावतारम् । कलाबिंदुगं-  
गीयते योगिवयैर्गणाधीशमीशानसूनुं तमीडे ॥ ६ ॥ यमेकाक्षरं  
निर्मलं निर्विकल्पं गुणातीतमानन्दमाकारशून्यम् । परं पारमोकार-  
माज्ञायगर्भं वदन्ति प्रगल्भं पुराणं तमीडे ॥ ७ ॥ चिदानन्द-  
सांद्राय शान्ताय तुभ्यं नमो विश्वकर्त्रे च हर्त्रे च तुभ्यम् । नमोऽ-  
नन्तलीलाय कैवल्यभासे नमो विश्वबीज प्रसीदेशसूनो ॥ ८ ॥  
इमं सुस्तवं प्रातरुत्थाय भक्त्या पठेद्यस्तु मर्त्यो लभेत्सर्वकामान् ।  
गणेशप्रसादेन सिद्ध्यन्ति वाचो गणेशे विभौ दुर्लभं किं प्रसन्ने ॥ ९ ॥  
इति श्रीगणेशभुजंगप्रयातस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १७. गणेशशतनामार्चनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ काश्यां तु बहवो विघ्नाः काशीवासवियो-  
जकाः । तच्छांत्यर्थं हुंठिराजः पूजनीयः प्रयत्नतः ॥ १ ॥  
अष्टोत्तरशतैर्दिव्यैर्गणशस्यैव नामभिः । कर्तव्यमतियत्नेन नवदूर्वा-  
ङ्कुरार्पणम् ॥ २ ॥ हिरण्यमतनुं शुद्धं सर्वार्तिहरमव्ययम् । वरदं  
गणपं ध्यात्वा पूजा कार्या प्रयत्नतः ॥ ३ ॥ ऋषिर्विघ्नेश इत्यादिनाम्नां  
सर्वेश्वरः शिवः । देवता विघ्नराजोऽत्र छन्दोऽनुष्टुप् शुभप्रदम् ॥ ४ ॥

सर्वप्रत्यूहशमनं फलं शक्तिः सुधात्मिका । कीलकं गणनाथस्य  
 पूजा कार्येति कामदा ॥ ५ ॥ विघ्नेशो विश्ववदनो विश्वचक्षु-  
 र्जगत्पतिः । हिरण्यरूपः सर्वात्मा ज्ञानरूपो जगन्मयः ॥ ६ ॥  
 ऊर्ध्वरेता महाबाहुरमेयोऽमितविक्रमः । वेदवेद्यो महाकायो विद्या-  
 निधिरनामयः ॥ ७ ॥ सर्वज्ञः सर्वगः शांतो गजास्यो विगत-  
 ज्वरः । विश्वमूर्तिरमेयात्मा विश्वाधारः सनातनः ॥ ८ ॥ सामगान-  
 प्रियो मंत्री सत्त्वाधारः सुराधिपः । समस्तसाक्षिनिर्द्वन्द्वो निर्लि-  
 तोऽमोघविक्रमः ॥ ९ ॥ नियतो निर्मलः पुण्यः कामदः कांतिदः  
 कविः । कामरूपी कामवेपो कमलाक्षः कलाधरः ॥ १० ॥ सुमुखः  
 शर्मदः शुद्धो मूषकाधिपवाहनः । दीर्घतुण्डधरः श्रीमाननंतो  
 मोहवर्जितः ॥ ११ ॥ वक्रतुण्डः शूर्पकर्णः पवनः पावनो वरः ।  
 योगीशो योगिविद्यांघ्रिरुमासुनुरघापहः ॥ १२ ॥ एकदंतो  
 महाग्रीवः शरण्यः सिद्धिसेवितः । सिद्धिदः करुणासिंधुर्भगवान्  
 भव्यविग्रहः ॥ १३ ॥ विकटः कपिलो दुन्दिरूपो भीमो हरः शुभः ।  
 गणाध्यक्षो गणाराध्यो गणेशो गणनायकः ॥ १४ ॥ ज्योतिःस्व-  
 रूपो भूतात्मा धूम्रकेतुरनाकुलः । कुमारगुरुरानन्दो हेरम्बो वेद-  
 संस्तुतः ॥ १५ ॥ नागोपवीती दुर्धर्षो बालदूर्वाङ्कुरप्रियः । भाल-  
 चंद्रो विश्वधामा शिवपुत्रो विनायकः ॥ १६ ॥ लीलावलम्बितवपुः  
 पूर्णः परमसुन्दरः । विद्यान्धकारमार्तडो विघ्नारण्यदवानलः  
 ॥ १७ ॥ सिंदूरवदनो नित्यो विष्णुः प्रमथपूजितः । शरण्यदिव्य-  
 पादाब्जो भक्तमन्दारभूरुहः ॥ १८ ॥ रत्नसिंहासनासीनो मणि-  
 कुंडलमण्डितः । भक्तकल्याणदोऽमेयकल्याणगुणसंश्रयः ॥ १९ ॥  
 एतानि दिव्यनामानि गणेशस्य महात्मनः । पठनीयानि यत्नेन  
 सर्वदा सर्वदेहिभिः ॥ २० ॥ नाम्नामेकैकमेतेषां सर्वसिद्धिप्रदा-

यकम् । सर्वविघ्नेशानाम्नां तु फलं वक्तुं न शक्यते ॥ २१ ॥ एकैकमेव  
 तन्नाम दिव्यं जप्त्वा मुनीश्वराः । प्रत्यूहमात्ररहितास्तिष्ठन्ति शिव-  
 पूजकाः ॥ २२ ॥ दूर्वायुग्मानि संगृह्य नूतनान्यतियत्नतः । पूजनीयो  
 गणाध्यक्षो नाम्नामेकैकसंख्यया ॥ २३ ॥ नभस्यशुक्लपक्षस्य  
 चतुर्थ्यां विधिपूर्वकम् । वक्रतुंडेशकुंडे तु स्नानं कृत्वा प्रयत्नतः  
 ॥ २४ ॥ वक्रतुंडेशमाराध्यं सर्वाभीष्टप्रदायकम् । ध्यायेदवहरं  
 शुद्धं काञ्चनाभमनामयम् ॥ २५ ॥ ततः पूजा यथाशास्त्रं कृत्वा  
 दूर्वाङ्कुरैर्नवैः । पूजा कार्या विशेषेण नामोच्चारणपूर्वकम् ॥ २६ ॥  
 ततश्च मोदकैर्दिव्यैः सुगन्धैर्घृतपाचितैः । नैवेद्यं कल्पयेदिष्टं  
 गणेशाय शुभावहम् ॥ २७ ॥ अन्यैश्च परमाश्नाद्यैर्भक्ष्यैर्भोज्यै-  
 र्मनोहरैः । तोषणीयः प्रयत्नेन वक्रतुंडो विनायकः ॥ २८ ॥ प्रद-  
 क्षिणनमस्कारा दिव्यतन्नामसंख्यया । कर्तव्या नियतं शुद्धैर्मौनव्रत-  
 परायणैः ॥ २९ ॥ ततः संतर्प्य विधिवच्छैवान् ब्राह्मणसत्तमान् ।  
 पुनरभ्यर्च्य विघ्नेशमिमं मंत्रमुदीरयेत् ॥ ३० ॥ वक्रतुंड सुराराध्य  
 सूर्यकोटिसमप्रभ । निर्विघ्नेनैव सततं काशीवासं प्रयच्छ मे  
 ॥ ३१ ॥ इति संप्रार्थ्य विधिवत् पूजां कृत्वा पुनर्मुदा । नमस्कृत्वा  
 प्रसाद्यैनं गच्छेत् ढुंढिविनायकम् ॥ ३२ ॥ ढुंढिराजार्चनं सम्यक्  
 कर्तव्यं विधिपूर्वकम् । तत्रैव च विशेषेण पूजां कृत्वा ततः परम्  
 ॥ ३३ ॥ पूजनीयाः प्रयत्नेन सर्वदा मोदकप्रियाः । शिवप्रीतिकरा  
 नित्यं शुद्धाः पञ्च विनायकाः ॥ ३४ ॥ क्षिप्रसिद्धिप्रदं क्षिप्रगणेशं  
 सुरवंदितम् । संपूज्य पूर्ववत्सम्यक् गच्छेदाशाविनायकम् ॥ ३५ ॥  
 आशाविनायकं सम्यक् पूजयित्वा ततः परम् । अर्कविघ्नेश्वरः  
 सम्यक् पूजनीयः प्रयत्नतः ॥ ३६ ॥ पूर्ववत्पूजनीयः स्यात्ततः  
 सिद्धिविनायकः । पूजनीयस्ततः सम्यक् चिन्तामणिविनायकः

॥ ३७ ॥ सेवाविनायकोऽप्येवं संपूज्यस्तदनन्तरम् । दुर्गाविनायक-  
स्यापि पूजा कार्या ततः परम् ॥ ३८ ॥ एवं संपूज्य विधिवद्भक्ति-  
श्रद्धासमन्वितैः । शैवाः शङ्करतत्त्वज्ञा भोजनीयाः प्रयत्नतः  
॥ ३९ ॥ एवं संपूजिताः सम्यक् प्रीतास्ते गणनायकाः । काशीवासं  
प्रयच्छन्ति निर्विघ्नेनैव सादरम् ॥ ४० ॥ आज्येन कापिलेनैव  
सार्धलक्षत्रयाहुतीः । हुत्वैतन्नामभिः सम्यक् सर्वविद्याधिपो भवेत्  
॥ ४१ ॥ एतानि दिव्यनामानि प्रतिवासरमादरात् । पठित्वा गण-  
नाथस्य पूजा कार्या प्रयत्नतः ॥ ४२ ॥ यस्य कस्यापि संतुष्टो गणपः  
सर्वसिद्धिदः । अत एव सदा पूज्यो गणनाथो विचक्षणैः ॥ ४३ ॥  
गणेशादपरो लोके विघ्नहर्ता न विद्यते । तस्मादन्वहमाराध्यो गणेशः  
सर्वसिद्धिदः ॥ ४४ ॥ काशीनिवाससिद्ध्यर्थं विष्णुना पूजितः  
पुरा । पुरा विघ्नेश्वरः सम्यक्पूजितो दण्डपाणिना ॥ ४५ ॥ कर्को-  
टकेन नागेन गणेशः पूजितः पुरा । शेषेण पूजितः पूर्वं गणेशः  
सिद्धिदायकः ॥ ४६ ॥ काशीयात्रार्थमुद्युक्तो विधिर्विघ्नकुलाकुलः ।  
पूजयामास विघ्नेशं विधिवद्भक्तिपूर्वकम् ॥ ४७ ॥ सूर्येणाम्यर्चितः  
पूर्वं चंद्रेणेद्रेण च प्रिये । देवैरन्यैश्च विधित्पूजितो गणनायकः  
॥ ४८ ॥ मर्त्यानाममराणां च मुनीनां वा वरानने । न सिद्ध्य-  
न्त्येव कार्याणि गणेशाम्यर्चनं विना ॥ ४९ ॥ इति श्रीशिवरहस्या-  
न्तर्गतकाशीमाहात्म्ये हरगौरीसंवादे गणेशशतनामार्चनस्तोत्रं  
संपूर्णम् ॥

### १८. दुंदिभुजंगप्रयातस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ उमांगोद्भवं दंतिवक्त्रं गणेशं भुजे कङ्कणैः  
शोभितं धूम्रकेतुम् । गले हारमुक्तावलीशोभितं तं नमो ज्ञानरूपं

गणेश नमस्ते ॥ १ ॥ गणेशैकदन्तं शुभं सर्वकार्ये स्मरन्मन्मुखं  
 ज्ञानदं सर्वसिद्धिम् । मनश्चिन्तितं कार्यसिद्धिर्भवेत्तं नमो बुद्धि-  
 कान्तं गणेशं नमस्ते नमस्ते ॥ २ ॥ कुठारं धरन्तं कृतं विघ्नराजं  
 चतुर्भिर्मुखैरेकदन्तैकवर्णम् । इदं देवरूपं गणं सिद्धिनाथं नमो  
 भालचन्द्रं गणेशं नमस्ते ॥ ३ ॥ शिरःसिन्दुरं कुङ्कुमं देहवर्णं  
 शुभैर्भादिकं प्रीयते विघ्नराजम् । महासंकटच्छेदने धूम्रकेतुं नमो  
 गौरिपुत्रं गणेशं नमस्ते ॥ ४ ॥ यथा पातकं छेदितुं विष्णुनाम तथा  
 ध्यायतां शंकरं पापनाशम् । यथा पूजितं षण्मुखं शोकनाशं नमो  
 विघ्ननाशं गणेशं नमस्ते ॥ ५ ॥ सदा सर्वदा ध्यायतामेकदन्तं  
 सदा पूजितं सिंदुरारक्तपुष्पैः । सदा चर्चितं चन्दनैः कुङ्कुमार्क्तं  
 नमो ज्ञानरूपं गणेशं नमस्ते ॥ ६ ॥ नमो गौरिदेहमलोत्पन्न  
 तुभ्यं नमो ज्ञानरूपं नमः सिद्धिपं तम् । नमो ध्यायतामर्चतां  
 बुद्धिदं तं नमो गौर्यपत्यं गणेशं नमस्ते ॥ ७ ॥ भुजङ्गप्रयातं  
 पठेद्यस्तु भक्त्या प्रभाते नरस्तन्मयैकाग्रचित्तः । क्षयं यान्ति  
 विघ्ना दिशः शोभयन्तं नमो ज्ञानरूपं गणेशं नमस्ते ॥ ८ ॥  
 इति श्रीहुंटराजभुजंगप्रयातस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १९. विघ्ननिवारकं गणपतिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विघ्नेश विघ्नचयखण्डननामधेय श्रीशङ्करात्मज  
 सुराधिपवन्द्यपाद । दुर्गामहाव्रतफलाखिलमङ्गलात्मन् विघ्नं ममापहर  
 सिद्धिविनायक त्वम् ॥ १ ॥ सत्पद्मरागमणिवर्णशरीरकान्तिः  
 श्रीसिद्धिबुद्धिपरिचर्चितकुङ्कुमश्रीः । दक्षस्तने वलयितातिमनोज्ञ-  
 शुण्डो विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक त्वम् ॥ २ ॥ पाशाङ्कुशा-  
 क्षपरशूश्च दधच्चतुर्भिर्दोर्भिश्च शोणकुसुमस्रगुमांगजातः । सिन्दूर-  
 शोभितललाटविभुप्रकाशो विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक त्वम्

॥ ३ ॥ कार्येषु विघ्नचयभीतविरब्धिमुख्यैः सम्पूजितः सुरवरैरपि  
मोदकाद्यैः । सर्वेषु च प्रथममेव सुरेषु पूज्यो विघ्नं ममापहर  
सिद्धिविनायक त्वम् ॥ ४ ॥ शीघ्राञ्जनस्खलनचुंखरवोर्ध्वकण्ठस्थू-  
लोन्दुरुद्रवणहासितदेवसङ्घः । शूर्पश्रुतिश्च पृथुवर्तुलतुङ्गतुन्दो विघ्नं  
ममापहर सिद्धिविनायक त्वम् ॥ ५ ॥ यज्ञोपवीतपदलंभितना-  
गराजो मासादिपुण्यददृशीकृतऋक्षराजः । भक्ताभयप्रद दयालय  
विघ्नराज विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक त्वम् ॥ ६ ॥ सद्रत्नसा-  
रततिराजितसत्किरीटः कौसुम्भचारुवसनद्वय ऊर्जितश्रीः । सर्वत्रम-  
ङ्गलकरस्मरणप्रतापो विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक त्वम् ॥ ७ ॥  
देवान्तकाद्यसुरभीतसुरार्तिहर्ता विज्ञानबोधनवरेण तमोपहर्ता ।  
आनन्दितत्रिभुवनेश कुमारबन्धो विघ्नं ममापहर सिद्धिविनायक  
त्वम् ॥ ८ ॥ इति विघ्ननिवारकं गणपतिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

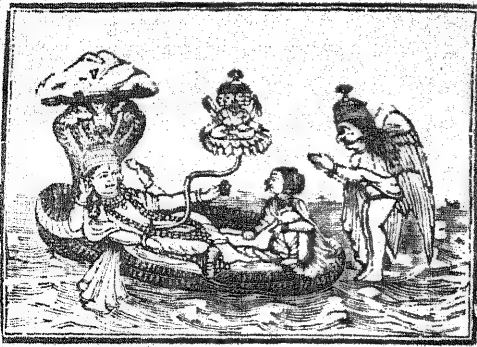
### २०. मयूरेश्वरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सर्वे ऊचुः ॥ परब्रह्मरूपं चिदानंदरूपं परेशं  
गुणाब्धिं गुणेशम् । गुणातीतमीशं मयूरेशवं च गणेशं नताः स्तो-  
नताः स्तो नताः स्तः ॥ १ ॥ जगद्विघ्नमेकं पराकारमेकं गुणानां  
परं कारणं निर्विकल्पम् । जगत्पालकं हारकं तारकं तं मयूरेशवं च  
नताः स्तो नताः स्तः ॥ २ ॥ महादेवसूनुं महादैत्यनाशं महापूरुषं  
सर्वदा विघ्ननाशम् । सदा भक्तपोषं परं ज्ञानकोशं मयूरेशं ॥ ३ ॥  
अनादिं गुणादिं सुरादिं शिवाया महातोषदं सर्वदा सर्ववन्द्यम् ।  
सुरार्यतकं भुक्तिमुक्तिप्रदं तं मयूरेशं ॥ ४ ॥ परं मायिनं मायिना-  
मप्यगम्यं मुनिध्येयमाकाशकल्पं जनेशम् । असंख्यावतारं निजाज्ञा-  
ननाशं मयूरेशं ॥ ५ ॥ अनेकक्रियाकारकं श्रुत्यगम्यं त्रयीबोधिता-  
नेककर्मादिबीजम् । क्रियासिद्धिहेतुं सुरेंद्रादिसेव्यं मयूरेशं ॥ ६ ॥

महाकालरूपं निमेषादिरूपं कलाकल्परूपं सदागम्यरूपम् । जन-  
 ज्ञानहेतुं नृणां सिद्धिदं तं मयूरेशः ॥ ७ ॥ महेशादिदेवैः सदा  
 ध्येयपादं सदा रक्षकं तत्पदानां हतारिम् । मुदा कामरूपं कृपा-  
 वारिधिं तं मयूरेशः ॥ ८ ॥ सदा भक्तिं नाथे प्रणयपरमानन्दसुखदो  
 यतस्त्वं लोकानां परमकरुणामाशु तनुपे । षड्दूर्मीनां वेगं सुरवर  
 विनाशं नय विभो ततो भक्तिः श्लाघ्या तव भजनतोऽनन्य-  
 सुखदात् ॥ ९ ॥ किमस्माभिः स्तोत्रं सकलसुरतापालक विभो  
 त्रिधेयं विश्वात्मन्नगणितगुणानामधिपते । न संख्याता भूमिस्तव  
 गुणगणानां त्रिभुवने न रूपाणां देव प्रकटय कृपां नोऽसुरहते  
 ॥ १० ॥ मयूरेशं नमस्कृत्य ततो देवोऽब्रवीच्च तान् । य इदं  
 पठते स्तोत्रं स कामाँल्लभतेऽखिलान् ॥ ११ ॥ सर्वत्र जयमाप्नोति  
 मानमायुः श्रियं पराम् । पुत्रवान् धनसंपन्नो वश्यतामखिलं नयेत्  
 ॥ १२ ॥ सहस्रावर्तनात्कारागृहस्थं मोचयेज्जनम् । नित्युतावर्तना-  
 न्मर्त्यो साध्यं यत्साधयेत्क्षणात् ॥ १३ ॥ इति श्रीगणेशपुराणे  
 उत्तरखण्डे बालचरित्रे मयूरेश्वरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



## विष्णुस्तोत्राणि ।



यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदातिनो  
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्तेति नैयायिकाः ।  
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः  
सोऽयं वो विदधातु वाञ्छितफलं त्रैलोक्यनाथो हरिः ॥

## विष्णुस्तोत्राणि ।

### २१. नारायणवर्म ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ राजोवाच ॥ यया गुप्तः सहस्राक्षः सबाहान्  
रिपुसैनिकान् । क्रीडन्निव विनिर्जित्य त्रिलोक्या बुभुजे श्रियम्  
॥ १ ॥ भगवंस्तन्ममाख्याहि वर्म नारायणात्मकम् । यथाततायिनः  
शत्रून् येन गुप्तोऽजयन्मृधे ॥ २ ॥ श्रीशुक उवाच ॥ वृतः पुरोहित-  
स्त्वाष्ट्रो मर्हेद्रायानुपृच्छते । नारायणाख्यं वर्माह तदिहैकमनाः  
शृणु ॥ ३ ॥ विश्वरूप उवाच ॥ धौताग्निपाणिराचम्य सपवित्र  
उदङ्मुखः । कृतस्वांगकरन्यासो मंत्राभ्यां वाग्यतः शुचिः ॥ ४ ॥  
नारायणमयं वर्म संनह्येद्भय आगते । दैवभूतात्मकर्मभ्यो नारायण-  
मयः पुमात् ॥ ५ ॥ पादयोर्जानुनोरूर्वोरुदरे हृद्यथोरसि । मुखे  
शिरस्यानुपूर्व्यादौकारादीनि विन्यसेत् ॥ ६ ॥ ॐ नमो नारायणायेति  
विपर्ययमथापि वा । करन्यासं ततः कुर्याद्वादशाक्षरविद्यया ॥ ७ ॥  
प्रणवादि यकारांतमंगुल्यंगुष्ठपर्वसु । न्यसेद्भृदय ॐकारं विकारमनु  
मूर्धनि ॥ ८ ॥ षकारं तु भ्रुवोर्मध्ये णकारं शिखया न्यसेत् । वैकारं  
नेत्रयोर्युज्यान्नकारं सर्वसंधिषु ॥ ९ ॥ मकारमस्त्रमुद्दिश्य मंत्रमूर्ति-  
र्भवेद्बुधः । सविसर्गं फडंतं तत्सर्वदिक्षु विनिर्दिशेत् ॥ १० ॥ ॐ विष्णवे  
नमः ॥ इत्यात्मानं परं ध्यायेद्येयं षट्शक्तिभिर्युतम् । विद्या-  
तेजस्तपोमूर्तिमिमं मंत्रमुदाहरेत् ॥ ११ ॥ ॐ हरिर्विदध्यान्मम  
सर्वरक्षां न्यस्ताग्निपद्मः पतंगेन्द्रपृष्ठे । दरारिचर्मासिगदेषुचापपाशा-  
न्दधानोऽष्टगुणोऽष्टबाहुः ॥ १२ ॥ जलेषु मां रक्षतु मत्स्यमूर्तिर्यादो-  
गणेभ्यो वरुणस्य पाशात् । स्थलेषु मायाबटुवामनोऽव्यात् त्रिविक्रमः  
खेऽवतु विश्वरूपः ॥ १३ ॥ दुर्गेष्वटव्याजिमुखादिषु प्रभुः पायान्

सिंहोऽसुरयूथपारिः । विमुंचतो यस्य महादृहासं दिशो विनेदुर्न्य-  
 पतंश्च गर्भाः ॥ १४ ॥ रक्षत्वसौ माऽध्वनि यज्ञकल्पः स्वदंष्ट्रयो-  
 ज्जीतधरो वराहः । रामोऽद्रिकूटेष्वथ विप्रवासे सलक्ष्मणोऽव्याद्धर-  
 ताग्रजो माम् ॥ १५ ॥ मामुग्रधर्मादखिलात्प्रमादाच्चारायणः पातु  
 नरश्च हासात् । दत्तस्त्वयोगादथ योगनाथः पायाद्गुणेशः कपिलः  
 कर्मबंधात् ॥ १६ ॥ सनत्कुमारोऽवतु कामदेवाद्धयग्रीवो मां पथि  
 देवहेलनात् । देवर्षिवर्यः पुरुषार्चनांतरात्कूर्मो हरिर्मां निरयाद-  
 शेषात् ॥ १७ ॥ धन्वंतरिर्मगवान्पात्वपथ्याह्मं द्वाद्भयादृषभो निर्जि-  
 तात्मा । यज्ञश्च लोकादवताज्जनांताद्वलो गणात्क्रोधवशादहर्हिदः  
 ॥ १८ ॥ द्वैपायनो भगवानप्रबोधाद्बुद्धस्तु पाषंडगणात्प्रमादात् ।  
 कल्किः कलेः कालमलात्प्रपातु धर्मावनायोरुद्धतावतारः ॥ १९ ॥  
 मां केशवो गदया प्रातरव्याद्गोविंद आसंगव आत्तवेणुः । नारायणः  
 ग्राह्य उदात्तशक्तिर्मध्यंदिने विष्णुररींद्रपाणिः ॥ २० ॥ देवोऽपराह्णे  
 मधुहोमधन्वा सायं त्रिधामाऽवतु माधवो माम् । दोषे हृषीकेश  
 उतार्धरात्रे निशीथ एकोऽवतु पद्मनाभः ॥ २१ ॥ श्रीवत्सधामाऽ-  
 पररात्र ईशः प्रत्यूष ईशोऽसिधरो जनार्दनः । दामोदरोऽव्यादनु-  
 संध्यं प्रभाते विश्वेश्वरो भगवान्कालमूर्तिः ॥ २२ ॥ चक्रं युगांता-  
 नलतिग्मनेमि भ्रमत्समंताद्भगवत्प्रयुक्तम् । दंदग्वि दंदग्विरिसैन्य-  
 माशु कक्षं यथा वातसखो हुताशः ॥ २३ ॥ गदेऽशनिस्पर्शन-  
 विस्फुलिंगे निष्पिण्डि निष्पिण्ड्यजितप्रियासि । कूष्मांडवैनायक्यक्षरक्षो-  
 भूतग्रहांश्चूर्णय चूर्णयारीन् ॥ २४ ॥ त्वं यातुधानप्रमथप्रेतमातु-  
 पिशाचविप्रग्रहघोरदृष्टीन् । नरैर्द्रविद्रावय कृष्णपूरितो भीमस्वनोऽरे-  
 हंदया नि कंपयन् ॥ २५ ॥ त्वं तिग्मधारासिवरारिसैन्यमीशप्रयुक्तो  
 मम छिंधि छिंधि । चक्षुषि चर्मन् शतचंद्र छादय द्विषामघानां हर

पापचक्षुषाम् ॥ २६ ॥ यज्ञो भयं ग्रहेभ्योऽभूत्केतुभ्यो नृभ्य एव  
 च । सरीसृपेभ्यो दंष्ट्रिभ्यो भूतेभ्योऽघेभ्य एव च ॥ २७ ॥  
 सर्वाण्येतानि भगवन्नामरूपास्त्रकीर्तनात् । प्रयांतु संक्षयं सद्यो  
 येऽन्ये श्रेयःप्रतीपकाः ॥ २८ ॥ गरुडो भगवांस्तोत्रस्तोभश्छंदो-  
 मयः प्रभुः । रक्षत्वशेषकृच्छ्रेभ्यो विष्वक्सेनः स्वनामभिः ॥ २९ ॥  
 सर्वापन्न्यो हरेर्नामरूपयानायुधानि नः । बुद्धीन्द्रियमनःप्राणान् पांतु  
 पार्षदभूषणाः ॥ ३० ॥ यथा हि भगवानेव वस्तुतः सदसच्च यत् ।  
 सत्येनानेन नः सर्वे यांतु नाशमुपद्रवाः ॥ ३१ ॥ यथैकात्म्यानु-  
 भावानां विकल्परहितः स्वयम् । भूषणायुधलिंगाख्या धत्ते शक्तीः  
 स्वमायया ॥ ३२ ॥ तेनैव सत्यमानेन सर्वज्ञो भगवान् हरिः ।  
 पातु सर्वैः स्वरूपैर्नः सदा सर्वत्र सर्वगः ॥ ३३ ॥ विदिक्षु दिक्षू-  
 र्ध्वमधः समंतादंतर्बहिर्भगवान्धारसिंहः । प्रहापयँल्लोकभयं स्वनेन  
 स्वतेजसा ग्रस्तसमस्ततेजाः ॥ ३४ ॥ मघवन्निदमाख्यातं वर्म नारा-  
 यणात्मकम् । विजेष्यस्यंजसा येन दंशितोऽसुरयूथपान् ॥ ३५ ॥  
 एतद्वारयमाणस्तु यं यं पश्यति चक्षुषा । पदा वा संस्पृशेत्सद्यः  
 साध्वसात्स विमुच्यते ॥ ३६ ॥ न कुतश्चिद्भयं तस्य विद्यां धारयतो  
 भवेत् । राजदस्युग्रहादिभ्यो व्याध्यादिभ्यश्च कर्हिचित् ॥ ३७ ॥  
 इमां विद्यां पुरा कश्चित्कौशिको धारयन् द्विजः । योगधारणया  
 स्वांगं जहौ स मरुधन्वनि ॥ ३८ ॥ तस्योपरि विमानेन गंधर्व-  
 पतिरेकदा । ययौ चित्ररथः स्त्रीभिर्वृतो यत्र द्विजक्षयः ॥ ३९ ॥  
 गगनान्यपतत्सद्यः सविमानो ह्यवाक्किशराः । स बालखिल्यवचना-  
 दस्थीन्यादाय विस्मितः ॥ ४० ॥ प्रास्य प्राचीसरस्वत्यां स्नात्वा  
 धाम स्वमन्वगात् । य इदं शृणुयात्काले यो धारयति चादृतः । तं  
 नमस्यंति भूतानि मुच्यते सर्वतोभयात् ॥ ४१ ॥ श्रीशुक उवाच ॥ एतां

विद्यामधिगतो विश्वरूपाच्छतक्रतुः । त्रैलोक्यलक्ष्मीं बुभुजे विनि-  
र्जित्य मृधेऽसुरान् ॥ ४२ ॥ इति श्रीमद्भागवते महापुराणे षष्ठ-  
स्कन्धेऽष्टमेऽध्याये नारायणवर्मस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## २२. विष्णुपंजरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीविष्णुपंजरस्तोत्रमंत्रस्य, नारद  
ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीविष्णुः परमात्मा देवता, अहं  
बीजम्, सोऽहं शक्तिः, ॐ ह्रीं कीलकम्, मम सर्वदेहरक्षणार्थं  
जपे विनियोगः । नारदऋषये नमः मुखे । श्रीविष्णुपरमात्मदेव-  
तायै नमः हृदये । अहं बीजं गुह्ये । सोऽहं शक्तिः पादयोः ।  
ॐ ह्रीं कीलकं पादाग्रे । ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्रौं ह्रौं इति मंत्रः । ॐ ह्रां अंगु-  
ष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः ।  
ॐ ह्रौं अनामिकाभ्यां नमः । ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ह्रः  
करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । इति करन्यासः । अथ हृदयादिन्यासः ।  
ॐ ह्रां हृदयाय नमः । ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा । ॐ ह्रूं शिखायै वषट् ।  
ॐ ह्रौं कवचाय हुम् । ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ ह्रः अस्त्राय फट् ।  
इति अंगन्यासः । अहं बीजप्राणायामं मंत्रत्रयेण कुर्यात् । अथ  
ध्यानम् ॥ परं परस्मात्प्रकृतेरनादिमेकं निविष्टं बहुधा गुहायाम् ।  
सर्वालं सर्वचराचरस्थं नमामि विष्णुं जगदेकनाथम् ॥ १ ॥  
ॐ विष्णुपंजरकं दिव्यं सर्वदुष्टनिवारणम् । उग्रतेजो महावीर्यं  
सर्वशत्रुनिहन्तनम् ॥ २ ॥ त्रिपुरं दहमानस्य हरस्य ब्रह्मणोदितम् ।  
तदहं संप्रवक्ष्यामि आत्मरक्षाकरं नृणाम् ॥ ३ ॥ पादौ रक्षतु  
गोविंदो जंघे चैव त्रिविक्रमः । ऊरू मे केशवः पातु कटिं चैव  
जनार्दनः ॥ ४ ॥ नाभिं चैवाच्युतः पातु गुह्यं चैव तु वामनः ।

उदरं पद्मनाभश्च पृष्ठं चैव तु माधवः ॥ ५ ॥ वामपार्श्वं तथा  
 विष्णुर्दक्षिणं मधुसूदनः । बाहू वै वासुदेवश्च हृदि दामोदरस्तथा  
 ॥ ६ ॥ कंठं रक्षतु वाराहः कृष्णश्च मुखमंडलम् । माधवः कर्ण-  
 मूले तु हृषीकेशश्च नासिके ॥ ७ ॥ नेत्रे नारायणो रक्षेच्छलाटं  
 गरुडध्वजः । कपोलौ केशवो रक्षेद्वैकुण्ठः सर्वतोदिशम् ॥ ८ ॥  
 श्रीवत्सांकश्च सर्वेषामंगानां रक्षको भवेत् । पूर्वस्यां पुंडरीकाक्ष  
 आग्नेय्यां श्रीधरस्तथा ॥ ९ ॥ दक्षिणे नारसिंहश्च नैऋत्यां माधवो-  
 ऽवतु । पुरुषोत्तमो मे वारुण्यां वायव्यां च जनार्दनः ॥ १० ॥  
 गदाधरस्तु कौबेर्यामीशान्यां पातु केशवः । आकाशे च गदा पातु  
 पाताले च सुदर्शनम् ॥ ११ ॥ संनद्धः सर्वगात्रेषु प्रविष्टो विष्णु-  
 पंजरः । विष्णुपंजरविष्टोऽहं विचरामि महीतले ॥ १२ ॥ राजद्वारे-  
 ऽपथे घोरे संग्रामे शत्रुसंकटे । नदीषु च रणे चैव चोरव्याघ्र-  
 भयेषु च ॥ १३ ॥ डाकिनीप्रेतभूतेषु भयं तस्य न जायते । रक्ष  
 रक्ष महादेव रक्ष रक्ष जनेश्वर ॥ १४ ॥ रक्षंतु देवताः सर्वा  
 ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः । जले रक्षतु वाराहः स्थले रक्षतु वामनः  
 ॥ १५ ॥ अटव्यां नारसिंहश्च सर्वतः पातु केशवः । दिवा रक्षतु  
 मां सूर्यो रात्रौ रक्षतु चंद्रमाः ॥ १६ ॥ पंथानं दुर्गमं रक्षेत्सर्वमेव  
 जनार्दनः । रोगविघ्नहृत्तश्चैव ब्रह्महा गुरुतल्पगः ॥ १७ ॥ स्त्रीहंता  
 बालघाती च सुरापो वृषलीपतिः । मुच्यते सर्वपापेभ्यो यः  
 पठेन्नात्र संशयः ॥ १८ ॥ अपुत्रो लभते पुत्रं धनार्थी लभते  
 धनम् । विद्यार्थी लभते विद्यां मोक्षार्थी लभते गतिम् ॥ १९ ॥  
 आपदो हरते नित्यं विष्णुस्तोत्रार्थसंपदः । यस्त्विदं पठति स्तोत्रं  
 विष्णुपंजरमुत्तमम् ॥ २० ॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स  
 गच्छति । गोसहस्रफलं तस्य वाजपेयशतस्य च ॥ २१ ॥ अश्वमेध-

सहस्रस्य फलं प्राप्नोति मानवः । सर्वकामं लभेदस्य पठनाच्चात्र  
संशयः ॥ २२ ॥ जले विष्णुः स्थले विष्णुर्विष्णुः पर्वतमस्तके ।  
ज्वालामालाकुले विष्णुः सर्वं विष्णुमयं जगत् ॥ २३ ॥ इति  
श्रीब्रह्मांडपुराणे इंद्रनारदसंवादे श्रीविष्णुपंजरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २३. श्रीमदच्युताष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अच्युताच्युत हरे परमात्मन् राम कृष्ण  
पुरुषोत्तम विष्णो । वासुदेव भगवन्निरुद्ध श्रीपते शमय दुःखम-  
शेषम् ॥ १ ॥ विश्वमंगल विभो जगदीश नंदनंदन नृसिंह नरेंद्र ।  
मुक्तिदायक मुकुंद मुरारे श्रीपते शमय दुःखमशेषम् ॥ २ ॥  
रामचंद्र रघुनाथक देव दीननाथ दुरितक्षयकारिन् । यादवेंद्र यदु-  
भूषण यज्ञ श्रीपते शमय दुःखमशेषम् ॥ ३ ॥ देवकीतनय  
दुःखदवाप्ते राधिकारमण रम्यसुमूर्ते । दुःखमोचन दयार्णव  
नाथ श्रीपते शमय दुःखमशेषम् ॥ ४ ॥ गोपिकावदनचंद्रचकोर  
नित्य निर्गुण निरंजन जिष्णो । पूर्णरूप जय शंकर सर्व श्रीपते  
शमय दुःखमशेषम् ॥ ५ ॥ गोकुलेश गिरिधारण धीर यासु-  
नाच्छतटखेलन वीर । नारदादिमुनिवंदितपाद श्रीपते शमय  
दुःखमशेषम् ॥ ६ ॥ द्वारकाधिप दुरंतगुणाब्धे प्राणनाथ परिपूर्ण  
भवारे । ज्ञानगम्य गुणसागर ब्रह्मन् श्रीपते शमय दुःखमशेषम्  
॥ ७ ॥ दुष्टनिर्दलन देव दयालो पद्मनाभ धरणीधरधारिन् ।  
रावणांतक रमेश मुरारे श्रीपते शमय दुःखमशेषम् ॥ ८ ॥  
अच्युताष्टकमिदं रमणीयं निर्मितं भवभयं विनिर्हंतुम् । यः पठे-  
द्विषयवृत्तिनिवृत्तिर्जन्मदुःखमखिलं स जहाति ॥ ९ ॥ इति  
श्रीशंकराचार्यविरचितमच्युताष्टकस्तोत्रं समाप्तम् ॥

## २४. अच्युताष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अच्युतं केशवं रामनारायणं कृष्णदामोदरं  
वासुदेवं हरिम् । श्रीधरं माधवं गोपिकावल्लभं जानकीनायकं  
रामचंद्रं भजे ॥ १ ॥ अच्युतं केशवं सत्यभामाधवं माधवं श्रीधरं  
राधिकाराधितम् । इंदिरामंदिरं चेतसा सुंदरं देवकीनंदनं नंदजं  
संदधे ॥ २ ॥ विष्णवे जिष्णवे शंखिने चक्रिणे रुक्मिणी-  
रागिणे जानकीजानये । बल्लवीवल्लभायार्चितायात्मने कंसविध्वंसिने  
वंशिने ते नमः ॥ ३ ॥ कृष्ण गोविंद हे राम नारायण श्रीपते  
वासुदेवाजित श्रीनिधे । अच्युतानंत हे माधवाधोक्षज द्वारका-  
नायक द्रौपदीरक्षक ॥ ४ ॥ राक्षसक्षोभितः सीतया शोभितो  
दंडकारण्यभूषण्यताकारणः । लक्ष्मणेनान्वितो वानरैः सेवितो-  
ऽगस्त्यसंपूजितो राघवः पातु माम् ॥ ५ ॥ धेनुकारिष्टकोऽनिष्ट-  
कृद्वेषिणां केशिहा कंसहृद्वंशिकावादकः । पूतनाकोपकः सूरजा-  
खेलनो बालगोपालकः पातु मां सर्वदा ॥ ६ ॥ विद्युदुद्ध्योतवान्प्र-  
स्फुरद्वाससं प्रावृडंभोदवत्प्रोल्लसद्विग्रहम् । वन्यया मालया  
शोभितोरःस्थलं लोहिताग्निद्वयं वारिजाक्षं भजे ॥ ७ ॥ कुंचितैः  
कुंतलैर्भ्राजमानाननं रत्नमौलिं लसत्कुंडलं गंडयोः । हारकेयूरकं  
कंकणप्रोज्ज्वलं किंकिणीमंजुलं श्यामलं तं भजे ॥ ८ ॥ अच्युत-  
स्याष्टकं यः पठेदिष्टदं प्रेमतः प्रत्यहं पुरुषः सरूपहम् । वृत्ततः  
सुंदरं कर्तुं विश्वंभरं तस्य वश्यो हरिर्जायते सत्वरम् ॥ ९ ॥ इति  
श्रीशंकराचार्यविरचितमच्युताष्टकं संपूर्णम् ॥

## २५. आचार्यकृतषट्पदी ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अविनयमपनय विष्णो दमय मनः शमय  
विषयमृगतृष्णाम् । भूतदयां विस्तारय तारय संसारसागरतः ॥ १ ॥



दिव्यधुनीमकरंदे परिमलपरिभोगसच्चिदानंदे । श्रीपतिपदारविंदे  
 भवभयखेदच्छिदे वंदे ॥ २ ॥ सत्यपि भेदापगमे नाथ  
 तवाहं न मामकीनस्त्वम् । सासुद्रो हि तरंगः क्वचन समुद्रो न  
 तारंगः ॥ ३ ॥ उद्धृतनग नगमिदनुज दनुजकुलामित्र मित्रशशि-  
 दृष्टे । दृष्टे भवति प्रभवति न भवति किं भवतिरस्कारः ॥ ४ ॥  
 भस्त्र्यादिभिरवतारैरवतारवताऽवता सदा वसुधाम् । परमेश्वर परि-  
 पाल्यो भवता भवतापभीतोऽहम् ॥ ५ ॥ दामोदर गुणमंदिर  
 सुंदरवदनारविंद गोविंद । भवजलधिमथनमंदर परमं दरमपनय  
 त्वं मे ॥ ६ ॥ नारायण करुणामय शरणं करवाणि तावकौ चरणौ ।  
 इति षट्पदी मदीये वदनसरोजे सदा वसतु ॥ ७ ॥ इति श्रीम-  
 च्छंकराचार्यविरचितं षट्पदीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २६. मधुसूदनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐमिति ज्ञानमात्रेश रोगाजीर्णेन निर्जितः ।  
 कालनिद्रां प्रपन्नोऽस्मि त्राहि मां मधुसूदन ॥ १ ॥ न गतिर्विद्यते  
 चान्या त्वमेव शरणं मम । पापपङ्के निमग्नोऽस्मि त्राहि० ॥ २ ॥  
 मोहितो मोहजालेन पुत्रदारगृहादिषु । तृष्णया पीड्यमानोऽस्मि  
 त्राहि० ॥ ३ ॥ भक्तिहीनं च दीनं च दुःखशोकातुरं प्रभो । अना-  
 श्रयमनाथं च त्राहि० ॥ ४ ॥ गतागतेन श्रान्तोऽस्मि दीर्घसंसार-  
 वर्त्मसु । येन भूयो न गच्छामि त्राहि० ॥ ५ ॥ बहवो हि मया  
 दृष्टा केशाश्चैव पृथक् पृथक् । गर्भवासे महद्दुःखं त्राहि० ॥ ६ ॥ तेन  
 देव प्रपन्नोऽस्मि त्राणार्थं त्वत्परायणः । दुःखार्णवपरित्राणात् त्राहि०  
 ॥ ७ ॥ वाचा यत्र प्रतिज्ञातं कर्मणा नोपपादितम् । तत्पापाजित-  
 मग्नोऽस्मि त्राहि० ॥ ८ ॥ सुकृतं न कृतं किञ्चिदुष्कृतं च कृतं मया ।

घोरे भवे निमग्नोऽस्मि त्राहि० ॥ ९ ॥ देहान्तरसहस्रेषु चान्योन्यं  
 आमितो ह्यहम् । तिर्यक्त्वं मानुषत्वं च त्राहि० ॥ १० ॥ वाचयामि  
 यथोन्मत्तः प्रलपामि तवाग्रतः । जरामरणभीतोऽस्मि त्राहि० ॥ ११ ॥  
 यत्र यत्र च यातोऽस्मि स्त्रीषु वा पुरुषेषु वा । तत्र तत्राचला  
 भक्तिस्त्राहि० ॥ १२ ॥ गत्वा गत्वा निवर्तन्ते चन्द्रसूर्यादयो ग्रहाः ।  
 कदापि न निवर्तन्ते द्वादशाक्षरचिन्तकाः ॥ १३ ॥ ऊर्ध्वपाताल-  
 मर्त्येषु व्याप्तलोकजगद्वयम् । द्वादशाक्षरात्परं नास्ति वासुदेवेन  
 भाषितम् ॥ १४ ॥ द्वादशाक्षरं महामन्त्रं सर्वकामफलप्रदम् ।  
 गर्भवासनिवासेन शुकेन परिभाषितम् ॥ १५ ॥ द्वादशाक्षरं निरा-  
 हारो यः पठेद्धरिवासरे । स गच्छेद्वैष्णवं स्थानं यत्र योगेश्वरो  
 हरिः ॥ १६ ॥ इति श्रीशुकदेवविरचितं मधुसूदनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २७. विष्णुस्तवराजः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पद्मोवाच ॥ योगेन सिद्धविबुधैः परिभाव्य-  
 मानं लक्ष्म्यालयं तुलसिकाचितभक्तभृङ्गम् । प्रोक्तुंगरक्तनखरांगुलि-  
 पत्रचित्रं गंगारसं हरिपदांबुजमाश्रयेऽहम् ॥ १ ॥ गुणमणि-  
 प्रचयघटितराजहंससिंजत्सुनूपुरयुतं पदपद्मवृन्दम् । पीतांबरचल-  
 विलोलचलत्पताकं स्वर्णत्रिवक्त्रवलयं च हरेः स्मरामि ॥ २ ॥ जंघे  
 सुपर्णगलीलमणिप्रवृद्धे शोभास्पदारुणमणिद्युतिचंचुमध्ये । आर-  
 क्तपादतललंबनशोभमाने लोकेक्षणोत्सवकरे च हरेः स्मरामि  
 ॥ ३ ॥ ते जानुनी मखपतेर्भुजमूलसंगरंगोत्सवावृततडिद्वसने  
 विचित्रे । चंचत्पतत्रिमुखनिर्गतसामगीतविस्तारितात्मयशसी च  
 हरेः स्मरामि ॥ ४ ॥ विष्णोः कटिं विधिकृतांतमनोजभूमिं जीवांड-  
 कोशगणसंगदुकूलमध्याम् । नानागुणप्रकृतिपीतविचित्रवस्त्रां ध्याये  
 निबद्धवसनां खगपृष्ठसंस्थाम् ॥ ५ ॥ शांतोदरं भगवतस्त्रिव-

लिप्रकाशमावर्तनाभिविकसद्विधिजन्मपद्मम् । नाडीनदीगणरसोत्थ-  
 सितांत्रसिंधुं ध्यायेऽण्डकोशनिलयं तनुलोमरेखम् ॥ ६ ॥ वक्षः  
 पयोधितनयाकुचकुंकुमेन हारेण कौस्तुभमणिप्रभया विभातम् ।  
 श्रीवत्सलक्ष्म हरिचंदनजप्रसूनमालोचितं भगवतः सुभगं स्मरामि  
 ॥ ७ ॥ बाहू सुवेषसदनौ वलयांगदादिशोभास्पदौ दुरितदैत्यविनाश-  
 दक्षौ । तौ दक्षिणौ भगवतश्च गदासुनाभतेजोर्जितौ सुललितौ  
 मनसा स्मरामि ॥ ८ ॥ वामौ भुजौ मुररिपोर्धृतपद्मशंखौ श्यामौ  
 करींद्रकरवन्मणिभूषणाढ्यौ । रक्तांगुलिप्रचयचुंबितजानुमध्यौ  
 पद्मालयाप्रियकरौ रुचिरौ स्मरामि ॥ ९ ॥ कंठं मृणालममलं  
 मुखपंकजस्य लेखात्रयेण वनमालिकयां निवीतम् । किंवा विमुक्ति-  
 वशमंत्रकसत्फलस्य वृंतं चिरं भगवतः सुभगं स्मरामि ॥ १० ॥  
 वक्त्रांबुजं दशनहासविकासरम्यं रक्ताधरोष्ठवरकोमलवाक्सुधाढ्यम् ।  
 सन्मानसोद्भवचलेक्षणपत्रचित्रं लोकाभिरामममलं च हरेः स्मरामि  
 ॥ ११ ॥ सूर्यात्मजावसथगंधमिदं सुनासं भ्रूपल्लवं स्थितिलयो-  
 दयकर्मदक्षम् । कामोत्सवं च कमलाहृदयप्रकाशं संचितयामि  
 हरिवक्त्रविलासदक्षम् ॥ १२ ॥ कर्णौ लसन्मकरकुंडलगंधलोलौ  
 नानादिशां च नभसश्च विकासगेहम् । लोलालकप्रचयचुंबन-  
 कुंचिताग्रौ लभ्यौ हरेर्मणिकिरीटतटे स्मरामि ॥ १३ ॥ मालं  
 विचित्रतिलकं प्रियचारुगंधगोरोचनारचनया ललनाक्षिसख्यम् ।  
 ब्रह्मैकधाम मणिकांतकिरीटजुष्टं ध्याये मनोनयनहारकमीश्वरस्य  
 ॥ १४ ॥ श्रीवासुदेवचिकुरं कुटिलं निबद्धं नानासुगंधिकुसुमैः  
 स्वजनादरेण । दीर्घं रमाहृदयगाशमनं धुनंतं ध्यायेऽम्बुवाहरुचिरं  
 हृदयाब्जमध्ये ॥ १५ ॥ मेघाकारं सोमसूर्यप्रकाशं सुभ्रूजासं शक्र-  
 चापैकमानम् । लोकातीतं पुंडरीकायताक्षं विद्युच्चैलं चाश्रयेऽहं

त्वपूर्वम् ॥ १६ ॥ दीनं हीनं सेवया दैवगत्या पापैस्तापैः पूरितं मे  
शरीरम् । लोभाक्रांतं शोकमोहादिविद्धं कृपादृष्ट्या पाहि मां  
वासुदेव ॥ १७ ॥ ये भक्त्याद्यां ध्यायमानां मनोज्ञां व्यक्तिं  
विष्णोः षोडशश्लोकपुष्पैः । स्तुत्वा नत्वा पूजयित्वा विधिज्ञाः  
शुद्धा मुक्ता ब्रह्मसौख्यं प्रयांति ॥ १८ ॥ पद्मेरितमिदं पुण्यं शिवेन  
परिभाषितम् । धन्यं यशस्यमायुष्यं स्वर्ग्यं स्वस्त्ययनं परम् ॥ १९ ॥  
पठन्ति ये महाभागास्ते मुच्यन्तेऽहसोऽखिलात् । धर्मार्थकाममोक्षाणां  
परत्रेह फलप्रदम् ॥ २० ॥ इति श्रीकल्किपुराणेऽनुभागवते  
भविष्ये पाद्मप्रोक्तो विष्णुस्तवराजः संपूर्णः ॥

### २८. विष्ण्वष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पुरः सृष्टाविष्टः पुरुष इति तत्प्रेक्षणमुखः  
सहस्राक्षो भुक्त्वा फलमनुशयी शास्ति तमुत । स्वयं शुद्धं शान्तं  
निरवधिसुखं नित्यमचलं नमामि श्रीविष्णुं जलधितनयासेवित-  
पदम् ॥ १ ॥ अनन्तं सत्सत्यं भवभयहरं ब्रह्म परमं सदा भातं  
नित्यं जगदिदमितः कल्पितपरम् । मुहुर्ज्ञानं यस्मिन् रजतमिव  
शुक्तौ भ्रमहरं नमामि० ॥ २ ॥ मतौ यत्सद्रूपं मृगयति बुधोऽतन्नि-  
रसनाद्वा रज्जौ सर्पोऽपि मुकुरजठरे नास्ति वदनम् । अतोऽपार्थं  
सर्वं न हि भवति यस्मिंश्च तमहं नमामि० ॥ ३ ॥ भ्रमद्वीविक्षिप्ते-  
न्द्रियपथमनुष्यैर्हृदि विभुं नयं वै वेद स्वेन्द्रियमपि वसंत निज-  
मुखम् । सदा सेव्यं भक्तैर्मुनिमनसि दीप्तं मुनिनुतं नमामि० ॥ ४ ॥  
बुधा यत्तद्रूपं न हि तु निर्गुण्यममलं यथा ये व्यक्तं ते सततमकलङ्कं  
श्रुतिनुतम् । यदाहुः सर्वत्रास्वलितगुणसत्ताकमनुलं नमामि० ॥ ५ ॥  
लयादौ यस्मिन्यद्विलयमपि उद्यत्यभवति तथा जीवोपेतं गुरु-  
करुणया बोधजनने । गतं चाल्यंतान्तं व्रजति सहसा सिन्धुनदव-

ब्रमामि० ॥ ६ ॥ जडं सङ्घातं यस्मिन्निषलवलेशेन चपलं यथा स्वं स्वं  
कार्यं प्रथयति महामोहजनकम् । मनोवाग्जीवानां न निविशति यं  
निर्भयपदं नमामि० ॥ ७ ॥ गुणाख्याने यस्मिन्प्रभवति न वेदोऽपि  
नितरां निषिध्यद्वाक्यार्थैश्चकितचकितं योऽस्य वचनम् । स्वरूपं  
यद्गत्वा प्रभुरपि च तूष्णीं भवति तं नमामि श्रीविष्णुं जलधितनया-  
सेवितपदम् ॥ ८ ॥ विष्ण्वष्टकं यः पठति प्रभाते नरोऽप्यखण्डं  
सुखमश्नुते च । यन्नित्यबोधाय सुबुद्धिनोक्तं । रघूत्तमाख्येन विचार्य  
सम्यक् ॥ ९ ॥ इति श्रीविष्ण्वष्टकं संपूर्णम् ॥

### २९. नारायणस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नारायण नारायण जय गोविंद हरे । नारायण  
नारायण जय गोपाल हरे ॥ करुणापारावार वरुणालय-  
गंभीर । नारायण० ॥ १ ॥ घननीरदसंकाश कृतकलिकल्मषनाश ।  
नारायण० ॥ २ ॥ यमुनातीरविहार धृतकौस्तुभमणिहार ।  
नारायण० ॥ ३ ॥ पीतांबरपरिधान सुरकल्याणनिधान । नारायण०  
॥ ४ ॥ मंजुलगुंजाभूष मायामानुषवेष । नारायण० ॥ ५ ॥  
राधाधरमधुरसिक रजनीकरकुलतिलक । नारायण० ॥ ६ ॥  
मुरलीगानविनोद वेदस्तुतभूपाद । नारायण० ॥ ७ ॥ बर्हिनिब-  
र्हापीड नटनाटकफणिक्रीड । नारायण० ॥ ८ ॥ वारिजभूषाभरण  
राजीवरुक्मिणीरमण । नारायण० ॥ ९ ॥ जलरुहदलनिभनेत्र  
जगदारंभकसूत्र । नारायण० ॥ १० ॥ पातकरजनीसंहार करुणा-  
लय मासुद्धर । नारायण० ॥ ११ ॥ अघबकक्षयकंसारे केदाव  
कृष्ण मुरारे । नारायण० ॥ १२ ॥ हाटकनिभपीतांबर अभयं कुरु  
मे मावर । नारायण० ॥ १३ ॥ दशरथराजकुमार दानवमद-  
संहार । नारायण० ॥ १४ ॥ गोवर्धनगिरिरमण गोपीमानसहरण ।

नारायण० ॥ १५ ॥ शरयूतीरविहार सज्जनऋषिमंदार । नारायण०  
 ॥ १६ ॥ विश्वामित्रमखत्र विविधपरासुचरित्र । नारायण० ॥ १७ ॥  
 ध्वजवज्राकुशपाद धरणीसुतसहमोद । नारायण० ॥ १८ ॥ जनक-  
 सुताप्रतिपाल जय जय संस्मृतिलील । नारायण० ॥ १९ ॥  
 दशरथवाग्दृतिभार दंडकवनसंचार । नारायण० ॥ २० ॥ मुष्टिक-  
 चाणूरसंहार मुनिमानसविहार । नारायण० ॥ २१ ॥ वालिविनि-  
 ग्रहशौर्य वरसुग्रीवहितार्थ । नारायण० ॥ २२ ॥ मां मुरलीकर  
 धीवर पालय पालय श्रीधर । नारायण० ॥ २३ ॥ जलनिधि  
 बंधनधीर रावणकंठविदार । नारायण० ॥ २४ ॥ ताटीमददलनाढ्य  
 नटगुणविविधधनाढ्य । नारायण० ॥ २५ ॥ गौतमपत्नीपूजन  
 करुणाघनावलोकन । नारायण० ॥ २६ ॥ संभ्रमसीताहार साकेत-  
 पुरविहार । नारायण० ॥ २७ ॥ अचलोद्धृतिचंचत्कर भक्तानुग्रह-  
 तत्पर । नारायण० ॥ २८ ॥ नैगमगानविनोद रक्षःसुतप्रह्लाद ।  
 नारायण० ॥ २९ ॥ भारतियतिवरशंकर नानामृतमखिलांतर ।  
 नारायण नारायण जय गोपाल हरे ॥ ३० ॥ इति श्रीमच्छंकरा-  
 चार्यविरचितं नारायणस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३०. विष्णुभुजंगप्रयातस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ चिदंशं विशुं निर्मलं निर्विकल्पं निरीहं निरा-  
 कारमोकारगम्यम् । गुणातीतमव्यक्तमेकं तुरीयं परं ब्रह्म यं वेद  
 तस्मै नमस्ते ॥ १ ॥ विशुद्धं शिवं शान्तमाद्यंतशून्यं जगज्जीवनं  
 ज्योतिरानन्दरूपम् । अदिग्देशकालव्यवच्छेदनीयं त्रयो वक्ति यं  
 वेद तस्मै नमस्ते ॥ २ ॥ महायोगपीठे परिभ्राजमाने धरण्यादि-  
 तत्त्वात्मके शक्तियुक्ते । गुणाहस्करे वह्निबिम्बार्कमध्ये समासीनमो-  
 कर्णिकेऽष्टाक्षराब्जे ॥ ३ ॥ समानोदितानेकसूर्यैर्दुकोटिप्रभापूरतुल्य-

द्युतिं दुर्निरीक्षम् । न शीतं न चोष्णं सुवर्णवदातप्रसन्नं सदा-  
नन्दसंवित्स्वरूपम् ॥ ४ ॥ सुनासापुटं सुन्दरभ्रूललाटं किरीटोचि-  
ताकुञ्चितस्निग्धकेशम् । स्फुरत्पुण्डरीकाभिरामायताक्षं समुत्फुल्ल-  
रत्नप्रसूनावतंसम् ॥ ५ ॥ लसत्कुण्डलामृष्टगण्डस्थलान्तं जपाराग-  
चोराधरं चारुहासम् । अलिव्याकुलामोदिमन्दारमालं महोरस्फुर-  
त्कौस्तुभोदारहारम् ॥ ६ ॥ सुरत्ताङ्गदैरन्वितं बाहुदण्डैश्चतुर्भिश्च-  
लत्कङ्कणालंकृताग्रैः । उदारोदरालंकृतं पीतवस्त्रं पदद्वन्द्वनिर्धूतपद्मा-  
भिरामम् ॥ ७ ॥ स्वभक्तेषु संदर्शिताकारमेवं सदा मावयन्सञ्चिह-  
न्नेन्द्रियाश्वः । दुरापं नरो याति संसारपारं परस्मै परेभ्योऽपि तस्मै  
नमस्ते ॥ ८ ॥ श्रिया शातकुम्बद्युतिस्निग्धकान्त्या धरण्या च दूर्वादल-  
श्यामलाङ्गया । कलत्रद्वयेनामुना तोषिताय त्रिलोकीगृहस्थाय  
विष्णो नमस्ते ॥ ९ ॥ शरीरं कलत्रं सुतं बन्धुवर्गं वयस्यं धनं सञ्च  
भृत्यं भुवं च । समस्तं परित्यज्य हा कष्टमेको गमिष्यामि दुःखेन  
दूरं किलाहम् ॥ १० ॥ जरेयं पिशाचीव हा जीवतो मे वसामति  
रक्तं च मांसं बलं च । अहो देव सीदामि दीनानुकंपिन् किम-  
द्यापि हन्त त्वयोदासितव्यम् ॥ ११ ॥ कफव्याहृतोष्णोल्बणश्वास-  
वेगव्यथाविस्फुरत्सर्वमर्मास्थिबन्धम् । विचिन्त्याहमन्त्यामसंख्या-  
मवस्थां बिभेमि प्रभो किं करोमि प्रसीद ॥ १२ ॥ लपञ्चद्युतानन्त  
गोविन्द विष्णो मुरारे हरे नाथ नारायणेति । यथानुस्मरिष्यामि  
भक्त्या भवन्तं तथा मे दयाशील देव प्रसीद ॥ १३ ॥ भुजङ्ग-  
प्रयातं पठेद्यस्तु भक्त्या समाधाय चित्ते भवन्तं मुरारे । मोहं  
विहायाशु युष्मत्प्रसादात्समाश्रित्य योगं व्रजत्यच्युतं त्वाम् ॥ १४ ॥  
इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यस्य श्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपादशि-  
ष्यस्य श्रीमच्छंकरभगवतः कृतौ विष्णुभुजंगप्रयातस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## ३१. जितं ते स्तोत्रम् ।

प्रथमभागः ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ जितं ते पुंडरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन । नम-  
 स्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुष पूर्वज ॥ १ ॥ देवानां दानवानां च  
 सामान्यमधिदैवतम् । सर्वदा चरणद्वन्द्वं व्रजामि शरणं तव ॥ २ ॥  
 एकस्त्वमसि लोकस्य स्रष्टा संहारकस्तथा । अध्यक्षश्चानुमन्ता च  
 गुणमायासमावृतः ॥ ३ ॥ संसारसागरं घोरमनन्तक्लेशभाजनम् ।  
 त्वामेव शरणं प्राप्य निस्तरन्ति मनीषिणः ॥ ४ ॥ न ते रूपं न  
 चाकारो नायुधानि न चास्पदम् । तथापि पुरुषाकारो भक्तानां त्वं  
 प्रकाशसे ॥ ५ ॥ नैव किञ्चित्परोक्षं ते प्रत्यक्षोऽसि न कस्यचित् । नैव  
 किञ्चिदसिद्धं ते न च सिद्धोऽसि कस्यचित् ॥ ६ ॥ कार्याणां  
 कारणं पूर्वं वचसां वाच्यमुत्तमम् । योगानां परमां सिद्धिं परमं  
 ते पदं विदुः ॥ ७ ॥ अहं भीतोऽस्मि देवेश संसारेऽस्मिन्भयावहे ।  
 पाहि मां पुंडरीकाक्ष न जाने शरणं परम् ॥ ८ ॥ कालेष्वपि च  
 सर्वेषु दिक्षु सर्वासु चाच्युत । शरीरे च गतौ चापि वर्तते मे  
 महद्भयम् ॥ ९ ॥ त्वत्पादकमलादन्यत्र मे जन्मान्तरेष्वपि ।  
 निमित्तं कुशलस्यास्ति येन गच्छामि सद्गतिम् ॥ १० ॥ विज्ञानं  
 यदिदं प्राप्तं यदिदं स्थानमर्जितम् । जन्मान्तरेऽपि मे देव मा भूत्तस्य  
 परिक्षयः ॥ ११ ॥ दुर्गतावपि जातायां त्वद्गतौ मे मनोरथः ।  
 यदि नाशं न विन्देत् तावतासि कृती सदा ॥ १२ ॥ न काम-  
 कलुषं चित्तं मम ते पादयोः स्थितम् । कामये वैष्णवत्वं तु सर्व-  
 जन्मसु केवलम् ॥ १३ ॥ सर्वेषु देशकालेषु सर्वावस्थासु चाच्युत ।  
 किंकरोऽस्मि हृषीकेश भूयो भूयोऽस्मि किंकरः ॥ १४ ॥ इत्येव-  
 मनया स्तुत्या स्तुत्वा देवं दिने दिने । किंकरोऽस्मीति चात्मानं



देवायैवं निवेदयेत् ॥ १५ ॥ यच्चापराधं कृतवानज्ञानात्पुरुषोत्तम ।  
मञ्जक्त इति देवेश तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि ॥ १६ ॥ अहङ्कारार्थकामेषु  
प्रीतिरद्यैव नश्यतु । त्वां प्रपन्नस्य मे देव वर्धतां श्रीमति त्वयि  
॥ १७ ॥ काहमत्यंतदुर्बुद्धिः क्व चात्महितवीक्षणम् । यद्वितं मम  
देवेश तदाज्ञापय माधव ॥ १८ ॥ सोऽहं ते देवदेवेश नार्चनादौ  
स्तुतौ न च । सामर्थ्यवान् कृपामात्रमनोवृत्तिः प्रसीद मे ॥ १९ ॥  
उपचारापदेशेन कृतानहरहर्मया । अपचारानिमान्सर्वान् क्षमस्व  
पुरुषोत्तम ॥ २० ॥

द्वितीयभागः ॥ जितं ते पुंडरीकाक्ष पूर्वपाङ्गुण्यविग्रह । परा-  
नन्द परं ब्रह्मन्नमस्ते परमात्मने ॥ १ ॥ नमस्ते पीतवसन नमः  
कटकधारिणे । नमो नीलालकावद्वेणीसुंदरविग्रह ॥ २ ॥ स्फुर-  
द्बलयकेयूरनूपुराङ्गदभूषणैः । शोभनैर्भूषिताकार कल्याणगुण-  
वारिधे ॥ ३ ॥ करुणापूर्णहृदय शङ्खचक्रगदाधर । अमृतानन्द-  
पूर्णाभ्यां लोचनाभ्यां विलोकय ॥ ४ ॥ कृशं कृतघ्नं  
दुष्कर्मकारिणं पापभाजनम् । अपराधसहस्राणामाकरं करुणाकर  
॥ ५ ॥ कृपया मां केवलया गुहाण मधुराधिप । विषयार्णवमग्नं  
मामुद्धर्तुं त्वमिहार्हसि ॥ ६ ॥ पिता माता सुहृद्वन्धुभ्राता पुत्रस्त्वमेव  
हि । विद्या धनं च काम्यं च नान्यत्किञ्चित्त्वया विना ॥ ७ ॥ यत्र कुत्र  
कुले वासो येषु केषु भवोऽस्तु मे । तव दास्यैकभोगे स्यात्सदा सर्वत्र  
मे रतिः ॥ ८ ॥ मनसा कर्मणा वाचा शिरसा वा कथंचन ।  
त्वां विना नान्यमुद्दिश्य करिष्ये किञ्चिदप्यहम् ॥ ९ ॥ पाहि  
पाहि जगन्नाथ कृपया भक्तवत्सल । अनाथोऽहमधन्योऽहमकृतार्थः  
कथंचन ॥ १० ॥ नृशंसः पापकृत्कूरो वज्रको निष्ठुरः सदा । भवा-  
र्णवनिमग्नं मामनन्यं करुणोदधे ॥ ११ ॥ करुणापूर्णदृष्टिभ्यां दीनं

मामवलोकय । त्वदग्रे पतितं त्यक्तुं तावकं नार्हसि प्रभो ॥ १२ ॥  
 मया कृतानि पापानि त्रिविधानि पुनः पुनः । त्वत्पादपंकजं प्राप्तुं  
 नान्यत्त्वत्करुणां विना ॥ १३ ॥ साधनानि प्रसिद्धानि यागादीन्य-  
 ब्जलोचन । त्वदाज्ञया प्रयुक्तानि त्वामुद्दिश्य कृतानि वै ॥ १४ ॥  
 भक्त्यैकलभ्यः पुरुषोत्तमोऽसौ जगत्प्रसूतिस्थितिनाशहेतुः । अकिं-  
 चनोऽनन्यगतिः शरण्य गृहाण मां क्लेशिनमम्बुजाक्ष ॥ १५ ॥  
 धर्मार्थकाममोक्षेषु नेच्छा मम कदाचन । त्वत्पादपङ्कजास्वादजीवितं  
 दीयतां मम ॥ १६ ॥ कामये तावकत्वेन परिचर्यानुवर्तनम् ।  
 नित्यकिंकरभावेन परिगृहीष्व मां विभो ॥ १७ ॥ लोकं वैकुण्ठ-  
 नामानं दिव्यं षाड्गुण्यसंयुतम् । अवैष्णवानामप्राप्यं गुणत्रयविव-  
 र्जितम् ॥ १८ ॥ नित्यसिद्धैः समाकीर्णं तन्मयैः पाञ्चकालिकैः ।  
 सभाप्रासादसंयुक्तं वनैश्चोपवनैर्युतम् ॥ १९ ॥ वापीकूपतटाकैश्च  
 वृक्षखण्डैः सुमंडितम् । अप्राकृतं सुरैर्वेन्द्यमयुतार्कसमप्रभम्  
 ॥ २० ॥ प्रकृष्टसत्त्वसंपन्नं कदा द्रक्ष्यामि चक्षुषा । क्रीडतं  
 रमया सार्धं लीलाभूमिषु केशवम् ॥ २१ ॥ मेघश्यामं विशालाक्षं  
 कदा द्रक्ष्यामि चक्षुषा । उन्नसं चारुवदनं बिम्बोष्ठं शोभिताननम्  
 ॥ २२ ॥ विशालवक्षसं श्रीशं कंबुग्रीवं जगद्गुरुम् । आजानुबाहु-  
 परिघमुन्नतांसं मधुद्विषम् ॥ २३ ॥ विशालनिम्ननाभिं तमापीन-  
 जघनं हरिम् । करमोरं श्रियः कान्तं कदा द्रक्ष्यामि चक्षुषा ॥ २४ ॥  
 शङ्खचक्रगदापद्मैरङ्कितं पादपङ्कजम् । शरच्चन्द्रशताक्रान्तनखरा-  
 जिविराजितम् ॥ २५ ॥ सुरासुरैर्वेन्द्यमानमृषिभिर्विन्दितं सदा ।  
 कदा वा देव मूर्धानं मामकं मंडयिष्यति ॥ २६ ॥ कदा गंभीरया  
 वाचा श्रिया युक्तो जगत्पतिः । चामरव्यग्रहस्तं मामेवं कुर्विति  
 वक्ष्यति ॥ २७ ॥ कदाऽहं राजराजेन गणनाथेन चोदितः । चरेयं

भगवत्पादपरिचर्यानुवृत्तिषु ॥ २८ ॥ शान्ताय च विशुद्धाय तेजसे  
 परमात्मने । नमो भगवते विष्णो वासुदेवामितद्युते ॥ २९ ॥  
 नमः सर्वगुणातीत षड्गुणायदिवेषसे । सत्यज्ञानानन्तगुण ब्रह्मणे  
 परमात्मने ॥ ३० ॥ चतुःपञ्चनवव्यूहदशद्वादशमूर्तये । नमस्ते  
 वासुदेवाय ब्रह्मणे चतुरात्मने ॥ ३१ ॥ नमोऽनंताय विश्वाय विश्वा-  
 तीताय चक्रिणे । नमस्ते पञ्चकालज्ञ पञ्चकालपरायण ॥ ३२ ॥ पञ्च-  
 कालैकमनसां त्वमेव गतिरव्ययः । परे व्योम्नि स्थितं देवं निरवद्यं  
 निरंजनम् ॥ ३३ ॥ अप्रमेयमजं विष्णुमब्जनाभं सुरेश्वरम् । वाग-  
 तीतं परं शान्तं शरणं त्वां गतोऽस्म्यहम् ॥ ३४ ॥ धुर्यं द्वन्द्वाति-  
 रिक्तं त्वां कौस्तुभोद्भासिवक्षसम् । विश्वरूपं विशालाक्षं कदा  
 द्रक्ष्यामि चक्षुषा ॥ ३५ ॥ मोक्षं सालोक्यसारूप्यं प्रार्थये न  
 कदाचन । इच्छाम्यहं महाबाहो सायुज्यं तव सुव्रत ॥ ३६ ॥  
 सकलावरणातीत किंकरोऽस्मि तवानघ । पुनः पुनः किंकरोऽस्मि  
 तवाहं पुरुषोत्तम ॥ ३७ ॥ आसनाद्यनुयागान्तमर्चनं यन्मया  
 कृतम् । भोगहीनं क्रियाहीनं मन्त्रहीनमभक्तिकम् ॥ ३८ ॥ तत्सर्वं  
 क्षम्यतां देव दीनं मामात्मसात्कुरु । इति स्तोत्रेण देवेशं स्तुत्वा  
 मधुनिघातिनम् ॥ ३९ ॥ यागावसानसमये देवदेवस्य चक्रिणः ।  
 नित्यकिंकरभावेन स्वात्मानं विनिवेदयेत् ॥ ४० ॥  
 तृतीयभागः ॥ जितं ते पुंडरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ।  
 नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुष पूर्वज ॥ १ ॥ विज्ञापनमिदं देव  
 शृणु त्वं पुरुषोत्तम । नरनारायणाभ्यां च श्वेतद्वीपनिवासिभिः  
 ॥ २ ॥ नारदाद्यैर्मुनिगणैः सनकाद्यैश्च योगिभिः । ब्रह्मेशाद्यैः सुर-  
 गणैः पंचकालपरायणैः ॥ ३ ॥ पूज्यसे पुंडरीकाक्ष दिव्यमन्त्रैर्म-  
 हर्षिभिः । पाखंडधर्मसंकीर्णैः भगवद्भक्तिवर्जितैः ॥ ४ ॥ कलैः

जातोऽस्मि देवेश सर्वधर्मबहिष्कृते । कथं त्वामसमाचारः पाप-  
 प्रसवभूरहम् ॥ ५ ॥ अर्चयामि दयासिन्धो पाहि मां शरणागतम् ।  
 तापत्रयदवाप्तौ मां दह्यमानं सदा विभो ॥ ६ ॥ त्राहि मां पुंडरी-  
 काक्ष केवलं कृपया तव । जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखसंतप्तदेहिनम्  
 ॥ ७ ॥ पालयाशु दृशा देव तव कारुण्यगर्भया । इन्द्रियाणि मया  
 जेतुमशक्यं पुरुषोत्तम ॥ ८ ॥ शरीरं मम देवेश व्याधिभिः परि-  
 पीडितम् । मनो मे पुंडरीकाक्ष विषयानेव धावति ॥ ९ ॥ वाणी  
 मम हृषीकेश मिथ्यापारुष्यदूषिता । एवं साधनहीनोऽहं किं  
 करिष्यामि केशव ॥ १० ॥ रक्ष मां कृपया कृष्ण भवाब्धौ पतितं  
 सदा । अपराधशतं चैत्र सहस्रमयुतं तथा ॥ ११ ॥ अर्बुदं चाप्य-  
 संख्येयं करुणाब्धे क्षमस्व मे । यच्चापराधं कृतवानज्ञानात्पुरुषोत्तम  
 ॥ १२ ॥ मद्भक्त इति देवेश तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि । अज्ञत्वादप्य-  
 शक्तत्वादालस्यादुष्टभावनात् ॥ १३ ॥ कृतापराधं कृपणं क्षन्तु-  
 मर्हसि मां विभो । अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया  
 ॥ १४ ॥ तानि सर्वाणि मे देव क्षमस्व मधुसूदन । यज्जनमनः  
 प्रभृति मोहवशं गतेन नानापराधशतमाचरितं मया ते । अन्त-  
 र्बहिश्च सकलं तव पश्यतो मे क्षन्तुं त्वमर्हसि हरे करुणावशेन  
 ॥ १५ ॥ कर्मणा मनसा वाचा या चेष्टा मम नित्यशः । केशवा-  
 राधने सा स्याज्जन्मजन्मान्तरेष्वपि ॥ १६ ॥  
 चतुर्थभागः ॥ जितं ते पुंडरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ।  
 नमस्ते वासुदेवाय शांतानंतचिदात्मने ॥ १ ॥ अध्यक्षाय  
 स्वतन्त्राय निरपेक्षाय शासते । अच्युतायाविकाराय तेजसां निधये  
 नमः ॥ २ ॥ प्रधानपुरुषेशाय नमस्ते पुरुषोत्तम । क्लेशकर्माद्य-  
 संस्पृष्टपूर्णषाड्गुण्यमूर्तये ॥ ३ ॥ त्रिभिर्ज्ञानबलैश्चर्यवीर्यशक्त्यन्त-

रात्मने । त्रियुगाय नमस्तेऽस्तु नमस्ते चतुरात्मने ॥ ४ ॥ चतुः-  
 पञ्चनवव्यूहदशद्वादशमूर्तये । अनेकमूर्तये तुभ्यममूर्तायैकमूर्तये  
 ॥ ५ ॥ नारायण नमस्तेऽस्तु पुंडरीकायतेक्षण । सुभ्रूललाट  
 सुनस सुस्मिताधरपल्लव ॥ ६ ॥ पीनवृत्तायतभुज श्रीवत्सकृत-  
 लक्षण । तनुमध्य विशालाक्ष पद्मनाभ नमोऽस्तु ते ॥ ७ ॥  
 विलासविक्रमाक्रान्तत्रैलोक्यचरणाम्बुज । नमस्ते पीतवसन स्फुर-  
 न्मकरकुण्डल ॥ ८ ॥ स्फुरत्किरीटकेयूर हारकौस्तुभभूषण । पञ्चा-  
 युध नमस्तेऽस्तु नमस्ते पाञ्चकालिक ॥ ९ ॥ पञ्चकालपरैकान्ति-  
 योगक्षेममहाप्रभो । नित्यज्ञानबलैश्वर्यभोगोपकरणाच्युत ॥ १० ॥  
 नमस्ते ब्रह्मरुद्रादि लोकयात्रापरिच्छद । जन्मप्रभृति दासोऽस्मि  
 शिष्योऽस्मि तनयोऽस्मि ते ॥ ११ ॥ त्वं च स्वामी गुरुश्चात्मा  
 पिता च मम माधव । अपि त्वां भगवन् ब्रह्मा शर्वः शक्रो  
 महर्षयः ॥ १२ ॥ द्रष्टुं यष्टुमपि स्तोतुं न हि स्मर्तुमपीशते ।  
 तापत्रयमहाग्राहभीषणे भवसागरे ॥ १३ ॥ मज्जतां नाथ  
 नौरेषा प्रणतिस्त्वत्पदार्पिता । अनाथाय जगन्नाथ शरण्य  
 शरणार्थिने ॥ १४ ॥ प्रसीद सीदते मह्यं नमस्ते भक्तवत्सल ।  
 मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं यदर्चनम् ॥ १५ ॥ तत्क्षंतव्यं  
 प्रपन्नानामपराधसहो ब्रह्मसि । अज्ञानाद्यदि वा ज्ञानादशुभं यत्कृतं  
 मया ॥ १६ ॥ क्षंतव्यं तदशेषेण दास्येन च गृहाण माम् ।  
 सर्वेषु देशकालेषु सर्वाविस्थासु चाच्युत । किंकरोऽस्मि हृषीकेश  
 भूयो भूयोऽस्मि किंकरः ॥ १७ ॥  
 पञ्चमभागः ॥ जितं ते पुंडरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन । नमस्तेऽस्तु  
 हृषीकेश महापुरुष पूर्वज ॥ १ ॥ नमस्ते वासुदेवाय शान्ता-  
 नन्ताजितात्मने । अजिताय नमस्तुभ्यं पाङ्गुण्यनिघये नमः ॥ २ ॥

महाविभूतिसंस्थाय नमस्ते पुरुषोत्तम । सहस्रशिरसे तुभ्यं  
 सहस्रचरणाय ते ॥ ३ ॥ सहस्रबाहवे तुभ्यं सहस्रनयनाय ते ।  
 अमूर्ताय नमस्तुभ्यमेकमूर्ताय ते नमः ॥ ४ ॥ अनेकमूर्तये तुभ्य-  
 मक्षराय च ते नमः । व्यापिने वेदवेद्याय नमस्ते परमात्मने ॥ ५ ॥  
 चिन्मात्ररूपिणे तुभ्यं नमस्त्रय्यंतमूर्तये । अणिष्ठाय स्थविष्ठाय  
 महिष्ठाय च ते नमः ॥ ६ ॥ नेदिष्ठाय यविष्ठाय सर्वान्तर्यामिने नमः ।  
 वर्धिष्ठाय जविष्ठाय कनिष्ठाय च ते नमः ॥ ७ ॥ पञ्चात्मने नमस्तुभ्यं  
 सर्वान्तर्यामिने नमः । कल्पनाक्रोडरूपाय सृष्टिस्थित्यन्तहेतवे  
 ॥ ८ ॥ नमस्ते गुणरूपाय गुणरूपादिवर्तिने । व्यस्ताय च समस्ताय  
 समस्तव्यस्तरूपिणे ॥ ९ ॥ आदिमध्यान्तशून्याय सत्त्वस्थाय नमो  
 नमः । प्रणवप्रतिपाद्याय नमः प्रणवरूपिणे ॥ १० ॥ लोकयात्रा-  
 प्रसिद्ध्यर्थं स्रष्टुर्ब्रह्मादिरूपिणे । नमस्तुभ्यं नृसिंहादिमूर्तिभेदाय  
 विष्णवे ॥ ११ ॥ विपाकैः कर्मभिः क्षोभैरस्पृष्टवपुषे नमः । नित्य-  
 साधारणानेकलोकक्षापरिच्छिदे ॥ १२ ॥ सच्चिदानन्दरूपाय वरे-  
 ण्याय नमो नमः । यजमानाय यज्ञाय यष्टव्याय नमो नमः ॥ १३ ॥  
 इज्याफल नमस्तुभ्यं नम इज्यादिशीलिने । नमः परमहंसाय नमः  
 सत्त्वगुणाय च ॥ १४ ॥ स्थिताय परमव्योम्नि भूयो भूयो नमो  
 नमः । संसारविषयावर्तसङ्कुले च महाभये ॥ १५ ॥ अपारे दुस्तरेऽ-  
 गाधे पतितं कर्मभिः स्वकैः । अनाथमतिगंभीरं दयया परया हरे  
 ॥ १६ ॥ मामुद्धर दयासिन्धो सिन्धोरसात्सुदुस्तरात् । मन्त्रहीनं  
 क्रियाहीनं भक्तिहीनं यदर्चितम् ॥ १७ ॥ तत्सर्वं क्षम्यतां देव  
 दीनं मामात्मसात्कुरु । नाहं हितं न जानामि त्वां ब्रजाम्येव केवलम्  
 ॥ १८ ॥ बुद्ध्यैवं नय गोविन्द मुक्त्युपायेन वर्त्मना । त्वमेव  
 वेत्सि श्रेयो मे नेदमेतदितीति च । बुद्धियोगं च मे देहि येन  
 त्वामुपयाम्यहम् ॥ १९ ॥

षष्ठभागः ॥ जितं ते पुंडरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ।  
 नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुष पूर्वज ॥ १ ॥ श्रीमद्वारवतीनाथ  
 वर्धतां विजयी भवान् । दिव्यं त्वदीयमैश्वर्यं निर्मर्यादविजृम्भितम्  
 ॥ २ ॥ देवीभूषायुधैर्नित्यैर्मुक्तैर्मोक्षैकलक्षणैः । सत्योत्तरैस्त्वदीयैश्च  
 सङ्गस्थाभिरसस्तव ॥ ३ ॥ प्राकारगोपुरवरप्रासादमणिमण्डपाः ।  
 शालिमुद्गतिलादीनां शाला शैलकुलोज्ज्वला ॥ ४ ॥ रत्नकाञ्चनकौशेय-  
 क्षौमक्रमुकशालिकाः । शय्यागृहाणि पर्यङ्कवर्याः स्थूलासनाति च  
 ॥ ५ ॥ कनकनकभृङ्गारपतद्गहकलाचिकाः । छत्रचामरमुख्याश्च  
 सन्तु नित्याः परिच्छदाः ॥ ६ ॥ अस्तु निस्तुलमव्यग्रं नित्यमभ्यर्चनं  
 तव । पक्षे पक्षे विजृम्भतां मासि मासि महोत्सवाः ॥ ७ ॥  
 मणिकाञ्चनचित्राणि भूषणान्यंबराणि च । काश्मीरसारकस्तूरि-  
 कर्पूराद्यनुलेपनम् ॥ ८ ॥ कोमलानि च दामानि कौसुमैः सौर-  
 भोद्रमैः । धूपाः कर्पूरदीपाश्च सन्तु नित्याः परिच्छदाः ॥ ९ ॥  
 नृत्तगीतयुतं वाद्यं नित्यमत्र विवर्धताम् । श्रोत्रेषु नः सुधाधाराः  
 कल्पतां काहलस्वनाः ॥ १० ॥ कन्दमूलफलोदग्रं काले काले  
 चतुर्विधम् । सूपापूपघृतक्षीरशर्करासहितं हविः ॥ ११ ॥ घनसार-  
 शिरोदग्रं क्रमुकाष्टदलान्वितम् । विमलानि च ताम्बूलदलानि  
 स्वीकुरु प्रभो ॥ १२ ॥ प्रीतिभीतियुतो भूयान्नित्यं परिजनस्तव ।  
 भक्तिमन्तो हि भुञ्जन्तु पौरा जानपदैः सह ॥ १३ ॥ धरणीधनरत्नानि  
 वितरन्तु चिरं तव । कैकर्यमखिलं सर्वं कुर्वन्तु क्षोणिपालकाः  
 ॥ १४ ॥ प्रेमदिग्धदशस्मेरं प्रेक्षमाणास्त्वदाननम् । महान्तः  
 सन्ततं सन्तो मङ्गलानि प्रयुञ्जताम् । साममेवमवन्नित्यं पालयन्  
 कुशलीभवान् ॥ १५ ॥ इति पाञ्चरात्रे जितं ते स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## ३२. मुकुन्दमाला ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वंदे मुकुन्दमरविन्ददलायताक्षं कुन्देन्दुशंखदशनं  
 शिशुगोपवेषम् । इन्द्रादिदेवगणवन्दितपादपीठं वृंदावनालयमहं वसु-  
 देवसूनुम् ॥ १ ॥ श्रीवल्लभेति वरदेति दयापरेति भक्तिप्रियेति  
 भवलुंठनकोविदेति । नाथेति नागशयनेति जगन्निवासेत्यालापिनं  
 प्रतिदिनं कुरु मां मुकुन्द ॥ २ ॥ जयतु जयतु देवो देवकीनन्दनोऽ-  
 यं जयतु जयतु कृष्णो वृष्णिवंशप्रदीपः । जयतु जयतु मेघश्यामलः  
 कोमलांगो जयतु जयतु पृथ्वीभारनाशो मुकुन्दः ॥ ३ ॥ मुकुन्द  
 मूर्ध्ना प्रणिपत्य याचे भवंतमेकांतमियंतमर्थम् । अविस्मृतिस्त्वच्चरणा-  
 रविंदे भवे भवे मेऽस्तु तव प्रसादात् ॥ ४ ॥ श्रीगोविन्दपदांभोज-  
 मधुनो महदद्भुतम् । यत्पायिनो न मुंचंति मुंचंति यदपायिनः ॥ ५ ॥  
 नाहं वंदे तव चरणयोर्द्वंद्वमद्वंद्वहेतोः कुंभीपाकं गुरुमपि हरे नारकं  
 नापनेतुम् । रम्यारामासृदुतनुलतानंदने नापि रंतुं भावे भावे हृदय-  
 भवने भावयेयं भवंतम् ॥ ६ ॥ नास्था धर्मे न वसुनिचये नैव  
 कामोपभोगे यद्भाव्यं तद्भवतु भगवन् पूर्वकर्मानुरूपम् । एतत्प्रार्थ्यं  
 मम बहु मत्तं जन्मजन्मांतरेऽपि त्वत्पादांभोरुहयुगगता निश्चला  
 भक्तिरस्तु ॥ ७ ॥ दिवि वा भुवि वा ममास्तु वासो नरके वा  
 नरकांतक प्रकामम् । अवधीरितशारदारविंदौ चरणौ ते मरणेऽपि  
 चिंतयामि ॥ ८ ॥ सरसिजनयने सशंखचक्रे मुरभिवि मा विरमेह  
 चित्तं रंतुम् । सुखतरमपरं न जातु जाने हरिचरणस्मरणासृतेन  
 तुल्यम् ॥ ९ ॥ मा भैर्मद मनो विचिंत्य बहुधा यामीश्विरं यातना  
 नैवामी प्रभवन्ति पापरिपवः स्वामी ननु श्रीधरः । आलस्यं व्यपनीय  
 भक्तिसुलभं ध्यायस्व नारायणं लोकस्य व्यसनापनोदनकरो दासस्य  
 किं न क्षमः ॥ १० ॥ भवजलधिगतानां द्वंद्ववाताहतानां सुतदुहितृ-



कलत्रत्राणभारार्दितानाम् । विषमविषयतोये मज्जतामप्लवानां भवति  
 शरणमेको विष्णुपोतो नराणाम् ॥ ११ ॥ रजसि निपतितानां मोह-  
 जालावृतानां जननमरणदोलादुर्गसंसर्गगाणाम् । शरणमशरण-  
 नामेक एवातुराणां कुशलपथनियुक्तश्चक्रपाणिर्नराणाम् ॥ १२ ॥  
 अपराधसहस्रसंकुलं पतितं भीमभवार्षावोदरे । अगतिं शरणागतं  
 हरे कृपया केवलमात्मसात्कुरु ॥ १३ ॥ मा मे स्त्रीत्वं मा च मे  
 स्यात्कुभावो मा मूर्खत्वं मा कुदेशेषु जन्म । मिथ्या दृष्टिर्मा च मे  
 स्यात्कदाचिजातौ जातौ विष्णुभक्तो भवेयम् ॥ १४ ॥ कायेन वाचा  
 मनसेन्द्रियैश्च बुद्ध्यात्मना वाऽनुसृतः स्वभावात् । करोमि यद्यत्सकलं  
 परस्मै नारायणायैव समर्पयामि ॥ १५ ॥ यत्कृतं यत्करिष्यामि  
 तत्सर्वं न मया कृतम् । त्वया कृतं तु फलभुक् त्वमेव मधुसूदन  
 ॥ १६ ॥ भवजलधिमगाधं दुस्तरं निस्तरेयं कथमहमिति चेतो मा  
 स्म गाः कातरत्वम् । सरसिजदृशि देवे तावकी भक्तिरेका नरक-  
 भिदि निषण्णा तारयिष्यत्यवश्यम् ॥ १७ ॥ तृष्णातोये मद-  
 पवनोद्धूतमोहोर्मिमाले दारावर्ते तनयसहजग्राहसंघाकुले च । संसा-  
 राख्ये महति जलधौ मज्जतां नस्त्रिधामन्पादांभोजे वरद भवतो  
 भक्तिभावं प्रदेहि ॥ १८ ॥ पृथ्वी रेणुरणुः पयांसि कणिकाः फल्गुः  
 स्फुलिङ्गो लघुस्तेजो निःश्वसनं मरुत्तनुतरं रंभं सुसूक्ष्मं नभः । क्षुद्रा  
 रुद्रपितामहप्रभृतयः कीटाः समस्ताः सुरा दृष्टा यत्र स तारको  
 विजयते श्रीपादधूलीकणः ॥ १९ ॥ आम्नायाम्यसनान्यरण्यरुदितं  
 कृच्छ्रव्रतान्यन्वहं मेदश्छेदफलानि पूर्तविधयः सर्वं हुतं भस्मनि ।  
 तीर्थानामवगाहनानि च गजस्नानं विना यत्पदद्वंद्वान्भोरुहसंस्पृतिं  
 विजयते देवः स नारायणः ॥ २० ॥ आनंद गोविंद मुकुंद राम  
 नारायणानंत निरामयेति । वक्तुं समर्थोऽपि न वक्ति कश्चिदहो

जनानां व्यसनानि मोक्षे ॥ २१ ॥ क्षीरसागरतरंगसीकरासारतार-  
कितचारुमूर्तये । भोगिभोगशयनीयशायिने माधवाय मधुविद्विषे  
नमः ॥ २२ ॥ इति श्रीकुलशेखरेण विरचिता मुकुन्दमाला  
संपूर्णा ॥

### ३३. भगवच्छरणस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सच्चिदानंदरूपाय भक्तानुग्रहकारिणे । माया-  
निर्मितविश्वाय महेशाय नमो नमः ॥ १ ॥ रोगा हरन्ति सततं  
प्रबलाः शरीरं कामादयोऽप्यनुदिनं प्रदहन्ति चित्तम् । मृत्युश्च  
नृत्यति सदा कलयन्दिनानि तस्मात्त्वमद्य शरणं मम दीनबंधो  
॥ २ ॥ देहो विनश्यति सदा परिणामशीलश्चित्तं च स्विद्यति सदा  
विषयानुरागि । बुद्धिः सदा हि रमते विषयेषु नांतस्तस्मात्त्वमद्य  
शरणं मम दीनबंधो ॥ ३ ॥ आयुर्विनश्यति यथाऽऽमघटस्थतोयं  
विद्युत्प्रभेव चपला बत यौवनश्रीः । वृद्धा प्रधावति यथा मृग-  
राजपत्नी तस्मात्त्वमद्य शरणं मम दीनबंधो ॥ ४ ॥ आयाद्वयो मम  
भवत्यधिको विनीते कामादयो हि बलिनो विबलाः शमाद्याः ।  
मृत्युर्यदा तुदति मां बत किं वदेयं तस्मात्त्व० ॥ ५ ॥ तप्तं तपो  
नहि कदापि मयेह तन्वा वाण्या तथा नहि कदापि तपश्च तप्तम् ।  
मिथ्याभिभाषणपरेण न मानसं हि तस्मात्त्व० ॥ ६ ॥ स्तब्धं मनो  
मम सदा नहि याति सौम्यं चक्षुश्च मे न तव पश्यति विश्वरूपम् ।  
वाचा तथैव न वदेन्मम सौम्यवाणीं तस्मात्त्व० ॥ ७ ॥ सत्त्वं न मे  
मनसि याति रजस्तमोभ्यां विद्धे तदा कथमहो शुभकर्मवार्ता ।  
साक्षात्परंपरतया सुखसाधनं तत्तस्मात्त्व० ॥ ८ ॥ पूजा कृता नहि  
कदापि मया त्वदीया मंत्रं त्वदीयमपि मे न जपेदसज्ञा । चित्तं न  
मे स्मरति ते चरणौ ह्यवाप्य तस्मात्त्व० ॥ ९ ॥ यज्ञो न मेऽस्ति

हुतिदानदयादियुक्तो ज्ञानस्य साधनगणो न विवेकमुख्यः । ज्ञानं  
 क्व साधनगणेन विना क्व मोक्षस्तस्मात्त्व० ॥ १० ॥ सत्संगतिर्हि  
 विदिता तव भक्तिहेतुः साऽप्यद्य नास्ति बत पंडितमानिनो मे ।  
 तामंतरेण नहि सा क्व च बोधवार्ता तस्मात्त्व० ॥ ११ ॥ दृष्टिर्न  
 भूतविषया समताभिधाना वैषम्यमेव तदियं विषयीकरोति ।  
 शांतिः कुतो मम भवेत् समता न चेत्स्यात्तस्मात्त्व० ॥ १२ ॥ मैत्री  
 समेषु न च मेऽस्ति कदापि नाथ दीने तथा न करुणा मुदिता च  
 पुण्ये । पापेऽनुपेक्षणवतो मम मुक्त्यर्थं स्यात्तस्मात्त्व० ॥ १३ ॥  
 नेत्रादिकं मम बहिर्विषयेषु सक्तं नांतर्मुखं भवति तामविहाय तस्य ।  
 क्रांतर्मुखत्वमपहाय सुखस्य वार्ता तस्मात्त्व० ॥ १४ ॥ त्यक्तं  
 गृहाद्यपि मया भवतापशांत्यै नासीदसौ हृतहृदो मम मायया ते ।  
 सा चाधुना किमु विधास्यति नेति जाने तस्मात्त्व० ॥ १५ ॥ प्राप्ता  
 धनं गृहकुटुंबगजाश्वदारा राज्यं यदैहिकमर्थेन्द्रपुरश्च नाथ । सर्वं  
 विनश्चरमिदं न फलाय कस्मै तस्मात्त्व० ॥ १६ ॥ प्राणाञ्जिरुध्य  
 विधिना न कृतो हि योगो योगं विनाऽस्ति मनसः स्थिरता कुतो  
 मे । तां वै विना मम न चेत्तसि शांतिवार्ता तस्मात्त्व० ॥ १७ ॥  
 ज्ञानं यथा मम भवेत्कृपया गुरुणां सेवां तथा न विधिनाकरवं हि  
 तेषाम् । सेवापि साधनतया विदितास्ति चित्ते तस्मात्त्व० ॥ १८ ॥  
 तीर्थादिसेवनमहाविधिना हि नाथ नाकारि येन मनसो मम शोधनं  
 स्यात् । शुद्धिं विना न मनसोऽवगमापवर्गौ तस्मात्त्व० ॥ १९ ॥  
 वेदांतशीलनमपि प्रमितिं करोति ब्रह्मात्मनः प्रमितिसाधनसंयुतस्य ।  
 नैवास्ति साधनलवो मयि नाथ तस्यास्तस्मात्त्व० ॥ २० ॥ गोविंद  
 शंकर हरे गिरिजेश मेश शंभो जनार्दन गिरीश मुकुंद साम्ब ।  
 नान्या गतिर्मम कथंचन वां विहाय तस्मात्प्रभो मम गतिः कृपया

विधेया ॥ २१ ॥ एतं स्तवं भगवदाश्रयणाभिधानं ये मानवाः  
प्रतिदिनं प्रणताः पठन्ति । ते मानवा भवन्ति परिभूय शान्तिं गच्छन्ति  
किंच परमात्मनि भक्तिमन्तः ॥ २२ ॥ इति श्रीमन्मौक्तिकरामोदा-  
सीनशिष्यब्रह्मानन्दविरचितं भगवच्छरणस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३४. परमेश्वरस्तुतिसारस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ त्वमेकः शुद्धोऽसि त्वयि निगमबाह्यामलमयं  
प्रपञ्चं पश्यन्ति भ्रमपरवशाः पापनिरताः । बहिस्तेभ्यः कृत्वा स्वपद-  
शरणं मानय विभो गजेन्द्रे दृष्टं ते शरणद वदान्यं स्वपददम्  
॥ १ ॥ न सृष्टेस्ते हानिर्यदि हि कृपयातोऽवसि च मां त्वयानेके  
गुप्ता व्यसनमिति तेऽस्ति श्रुतिपथे । अतो मासुद्धतुं घटय मयि  
दृष्टिं सुविमलां न रिक्तां मे याव्वां स्वजनरत कर्तुं भव हरे ॥ २ ॥  
कदाऽहं भोः स्वामिश्रितमनसा त्वां हृदि भजन्नभद्रे संसारे  
ह्यनवरतदुःखेऽतिविरसः । लभेयं तां शान्तिं परममुनिभिर्या ह्यधि-  
गता दयां कृत्वा मे त्वं वितर परशान्तिं भवहर ॥ ३ ॥ विधाता  
चेद्विश्वं सृजति सृजतां मे शुभकृतिं विधुश्चेत्पाता माऽवतु जनि-  
मृतेर्दुःखजलधेः । हरः संहर्ता हरतु मम शोकं सजनकं यथाऽहं  
मुक्तः स्यां किमपि तु तथा ते विदधताम् ॥ ४ ॥ अहं ब्रह्मानन्द-  
स्त्वमपि च तदाख्यः सुविदितस्ततोऽहं मित्रो नो कथमपि भवत्तः  
श्रुतिदृशा । तथा चेदानीं त्वं त्वयि मम विभेदस्य जननीं स्वमायां  
संवार्थं प्रभव मम भेदं निरसितुम् ॥ ५ ॥ कदाऽहं हे स्वामिन्  
जनिमृतिमयं दुःखनिषिडं भवं हित्वा सत्येऽनवरतसुखे स्वात्मवपुषि ।  
रमे तस्मिन्नित्यं निखिलमुनयो ब्रह्मरसिका रमन्ते यस्मिंस्ते कृतसकल-  
कृत्या यतिवराः ॥ ६ ॥ पठत्येके शास्त्रं निगममपरे तत्परतया यजन्त्यन्ये

त्वां वै ददति च पदार्थास्तव हितान् । अहं तु स्वामिंस्ते शरण-  
मगमं संसृतिभयाद्यथा ते प्रीतिः स्याद्वितकर तथा त्वं कुरु विभो  
॥ ७ ॥ अहं ज्योतिर्नित्यो गगनामिव तृप्तः सुखमयः श्रुतिः  
सिद्धोऽद्वैतः कथमपि न भिन्नोऽस्मि विधुतः । इति ज्ञाते तत्त्वे  
भवति च परः संसृतिलयादतस्तत्त्वज्ञानं मयि विघटयेस्त्वं हि  
कृपया ॥ ८ ॥ अनादौ संसारे जनिमृतिमये दुःखितमना मुमुक्षुः  
सन्कश्चिद्भजति हि गुरुं ज्ञानपरमम् । ततो ज्ञात्वा यं वै तुदति न  
पुनः क्लेशनिवहैर्भजेऽहं तं देवं भवति च परो यस्य भजनात् ॥ ९ ॥  
विवेको वैराग्यं न च शमदमाद्याः षडपरे मुमुक्षा मे नास्ति प्रभवति  
कथं ज्ञानममलम् । अतः संसाराब्धेस्तरणसरणिं मासुपदिशन्  
स्वबुद्धिं श्रौतीं मे वितर भगवंस्त्वं हि कृपया ॥ १० ॥ कदाऽहं भो  
स्वामिन्निगममतिवेद्यं शिवमयं चिदानंदं नित्यं श्रुतिहृतपरिच्छेद-  
निवहम् । त्वमर्थाभिन्नं त्वामभिरम इहात्मन्यविरतं मनीषामेवं मे  
सफलं वदान्य स्वकृपया ॥ ११ ॥ यदर्थं सर्वं वै प्रियमसुधनादि  
प्रभवति स्वयं नान्यार्थो हि प्रिय इति च वेदे प्रविदितम् । स  
आत्मा सर्वेषां जनिमृतिमतां वेदगदितस्ततोऽहं तं वेद्यं सततममलं  
यामिं शरणम् ॥ १२ ॥ मया त्यक्तं सर्वं कथमपि भवेत्स्वात्मनि  
मतिस्त्वदीया माया मां प्रति तु विपरीतं कृतवती । ततोऽहं किं  
कुर्यां नहि मम मतिः कापि चलति दयां कृत्वा नाथ स्वपदशरणं  
देहि शिवदम् ॥ १३ ॥ नगा दैत्याः कीशा भवजलधिपारं हि  
गमितास्त्वया चान्ये स्वामिन् किमिति समयेऽस्मिन् शयितवान् । न  
हेलां त्वं कुर्यास्त्वयि निहितसर्वे मयि विभो न हि त्वाऽहं हित्वा  
कमपि शरणं चान्यमगमम् ॥ १४ ॥ अनंताद्या विज्ञा न गुणजलधे-  
स्तेऽन्तमगमश्चतः पारं यायात्तव गुणगणानां कथमयम् । गृणन्

यावद्वित्वा जनिमृतिहरं याति परमां गतिं योगिप्राप्त्यामिति  
मनसि बुद्ध्याहमनवम् ॥ १५ ॥ इति श्रीमन्मौक्तिकरामोदासीन-  
शिष्यब्रह्मानन्दविरचितं परमेश्वरस्तुतिसारस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३५. हरिनाममालास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ गोविंदं गोकुलानंदं गोपालं गोपिवल्लभम् ।  
गोवर्धनोद्धरं धीरं तं वंदे गोमतीप्रियम् ॥ १ ॥ नारायणं निराकारं  
नरवीरं नरोत्तमम् । नृसिंहं नागनाथं च तं वंदे नरकांतकम्  
॥ २ ॥ पीतांबरं पद्मनाभं पद्माक्षं पुरुषोत्तमम् । पवित्रं परमानंदं  
तं वंदे परमेश्वरम् ॥ ३ ॥ राघवं रामचंद्रं च रावणारिं रमापतिम् ।  
राजीवलोचनं रामं तं वंदे रघुनंदनम् ॥ ४ ॥ वामनं विश्वरूपं च  
वासुदेवं च विठ्ठलम् । विश्वेश्वरं विभुं व्यासं तं वंदे वेदवल्लभम्  
॥ ५ ॥ दामोदरं दिव्यसिंहं दयालुं दीननायकम् । दैत्यारिं देव-  
देवेशं तं वंदे देवकीसुतम् ॥ ६ ॥ मुरारिं माधवं मत्स्यं मुकुंदं  
मुष्टिमर्दनम् । मुंजकेशं महाबाहुं तं वंदे मधुसूदनम् ॥ ७ ॥  
केशवं कमलाकांतं कामेशं कौस्तुभप्रियम् । कौमोदकीधरं कृष्णं तं  
वंदे कौरवांतकम् ॥ ८ ॥ भूधरं भुवनानंदं भूतेशं भूतनायकम् ।  
भावनैकं भुजंगेशं तं वंदे भवनाशनम् ॥ ९ ॥ जनार्दनं जगन्नाथं  
जगज्जाड्यविनाशकम् । जामदग्न्यं वरं ज्योतिस्तं वंदे जलशायिनम्  
॥ १० ॥ चतुर्भुजं चिदानंदं चाणूरमलमर्दनम् । चराचरगतं देवं  
तं वंदे चक्रपाणिनम् ॥ ११ ॥ श्रियः करं श्रियो नाथं श्रीधरं  
श्रीवरप्रदम् । श्रीवत्सलधरं सौम्यं तं वंदे श्रीसुरेश्वरम् ॥ १२ ॥  
योगीश्वरं यज्ञपतिं यशोदानंददायकम् । यमुनाजलकल्लोलं तं वंदे  
यदुनायकम् ॥ १३ ॥ शालिग्रामशिलाशुद्धं शंखचक्रोपशोभितम् ।

सुरासुरसदासेव्यं तं वंदे साधुवल्लभम् ॥ १४ ॥ त्रिविक्रमं तपोमूर्तिं  
त्रिविधाघौघनाशनम् । त्रिस्थलं तीर्थराजेंद्रं तं वंदे तुलसीप्रियम्  
॥ १५ ॥ अनंतमादिपुरुषमच्युतं च वरप्रदम् । आनंदं च सदानंदं  
तं वंदे चाधनाशनम् ॥ १६ ॥ लीलया धृतभूभारं लोकसत्त्वैक-  
वंदितम् । लोकेश्वरं च श्रीकांतं तं वंदे लक्ष्मणप्रियम् ॥ १७ ॥  
हरिं च हरिणाक्षं च हरिनार्थं हरिप्रियम् । हलायुधसहायं च तं  
वंदे हनुमत्पतिम् ॥ १८ ॥ हरिनामकृता माला पवित्रा पाप-  
नाशिनी । बलिराजेंद्रेण चोक्ता कंठे धार्या प्रयत्नतः ॥ १९ ॥ इति  
बलिराजेंद्रप्रणीतं हरिनाममालास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३६. विष्णुशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नारद उवाच ॥ ॐवासुदेवं हृषीकेशं वामनं  
जलशायिनम् । जनार्दनं हरिं कृष्णं श्रीवक्षं गरुडध्वजम् ॥ १ ॥  
वाराहं पुंडरीकाक्षं नृसिंहं नरकांतकम् । अव्यक्तं शाश्वतं विष्णु-  
मनंतमजमव्ययम् ॥ २ ॥ नारायणं गदाध्यक्षं गोविंदं कीर्तिभाज-  
नम् । गोवर्धनोद्धरं देवं भूधरं भुवनेश्वरम् ॥ ३ ॥ वेत्तारं यज्ञपुरुषं  
यज्ञेशं यज्ञवाहकम् । चक्रपाणिं गदापाणिं शंखपाणिं नरोत्तमम् ॥ ४ ॥  
वैकुण्ठं दुष्टदमनं भूगर्भं पीतवाससम् । त्रिविक्रमं त्रिकालज्ञं त्रिमूर्तिं  
नंदकेश्वरम् ॥ ५ ॥ रामं रामं हयग्रीवं भीमं रौद्रं भवोद्भवम् ।  
श्रीपतिं श्रीधरं श्रीशं मंगलं मंगलायुधम् ॥ ६ ॥ दामोदरं दमो-  
पेतं केशवं केशिसूदनम् । वरेण्यं वरदं विष्णुमानंदं वसुदेवजम्  
॥ ७ ॥ हिरण्यरेतसं दीप्तं पुराणं पुरुषोत्तमम् । सकलं निष्कलं  
शुद्धं निर्गुणं गुणशाश्वतम् ॥ ८ ॥ हिरण्यतनुसंकाशं-सूर्यायुतसम-  
प्रभम् । मेघश्यामं चतुर्बाहुं कुशलं कमलेक्षणम् ॥ ९ ॥ ज्योती-

रूपमरूपं च स्वरूपं रूपसंस्थितम् । सर्वज्ञं सर्वरूपस्थं सर्वेशं  
 सर्वतोमुखम् ॥ १० ॥ ज्ञानं कूटस्थमचलं ज्ञानदं परमं प्रभुम् ।  
 योगीशं योगनिष्णातं योगिनं योगरूपिणम् ॥ ११ ॥ ईश्वरं  
 सर्वभूतानां वन्दे भूतमयं प्रभुम् । इति नामशतं दिव्यं वैष्णवं खलु  
 पापहम् ॥ १२ ॥ व्यासेन कथितं पूर्वं सर्वपापप्रणाशनम् । यः  
 पटेत्प्रातरुत्थाय स भवेद्वैष्णवो नरः ॥ १३ ॥ सर्वपापविशुद्धात्मा  
 विष्णुसायुज्यमामुयात् । चांद्रायणसहस्राणि कन्यादानशतानि च  
 ॥ १४ ॥ गवां लक्षसहस्राणि मुक्तिभागी भवेन्नरः । अश्वमेधायुतं  
 पुण्यं फलं प्राप्नोति मानवः ॥ १५ ॥ इति श्रीविष्णुपुराणे विष्णु-  
 शतनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३७. शालिग्रामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीशालिग्रामस्तोत्रमंत्रस्य श्रीभगवानृषिः,  
 नारायणो देवता, अनुष्टुप् छंदः, श्रीशालिग्रामस्तोत्रमंत्रजपे विनि-  
 योगः । युधिष्ठिर उवाच ॥ श्रीदेवदेव देवेश देवतार्चनमुत्तमम् ।  
 तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि ब्रूहि मे पुरुषोत्तम ॥ १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥  
 गंडक्यां चोत्तरे तीरे गिरिराजस्य दक्षिणे । दशयोजनविस्तीर्णा  
 महाक्षेत्रवसुंधरा ॥ २ ॥ शालिग्रामो भवेद्देवो देवी द्वारावती  
 भवेत् । उभयोः संगमो यत्र मुक्तिस्तत्र न संशयः ॥ ३ ॥ शालि-  
 ग्रामशिला यत्र यत्र द्वारावती शिला । उभयोः संगमो यत्र  
 मुक्तिस्तत्र न संशयः ॥ ४ ॥ आजन्मकृतपापानां प्रायश्चित्तं यं  
 इच्छति । शालिग्रामशिलावारि पापहारि नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥  
 अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् । विष्णोः पादोदकं पीत्वा  
 शिरसा धारयाम्यहम् ॥ ६ ॥ शंखमध्ये स्थितं तोयं आम्रितं  
 केशवोपरि । अंगलग्नं मनुष्याणां ब्रह्महत्यादिकं दहेत् ॥ ७ ॥



स्नानोदकं पिबेन्नित्यं चक्रांकितशिलोद्भवम् । प्रक्षाल्य शुद्धं तत्तोयं  
 ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥ ८ ॥ अग्निष्टोमसहस्राणि वाजपेयशतानि च ।  
 सम्यक् फलमवाप्नोति विष्णोर्नैवेद्यभक्षणात् ॥ ९ ॥ नैवेद्ययुक्तां  
 तुलसीं च मिश्रितां विशेषतः पादजलेन विष्णोः । योऽश्नाति नित्यं  
 पुरतो मुरारेः प्राप्नोति यज्ञायुतकोटिपुण्यम् ॥ १० ॥ खंडिता  
 स्फुटिता भिक्षा वह्निदग्धा तथैव च । शालिग्रामशिला यत्र तत्र  
 दोषो न विद्यते ॥ ११ ॥ न मंत्रः पूजनं नैव न तीर्थं न च  
 भावना । न स्तुतिर्नोपचारश्च शालिग्रामशिलार्चने ॥ १२ ॥ ब्रह्म-  
 हत्यादिकं पापं मनोवाक्कायसंभवम् । शीघ्रं नश्यति तत्सर्वं शालि-  
 ग्रामशिलार्चनात् ॥ १३ ॥ नानावर्णमयं चैव नानाभोगेन वेष्टि-  
 तम् । तथा वरप्रसादेन लक्ष्मीकांतं वदाम्यहम् ॥ १४ ॥ नारायणो-  
 ऽद्भवो देवश्चक्रमध्ये च कर्मणा । तथा वरप्रसादेन लक्ष्मीकांतं वदाम्य-  
 हम् ॥ १५ ॥ कृष्णे शिलातले यत्र सूक्ष्मं चक्रं च दृश्यते ।  
 सौभाग्यं संततिं धत्ते सर्वसौख्यं ददाति च ॥ १६ ॥ वासुदेवस्य  
 चिह्नानि दृष्ट्वा पापैः प्रमुच्यते । श्रीधरः सुकरे वामे हरिद्वर्णस्तु  
 दृश्यते ॥ १७ ॥ वराहरूपिणं देवं कूर्मांगैरपि चिह्नितम् । गोपदं  
 तत्र दृश्येत वाराहं वामनं तथा ॥ १८ ॥ पीतवर्णं तु देवानां रक्त-  
 वर्णं भयानकम् । नारसिंहोऽभवद्देवो मोक्षदं च प्रकीर्तितम् ॥ १९ ॥  
 शंखचक्रादाकूर्माः शंखो यत्र प्रदृश्यते । शंखवर्णस्य देवानां वामे  
 देवस्य लक्षणम् ॥ २० ॥ दामोदरं तथा स्थूलं मध्ये चक्रं प्रतिष्ठी-  
 तम् । पूर्णद्वारेण संकीर्णा पीतरेखा च दृश्यते ॥ २१ ॥ छत्राकारे  
 भवेद्वाज्यं वर्तुले च महाश्रियः । कपटे च महादुःखं शूलग्रे तु रणं  
 ध्रुवम् ॥ २२ ॥ ललाटे शेषभोगस्तु शिरोपरि सुकांचनम् । चक्र-  
 कांचनवर्णानां वामदेवस्य लक्षणम् ॥ २३ ॥ वामपार्श्वे च वै चक्रे

कृष्णवर्णस्तु पिङ्गलम् । लक्ष्मीनृसिंहदेवानां पृथग्वर्णस्तु दृश्यते  
 ॥ २४ ॥ लंबोष्ठे च दरिद्रं स्यात्पिङ्गले हानिरेव च । लघ्नचक्रे भवे-  
 द्याधिर्विदारे मरणं ध्रुवम् ॥ २५ ॥ पादोदकं च निर्माल्यं मस्तके  
 धारयेत्सदा । विष्णोर्दृष्टं भक्षितव्यं तुलसीदलमिश्रितम् ॥ २६ ॥  
 कल्पकोटिसहस्राणि वैकुण्ठे वसते सदा । शालिग्रामशिलाबिंदुर्हत्या-  
 कोटिविनाशनः ॥ २७ ॥ तस्मात्संपूजयेद्यात्वा पूजितं चापि  
 सर्वदा । शालिग्रामशिलास्तोत्रं यः पठेच्च द्विजोत्तमः ॥ २८ ॥ स  
 गच्छेत्परमं स्थानं यत्र लोकेश्वरो हरिः । सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णु-  
 लोकं स गच्छति ॥ २९ ॥ दशावतारा देवानां पृथग्वर्णस्तु  
 दृश्यते । ईप्सितं लभते राज्यं विष्णुपूजामनुक्रमात् ॥ ३० ॥  
 कोट्यो हि ब्रह्महत्यानामगम्यागम्यकोटयः । ताः सर्वा नाशमायांति  
 विष्णुनैवेद्यभक्षणात् ॥ ३१ ॥ विष्णोः पादोदकं पीत्वा कोटि-  
 जन्माघनाशनम् । तस्मादष्टगुणं पापं भूमौ बिंदुनिपातनात् ॥ ३२ ॥  
 इति श्रीशालिग्रामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३८. विष्णुपादादिकेशांतवर्णनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ लक्ष्मीभर्तुर्भुजाग्रे कृतवसति सितं यस्य रूपं  
 विशालं नीलाद्रेस्तुङ्गशृङ्गस्थितमिव रजनीनाथबिम्बं विभाति ।  
 पायान्नः पांचजन्यः स सकुलदितिजत्रासनैः पूरयन्स्वैर्निध्वानैर्नीर-  
 दौघध्वनिपरिभवदैरंबरं कंबुराजः ॥ १ ॥ आदुर्यस्य स्वरूपं क्षण-  
 मुखमखिलं सूरयः कालमेतं ध्वांतस्यैकांतमंतं यदपि च परमं  
 सर्वधाज्ञां च धाम । चक्रं तच्चक्रपाणेर्दितिजतनुगलद्रक्तधाराक्तधारं  
 शश्वन्नो विश्वबंधं चितरतु विपुलं शर्म घर्मांशुशोभम् ॥ २ ॥

अव्याघ्रिघातघोरो हरिभुजपवनामर्शनाध्मातमूर्तेरस्मान्विस्मरेनेत्र-  
 त्रिदशनुतिवचःसाधुकारैः सुतारः । सर्वं संहर्तुमिच्छोररिकुलभुवनं  
 स्फारविस्फारनादः संयत्कल्पांतसिंधौ शरसलिलघटावर्मुचः कामु-  
 कस्य ॥ ३ ॥ जीमूतश्यामभासा मुहुरपि भगवद्वाहुना मोहयती  
 युद्धेषूद्धूयमाना ह्रदिति तडिदिवालक्ष्यते यस्य मूर्तिः । सोऽसिन्धा-  
 साकुलाक्षत्रिदशवपुरिपुः शोणितास्वाददत्तो नित्यानंदाय भूयान्मधु-  
 मथनमनोनंदको नंदको नः ॥ ४ ॥ कम्पाकारा मुरारैः करकमल-  
 तलेनानुरागाद्गृहीता सम्यग्वृत्ता स्थिताग्रे सपदि न सहते दर्शनं  
 या परेषाम् । राजंती दैत्यजीवासवमदमुदिता लोहितालेपनाद्रा  
 कामं दीप्तांशुकांता प्रदिशतु दयितेवास्य कौमोदकी नः ॥ ५ ॥ यो  
 विश्वप्राणभूतस्तनुरपि च हुरेर्यान्केतुस्वरूपो यं संचित्यैव सद्यः  
 स्वयमुरगवधूवर्गगर्भाः पतन्ति । चंचच्चंडोरुतुंडत्रुटितफणिवसारक-  
 पंकांकितास्यं बंदे छंदोमयं तं खगपतिममलस्वर्णवर्णं सुपर्णम्  
 ॥ ६ ॥ विष्णोर्विश्वेश्वरस्य प्रवरशयनकृत्सर्वलोकैकधर्ता सोऽनंतः  
 सर्वभूतः पृथुविमलयशाः सर्ववेदैश्च वेद्यः । पाता विश्वस्य शश्वत्स-  
 कलसुररिपुध्वंसनः पापहंता सर्वज्ञः सर्वसाक्षी सकलविषभयात्पातु  
 भोगीश्वरो नः ॥ ७ ॥ वाग्भृगौर्यादिभेदैर्विदुरिह मुनयो यां यदी-  
 यैश्च पुंसां कारुण्यार्द्रैः कटाक्षैः सकृदपि पतितैः संपदः स्युः  
 समग्राः । कुंदंदुस्वच्छमंदस्मितमधुरमुखांभोरूहां सुंदरांगीं वंदे  
 वंद्यामशेषैरपि मुरभिदुरोमंदिरामिंदिरां ताम् ॥ ८ ॥ या सूते  
 सत्त्वजालं सकलमपि सदा संनिधानेन पुंसो धत्ते या सत्त्वयोगा-  
 च्चरमचरमिदं भूतये भूतजातम् । धात्रीं स्थात्रीं जनित्रीं प्रकृतिम-  
 विकृतिं विश्वशक्तिं विधात्रीं विष्णोर्विश्वात्मनस्तां विपुलगुणमयीं  
 प्राणनाथां प्रणौमि ॥ ९ ॥ येभ्योऽसूयद्भिरुचैः सपदि पदमुरु

त्यज्यते दैत्यवर्गैर्येभ्यो धर्तुं च मूर्ध्ना स्पृहयति सततं सर्वगीर्वाण-  
 वर्गः । नित्यं निर्मूलयेयुर्निचिततरममी भक्तिनिष्ठात्मनां नः पद्मा-  
 क्षस्याङ्घ्रिपद्मद्वयतलनिलयाः पांसवः पापपंकम् ॥ १० ॥ रेखा लेखाभि-  
 वंद्याश्चरणतलगताश्चक्रमत्स्यादिरूपाः स्निग्धाः सूक्ष्माः सुजाता  
 मृदुललिततरक्षामसूत्रायमाणाः । दद्युर्नो मंगलानि भ्रमरभरजुषा  
 कोमलेनाब्धिजायाः कम्पेणान्नेढ्यमानाः किसलयमृदुना पाणिना  
 चक्रपाणेः ॥ ११ ॥ यस्मादाक्रामतो द्यां गरुडमणिशिलाकेतु-  
 दंडायमानादाश्च्योतंती बभासे सुरसरिदमला वैजयंतीव कांता ।  
 भूमिष्ठो यस्तथान्यो भुवनगृहबृहत्संभशोभां दधानः पातामेतौ  
 पयोजोदरललिततलौ पंकजाक्षस्य पादौ ॥ १२ ॥ आक्रामच्च्यां  
 त्रिलोकीमसुरसुरपती तत्क्षणादेव नीतौ याभ्यां वैरोचनीर्द्रौ युग-  
 पदपि विपत्संपदोरेकधाम । ताभ्यां ताम्रोदराभ्यां मुहुरहमजितस्यां-  
 चिताभ्यामुभाभ्यां प्राज्यैश्वर्यप्रदाभ्यां प्रणतिमुपगतः पादपंकेरुहा-  
 भ्याम् ॥ १३ ॥ येभ्यो वर्णश्चतुर्थश्चरमत उदभूदादिसर्गे प्रजानां  
 साहस्री चापि संख्या प्रकटमभिहिता सर्ववेदेषु येषाम् । व्यासा  
 विश्वंभरा यैरतिवितततनोर्विश्वमूर्तेर्विराजो विष्णोस्तेभ्यो महद्भ्यः  
 सततमपि नमोऽस्त्वंघ्रिपंकेरुहेभ्यः ॥ १४ ॥ विष्णोः पादद्वयाग्रे  
 विमलनखमणिभ्राजिता राजते या राजीवस्येव रम्या हिमजलकणिका-  
 लंकृताग्रा दलाली । अस्माकं विस्मयार्हाण्यखिलमुनिजनप्रार्थनीयानि  
 सेयं दद्यादाद्यानवद्या ततिरतिरुचिरा मंगलान्यंगुलीनाम् ॥ १५ ॥  
 यस्यां दृष्ट्वाऽमलायां प्रतिकृतिममराः स्वां भवंत्यानमंतः सेंद्राः  
 सांद्रीकृतेभ्यः स्वपरसुरकुलार्शंकयातंकवंतः । सा सद्यः सातिरेकां  
 सकलसुखकरीं संपदं साधयेन्नश्चंचच्चावशुचक्रा चरणनलिनयोश्चक्र-  
 पाणेर्नखाली ॥ १६ ॥ पादांभोजन्मसेवासमवनतसुरव्रातभास्व-

किरीटप्रत्युत्तोच्चावचाश्मप्रवरकरगणैश्चित्रितं यद्विभाति । नम्रा-  
गाणां हरेर्नो हरिदुपलमहाकूर्मसौंदर्यहारिच्छायं श्रेयःप्रदायि प्रपद-  
युगमिदं प्रापयेत्पापमंतम् ॥ १७ ॥ श्रीमत्यौ चारुवृत्ते करपरिम-  
लनानंदहृष्टे रमायाः सौंदर्याब्धेर्द्वनीलोपलरचितमहादंडयोः कांति-  
चौरे । सूर्यद्वैः स्तूयमाने सुरकुलसुखदे सूदितारातिसंघे जंघे  
नारायणीये मुहुरपि जयतामस्सदंहो हरंत्यौ ॥ १८ ॥ सम्यक्  
साह्यं विधातुं सममपि सततं जंघयोः खिन्नयोर्ये भारीभूतोरुदंड-  
द्वयभरणकृतोत्तंभभावं भजेते । चित्तादर्शं निधातुं महितमिव सतां  
ते समुद्रायमाने वृत्ताकारे विधत्तां हृदि मुदमजितस्यानिशं जानुनी-  
नः ॥ १९ ॥ देवो भीतिं विधातुः सपदि विदधतो कैटभाण्यं मधुं  
यावारोप्यारूढगर्वावधिलज्जि ययोरैव दैत्यौ जघान । वृत्तावन्यो-  
न्यतुल्यौ चतुरमुपचयं बिभ्रतावभ्रनीलावूरू चारू हरेस्तौ मुदमति-  
शयिनीं मानसे नो विधत्ताम् ॥ २० ॥ पीतेन द्योतते यच्चतुरपरि-  
हितेनांबरणात्युदारं जातालंकारयोगं जलमिव जलधेर्वाहवाग्नि-  
प्रभाभिः । एतत्पातित्यदाज्ञो जघनमतिघनादेनसो माननीयं सात-  
त्येनैव चेतोविषयमवतरत्पातु पीतांबरस्य ॥ २१ ॥ यस्या दाक्ष्या  
त्रिधाज्ञो जघनकलितया भ्राजतेऽङ्गं यथाब्धेर्मध्यस्थो मंदराद्रिभु-  
जगपतिमहाभोगसंनद्धमध्यः । कांची सा कांचनाभा मणिवरकिरणै-  
रुल्लसद्भिः प्रदीप्ता कल्यां कल्याणदात्रीं मम मतिमनिशं कन्नरुपा  
करोतु ॥ २२ ॥ उन्नम्रं कन्नमुच्चैरुपचितमुदभूद्यत्र पत्रैर्विचित्रैः  
पूर्वं गीर्वाणपूज्यं कमलजमधुपस्यास्पदं तत्पयोजम् । तस्मिन्नीला-  
श्मनीलैस्तरलरुचिजलैः पूरिते केलिबुद्ध्या नालीकाक्षस्य नाभीसरसि  
वसतु नश्चित्तहंसश्चिराय ॥ २३ ॥ पातालं यस्य नालं वलयमपि  
दिशां पत्रपंक्तिं नगैर्दान्विद्वंशः केसरालीर्विदुरिह विपुलां कर्णिकां

स्वर्णशैलम् । भूयाद्वायत्स्वयंभूमधुकरभवनं भूमयं कामदं नो  
नालीकं नामिपद्माकरभवमुरु तन्नागशब्दस्य शौरेः ॥ २४ ॥  
कांत्यंभः पूरपूर्णं लसदसितवलीभंगभास्वत्तरंगे गंभीराकारनाभीचतुर-  
तरमहावर्तशोभिन्द्युदारे । क्रीडत्वानद्धहेमोदरनलिनमहावाडवाग्नि-  
प्रभाढ्ये कामं दामोदरीयोदरसलिलनिधौ चित्तमत्स्यश्चिरं नः ॥ २५ ॥  
नाभीनालीकमूलादधिकपरिमलोन्मोहितानामलीनां माला नीलेव  
यांती स्फुरति रुचिमती वक्रपद्मोन्मुखी या । रम्या सा रोमराजि-  
र्महितरुचिमती मध्यभागस्य विष्णोश्चित्तस्था मा विरंसीच्चिरतर-  
मुचितां साधयंती श्रियं नः ॥ २६ ॥ आदौ कल्पस्य यस्मात्प्रभवति  
नियतं विश्वमेतद्विकल्पैः कल्पांते यस्य चांतः प्रविशति सकलं  
स्थावरं जंगमं च । अत्यंतार्थित्यमूर्तेश्चिरतरमजितस्यांतरिक्षस्वरूपे  
तस्मिन्नस्माकमतःकरणमतिमुदा क्रीडतात्क्रोडभागे ॥ २७ ॥ संस्तीर्णं  
कौस्तुभांशुप्रसरकिसलयैर्मुग्धमुक्ताफलाढ्यं श्रीवत्सोल्लासि कुलप्रति-  
वनवनमालांशुराजद्भुजांतम् । वक्षः श्रीवृक्षकांतं मधुकरनिकर-  
श्यामलं शाङ्गपाणेः संसाराध्वश्रमांतैरुपवनमिव यत्सेवितं तत्प्रपद्ये  
॥ २८ ॥ कांतं वक्षो नितान्तं विदधदिव गलं कालिमा कालशत्रो-  
रिदोर्बिम्बं यथांको मधुप इव तरोर्मजरीं राजते यः । श्रीमान्नित्यं  
विधेयादविरलमिलितः कौस्तुभश्रीप्रतानैः श्रीवत्सः श्रीपतेः स श्रिय  
इव दयितो वत्स उच्चैः श्रियं नः ॥ २९ ॥ संभूयांभोधिमध्यात्सपदि  
सहजया यः श्रिया संनिधत्ते नीले नारायणोरःस्थलगगनतले हार-  
तारोपसेन्ये । आशाः सर्वाः प्रकाशा विदधदपिदधच्चात्मभासान्यतेजां-  
स्याश्चर्यस्याकरो नो द्युमणिरिव मणिः कौस्तुभः सोऽस्तु भूत्यै ॥ ३० ॥  
या वायावानुकूल्यात्सरति मणिरुचा भासमाना समाना साकं साकं-  
पमंसे वसति विदधती वासुभद्रं सुभद्रम् । सारं सारंगसंघैर्मुखरित-

कुसुमा मेचकांता च कांता माला मालालितास्मान्न विरमतु सुखैर्यो-  
जयंती जयंती ॥ ३१ ॥ हारस्योरुप्रभाभिः प्रतिवनवनमालांशुभिः  
प्रांशुभिर्यच्छ्रीमिश्राप्यंगदानां शबलितरुचिभिर्निष्कभाभिश्च भाति ।  
बाहुल्येनैव बद्धांजलिपुटमजितस्याभियाचामहे तद्वधाति बाधतां नो  
बहुविहतकरीं बंधुरं बाहुमूलम् ॥ ३२ ॥ विश्वत्राणैकदीक्षास्तदनु-  
गुणगुणक्षत्रनिर्माणदक्षाः कर्तारो दुर्निरूपाः स्फुटगुरुयशसां कर्मणा-  
मद्भुतानाम् । शार्ङ्ग बाणं कृपाणं फलकमरिगदे पद्मशंखौ सहस्रं  
विभ्राणाः शस्त्रजालं मम ददतु हरेर्बाहवो मोहहानिम् ॥ ३३ ॥  
कंठाकल्पोद्गतैर्यः कनकमयलसत्कुंडलोत्तरुदारैरुद्ध्योतैः कौस्तुभस्या-  
प्युरुभिरुपचितश्चित्रवर्णो विभाति । कंठाश्लेषे रमायाः करवलयपदै-  
मुद्रिते भद्ररूपे वैकुण्ठियेऽत्र कंठे वसतु मम मति कुंठभावं विहाय  
॥ ३४ ॥ पद्मानंदप्रदाता परिलसदरुणश्रीपरीताग्रभागः काले काले  
च कंबुप्रवरशशधरापूरणे यः प्रवीणः । वक्राकाशांतरस्थस्तिरयति  
नितरां दंततारौघशोभां श्रीभर्तुर्दंतवासोद्युमणिरवतमोनाशनायास्त्व-  
सौ नः ॥ ३५ ॥ नित्यं स्नेहातिरेकाच्चिजकमितुरलं विप्रयोगाक्षमा  
या वक्त्रंदोरंतराले कृतवसतिरिवाभाति नक्षत्रराजिः । लक्ष्मीकांतस्य  
कांताकृतिरतिविलसन्मुग्धमुक्ताफलश्रीर्दंताली संततं सा नतिनुति-  
निरतानक्षतादक्षता नः ॥ ३६ ॥ ब्रह्मन्ब्रह्मण्यजिह्वां मतिमपि कुरुषे  
देव संभावये त्वां शंभो शक्र त्रिलोकीमवसि किममरैर्नारदाद्याः  
सुखं वः । इत्थं सेवावनम्रं सुरभुनिनिकरं वीक्ष्य विष्णोः प्रसन्न-  
स्यास्त्वेदोरास्त्रवंती वरवचनसुधा ह्लादयेन्मानसं नः ॥ ३७ ॥ कर्ण-  
स्थस्वर्णकम्रोज्ज्वलमकरमहाकुंडलप्रोतदीप्यन्माणिक्यश्रीप्रतापैः परि-  
मिलितमलिश्यामलं कोमलं यत् । प्रोद्यत्सूर्याशुराजन्मरकतमुकुरा-  
कारचोरं मुरारेर्गाढामागामिनीं नो गमयतु विपदं गंडयोर्मंडलं

तत् ॥ ३८ ॥ वक्रांभोजे लसंतं मुहुरधरमाणं पक्वविंबाभिरामं दृष्ट्वा दष्टुं  
 शुक्रस्य स्फुटमवतरतस्तुंडदंडायते नः । घोणः शोणीकृतात्मा श्रवण-  
 युगलसत्कुंडलोत्तैर्मुखारोः प्राणाख्यस्यानिलस्य प्रसरणसरणिः प्राण-  
 दानाय नः स्तात् ॥ ३९ ॥ दिक्कालौ वेदयंतौ जगति मुहुरिमौ  
 संचरंतौ रवींदू त्रैलोक्यालोकदीपावभिदधति ययोरेव रूपं मुनीन्द्राः ।  
 अस्मानब्जप्रभे ते प्रचुरतरकृपानिर्भरं प्रेक्षमाणे पातामाताम्रशुक्ला-  
 सितरुचिरुचिरे पद्मनेत्रस्य नेत्रे ॥ ४० ॥ लक्ष्माकारालकालिस्फुर-  
 दलिकशशांकार्धसंदर्शमीलन्नेत्रांभोजप्रबोधोत्सुकनिभृततरालीनभृंग-  
 च्छदामे । लक्ष्मीनाथस्य लक्ष्मीकृतविबुधगणापांगबाणासनार्धच्छाये  
 नो भूतिभूरिप्रसवकुलशते भ्रूलते पालयेताम् ॥ ४१ ॥ पातात्पा-  
 तालपातात्पतगपतिगतेर्भूयुगं भुग्नमध्यं येनेषञ्चालितेन स्वपदनिय-  
 मिताः सासुरा देवसंधाः । नृत्यलालाटरंगे रजनिकरतनोरधखंडाव-  
 दाते कालव्यालद्वयं वा विलसति समया बालिका मातरं नः ॥ ४२ ॥  
 रुक्षस्मारेक्षुचापच्युतशरनिकरक्षीणलक्ष्मीकटाक्षप्रोत्फुल्लत्पद्ममालावि-  
 लसितमहितस्फाटिकेशानलिंगम् । भूयाद्भूयो विभूत्यै मम भुवन-  
 पतेर्भूलताद्वंद्वमध्यादुत्थं तत्पुंड्रमूर्ध्वं जनिमरणतमःखंडनं मंडनं च  
 ॥ ४३ ॥ पीठीभूतालकांते कृतमुकुटमहादेवालिंगप्रतिष्ठे लालाटे  
 नाट्यरंगे विकटतरतटे कैटभारेश्चिराय । प्रोद्धाव्यैवात्मतन्त्रीप्रकटपट-  
 कुटीं प्रस्फुरंतीं स्फुटांगं पट्टीयं भावनाख्यां चटुलमतिनटी नाटिकां  
 नाटयेन्नः ॥ ४४ ॥ मालालीवालिधाम्नः कुवलयकलिता श्रीपतेः  
 कुंतलाली कालिंधारुह्य मूर्ध्नौ गलति हरशिरःस्वर्धुनीस्पर्धया नु ।  
 राहुर्वा याति वक्रं सकलशशिकलाभ्रांतिलोलांतरात्मा लोकैरालोच्यते  
 या प्रदिशतु सकलैः साऽखिलं मंगलं नः ॥ ४५ ॥ सुप्ताकाराः  
 प्रसुप्ते भगवति विबुधैरप्यदृष्टस्वरूपा व्याप्तव्योमांतरालास्तरलरुचि-



जलारंजिताः स्पष्टभासः । देहच्छायोद्गमाभारिपुवपुरगुरुष्वोषरोषाम्नि-  
धूम्याः केशाः केशिद्विषो नो विदधतु विपुलक्लेशपाशप्रणाशम् ॥ ४६ ॥  
यत्र प्रत्युत्तरत्नप्रवरपरिलसद्भूरिरोचिःप्रतानस्फूर्त्या मूर्तिमुरारेर्धुमणि-  
शतचित्तव्योमवद्गुर्निरीक्ष्या । कुर्वत्पारेपयोधि ज्वलदकृतमहाभास्व-  
दौर्वाग्निशंकां शश्वन्नः शर्म दिश्यात्कलिकलुषतमःपाटनं तत्कि-  
रीटम् ॥ ४७ ॥ आत्वा आत्वा यदंतस्त्रिभुवनगुरुरप्यब्दकोटीरनेका  
गंतुं नांतं समर्थो भ्रमर इव पुनर्नाभिनालीकनालात् । उन्मज्ज-  
न्मूर्जितश्रीस्त्रिभुवनमपरं निर्ममे तत्सदृशं देहांभोभिः स देयाज्ञिर-  
वधिरमृतं दैत्यविद्वेषिणो नः ॥ ४८ ॥ मत्स्यः कूर्मो वराहो नरहरि-  
णपतिर्वामनो जामदग्न्यः काकुत्स्थः कंसघाती मनसिजविजयी यश्च  
कल्की भविष्यन् । विष्णोरंशावतारा भुवनहितकरा धर्मसंस्थाप-  
नार्थाः पायासुमां त एते गुरुतरकरुणाभारविद्वाशया ये ॥ ४९ ॥  
यस्माद्वाचो निवृत्ताः सममपि मनसा लक्ष्णामीक्षमाणाः स्वार्था-  
लाभात्परार्थव्यपगमकथनश्लाघिनो वेदवादाः । नित्यानंदं स्वसंविधिर-  
वधिममृतं स्वांतसंक्रांतर्बिबच्छायापत्यापि नित्यं सुखयति यमिनो  
यत्तदव्यान्महो नः ॥ ५० ॥ आ पादादा च शीर्ष्णो वपुरिदमनघं  
वैष्णवं यः स्वचित्ते धत्ते नित्यं निरस्ताखिलकलिकलुषे संततांतः-  
प्रमोदः । जुह्वज्जिह्वाकृशानौ हरिचरितहविःस्तोत्रमंत्रानुपाठैस्तत्पादा-  
भोरुहाभ्यां सततमपि नमस्कुर्महे निर्मलाभ्याम् ॥ ५१ ॥ इति भग-  
वत्पादश्रीशंकराचार्यकृतं विष्णुपादादिकेशान्तवर्णनस्तोत्रं समाप्तम् ॥

### ३९. विष्णोरष्टाविंशतिनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अर्जुन उवाच ॥ किं नु नामसहस्राणि जपंते  
च पुनः पुनः । यानि नामानि दिव्यानि तानि चाचक्ष्व केशव  
बृ० ६

॥ १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मत्स्यं कूर्मं वराहं च वामनं च जनार्दनम् । गोविन्दं पुंडरीकाक्षं माधवं मधुसूदनम् ॥ २ ॥ पद्मनाभं सहस्राक्षं वनमालिं हलायुधम् । गोवर्धनं हृषीकेशं वैकुण्ठं पुरुषोत्तमम् ॥ ३ ॥ विश्वरूपं वासुदेवं रामं नारायणं हरिम् । दामोदरं श्रीधरं च वेदांगं गरुडध्वजम् ॥ ४ ॥ अनंतं कृष्णगोपालं जपतो नास्ति पातकम् । गवां कोटिप्रदानस्य अश्वमेधशतस्य च ॥ ५ ॥ कन्यादानसहस्राणां फलं प्राप्नोति मानवः । अमायां वा पौर्णमास्यामेकादश्यां तथैव च ॥ ६ ॥ संध्याकाले स्मरन्नित्यं प्रातःकाले तथैव च । मध्याह्ने च जपन्नित्यं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ७ ॥ इति श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विष्णोरष्टाविंशतिनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

#### ४०. अच्युतनामाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अच्युतं केशवं विष्णुं हरिं सत्यं जनार्दनम् । हंसं नारायणं चैवमेतन्नामाष्टकं पठेत् ॥ १ ॥ त्रिसंध्यं यः पठेन्नित्यं दारिद्र्यं तस्य नश्यति । शत्रुसैन्यं क्षयं याति दुःस्वप्नः सुखदो भवेत् ॥ २ ॥ गंगायां मरणं चैव दृढा भक्तिस्तु केशवे । ब्रह्मविद्याप्रबोधश्च तस्मान्नित्यं पठेन्नरः ॥ ३ ॥ इति श्रीवामनपुराणे विष्णोर्नामाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

#### ४१. श्रीविष्णोः षोडशनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ औषधे चिन्तयेद्विष्णुं भोजने च जनार्दनम् । शयने पद्मनाभं च विवाहे च प्रजापतिम् ॥ १ ॥ युद्धे चक्रधरं देवं प्रवासे च त्रिविक्रमम् । नारायणं तनुत्यागे श्रीधरं प्रियसंगमे ॥ २ ॥ दुःस्वप्ने स्मरन् गोविन्दं संकटे मधुसूदनम् । कानने नारसिंहं च पावके जलशायिनम् ॥ ३ ॥ जलमध्ये वराहं च पर्वते

रघुनन्दनम् । गमने वामनं चैव सर्वकार्येषु माधवम् ॥ ४ ॥  
षोडशैतानि नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् । सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णु-  
लोके महीयते ॥ ५ ॥ इति श्रीविष्णोः षोडशनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४२. हरिमीडेस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ स्तोष्ये भक्त्या विष्णुमनादिं जगदादिं यस्मि-  
न्नेतत्संसृतिचक्रं भ्रमतीत्यम् । यस्मिन्दृष्टे नश्यति तत्संसृतिचक्रं तं  
संसारध्वान्तविनाशं हरिमीडे ॥ १ ॥ यस्यैकांशादित्यमशेषं जग-  
देतत्प्रादुर्भूतं येन पिनद्धं पुनरित्यम् । येन व्याप्तं येन विबुद्धं सुख-  
दुःखैस्तं संसारः ॥ २ ॥ सर्वज्ञो यो यश्च हि सर्वः सकलो यो  
यश्चानन्दोऽनन्तगुणो यो गुणधामा । यश्चाव्यक्तो व्यस्तसमस्तः सद्-  
सद्यस्तं संसारः ॥ ३ ॥ यस्मादन्यन्नास्त्यपि नैवं परमार्थं दृश्या-  
दन्यो निर्विषयज्ञानमयत्वात् । ज्ञातृज्ञानज्ञेयविहीनोऽपि सदा ज्ञस्तं  
संसारः ॥ ४ ॥ आचार्येभ्यो लब्धसुसूक्ष्माच्युततत्त्वा वैराग्येणा-  
भ्यासबलाच्चैव द्रष्टिना । भक्त्यैकाग्रध्यानपरा यं विदुरीशं तं  
संसारः ॥ ५ ॥ प्राणानायम्योमिति चित्तं हृदि रुद्धा नान्यत्सृत्वा  
तत्पुनरत्रैव विलाप्य । क्षीणे चित्ते भादृशिरस्मीति विदुर्यं तं संसारः  
॥ ६ ॥ यं ब्रह्माख्यं देवमनन्यं परिपूर्णं हृत्स्थं भक्तेर्लभ्यमजं सूक्ष्म-  
मतर्क्यम् । ध्यात्वाऽऽत्मस्थं ब्रह्मविदो यं विदुरीशं तं संसारः  
॥ ७ ॥ मात्रातीतं स्वात्मविकाशात्मविबोधं ज्ञेयातीतं ज्ञानमयं हृद्यु-  
पलभ्यम् । भावप्राद्यानन्दमनन्यं च विदुर्यं तं संसारः ॥ ८ ॥ यद्य-  
द्वेद्यं वस्तुसतत्त्वं विषयाख्यं तत्तद्ब्रह्मैवेति विदित्वा तदहं च ।  
ध्यायन्त्येवं यं सनकाद्या मुनयोऽजं तं संसारः ॥ ९ ॥ यद्यद्वेद्यं  
तत्तदहं नेति विहाय स्वात्मज्योतिर्ज्ञानमयानन्दमवाप्य । तस्मिन्न-  
स्मीत्यात्मविदो यं विदुरीशं तं संसारः ॥ १० ॥ हित्वा हित्वा

दृश्यमशेषं सविकल्पं मत्वा शिष्टं भादृशिमात्रं गगनाभम् । त्यक्त्वा  
 देहं यं प्रविशन्त्यच्युतमक्तास्तं संसार० ॥ ११ ॥ सर्वत्रास्ते सर्व-  
 शरीरी न च सर्वः सर्वं वेत्त्येवेह न यं वेत्ति हि सर्वः । सर्वत्रान्तर्या-  
 मितयेत्थं यमनन्यस्तं संसार० ॥ १२ ॥ सर्वं दृष्ट्वा स्वात्मनि युक्त्या  
 जगदेतद्दृष्ट्वाऽऽत्मानं चैवमजं सर्वजनेषु । सर्वात्मैकोऽस्मीति विदुर्यं  
 जनहृत्स्थं तं संसार० ॥ १३ ॥ सर्वत्रैकः पश्यति जिघ्रत्यथ भुङ्क्ते  
 स्पृष्ट्वा श्रोता बुध्यति चेत्याहुरिमं यम् । साक्षी चास्ते कर्तृषु पश्य-  
 त्विति चान्ये तं संसार० ॥ १४ ॥ पश्यन्शृण्वन्नत्र विजानन् रसयन्  
 सन् जिघ्रन्बिभ्रद्देहमिमं जीवतयेत्थम् । इत्यात्मानं यं विदुरीशं  
 विषयज्ञं तं संसार० ॥ १५ ॥ जाग्रद्दृष्ट्वा स्थूलपदार्थानथ मायां  
 दृष्ट्वा स्वप्नेऽथापि सुषुप्तौ सुखनिद्राम् । इत्यात्मानं वीक्ष्य  
 मुदास्ते च तुरीये तं संसार० ॥ १६ ॥ पश्यन्शुद्धोऽप्यक्षर एको  
 गुणभेदान्नानाकारान् स्फाटिकवद्भाति विचित्रः । भिन्नश्छिन्नश्चायमजः  
 कर्मफलैर्यस्तं संसार० ॥ १७ ॥ ब्रह्माविष्णु रुद्रद्रुताशौ रविचन्द्रा-  
 विन्द्रो वायुर्यज्ञ इतीत्थं परिकल्प्य । एकं सन्तं यं बहुधाऽऽहुर्मति-  
 भेदात्तं संसार० ॥ १८ ॥ सत्यं ज्ञानं शुद्धमनन्तं व्यतिरिक्तं शान्तं  
 गूढं निष्कलमानन्दमनन्यम् । इत्याहादौ यं वरुणोऽसौ भृगवेऽजं  
 तं संसार० ॥ १९ ॥ कोशानेतात्पञ्च रसादीनतिहाय ब्रह्मास्मीति  
 स्वात्मनि निश्चित्य दृशिस्थः । पित्रादिष्टो वेदभृगुर्यं यजुरन्ते तं संसार०  
 ॥ २० ॥ येनाविष्टो यस्य च शक्त्या यदधीनः क्षेत्रज्ञोऽयं कारयिता  
 जन्तुषु कर्तुः । कर्ता भोक्तात्माऽत्र हि चिच्छक्त्यधिरूढस्तं संसार०  
 ॥ २१ ॥ सृष्ट्वा सर्वं स्वात्मतयैवेत्थमतर्क्य व्याप्याथान्तः कृत्स्नमिदं  
 सृष्टमशेषम् । सच्च त्यच्चाभूत् परमात्मा स य एकस्तं संसार०  
 ॥ २२ ॥ वेदांतैश्चाध्यात्मिकशास्त्रैश्च पुराणैः शास्त्रैश्चान्यैः सात्त्वत-

तत्रैश्च यमीशम् । इष्ट्वाऽथान्तश्चेतसि बुद्ध्वा । विविशुर्यं तं संसारं  
 ॥ २३ ॥ श्रद्धाभक्तिध्यानशमाद्यैर्यतमानैर्जातुं शक्यो देव इहैवाशु  
 य ईशः । दुर्विज्ञेयो जन्मशतैश्चापि विना तैस्तं संसारं ॥ २४ ॥  
 यस्यातर्क्यं स्वात्मविभूतेः परमार्थं सर्वं खल्वित्यत्र निरुक्तं श्रुति-  
 विद्धिः । तज्जादित्वादब्धितरंगभ्रमभिन्नं तं संसारं ॥ २५ ॥  
 इष्ट्वा गीतास्वक्षरतत्त्वं विधिनाजं भक्त्या गुर्व्या लभ्य हृदिस्थं इशि-  
 मात्रम् । ध्यात्वा तस्मिन्नस्म्यहमित्यत्र विदुर्यं तं संसारं ॥ २६ ॥  
 क्षेत्रज्ञत्वं प्राप्य विभुः पञ्चमुखैर्यो भुङ्क्तेऽजस्रं भोग्यदार्थान्प्र-  
 कृतिस्थः । क्षेत्रे क्षेत्रेऽपिसदुचदेको बहुधाऽऽस्ते तं संसारं ॥ २७ ॥  
 युक्त्यालोच्य व्यासवचांस्यत्र हि लभ्यः क्षेत्रक्षेत्रज्ञांतरविद्धिः  
 पुरुषाख्यः । योऽहं सोऽसौ सोऽस्म्यहमेवेति विदुर्यं तं संसारं  
 ॥ २८ ॥ एकीकृत्यानेकशरीरस्थमिमं ज्ञं यं विज्ञायेहैव स एवाशु  
 भवन्ति । यस्मिंस्त्रीना नेह पुनर्जन्म लभन्ते तं संसारं ॥ २९ ॥  
 द्वंद्वैकत्वं यच्च मधुब्राह्मणवाक्यं कृत्वा शक्रोपासनमासाद्य  
 विभूत्या । योऽसौ सोऽहं सोऽस्म्यहमेवेति विदुर्यं तं संसारं  
 ॥ ३० ॥ योऽयं देहे चेष्टयिताऽन्तःकरणस्थः सूर्ये चासौ तापयिता  
 सोऽस्म्यहमेव । इत्यात्मैक्योपासनया यं विदुरीशं तं संसारं  
 ॥ ३१ ॥ विज्ञानांशो यस्य सतः शक्त्यधिरूढो बुद्धिर्बुद्ध्यत्यत्र  
 बहिर्बोध्यपदार्थान् । नैवातःस्थं बुद्ध्यति यं बोधयितारं तं संसारं  
 ॥ ३२ ॥ कोऽयं देहे देव इतीत्थं सुविचार्य ज्ञाता श्रोतानन्द-  
 यिता चैष हि देवः । इत्यालोच्य ज्ञांशमिहास्मीति विदुर्यं तं  
 संसारं ॥ ३३ ॥ को ह्येवान्यादात्मनि न स्यादयमेष ह्येवानन्दः  
 प्राणिति चापानिति चेति । इत्यस्तित्वं वक्त्युपपत्त्या श्रुतिरेषा तं  
 संसारं ॥ ३४ ॥ प्राणो वाऽहं वाक्श्रवणादीनि मनो वा बुद्धिर्वाऽहं

व्यस्त उताहोऽपि समस्तः । इत्यालोच्य ज्ञसिरिहासीति विदुर्यं तं  
 संसार० ॥ ३५ ॥ नाहं प्राणो नैव शरीरं न मनोऽहं नाहं बुद्धि-  
 नाहमहंकारधियौ च । योऽत्र ज्ञांशः सोऽस्म्यहमेवेति विदुर्यं तं  
 संसार० ॥ ३६ ॥ सत्तामात्रं केवलविज्ञानमजं सत्सूक्ष्मं नित्यं  
 तत्त्वमसीत्यात्मसुताय । सान्नामंते प्राह पिता यं विभुमाद्यं तं  
 संसार० ॥ ३७ ॥ मूर्तामूर्ते पूर्वमपोह्याथ समाधौ दृश्यं सर्वं नेति  
 च नेतीति विहाय । चैतन्यांशे स्वात्मनि सन्तं च विदुर्यं तं संसार०  
 ॥ ३८ ॥ श्रोतं प्रोतं यत्र च सर्वं गगनान्तं यो स्थूलानण्वादिषु  
 सिद्धोऽक्षरसंज्ञः । ज्ञाताऽतोऽन्यो नेत्युपलभ्यो न च वेद्यस्तं  
 संसार० ॥ ३९ ॥ तावत्सर्वं सत्यमिवाभाति यदेतद्यावत्सोऽसीत्या-  
 त्मनि यो ज्ञो न हि दृष्टः । दृष्टे तस्मिन्सर्वमसत्यं भवतीदं तं  
 संसार० ॥ ४० ॥ रागासुक्तं लोहयुतं हेम यथाऽग्नौ योगाष्टाङ्गै-  
 रुज्ज्वलितज्ञानमयाग्नौ । दग्ध्वात्मानं ज्ञं परिशिष्टं च विदुर्यं तं  
 संसार० ॥ ४१ ॥ यं विज्ञानज्योतिषमाद्यं सुविभातं हृद्यकैर्द्वन्द्वयो-  
 कसमीड्यं तडिदाभम् । भक्त्याराध्येहैव विशांत्यात्मनि सन्तं तं  
 संसार० ॥ ४२ ॥ पायाद्भक्तं स्वात्मनि सन्तं पुरुषं यो भक्त्या  
 सौतीत्याङ्गिरसं विष्णुरिमं माम् । इत्यात्मानं स्वात्मनि संहृत्य  
 सदैकस्तं संसार० ॥ ४३ ॥ इत्थं स्तोत्रं भक्तजनेड्यं भवभीति-  
 ध्वांताकार्कभं भगवत्पादीयमिदं यः । विष्णोर्लोकं पठति शृणोति  
 ब्रजति ज्ञो ज्ञानं ज्ञेयं स्वात्मनि चाप्नोति मनुष्यः ॥ ४४ ॥ इति  
 श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यस्य श्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपादशिष्यस्य  
 श्रीमच्छंकरभगवतः कृतौ हरिमीडेस्तोत्रं समाप्तम् ॥

४३. श्रीविष्णुमहिम्नः स्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ महिम्नस्ते पारं विधिहरफणीन्द्रप्रभृतयो विदुर्ना-  
 द्याप्यज्ञश्चलमतिरहं नाथ नु कथम् । विजानीयामद्धा नलिन-

नयनात्मीयवचसो विशुद्धै वक्ष्यामीषदपि तु तथापि स्वमतितः ॥ १ ॥  
यदाहुर्ब्रह्मैके पुरुषमितरे कर्म च परेऽपरे बुद्धं चान्ये शिवमपि च  
धातारमपरे । तथा शक्तिं केचिद्रणपतिमुतार्कं च सुधियो मतीनां  
वै भेदात्त्वमसि तदशेषं मम मतिः ॥ २ ॥ शिवः पादांभस्ते  
शिरसि धृतवानादरयुतं तथा शक्तिश्चासौ तव तनुजतेजोमयतनुः ।  
दिनेशं चैवामुं तव नयनमूचुस्तु निगमास्त्वदन्यः को ध्येयो जगति  
किल देवो वद विभो ॥ ३ ॥ क्वचिन्मत्स्यः कूर्मः क्वचिदपि वराहो  
नरहरिः क्वचित्त्वर्वो रामो दशरथसुतो नन्दतनयः । क्वचिद्बुद्धः  
कल्किर्विहरसि कुभारापहतये स्वतंत्रोऽजो नित्यो विभुरपि तवा-  
क्रीडनमिदम् ॥ ४ ॥ हृताम्नायेनोक्तं स्तवनवरमाकर्ण्य विधिना द्रुतं  
मात्स्यं धृत्वा वपुर्जरशंखासुरमथो । क्षयं नीत्वा मृत्योर्निगमगण-  
मुद्धृत्य जलधेरशेषं संगुप्तं जगदपि च वेदैकशरणम् ॥ ५ ॥ निम-  
ज्जतं वाधौ नगवरमुपालोक्य सहसा हितार्थं देवानां कमठवपुषाऽऽ-  
विश्य गहनम् । पयोराशिं पृष्ठे तमजित सलीलं धृतवतो जगद्धा-  
नुस्तेऽभूत्किमु सुलभभाराय गिरिकः ॥ ६ ॥ हिरण्याक्षः क्षोणीम-  
विशदसुरो नक्रनिलयं समादायामलैः कमलजमुखैरंबरगतैः । स्तुते-  
नानंतात्मन्नचिरमवभाति स्म विष्टता त्वया दंष्ट्राप्रेऽसावचनिरखिला  
कंदुक इव ॥ ७ ॥ हरिः क्वासीत्युक्ते दनुजपतिनाऽऽपूर्य निखिलं  
जगन्नादैः स्तंभान्नरहरिशरीरेण करजैः । समुत्पत्त्याशूरावसुरवर-  
मादारितवतस्तवाख्याता भूमन् किमु जगति नो सर्वगतता ॥ ८ ॥  
विलोक्याजं द्वारं कपटलघुकायं सुररिपुर्निषिद्धोऽपि प्रादादसुर-  
गुरुणात्मीयमखिलम् । प्रसन्नस्तद्भक्त्या त्यजसि किल नाद्यापि  
भवनं बलेर्भक्ताधीन्यं तव विदितमेवामरपते ॥ ९ ॥ समाधावा-  
सक्तं नृपतितनयैर्वीक्ष्य पितरं हतं बाणै रोषाद्ब्रुस्तरमुपादाय

परशुम् । विना क्षत्रं विष्णो क्षितितलमशेषं कृतवतोऽसकृत्किं  
 भूभारोद्धरणपटुता ते न विदिता ॥ १० ॥ समाराध्योमेशं त्रिभुवन-  
 मिदं वासवमुखं वशे चक्रे चक्रिन्नगणयदनीशं जगदिदम् ।  
 गतोऽसौ लंकेशस्त्वचिरमथ ते वाणविषयं न केनासं त्वत्तः फलम-  
 विनयस्यासुरारिषो ॥ ११ ॥ क्वचिद्दिव्यं शौर्यं क्वचिदपि रणे  
 कापुरुषता क्वचिद्गीताज्ञानं क्वचिदपि परस्त्रीविहरणम् । क्वचिन्मृत्स्ना-  
 शित्वं क्वचिदपि च वैकुण्ठविभवश्चरित्रं ते नूनं शरणद विमोहाय  
 कुधियाम् ॥ १२ ॥ न हिंस्यादित्येतद्भुवमवितथं वाक्यमबुधैरथा-  
 ग्रीषोमीयं पशुमिति तु विप्रैर्निगदितम् । तवैतन्नास्थानेऽसुरगण-  
 विमोहाय गदतः समृद्धिर्नीचानां नयकर हि दुःखाय जगतः  
 ॥ १३ ॥ विभागे वर्णानां निगमनिचये चावनितले विलुप्ते संजातो  
 द्विजवरगृहे शंभलपुरे । समारुह्याश्वं लसदसिकरो म्लेच्छनिकरा-  
 न्निहन्ताऽस्युन्मत्तान्किल कलियुगांते युगपते ॥ १४ ॥ गभीरे  
 कासारं जलचरवराकृष्टचरणो रणेऽशक्तो मज्जन्नभयद जलेऽचित-  
 यदसौ । यदा नागैर्द्रत्त्वां सपदि पदपाशादपगतो गतः स्वर्ग  
 स्थानं भवति विपदां ते किमु जनः ॥ १५ ॥ सुतैः पृष्टो वेधाः प्रति-  
 वचनदानेऽप्रभुरसावथात्मन्यात्मानं शरणमगमत्त्वां त्रिजगताम् ।  
 ततस्तेऽस्तातंका ययुरथ मुदं हंसवपुषा त्वया ते सार्वज्ञ्यं प्रथित-  
 ममरेशोह किमु नो ॥ १६ ॥ समाविद्धो मातुर्वचनविशिखैराशु  
 विपिनं तपश्चक्रे गत्वा तव परमतोषाय परमम् । ध्रुवो लेभे दिव्यं  
 पदमचलमल्पेऽपि वयसि किमस्त्यस्मिँल्लोके त्वयि वरद तुष्टे दुर-  
 धिगम् ॥ १७ ॥ वृकाद्रीतस्तूर्णं स्वजनभयभित्त्वां पशुपतिश्रमै-  
 र्लोकान्सर्वान् शरणमुपयातोऽथ दनुजः । स्वयं भस्मीभूतस्तव वचन-  
 भङ्गोद्धतमती रमेशाहो माया तव दुरनुमेयांऽखिलजनैः ॥ १८ ॥



हृतं दैत्यैर्दृष्ट्वाऽमृतघटमजय्यैस्तु नयतः कटाक्षैः संमोहं युवतिवर-  
 वेषेण दितिजान् । समग्रं पीयूषं सुभग सुरपूगाय ददतः समस्यापि  
 प्रायस्तव खलु हि भृत्येष्वभिरतिः ॥ १९ ॥ समाकृष्टा दुष्टैर्दुपद-  
 तनयाऽलब्धशरणा सभायां सर्वात्मिस्तव शरणमुच्चैरुपगता । समक्षं  
 सर्वेषामभवदक्षिरं वीरनिचयः स्मृतेस्ते साफल्यं नयनविषयं नो  
 किमु सताम् ॥ २० ॥ वदंत्येके स्थानं तव वरद वैकुण्ठमपरे गवां  
 लोकं लोकं फणिनिलयपातालमितरे । तथान्ये क्षीरोदं हृदयनलिनं  
 चापि तु सतां न मन्ये तत्स्थानं त्वहमिह च यत्रासि न विभो  
 ॥ २१ ॥ शिवोऽहं रुद्राणामहममरराजो दिविषदां मुनीनां  
 व्यासोऽहं सुरवर समुद्रोऽस्मि सरसाम् । कुबेरो यक्षाणामिति  
 तव वचो मंदमतये न जाने तज्जातं जगति ननु यन्नासि भगवन्  
 ॥ २२ ॥ शिरो नाको नेत्रे शशिदिनकरावंबरमुरो दिशः श्रोत्रे  
 वाणी निगमनिकरस्ते कटिरिला । अकूपारो बस्तिश्ररणमपि पाताल-  
 मिति वै स्वरूपं तेऽज्ञात्वा नृतनुमवजानंति कुधियः ॥ २३ ॥  
 शरीरं वैकुण्ठं हृदयनलिनं वाससदनं मनोवृत्तिस्ताक्षर्यो मतिरियमथो  
 सागरसुता । विहारस्तेऽवस्थात्रितयमसवः पार्षदगणो न पश्यत्यज्ञा  
 त्वामिह बहिरहो याति जनता ॥ २४ ॥ सुषोरं कांतारं विशति च  
 तडागं सुगहनं तथोत्तुंगं शृंगं सपदि च समारोहति गिरेः । प्रसूनार्थं  
 चेतोवुजममलमेकं त्वयि विभो समर्प्याज्ञस्तूर्णं बत न च सुखं  
 विंदति जनः ॥ २५ ॥ कृतैकांतावासा विगतनिखिलाशाः शमपरा  
 जितश्वासोच्छ्वासास्त्रुटितभवपाशाः सुयमिनः । परं ज्योतिः पश्यत्य-  
 नघ यदि पश्यंतु मम तु श्रियाश्लिष्टं भूयान्नयनविषयं ते किल  
 वपुः ॥ २६ ॥ कदा गंगोत्तुंगामलतरतरंगाच्छुलिने वसन्नाशा-  
 पाशादखिलखलदाशादपगतः । अये लक्ष्मीकांतांबुजनयन ताता-

मरपते प्रसीदेत्याजल्पन्नमरवर नेष्यामि समयम् ॥ २७ ॥ कदा  
 शृंगैः स्फीते मुनिगणपरीते हिमनगे द्रुमावीते शीते सुरमधुरगीते  
 प्रतिवसन् । क्वचिद्भानासक्तो विषयसुविरक्तो भवहरं स्मरंस्ते  
 पादाब्जं जनिहर समेष्यामि विलयम् ॥ २८ ॥ सुधापानं ज्ञानं न  
 च विपुलदानं न निगमो न यागो नो योगो न च निखिलभोगोप-  
 रमणम् । जपो नो नो तीर्थं व्रतमिह न चोग्रं त्वयि तपो विना  
 भक्तिं तेऽलं भवभयविनाशाय मधुहन् ॥ २९ ॥ नमः सर्वेष्टाय  
 श्रुतिशिखरदृष्टाय च नमो नमोऽसंश्लिष्टाय त्रिभुवननिविष्टाय च  
 नमः । नमो विस्पष्टाय प्रणवपरिमृष्टाय च नमो नमस्ते सर्वात्मन्पुनरपि  
 पुनस्ते मम नमः ॥ ३० ॥ कणान्कश्चिद्दृष्टेर्गणननिपुणस्तूर्णमवनेस्त-  
 थाशेषान्पांसूनमित कलयेच्चापि तु जनः । नभः पिंडीकुर्यादशिरमपि  
 चेच्चर्मवदिदं तथापीशासौ ते कलयितुमलं नाखिलगुणान् ॥ ३१ ॥ क  
 माहात्म्यं सीमोज्झितमविषयं वेदवचसां विभो ते मे चेतः क्व च  
 विविधतापाहतमिदम् । मयेदं यत्किञ्चिद्भदितमथ बाल्येन तु  
 गुरो गृहाणैतच्छुद्धार्पितमिह न हेयं हि महताम् ॥ ३२ ॥ इति  
 हरिस्तवनं सुमनोहरं परमहंसजनेन समीरितम् । सुगमसुन्दरसार-  
 पदास्पदं तदिदमस्तु हरेरनिशं मुदे ॥ ३३ ॥ गदारथांगांबुजकंबु-  
 धारिणो रमासमाश्लिष्टतनोस्तनोतु नः । बिलेशयाधीशशरीरशायिनः  
 शिवं स्तवोऽजस्रमयं परं हरेः ॥ ३४ ॥ पठेदिसं यस्तु नरः परं  
 स्तवं समाहितोघौघघनप्रभञ्जनम् । स विंदतेऽन्नाखिलभोगसंपदो  
 महीयते विष्णुपदे ततो ध्रुवम् ॥ ३५ ॥ इति श्रीमत्परमहंस-  
 स्वामिब्रह्मानन्दविरचितं श्रीविष्णुमहिम्नः स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४४. श्रीहरिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जगज्जालपालं कचत्कंठमालं शरच्चंद्रभालं  
 महादैत्यकालम् । नभोनीलकायं दुरावारमायं सुपद्मासहायं भजेऽहं

भजेऽहम् ॥ १ ॥ सदांभोधिवासं गलत्पुष्पहासं जगत्संनिवासं  
 शतादित्यभासम् । गदाचक्रशङ्खं लसत्पीतवस्त्रं हसच्चारुवक्त्रं भजे०  
 ॥ २ ॥ रमाकंठहारं श्रुतिव्रातसारं जलांतर्विहारं धराभारहारम् ।  
 चिदानंदरूपं मनोज्ञस्वरूपं धृतानेकरूपं भजे० ॥ ३ ॥ जराजन्म-  
 हीनं परानंदपीनं समाधानलीनं सदैवानवीनम् । जगज्जन्महेतुं  
 सुरानीककेतुं त्रिलोकैकसेतुं भजे० ॥ ४ ॥ कृतान्नायगानं खगाधी-  
 शयानं विमुक्तेर्निदानं हरारातिमानम् । स्वभक्तानुकूलं जगद्वृक्षमूलं  
 निरस्तार्तशूलं भजे० ॥ ५ ॥ समस्तामरेशं द्विरेफाभकेशं जगद्धिब-  
 लेशं हृदाकाशदेशम् । सदा दिव्यदेहं विमुक्ताखिलेहं सुवैकुण्ठगेहं  
 भजे० ॥ ६ ॥ सुरालीबलिष्ठं त्रिलोकीवरिष्ठं गुरुणां गरिष्ठं स्वरूपै-  
 कनिष्ठम् । सदा युद्धधीरं महावीरधीरं भवांभोधितीरं भजे० ॥ ७ ॥  
 रमावामभागं तलानग्ननागं कृताधीनयागं गतारागरागम् । मुनीन्द्रैः  
 सुगीतं सुरैः संपरीतं गुणौघैरतीतं भजे० ॥ ८ ॥ इदं यस्तु नित्यं  
 समाधाय चित्तं पठेदष्टकं कष्टहारं मुरारेः । स विष्णोर्विशोकं  
 ध्रुवं याति लोकं जराजन्मशोकं पुनर्विन्दते नो ॥ ९ ॥ इति  
 श्रीपरमहंसस्वामिब्रह्मानंदविरचितं श्रीहरिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४५. श्रीहरिनामाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीकेशवाच्युत मुकुंद रथांगपाणे गोविंद  
 माधव जनार्दन दानवारे । नारायणामरपते त्रिजगन्निवास जिह्ने  
 जपेति सततं मधुराक्षराणि ॥ १ ॥ श्रीदेवदेव मधुसूदन शार्ङ्गपाणे  
 दामोदरार्णवनिकेतन कैटभादे । विश्वंभराभरण भूषितभूमिपाल  
 जिह्ने० ॥ २ ॥ श्रीपद्मलोचन गदाधर पद्मनाभ पद्मेश पद्मपद  
 पावन पद्मपाणे । पीतांबरान्बररुचे रुचिरावतार जिह्ने० ॥ ३ ॥

श्रीकांत कौस्तुभधरार्तिहराब्जपाणे विष्णो त्रिविक्रम महीधर धर्म-  
सेतो । वैकुण्ठवास वसुधाधिप वासुदेव जिह्वे० ॥ ४ ॥ श्रीनारसिंह  
नरकांतक कांतमूर्ते लक्ष्मीपते गरुडवाहन शेषशायिन् । केशिप्रणा-  
शन सुकेश किरीटमौले जिह्वे० ॥ ५ ॥ श्रीवत्सलांछन सुरर्षभ  
शंखपाणे कल्पांतवारिधिविहार हरे मुरारे । यज्ञेश यज्ञमय यज्ञ-  
भुगादिदेव जिह्वे० ॥ ६ ॥ श्रीराम रावणरिपो रघुवंशकेतो सीता-  
पते दशरथात्मज राजसिंह । सुग्रीवमित्र मृगवेधन चापपाणे  
जिह्वे० ॥ ७ ॥ श्रीकृष्ण वृष्णिवर यादव राधिकेश गोवर्धनोद्धरण  
कंसविनाश शौरे । गोपाल वेणुधर पांडुसुतैकबंधो जिह्वे० ॥ ८ ॥  
इत्यष्टकं भगवतः सततं नरो यो नामांकितं पठति नित्यमनन्य-  
चेताः । विष्णोः परं पदमुपैति पुनर्न जातु मातुः पयोधररसं  
पिबतीह सत्यम् ॥ ९ ॥ इति श्रीमत्परमहंसस्वामिब्रह्मानंदविरचितं  
श्रीहरिनामाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ४६. श्रीहरिशरणाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ध्येयं वदन्ति शिवमेव हि केचिदन्ये शक्तिं  
गणेशमपरे तु दिवाकरं वै । रूपैस्तु तैरपि विभासि यतस्त्वमेकस्त-  
स्मात्त्वमेव शरणं मम शंखपाणे ॥ १ ॥ नो सोदरो न जनको  
जननी न जाया नैवात्मजो न च कुलं विपुलं बलं वा । संदृश्यते  
न किल कोऽपि सहायको मे तस्मात्त्व० ॥ २ ॥ नोपासिता मद-  
मपास्य मया महांतस्तीर्थानि चास्तिकधिया नहि सेवितानि । देवा-  
र्चनं च विधिवन्न कृतं कदापि तस्मात्त्व० ॥ ३ ॥ दुर्वासना मम  
सदा परिकर्षयन्ति चित्तं शरीरमपि रोगगणा दहन्ति । संजीवनं च  
परहस्तगतं सदैव तस्मात्त्व० ॥ ४ ॥ पूर्वं कृतानि दुरितानि मया

तु यानि स्मृत्वाऽखिलानि हृदयं परिकंपते मे । ख्याता च ते  
 पतितपावनता तु यस्मात्तस्मात्त्व० ॥ ५ ॥ दुःखं जराजननजं  
 विविधाश्च रोगाः काकश्चसूकरजनिर्निरये च पातः । त्वद्विस्मृतेः  
 फलमिदं विततं हि लोके तस्मात्त्व० ॥ ६ ॥ नीचोऽपि पाप-  
 वलितोऽपि विनिर्दितोऽपि ब्रूयात्तवाहमिति यस्तु किलैकवारम् । तं  
 यच्छसीश निजलोकमिति व्रतं ते तस्मात्त्व० ॥ ७ ॥ वेदेषु धर्म-  
 वचनेषु तथागमेषु रामायणेऽपि च पुराणकदंबके वा । सर्वत्र सर्व-  
 विधिना गदितस्त्वमेव तस्मात्त्व० ॥ ८ ॥ इति श्रीपरमहंस-  
 स्वामिब्रह्मानंदविरचितं श्रीहरिशरणाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ४७. श्रीदीनबन्ध्वष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यस्मादिदं जगदुदेति चतुर्मुखाद्यं यस्मिन्नव-  
 स्थितमशेषमशेषमूले । यन्नोपयाति विलयं च तमस्तमंते दृग्गोचरो  
 भवतु मेऽद्य स दीनबन्धुः ॥ १ ॥ चक्रं सहस्रकरचारु करारविंदे  
 गुर्वी गदा दरवरश्च विभाति यस्य । पक्षांद्रपृष्ठपरिरोपितपादपद्मो  
 दृग्गोचरो० ॥ २ ॥ येनोद्धृता वसुमती सलिले निमग्ना नग्ना च  
 पांडववधूः स्थगिता दुक्कूलैः । संमोचितो जलचरस्य मुखाद्भजेन्द्रो  
 दृग्गो० ॥ ३ ॥ यस्यार्द्रदृष्टिवशतस्तु सुराः समृद्धिं कोपेक्षणेन  
 दनुजा विलयं व्रजन्ति । भीताश्चरन्ति च यतोऽर्कयमानिलाद्या दृग्गो०  
 ॥ ४ ॥ गायन्ति सामकुशला यमजं मखेषु ध्यायन्ति धीरमतयो  
 यतयो विविक्ते । पश्यन्ति योगिपुरुषाः पुरुषं शरीरे दृग्गो० ॥ ५ ॥  
 आकाररूपगुणयोगविवर्जितोऽपि भक्तानुकंपननिमित्तगृहीतमूर्तिः ।  
 यः सर्वगोऽपि कृतशेषशरीरशय्यो दृग्गो० ॥ ६ ॥ यस्यांघ्रिपंकज-  
 मनिद्रमुनीन्द्रवृद्धैराराध्यते भवदवानलदाहशाल्यै । सर्वांपराध-

मविचिंत्य ममाखिलात्मा दृग्गो० ॥ ७ ॥ यन्नामकीर्तनपरः  
 श्वपचोऽपि नूनं हित्वाखिलं कलिमलं भुवनं पुनाति । दग्ध्वा  
 ममाद्यमखिलं करुणेश्वरेण दृग्गो० ॥ ८ ॥ दीनबंधवष्टकं पुण्यं  
 ब्रह्मानंदेन भाषितम् । यः पठेत्प्रयतो नित्यं तस्य विष्णुः प्रसीदति  
 ॥ ९ ॥ इति श्रीपरमहंसस्वामिब्रह्मानंदविरचितं श्रीदीनबंधवष्टकं  
 संपूर्णम् ॥

### ४८. श्रीगोविंदाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ चिदानंदाकारं श्रुतिसरससारं समरसं निरा-  
 धाराधारं भवजलधिपारं परगुणम् । रमाग्रीवाहारं व्रजवनविहारं  
 हरनुतं सदा तं गोविंदं परमसुखकंदं भजत रे ॥ १ ॥ महाभोधि-  
 स्थानं स्थिरचरनिदानं दिविजपं सुधाधारापानं विहगपतित्यानं  
 यमरतम् । मनोज्ञं सुज्ञानं मुनिजननिधानं ध्रुवपदं सदा० ॥ २ ॥  
 धिया धीरैर्धैर्यं श्रवणपुटपेयं यतिवरैर्महावाक्यैर्ज्ञेयं त्रिभुवनविधेयं  
 विधिपरम् । मनोमानामेयं सपदि हृदि नेयं नवतनुं सदा० ॥ ३ ॥  
 महामायाजालं विमलवनमालं मलहरं सुभालं गोपालं निहतशिखु-  
 पालं शशिमुखम् । गलातीतं कालं गतिहयमरालं मुररिपुं सदा०  
 ॥ ४ ॥ नभोर्बिंबस्फीतं निगमगणगीतं समगतिं सुरौघे संप्रीतं  
 दितिजविपरीतं पुरिशयम् । गिरां पंथातीतं स्वदितनवनीतं नयकरं  
 सदा० ॥ ५ ॥ परेशं पद्मेशं शिवकमलजेशं शिवकरं द्विजेशं  
 देवेशं तनुकुटिलकेशं कलिहरम् । खगेशं नागेशं निखिलभुवनेशं  
 नगधरं सदा० ॥ ६ ॥ रमाकांतं कांतं भवभयभयांतं भवसुखं  
 दुराशांतं शांतं निखिलहृदि भांतं भुवनपम् । विवादांतं दांतं  
 दनुजनिचयांतं सुचरितं सदा० ॥ ७ ॥ जगज्ज्येष्ठं श्रेष्ठं सुरपति-  
 कनिष्ठं ऋतुपतिं बलिष्ठं भूयिष्ठं त्रिभुवनवरिष्ठं वरवहम् । स्वनिष्ठं

धर्मिष्ठं गुरुगुणगरिष्ठं गुरुवरं सदा० ॥ ८ ॥ गदापाणेरेतदुरितदलनं  
दुःखशमनं विशुद्धात्मा स्तोत्रं पठति मनुजो यस्तु सततम् । स  
भुक्त्वा भोगौघं चिरमिह ततोऽपास्तवृजिनो वरं विष्णोः स्थानं  
व्रजति खलु वैकुण्ठभुवनम् ॥ ९ ॥ इति श्रीपरमहंसस्वामिब्रह्मानन्द-  
विरचितं श्रीगोविंदाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ४९. रमापत्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जगदादिमनादिमजं पुरुषं शरदंबरतुल्यतनुं  
वितनुम् । धृतकंजरधांगगदं विगदं प्रणमामि रमाधिपतिं तमहम्  
॥ १ ॥ कमलाननकंजरतं विरतं हृदि योगिजनैः कलितं ललितम् ।  
कुजनैः सुजनैरलभं सुलभं प्रण० ॥ २ ॥ मुनिवृन्दहृदिस्थपदं  
सुपदं निखिलाध्वरभागभुजं सुभुजम् । हतवासवमुख्यमदं विमदं  
प्रण० ॥ ३ ॥ हतदानवदृष्टबलं सुबलं स्वजनास्तसमस्तमलं विम-  
लम् । समपास्तगर्जद्वरं सुदरं प्रण० ॥ ४ ॥ परिकल्पितसर्वकलं  
विकलं सकलागमगीतगुणं विगुणम् । भवपाशनिराकरणं शरणं  
प्रण० ॥ ५ ॥ मृतिजन्मजराशमनं कमनं शरणागतभीतिहरं  
दहरम् । परितुष्टरमाहृदयं सुदयं प्रण० ॥ ६ ॥ सकलावनिर्विबधरं  
स्वधरं परिपूरितसर्वदिशं सुदृशम् । गतशोकमशोककरं सुकरं प्रण०  
॥ ७ ॥ मथितार्णवराजरसं सरसं ग्रहिताखिललोकहृदं सुहृदम् ।  
प्रथिताद्भुतशक्तिगणं सुगणं प्रण० ॥ ८ ॥ सुखराशिकरं भवबन्धहरं  
परमाष्टकमेतदनन्यमतिः । पठतीह तु योऽनिशमेव नरो लभते खलु  
विष्णुपदं स परम् ॥ ९ ॥ इति श्रीपरमहंसस्वामिब्रह्मानन्दविरचितं  
श्रीरमापत्यष्टकं संपूर्णम् ॥

### ५०. कमलापत्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भुजगतल्पगतं घनसुंदरं गरुडवाहनमंबुज-  
लोचनम् । नलिनचक्रगदाकरमव्ययं भजत रे मनुजाः कमला-

पतिम् ॥ १ ॥ अलिकुलासितकोमलकुंतलं विमलपीतदुकूलमनो-  
हरम् । जलधिजाश्रितवामकलेवरं भजत० ॥ २ ॥ किमु जपैश्च  
तपोभिस्तुतध्वरैरपि किमुत्तमतीर्थनिषेवणैः । किमुत शास्त्रकदंब-  
विलोकनैर्भजत० ॥ ३ ॥ मनुजदेहमिमं भुवि दुर्लभं समधिगम्य  
सुरैरपि वांछितम् । विषयलंपटतामपहाय वै भजत० ॥ ४ ॥ न  
वनिता न सुतो न सहोदरो न हि पिता जननी न च बांधवः ।  
व्रजति साकमेनेन जनेन वै भजत० ॥ ५ ॥ सकलमेव चलं  
सचराचरं जगदिदं सुतरां धनयौवनम् । समवलोक्य विवेकदृशा  
द्रुतं भजत० ॥ ६ ॥ विविधरोगयुतं क्षणभंगुरं परवशं नवमार्ग-  
मलाकुलम् । परिनिरीक्ष्य शरीरमिदं स्वकं भजत० ॥ ७ ॥ मुनिवरै-  
रनिशं हृदि भावितं शिवविरिंचिमहेंद्रनुतं सदा । मरणजन्मजरा-  
भयमोचनं भजत० ॥ ८ ॥ हरिपदाष्टकमेतदनुत्तमं परमहंसजनेन  
समीरितम् । पठति यस्तु समाहितचेतसा व्रजति विष्णुपदं स नरो  
ध्रुवम् ॥ ९ ॥ इति श्रीमत्परमहंसस्वामिब्रह्मानन्दविरचितं कमला-  
पत्यष्टकं समाप्तम् ॥

### ५१. संकष्टनाशनविष्णुस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नारद उवाच ॥ पुनर्दैत्यं समायांतं दृष्ट्वा देवाः  
सवासवाः । भयप्रकंपिताः सर्वे विष्णुं स्तोतुं प्रचक्रमुः ॥ १ ॥ देवा  
ऊचुः ॥ नमो मत्स्यकूर्मादिनानास्वरूपैः सदा भक्तकार्योद्यतायार्ति-  
हंत्रे । विधात्रादिसर्गस्थितिध्वंसकर्त्रे गदाशंखपद्मारिहस्ताय तेऽस्तु  
॥ २ ॥ रमावल्लभायासुराणां निहंत्रे भुजंगारियानाय पीतांबराय ।  
मखादिक्रियापाककर्त्रे विकर्त्रे शरण्याय तस्मै नताः स्मो नताः स्मः  
॥ ३ ॥ नमो दैत्यसंतापितामर्त्यदुःखाचलध्वंसदंभोलये विष्णवे ते ।



भुजंगेशतल्पेशयायार्कचंद्रद्विनेत्राय तस्मै नताः स्मो नताः स्मः  
॥ ४ ॥ नारद उवाच ॥ संकष्टनाशनं नाम स्तोत्रमेतत्पठेन्नरः । स  
कदाचिन्न संकष्टैः पीड्यते कृपया हरेः ॥ ५ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे  
पृथुनारदसंवादे संकष्टनाशनं नाम विष्णुस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ५२. नारायणहृदयम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीनारायणहृदयस्तोत्रमब्रुव्य भार्गव  
ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीलक्ष्मीनारायणो देवता, श्रीलक्ष्मी-  
नारायणप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥ अथ करन्यासः ॥ ॐ नारायणः  
परं ज्योतिरित्युष्ट्राभ्यां नमः । ॐ नारायणः परं ब्रह्मेति तर्जनीभ्यां  
नमः । ॐ नारायणः परो देवेति मध्यमाभ्यां नमः । ॐ नारायणः  
परं धामेति अनामिकाभ्यां नमः । ॐ नारायणः परो धर्म इति  
कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ विश्वं नारायणः पर इति करतलकर-  
पृष्ठाभ्यां नमः । एवं हृदयादिन्यासः ॥ अथ ध्यानम् ॥ उद्यदा-  
दित्यसंकाशं पीतवाससमच्युतम् । शङ्खचक्रगदापाणिं ध्यायेत्लक्ष्मी-  
पतिं हरिम् ॥ ॐ नमो भगवते नारायणाय इति मन्त्रं जपेत् ॥  
श्रीवेदव्यास उवाच ॥ श्रीमन्नारायणो ज्योतिरात्मा नारायणः परः ।  
नारायणः परं ब्रह्म नारायण नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥ नारायणः परो  
देवो दाता नारायणः परः । नारायणः परो ध्याता नारायण  
नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥ नारायणः परं धाम ध्याता नारायणः परः ।  
नारायणः परो धर्मो नारायण नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥ नारायणपरो  
बोधो विद्या नारायणः परा । विश्वं नारायणः साक्षान्नारायण  
नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥ नारायणाद्विधिर्जातो जातो नारायणा-  
च्छिवः । जातो नारायणादिन्द्रो नारायण नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥

रविर्नारायणं तेजश्चन्द्रो नारायणं महः । वह्निर्नारायणः साक्षान्नारायणं नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥ नारायण उपास्यः स्याद्गुरुर्नारायणः परः । नारायणः परो बोधो नारायणं नमोऽस्तु ते ॥ ७ ॥ नारायणः फलं मुख्यं सिद्धिर्नारायणः सुखम् । सर्वं नारायणः शुद्धो नारायणं नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥ नारायणस्त्वमेवासि नारायण हृदि स्थितः । प्रेरकः प्रेर्यमाणानां त्वया प्रेरितमानसः ॥ ९ ॥ त्वदाज्ञां शिरसा धृत्वा जपामि जनपावनम् । नानोपासनमार्गाणां भावकृद्भावबोधकः ॥ १० ॥ भावकृद्भावभूतस्त्वं मम सौख्यप्रदो भव । त्वन्मायामोहितं विश्वं त्वयैव परिकल्पितम् ॥ ११ ॥ त्वदधिष्ठानमात्रेण सैव सर्वार्थकारिणी । त्वमेवैतां पुरस्कृत्य मम कामान् समर्पय ॥ १२ ॥ न मे त्वदन्यः संघाता त्वदन्यं न हि दैवतम् । त्वदन्यं न हि जानामि पालकं पुण्यरूपकम् ॥ १३ ॥ यावत्सांसारिको भावो नमस्ते भावनात्मने । तत्सिद्धिदो भवेत्सद्यः सर्वथा सर्वदा विभो ॥ १४ ॥ पापिनामहमेकाग्र्यो दयालूनां त्वमग्रणीः । दयनीयो मदन्योऽस्ति तव कोऽत्र जगद्भ्ये ॥ १५ ॥ त्वयाऽप्यहं न सृष्टश्चेन्न स्यात्तव दयालुता । आमयो वा न सृष्टश्चेदौषधस्य वृथोदयः ॥ १६ ॥ पापसंघपरिक्रान्तः पापात्मा पापरूपधृक् । त्वदन्यः कोऽत्र पापेभ्यस्त्राता मे जगतीतले ॥ १७ ॥ त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव । त्वमेव विद्या च गुरुस्त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥ १८ ॥ प्रार्थनादशकं चैव मूलाष्टकमथापि वा । यः पठेच्छृणुयान्नित्यं तस्य लक्ष्मीः स्थिरा भवेत् ॥ १९ ॥ नारायणस्य हृदयं सर्वाभीष्टफलप्रदम् । लक्ष्मीहृदयकं स्तोत्रं यदि चैतद्विनाकृतम् ॥ २० ॥ तत्सर्वं निष्फलं प्रोक्तं लक्ष्मीः कुप्यति सर्वतः । एतत्संकलितं स्तोत्रं

सर्वाभीष्टफलप्रदम् ॥ २१ ॥ लक्ष्मीहृदयकं स्तोत्रं तथा नारायणा-  
त्मकम् । जपेद्यः संकलीकृत्य सर्वाभीष्टमवाप्नुयात् ॥ २२ ॥ नारा-  
यणस्य हृदयमादौ जप्त्वा ततः परम् । लक्ष्मीहृदयकं स्तोत्रं जपे-  
न्नारायणं पुनः ॥ २३ ॥ पुनर्नारायणं जप्त्वा पुनर्लक्ष्मीहृदं जपेत् ।  
पुनर्नारायणहृदं संपुटीकरणं जपेत् । एवं मध्ये द्विवारेण जपेन्नक्ष्मी-  
हृदं हि तत् ॥ २४ ॥ लक्ष्मीहृदयकं स्तोत्रं सर्वमेतत्प्रकाशितम् ।  
तद्वज्रपादिकं कुर्यादेतत्संकलितं शुभम् ॥ २५ ॥ स सर्वकाम-  
माप्नोति आधिग्याधिभयं हरेत् । गोप्यमेतत्सदा कुर्यान्न सर्वत्र प्रका-  
शयेत् ॥ २६ ॥ इति गुह्यतमं शास्त्रमुक्तं ब्रह्मादिकैः पुरा । तस्मा-  
त्सर्वप्रयत्नेन गोपयेत्साधयेत्सुधीः ॥ २७ ॥ यत्रैतत्पुस्तकं तिष्ठेन्नक्ष्मी-  
नारायणात्मकम् । भूतप्रेतपिशाचांश्च वेतालान्नाशयेत्सदा ॥ २८ ॥  
लक्ष्मीहृदयप्रोक्तेन विधिना साधयेत्सुधीः । मृगुवारे च रात्रौ तु  
पूजयेत्पुस्तकद्वयम् ॥ २९ ॥ सर्वदा सर्वथा सत्यं गोपयेत्साधये-  
त्सुधीः । गोपनात्साधनालोके धन्यो भवति तत्त्ववित् । नारायण-  
हृदं नित्यं नारायण नमोऽस्तु ते ॥ ३० ॥ इत्यथर्वणरहस्योत्तरभागे  
नारायणहृदयं संपूर्णम् ॥

### ५३. भगवद्भ्यानसोपानम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अन्तर्ज्योतिः किमपि यमिनामञ्जनं योगदृष्टे-  
श्चिन्तारत्नं सुलभमिह नः सिद्धिमोक्षानुरूपम् । दीनानाथव्यसन-  
शमनं दैवतं दैवतानां दिव्यं चक्षुः श्रुतिपरिषदां दृश्यते रत्नमध्ये  
॥ १ ॥ वेदातीतश्रुतिपरिमलं वेधसां मौलिसेव्यं प्रादुर्भूतं कनक-  
सरितः सैकते हंसजुष्टे । लक्ष्मीभूम्योः करसरसिजैर्लालितं रत्नभर्तुः  
पादाम्भोजं प्रतिफलति मे भावनादीर्घिकायाम् ॥ २ ॥ चित्राकारां

कटकहरुचिभिश्वारुवृत्तानुपूर्वा काले दूत्यद्रुततरगतिं कान्तिलीला-  
 कलाचीम् । जानुच्छायाद्विगुणसुभागां रङ्गभर्तुर्मदात्मा जङ्घां दृष्ट्वा  
 जननपदवीजाङ्घ्रिकत्वं जहाति ॥ ३ ॥ कामारामस्थिरकदलिकास्तम्भ-  
 संभावनीयं क्षौमाश्लिष्टं किमपि कमलाभूमिनीलोपधानम् । न्यञ्च-  
 त्काञ्चीकिरणरुचिरं निर्विशत्यूरुयुग्मं लावण्यौघद्वयमिव मति-  
 र्मामिका रङ्गयूनः ॥ ४ ॥ संप्रीणाति प्रतिकलमसौ मानसं मे सुजाता  
 गम्भीरत्वात्कचन समये गूढनिक्षिप्तविश्वा । नालीकेन स्फुरितरजसा  
 वेधसो निर्मिमाणा रम्यावर्तद्युतिसहचरी रङ्गनाथस्य नाभिः ॥ ५ ॥  
 श्रीवत्सेन प्रथितविभवं श्रीपदन्यासधर्म्यं मध्यं बाह्योर्मणिवररुचा  
 रञ्जितं रङ्गधान्नः । सान्द्रच्छायं तरुणतुलसीचित्रया वैजयन्त्या  
 संतापं मे शमयति धियश्चन्द्रिकोदारहारम् ॥ ६ ॥ एकं लीलोप-  
 हितमितरं बाहुमाजानुलम्बं प्राप्ता रङ्गे शयितुरखिलप्रार्थनापारि-  
 जातम् । दृष्ट्वा सेयं दृढनियमिता रश्मिभिर्भूषणानां चिन्ताहस्तिन्य-  
 नुभवति मे चित्रमालानयनम् ॥ ७ ॥ साभिप्रायस्मितविकसितं  
 चारुबिम्बाधरोष्ठं दुःखापायप्रणयिनि जने दूरदत्ताभिमुख्यम् ।  
 कान्तं वक्त्रं कनकतिलकालंकृतं रङ्गभर्तुः स्वान्ते गाढं विलगति मम  
 स्वागतोदारनेत्रम् ॥ ८ ॥ माल्यैरन्तःस्थिरपरिमलैर्वह्नुभास्पर्शमान्यैः  
 कुप्यञ्जोलीवचनकुटिलैः कुंतलैः श्लिष्टमूले । रत्नापीडद्युतिशबलिते  
 रङ्गभर्तुः किरीटे राजन्वलयः स्थितिमधिगता वृत्तयश्चेतसो मे ॥ ९ ॥  
 पादाम्भोजं स्पृशति भजते रङ्गनाथस्य जङ्घामूरुद्वन्द्वे विलगति  
 शनैरुर्ध्वमभ्येति नाभिम् । वक्षस्यास्ते वलति भुजयोर्मामिकेयं  
 मनीषा वक्त्राभिख्यां पिबति वहते वासनां मौलिबन्धे ॥ १० ॥  
 कान्तोदाररयैरिह भुजैः कङ्कणज्याकिणाङ्गैर्लक्ष्मीधान्नः पृथुलपरिघै-  
 र्लक्षिता भीतिहेतिः । अग्रे किञ्चिद्भुजगशयनः स्वात्मनैवात्मनः

सन् मध्येरङ्गं मम च हृदये वर्तते सावरोधः ॥ ११ ॥ रङ्गास्थाने  
रसिकमहिते रञ्जिताशेषचित्ते विद्वत्सेवाविमलमनसा वेङ्कटेशेन  
कृतम् । अङ्केशेन प्रणिहितधियामारुक्षोरवस्थां भक्तिं गाढां दिशतु  
भगवज्ज्ञानसोपानमेतत् ॥ १२ ॥ इति श्रीमद्वेङ्कटेश्वर्यप्रणीतं भग-  
वज्ज्ञानसोपानं संपूर्णम् ॥

### ५४. नारायणाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नारायणाय सुरमण्डनमण्डनाय नारायणाय  
सकलस्थितिकारणाय । नारायणाय भवभीतिनिवारणाय नारा-  
यणाय प्रभवाय नमो नमस्ते ॥ १ ॥ नारायणाय शतचन्द्र-  
निभाननाय नारायणाय मणिकुण्डलधारणाय । नारायणाय निज-  
भक्तपरायणाय नारायणाय सुभगाय नमो नमस्ते ॥ २ ॥ नारा-  
यणाय सुरलोकप्रपोषकाय नारायणाय खलदुष्टविनाशकाय ।  
नारायणाय दितिपुत्रविमर्दनाय नारायणाय सुलभाय नमो नमस्ते  
॥ ३ ॥ नारायणाय रविमण्डलसंस्थिताय नारायणाय परमार्थ-  
प्रदर्शनाय । नारायणाय अतुलाय अतीन्द्रियाय नारायणाय विरजाय  
नमो नमस्ते ॥ ४ ॥ नारायणाय रमणाय रमावराध नारायणाय  
रसिकाय रसोत्सुकाय । नारायणाय रजोवर्जितनिर्मलाय नारायणाय  
वरदाय नमो नमस्ते ॥ ५ ॥ नारायणाय वरदाय सुरोत्तमाय  
नारायणाय अखिलान्तरसंस्थिताय । नारायणाय भयशोकविवर्जिताय  
नारायणाय प्रबलाय नमो नमस्ते ॥ ६ ॥ नारायणाय निगमाय  
निरञ्जनाय नारायणाय च हराय नरोत्तमाय । नारायणाय कटिसूत्र-  
विभूषणाय नारायणाय हरये महते नमस्ते ॥ ७ ॥ नारायणाय  
कटकङ्गदभूषणाय नारायणाय मणिकौस्तुभशोभनाय । नारायणाय

तुलमौक्तिकभूषणाय नारायणाय च यमाय नमो नमस्ते ॥ ८ ॥  
 नारायणाय रविकोटिप्रतापनाय नारायणाय शशिकोटिसुशीतलाय ।  
 नारायणाय यमकोटिदुरासदाय नारायणाय करुणाय नमो नमस्ते  
 ॥ ९ ॥ नारायणाय मुकुटोज्ज्वलसोज्ज्वलाय नारायणाय मणि-  
 नूपुरभूषणाय । नारायणाय ज्वलिताग्निशिखप्रभाय नारायणाय हरये  
 गुरवे नमस्ते ॥ १० ॥ नारायणाय दशकण्ठविमर्दनाय नारायणाय  
 विनतात्मजवाहनाय । नारायणाय मणिकौस्तुभभूषणाय नारायणाय  
 परमाय नमो नमस्ते ॥ ११ ॥ नारायणाय विदुराय च माधवाय  
 नारायणाय कमठाय महीधराय । नारायणाय उरगाधिपमञ्जकाय  
 नारायणाय विरजापतये नमस्ते ॥ १२ ॥ नारायणाय रविकोटि-  
 समाम्बराय नारायणाय च हराय मनोहराय । नारायणाय निज-  
 धर्मप्रतिष्ठिताय नारायणाय च मखाय नमो नमस्ते ॥ १३ ॥  
 नारायणाय भवरोगरसायनाय नारायणाय शिवचापप्रतोटनाय ।  
 नारायणाय निजवानरजीवनाय नारायणाय सुभुजाय नमो नमस्ते  
 ॥ १४ ॥ नारायणाय सुरथाय सुहृच्छ्रिताय नारायणाय कुशलाय  
 धुरन्धराय । नारायणाय गजपाशविमोक्षणाय नारायणाय जनकाय  
 नमो नमस्ते ॥ १५ ॥ नारायणाय निजभृत्यप्रपोषकाय नारायणाय  
 शरणागतपञ्जराय । नारायणाय पुरुषाय पुरातनाय नारायणाय  
 सुपथाय नमो नमस्ते ॥ १६ ॥ नारायणाय मणिस्वासनसंस्थिताय  
 नारायणाय शतवीर्यशताननाय । नारायणाय पवनाय च केशवाय  
 नारायणाय रविभाय नमो नमस्ते ॥ १७ ॥ श्रियःपतिर्यज्ञपतिः  
 प्रजापतिर्धियांपतिलोकपतिर्धरापतिः । पतिर्गतिश्चान्धकवृष्णि-  
 सात्त्वतां प्रसीदतां मे भगवान् सतांपतिः ॥ १८ ॥ त्रिभुवनकमनं  
 तमालवर्णं रविकरगौरवराम्बरं दधाने । वपुरलककुलावृताननाङ्गं

विजयसखे रतिरस्तु मेऽनवद्या ॥ १९ ॥ अष्टोत्तराधिकशतानि  
सुकोमलानि नामानि ये सुकृतिनः सततं स्मरन्ति । तेऽनेकजन्म-  
कृतपापचयाद्विमुक्ता नारायणेऽव्यवहितां गतिमामुवन्ति ॥ २० ॥  
इति नारायणाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ५५. त्रैलोक्यमङ्गलकवचम् ।

ॐ नमो नारायणाय ॥ नारद उवाच ॥ भगवन्सर्वधर्मज्ञ कवचं  
यत्प्रकाशितम् । त्रैलोक्यमङ्गलं नाम कृपया कथय प्रभो ॥ १ ॥  
सनत्कुमार उवाच ॥ शृणु वक्ष्यामि विप्रेन्द्र कवचं परमा-  
द्भुतम् । नारायणेन कथितं कृपया ब्रह्मणे पुरा ॥ २ ॥ ब्रह्मणा  
कथितं मह्यं परं स्नेहाद्वदामि ते । अतिगुह्यतरं सत्यं ब्रह्ममञ्जौघ-  
विग्रहम् ॥ ३ ॥ यद्धृत्वा पठनाद्ब्रह्मा सृष्टिं वितनुते ध्रुवम् ।  
यद्धृत्वा पठनात्पाति महालक्ष्मीर्जगन्नयम् ॥ ४ ॥ पठनाद्धारणा-  
च्छंभुः संहर्ता सर्वमन्त्रवित् । त्रैलोक्यजननी दुर्गा महिषादिमहा-  
सुरान् ॥ ५ ॥ वरहस्तान् जघानैव पठनाद्धारणाद्यतः । एवमिन्द्रा-  
दयः सर्वे सर्वैश्वर्यमवाप्नुयुः ॥ ६ ॥ इदं कवचमत्यन्तगुप्तं कुत्रापि  
नो वदेत् । शिष्याय भक्तियुक्ताय साधकाय प्रकाशयेत् ॥ ७ ॥  
शठाय परशिष्याय दत्त्वा मृत्युमवाप्नुयात् । त्रैलोक्यमङ्गलस्यास्य  
कवचस्य प्रजापतिः ॥ ८ ॥ ऋषिश्छन्दश्च गायत्री देवो नारायणः  
स्वयम् । धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः ॥ ९ ॥ प्रणवो  
मे शिरः पातु नमो नारायणाय च । भालं मे नेत्रयुगलमष्टार्णो  
भुक्तिमुक्तिदः ॥ १० ॥ ह्रीं पायाच्छ्रोत्रयुग्मं चैकाक्षरसर्वमोहनः ।  
ह्रीं कृष्णाय सदा घ्राणं गोविन्दायेति जिह्विका ॥ ११ ॥ गोपी-  
जनपदवल्लभाय स्वाहाऽऽननं मम । अष्टादशाक्षरो मन्त्रः कण्ठं पातु

दशाक्षरः ॥ १२ ॥ गोपीजनपदवल्लभाय स्वाहा भुजद्वयम् । क्लीं  
 ग्लौं क्लीं श्यामलाङ्गाय नमः स्कन्धौ दशाक्षरः ॥ १३ ॥ क्लीं कृष्णः  
 क्लीं करौ पायात् क्लीं कृष्णायाङ्गतोऽवतु । हृदयं भुवनेशानः क्लीं  
 कृष्णः क्लीं स्तनौ मम ॥ १४ ॥ गोपालायाभिजायान्तं कुक्षियुग्मं  
 सदाऽवतु । क्लीं कृष्णाय सदा पातु पार्श्वयुग्मं मनूत्तमः ॥ १५ ॥  
 कृष्णगोविन्दकौ पातां सराद्यौ डेयुतौ मनुः । अष्टाक्षरः पातु नाभिं  
 कृष्णेति द्व्यक्षरोऽवतु ॥ १६ ॥ पृष्ठं क्लीं कृष्णकं गलं क्लीं कृष्णाय  
 द्विद्वान्तकः । सक्थिनी सततं पातु श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णद्वयम् ॥ १७ ॥  
 ऊरू सप्ताक्षरः पायात्रयोदशाक्षरोऽवतु । श्रीं ह्रीं क्लींपदतो गोपी-  
 जनवल्लभपदं ततः ॥ १८ ॥ भाय स्वाहेति पायुं वै क्लीं ह्रीं श्रीं  
 सदशार्णकः । जानुनी च सदा पातु ह्रीं श्रीं क्लीं च दशाक्षरः  
 ॥ १९ ॥ त्रयोदशाक्षरः पातु जङ्घे चक्राद्युदायुधः । अष्टादशाक्षरो  
 ह्रींश्रींपूर्वको विंशदर्णकः ॥ २० ॥ सर्वाङ्गं मे सदा पातु द्वारका-  
 नायको बली । नमो भगवते पश्चाद्वासुदेवाय तत्परम् ॥ २१ ॥  
 ताराद्यो द्वादशार्णोऽयं प्राच्यां मां सर्वदाऽवतु । श्रीं ह्रीं क्लीं च  
 दशार्णस्तु क्लीं ह्रीं श्रीं षोडशार्णकः ॥ २२ ॥ गदाद्युदायुधो  
 विष्णुर्मांभेर्दिशि रक्षतु । ह्रीं श्रीं दशाक्षरो मन्त्रो दक्षिणे मां  
 सदाऽवतु ॥ २३ ॥ तारो नमो भगवते रुक्मिणीवल्लभाय च ।  
 स्वाहेति षोडशार्णोऽयं नैर्ऋत्यां दिशि रक्षतु ॥ २४ ॥ क्लीं हृषी-  
 केशाय पदं नमो मां वरुणोऽवतु । अष्टादशार्णः कामान्तो वायव्ये  
 मां सदाऽवतु ॥ २५ ॥ श्रीं मायाकामकृष्णाय गोविन्दाय द्विष्ठो  
 मनुः । द्वादशार्णात्मको विष्णुरुत्तरे मां सदाऽवतु ॥ २६ ॥  
 वाग्भवं कामकृष्णाय ह्रीं गोविन्दाय तत्परम् । श्रीं गोपीजनवल्ल-  
 भान्ते भाय स्वाहा करौ ततः ॥ २७ ॥ द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रो मामै-



शान्त्ये सदाऽवतु । कालियस्य फणामध्ये दिव्यं नृत्यं करोति तम्  
 ॥ २८ ॥ नमामि देवकीपुत्रं नृत्यराजानमच्युतम् । द्वात्रिंशदक्षरो  
 मन्त्रोऽप्यधो मां सर्वदाऽवतु ॥ २९ ॥ कामदेवाय विद्महे पुष्प-  
 बाणाय धीमहि । तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयादेषा मां पातु चोर्ध्वतः  
 ॥ ३० ॥ इति ते कथितं विप्र ब्रह्ममन्त्रौघविग्रहम् । त्रैलोक्यमङ्गलं  
 नाम कवचं ब्रह्मरूपकम् ॥ ३१ ॥ ब्रह्मणा कथितं पूर्वं नारायण-  
 मुखाच्छ्रुतम् । तव स्नेहान्मयाऽऽख्यातं प्रवक्तव्यं न कस्यचित्  
 ॥ ३२ ॥ गुरुं प्रणम्य विधिवत्कवचं प्रपठेत्ततः । सकृद्विस्त्रियधा-  
 ज्ञानं स हि सर्वतपोमयः ॥ ३३ ॥ मन्त्रेषु सकलेष्वेव देशिको  
 नात्र संशयः । शतमष्टोत्तरं चास्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः ॥ ३४ ॥  
 हवनदीन्दशांशेन कृत्वा तत्साधयेद्भुवम् । यदि स्यात्सिद्धकवचो  
 विष्णुरेव भवेत्स्वयम् ॥ ३५ ॥ मन्त्रसिद्धिर्भवेत्तस्य पुरश्चर्याविधा-  
 नतः । स्पर्धामुद्भूय सततं लक्ष्मीर्वाणीं वसेत्ततः ॥ ३६ ॥ पुष्पा-  
 ज्ञल्यष्टकं दत्त्वा मूलेनैव पठेत्सकृत् । दशवर्षसहस्राणि पूजायाः  
 फलमाप्नुयात् ॥ ३७ ॥ भूर्जे विलिख्याङ्गुलिकां स्वर्णस्थां धारये-  
 द्यदि । कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ सोऽपि विष्णुर्न संशयः ॥ ३८ ॥  
 अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च । महादानानि यान्येव प्राद-  
 क्षिप्यं भुवस्तथा ॥ ३९ ॥ कलां नार्हन्ति तान्येव सकृदुच्चारणा-  
 त्ततः । कवचस्य प्रसादेन जीवन्मुक्तो भवेन्नरः ॥ ४० ॥ त्रैलोक्यं  
 क्षोभयत्येव त्रैलोक्यविजयी भवेत् । इदं कवचमज्ञात्वा यजेद्यः  
 पुरुषोत्तमम् ॥ ४१ ॥ शतलक्षं प्रजसोऽपि न मन्त्रस्तस्य सिद्ध्यति  
 ॥ ४२ ॥ इति श्रीमन्नारदपञ्चरात्रे ज्ञानामृतसारे त्रैलोक्यमङ्गल-  
 कवचं संपूर्णम् ॥

## ५६. विष्णोरपामार्जनस्तोत्रम् ।

श्रीवासुदेवाय नमः ॥ दालभ्य उवाच ॥ भगवन्प्राणिनः सर्वे विष-  
 रोगाद्युपद्रवैः । दुष्टग्रहोपघातैश्च सर्वकालमुपद्रुताः ॥ १ ॥ आभि-  
 चारिककृत्याभिः स्पर्शरोगैश्च दारुणैः । सदा संपीड्यमानास्ते  
 तिष्ठन्ति मुनिसत्तम ॥ २ ॥ येन कर्मविपाकेन ग्रहरोगाद्युपद्रवाः ।  
 न भवन्ति नृणां तन्मे यथावद्वक्तुमर्हसि ॥ ३ ॥ पुलस्त्य उवाच ॥  
 जनार्दनं भूतपतिं जगद्गुरुं स्मरन्मनुष्यः सततं महामुने । दुष्टान्य-  
 शेषाण्यपहन्ति सद्यो निःशेषकार्याणि च साधु साधयेत् ॥ ४ ॥  
 ब्रतोपवासैर्यैर्विष्णुर्नान्यजन्मनि तोषितः । ते नरा मुनिशार्दूल ग्रह-  
 रोगादिभागिनः ॥ ५ ॥ यैर्न तत्प्रवणं चित्तं सर्वदैव नरैः कृतम् ।  
 विषग्रहज्वराणां ते मनुष्या दालभ्य भागिनः ॥ ६ ॥ आरोग्यं  
 परमामृद्धिं मनसा यद्यदिच्छति । तत्तदाप्नोत्यसंदिग्धं परत्राच्युत-  
 तोषकृत् ॥ ७ ॥ नाधीन्प्राप्नोति न व्याधीन्न विषग्रहबन्धनम् ।  
 कृत्यास्पर्शभयं वाऽपि तोषिते मधुसूदने ॥ ८ ॥ सर्वदुष्टशमस्तस्य  
 सौम्यास्तस्य सदा ग्रहाः । देवानामप्यध्वर्योऽसौ तुष्टो यस्य जनार्दनः  
 ॥ ९ ॥ यः समः सर्वभूतेषु यथात्मनि तथा परे । उपवासादिना  
 येन तोषितो मधुसूदनः ॥ १० ॥ तोषिते तत्र जायन्ते नराः पूर्ण-  
 मनोरथाः । अरोगाः सुखिनो भोगान् भोक्तारो मुनिसत्तम ॥ ११ ॥  
 न तेषां शत्रवो नैव स्पर्शरोगाभिचारिकम् । ग्रहरोगादिकं वाऽपि  
 पापकार्यं न जायते ॥ १२ ॥ अव्याहतानि कृष्णस्य चक्रादीन्यायु-  
 धानि तु । रक्षन्ति सकलापद्म्यो येन विष्णुरुपासितः ॥ १३ ॥  
 दालभ्य उवाच ॥ अनाराधितगोविन्दा ये नरा दुःखभागिनः ।  
 तेषां दुःखाभिभूतानां यत्कर्तव्यं दयालुभिः ॥ १४ ॥ पश्यद्भिः  
 सर्वभूतस्थं वासुदेवं महामुने । समदृष्ट्या हृषीकेशं तन्मम ब्रह्म-

शेषतः ॥ १५ ॥ पुलस्त्य उवाच ॥ तद्वक्ष्यामि मुनिश्रेष्ठ समाहित-  
मनाः शृणु । रोगदोषहरं नृणां गुरुपापप्रणाशनम् ॥ १६ ॥ सौवर्णं  
राजतं ताम्रं मृन्मयं वा नवं दृढम् । अत्रणं कलशं शुद्धं स्थापये-  
त्तन्दुलोपरि ॥ १७ ॥ तत्रोदकं समानीय शुद्धं निर्मलमेव च ।  
शतमेकं कुशान् साग्रान्स्थापयेत्कलशोपरि ॥ १८ ॥ पूजयेत्तत्र  
कलशमुपचारैः समन्त्रकैः । विरिञ्चिना सहोत्पन्न परमेष्ठीनिसर्गज  
॥ १९ ॥ नुद सर्वाणि पापानि दर्भं स्वस्तिकरो भव । कुशमूले  
स्थितो ब्रह्मा कुशमध्ये जनार्दनः ॥ २० ॥ कुशाग्रे शंकरं विद्यान्नयो  
देवाः कुशे स्थिताः । गृहीत्वैतान्समूलाग्रान् कुशान्शुद्धानुपसृशेत्  
॥ २१ ॥ मार्जयेत्सर्वगात्राणि कुशाग्रैर्दाल्भ्य शान्तिकृत् । शरीरे यस्य  
तिष्ठन्ति कुशोत्था जलविन्दवः । नश्यन्ति तस्य पापानि गरुडेनैव  
पद्मगाः ॥ २२ ॥ विष्णुभक्तो विशेषेण शुचिस्तद्व्रतमानसः । रोग-  
ग्रहविषातानां कुर्याच्छान्तिमिमां शुभाम् ॥ २३ ॥ वाराहं नार-  
सिंहं च वामनं विष्णुमेव च । ध्यात्वा समाहितो भूत्वा दिक्षु  
नामानि विन्यसेत् ॥ २४ ॥ नारसिंहं समभ्यर्च्य शुचौ देशे कुशा-  
सने । मञ्जरेतैर्यथालिङ्गं कुर्याद्दिग्बन्धमादितः ॥ २५ ॥ एवं  
नारायणः पातु वारिजाक्षस्तु दक्षिणे । प्रद्युम्नः पश्चिमे पातु वाम-  
देवस्तथोत्तरे ॥ २६ ॥ ईशान्यां वामनः पातु ह्यग्रेभ्यां तु जनार्दनः ।  
नैर्ऋत्यां पद्मनाभस्तु वायव्यां मधुसूदनः ॥ २७ ॥ ऊर्ध्वं गोवर्धन-  
धरो ह्यधरायां त्रिविक्रमः । एताभ्यो दशदिग्भ्यस्तु सर्वतः पातु  
केशवः ॥ २८ ॥ जले रक्षतु वाराहः स्थले रक्षतु वामनः । अटव्यां  
नारसिंहश्च सर्वतः पातु केशवः ॥ २९ ॥ एवं कृत्वा तु दिग्बन्धं  
विष्णुं सर्वत्र संस्परेत् । आत्मनश्च परस्यापि विधिरेव उदाहृतः  
॥ ३० ॥ अन्यग्रचित्तः कुर्वीत न्यासकर्म यथाविधि । एतत्समस्तं

विन्यस्य पश्चान्मन्त्रं प्रयोजयेत् ॥ ३१ ॥ करन्यासं पुरा कृत्वा  
 ततोऽङ्गन्यासमारभेत् । अङ्गुष्ठाग्रे तु गोविन्दं तर्जन्यां तु महीधरम्  
 ॥ ३२ ॥ मध्यमायां हृषीकेशमनामिकायां त्रिविक्रमम् । कनि-  
 ष्ठिकायां न्यसेद्विष्णुं करमध्ये तु माधवम् ॥ ३३ ॥ हन्मध्ये चिन्त-  
 येद्देवं परमात्मानमीश्वरम् । नृसिंहं मणिबन्धे च करपृष्ठे जना-  
 र्दनम् ॥ ३४ ॥ कृते च वैष्णवे न्यासे सर्वपापैः प्रमुच्यते । एवं  
 कृत्वा करन्यासं सर्वं तस्याक्षयं भवेत् । एवं न्यासं करे कृत्वा  
 पश्चादङ्गेषु विन्यसेत् ॥ ३५ ॥ शिखायां केशवं न्यस्य मूर्ध्नि  
 नारायणं न्यसेत् । मालाधरं ललाटे च गोविन्दं तु भ्रुवोर्न्यसेत्  
 ॥ ३६ ॥ चक्षुर्मध्ये न्यसेद्विष्णुं श्रोत्रयोर्मधुसूदनम् । त्रिविक्रमं  
 कपोले तु वामनं कर्णमूलयोः ॥ ३७ ॥ नासारन्ध्रद्वये चैव श्रीधरं  
 कल्पयेद्बुधः । उत्तरोष्ठे हृषीकेशं पद्मनाभं तथाधरे ॥ ३८ ॥  
 दामोदरं दन्तपङ्क्तौ वाराहं चिबुके तथा । जिह्वायां वासुदेवं च  
 तालौ च गरुडध्वजम् ॥ ३९ ॥ वैकुण्ठं कण्ठदेशे च अनन्तं  
 नासिकोपरि । दक्षिणे च भुजे विप्रं विन्यसेत् पुरुषोत्तमम् ॥ ४० ॥  
 वामे भुजे महाभागं राघवं हृदि विन्यसेत् । कुक्षयोः पृथ्वीधरं चैव  
 पार्श्वयोरमितौजसम् ॥ ४१ ॥ स्तनयोः पीतवसनं हरिं नाभ्यां तु  
 विन्यसेत् । करे तु दक्षिणे विप्रं ततः संकर्षणं न्यसेत् ॥ ४२ ॥  
 वामे रिपुहरं विद्यात्कटिमध्येऽपराजितम् । पृष्ठे क्षितिधरं विद्यादच्युतं  
 स्कन्धयोर्द्वयोः ॥ ४३ ॥ वक्षःस्थले माधवं च कक्षयोर्योग-  
 शायिनम् । वामकुक्षे माधवं च दक्षिणे जलशायिनम् ॥ ४४ ॥  
 योगीशं दक्षिणे पार्श्वे वामपार्श्वे श्रियःपतिम् । आत्रेषु वासुदेवं च  
 गुदमध्येऽव्ययं न्यसेत् ॥ ४५ ॥ स्वयंभुवं मेढ्रमध्ये ऊर्वोश्चैव गदा-  
 धरम् । जानुमध्ये चक्रधरं जङ्घयोरच्युतं न्यसेत् ॥ ४६ ॥ पादयोः

पुष्कराक्षं च सर्वतो विश्वरूपिणम् । गुल्फयोर्नारसिंहं च पाद-  
 पृष्ठेऽमितौजसम् । अङ्गुल्यां श्रीधरं विद्यात् पद्माक्षं सर्वसन्धिषु  
 ॥ ४७ ॥ नखेषु घननीलाङ्गं न्यसेत्पादतलेऽच्युतम् । रोमकूपे  
 गुडाकेशं कृष्णं रक्तास्थिमज्जसु ॥ ४८ ॥ मनोबुद्ध्योरहंकारं चित्ते  
 न्यस्य जनार्दनम् । पादमूले तु देवस्य शङ्खं विन्यस्य निर्मलम्  
 ॥ ४९ ॥ वनमालां हृदि न्यस्य सर्वदेवाभिपूजिताम् । गदां वक्षः-  
 स्थले न्यस्य चक्रं चैव तु पृष्ठतः ॥ ५० ॥ श्रीवत्साङ्गं न्यसेन्मूर्ध्नि  
 पङ्कजं कवचे न्यसेत् । आपादमस्तकं चैव विन्यसेत्पुरुषोत्तमम्  
 ॥ ५१ ॥ विष्णुरुर्ध्वमधो रक्षेद्वैकुण्ठो विदिशो दिशः । पातु मां सर्वतो  
 रामो धन्वी चक्री च केशवः ॥ ५२ ॥ अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि शृणु  
 पापप्रणाशनम् । वराहरूपिणं देवं संस्मरन्मन्त्रैश्च जपेत् ॥ ५३ ॥  
 बृहत्तनुं बृहद्गात्रं बृहदंशं सुशोभनम् । समस्तवेदवेदाङ्गैर्युक्ताङ्गं  
 भूषणैर्युतम् ॥ ५४ ॥ उद्धृत्य भूमिं शिरसा मूर्ध्नि जिघ्रन्तमच्युतम् ।  
 उद्धृत्य भूमिं पाताले हस्ताभ्यामुपगृह्य ताम् ॥ ५५ ॥ आलिङ्ग्य  
 भूमिं शिरसा मूर्ध्नि जिघ्रन्तमच्युतम् । रत्नवैडूर्यमुक्तादिभूषणैरुपशो-  
 भितम् ॥ ५६ ॥ पीताम्बरधरं देवं शुक्लमाल्यानुलेपनम् । त्रयस्त्रिंश-  
 त्कोटिदेवैः स्तूयमानं दिवानिशम् ॥ ५७ ॥ नृत्यद्भिरप्सरोग्भिश्च  
 गीयमानं च किन्नरैः । इत्थं ध्यात्वा तथाऽऽत्मानं जपेन्नित्यमत-  
 न्द्रितः ॥ ५८ ॥ सुवर्णमण्डपान्तःस्थं पद्मं ध्यायेत्सकेशरम् ।  
 सकर्णिकैर्दलैश्चैव ह्यष्टभिः परिशोभितम् ॥ ५९ ॥ कलङ्करहितं  
 देवं पूर्णचन्द्राम्बुजप्रभम् । तडित्समजटाशोभिकण्ठनालेन शोभि-  
 तम् ॥ ६० ॥ श्रीवत्साङ्कितवक्षःस्थं तीक्ष्णदंष्ट्रं सुलोचनम् । वनमाला-  
 विशोभाढ्यं मुक्ताहारोपशोभितम् ॥ ६१ ॥ सपङ्कजं चतुर्दंष्ट्रं तत्प्रख्यातं

सुशोभनम् । प्रातःसूर्यसमाभ्यां वै कुण्डलाभ्यां विराजितम् ॥ ६२ ॥  
 जानूपरिन्यस्तकरद्वन्द्वरत्नखाङ्कितम् । जङ्घाभरणसंस्पर्धि शुभालं-  
 करणं त्विषः ॥ ६३ ॥ चतुर्थीचन्द्रसंकाशं सुदंष्ट्रमुखपङ्कजम् ।  
 अतिरक्तोष्ठवदनं व्यक्तं समतिभीषणम् ॥ ६४ ॥ वामाङ्गस्थश्रिया  
 युक्तं शान्तिदां तुङ्गरोहिणीम् ॥ ६५ ॥ अर्हणां रक्तपादां च  
 सुभासां शुभलक्षणाम् । सुभ्रूं सुकेशीं सुश्रोणीं सुभुजां सुप्रभा-  
 ननाम् ॥ ६६ ॥ सुप्रतिष्ठां च सुदतीं चतुर्हस्तां विचिन्तयेत् ।  
 दुकूलां चैव चार्वङ्गीं हरिणीं सर्वकामदाम् ॥ ६७ ॥ तप्तकाञ्चन-  
 संकाशां सर्वाभरणभूषिताम् । सुवर्णकलशप्रख्यपीनोन्नतपयोधराम्  
 ॥ ६८ ॥ गृहीतमातुलङ्गाम्यामुद्गाहुभ्यामथान्ययोः । गृहीतपद्म-  
 युगलां जाम्बूनदकरां तथा ॥ ६९ ॥ एवं देवीं नृसिंहस्य वामा-  
 ङ्कोपरि संस्मरेत् ॥ ७० ॥ अतिसुविमलगात्रं रुक्मपात्रस्थमङ्गं  
 सुललितदधिखण्डं पाणिना दक्षिणेन । कलशममृतपूर्णं वामहस्ते  
 दधानं तरति सकलदुःखं वामनं भावयेद्यः ॥ ७१ ॥ अजिनदण्ड-  
 कमण्डलुमेखलारुचिरपावनवामनमूर्तये । इति जगच्चित्थाय  
 जितारये निगमवाक्पटवे बटवे नमः ॥ ७२ ॥ शान्तं पद्मासनस्थं  
 सकलशशिनिभं श्रीपतिं कोमलाङ्गं हस्ते पीयूषकुम्भं दधियुतकलशं  
 पञ्चहस्तं तथाऽन्यैः । पीतं वस्त्रं दधानं कटकमुकुटके हारकेयूर-  
 मालां नानालंकारयुक्तं स्फटिकमणिनिभं वामनं नौमि दान्तम्  
 ॥ ७३ ॥ अञ्जयामः शुभ्रयज्ञोपवीती लसत्कौपीनो जातकृष्णा-  
 जिनश्रीः । छत्री दण्डी पुण्डरीकायताक्षः पायान्मायावामनो  
 ब्रह्मचारी ॥ ७४ ॥ क्षीरसागरकल्लोलसीकरौघविभूषितम् । मणि-  
 मुक्तामये रम्ये सैकते संस्थितं शुभम् ॥ ७५ ॥ शुभ्रमेघविनिर्मुक्तं  
 सुधासिक्तं सुसुन्दरम् । एवं वामनमात्मानं ध्यात्वाऽपामार्जनं

जपेत् ॥ ७६ ॥ ॐ नमः परमार्थाय पुरुषाय महात्मने । अरूप-  
बहुरूपाय व्यापिने परमात्मने ॥ ७७ ॥ निष्कल्मषाय शुद्धाय  
ध्यातृपापहराय च । नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि यत्तत्सिध्यतु मे वचः  
॥ ७८ ॥ वराहाय नृसिंहाय वामनाय महात्मने । नमः कृत्वा  
प्रवक्ष्यामि यत्तत्सिध्यतु मे वचः ॥ ७९ ॥ चिकित्सानन्तरूपाय  
योगिने परमात्मने । नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि यत्तत्सिध्यतु मे वचः  
॥ ८० ॥ नारायणाय विश्वाय विश्वेशायेश्वराय च । नमस्कृत्वा  
प्रवक्ष्यामि यत्तत्सिध्यतु मे वचः ॥ ८१ ॥ गोविन्दपद्मनाभाय  
वासुदेवाय शार्ङ्गिणे । नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि यत्तत्सिध्यतु मे वचः  
॥ ८२ ॥ दामोदराय देवाय अनन्ताय महात्मने । नमस्कृत्वा  
प्रवक्ष्यामि यत्तत्सिध्यतु मे वचः ॥ ८३ ॥ विष्टरश्रवसे तस्मै  
क्षीराम्भोनिधिशायिने । नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि यत्तत्सिध्यतु  
मे वचः ॥ ८४ ॥ भक्तिप्रियाय देवाय विष्वक्सेनाय शार्ङ्गिणे ।  
नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि यत्तत्सिध्यतु मे वचः ॥ ८५ ॥  
कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने । नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि  
यत्तत्सिध्यतु मे वचः ॥ ८६ ॥ हिरण्यगर्भपतये हिरण्यकशिपु-  
च्छिदे । नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि यत्तत्सिध्यतु मे वचः ॥ ८७ ॥  
चक्रहस्ताय शूराय तार्क्ष्यपत्राय धीमते । नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि  
यत्तत्सिध्यतु मे वचः ॥ ८८ ॥ मधोक्षजाय भद्राय श्रीधरायात्म-  
मूर्तये । नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि यत्तत्सिध्यतु मे वचः ॥ ८९ ॥  
त्रिविक्रमाय रामाय वैकुण्ठाय नराय च । नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि  
यत्तत्सिध्यतु मे वचः ॥ ९० ॥ सच्चिदानन्दरूपाय योगिने परमा-  
त्मने । नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि यत्तत्सिध्यतु मे वचः ॥ ९१ ॥  
योगेश्वराय गुह्याय गूढाय परमात्मने । नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि यत्त-

स्निध्यतु मे वचः ॥ ९२ ॥ वाराहेश नृसिंहेश वामनेश त्रिवि-  
 क्रम । हयग्रीवेश सर्वेश हृषीकेश हराशुभम् ॥ ९३ ॥ अपराजित-  
 चक्राद्यैश्चतुर्भिः परमायुधैः । अखण्डितप्रभावैस्त्वं सर्वदुःखहरो भव  
 ॥ ९४ ॥ हरासुकस्य दुरितं दुष्कृतं दुरुपासितम् । मृत्युबाधा-  
 र्तिभयदं दुरिष्टस्य च यत्फलम् ॥ ९५ ॥ परापध्यानसंस्थानप्रयुक्तं  
 चाभिचारिकम् । गरस्पर्शमहायोगं प्रयोगं जरया जर ॥ ९६ ॥  
 हरये वासुदेवाय नमः कृष्णाय शार्ङ्गिणे । नमः पुष्करनेत्राय केश-  
 वायादिचक्रिणे ॥ ९७ ॥ नमः कमलकिञ्जल्कपीतनिर्मलवाससे ।  
 महाहवरिपुस्कन्धघृष्टचक्राय चक्रिणे ॥ ९८ ॥ दंष्ट्रोद्धतक्षितिभृते  
 त्रिमूर्तिपतये नमः । महायज्ञवराहाय शेषभोगोरुशायिने ॥ ९९ ॥  
 तप्तहाटककेशान्त ज्वलत्पावकलोचन । वज्रायुधनखस्पर्श दिव्यसिंह  
 नमोऽस्तु ते ॥ १०० ॥ तीक्ष्णैर्नखाग्रैर्यदुरो विदार्य त्रातुं सुरान्दैत्य-  
 पतिं जघान । सुदर्शनं पद्मगदे च शङ्खं बिभ्रन्नृसिंहोऽस्तु ममा-  
 भयाय ॥ १ ॥ काश्यपायातिह्रस्वाय ऋग्यजुःसाममूर्तये । तुभ्यं  
 वामनरूपाय क्रमते गां नमो नमः ॥ २ ॥ वराहशेषदुष्टानि  
 सर्वपापफलानि च । मर्दं मर्दं महादंष्ट्रं मर्दं मर्दं महीधर ॥ ३ ॥  
 नरसिंह करालास्यदन्तप्रान्तनखोज्ज्वल । भञ्ज भञ्ज निना-  
 देन दुष्टान्यस्यातिनाशन ॥ ४ ॥ ऋग्यजुःसामगर्भाभिर्वा-  
 ग्भिर्वाग्मनरूपघृक् । प्रशमं सर्वदुःखानि नयत्वाशु जनार्दनः  
 ॥ ५ ॥ आद्यन्तवन्तः कवयः पुराणाः सूक्ष्मा बृहन्तोऽप्य-  
 नुशासितारः । सर्वान् ज्वरान्भ्रन्तु ममानिरुद्धप्रद्युम्नसंकर्षण-  
 वासुदेवाः ॥ ६ ॥ त्रिपाद्भस्मप्रहरणस्त्रिशिरा रक्तलोचनः ।  
 स मे प्रीतः सुखं दद्यात्सर्वामयपतिर्ज्वरः ॥ ७ ॥ ज्वरमन्त्रस्य  
 कालाम्निर्ऋषिः, महाज्वरो देवता, गायत्री छन्दः, रोगप्रश-



मनार्थं जपे विनियोगः ॥ ८ ॥ ॐ भस्मायुधाय विश्वहे एकदंष्ट्राय  
धीमहि । तन्नो ज्वरः प्रचोदयात् । अङ्गवङ्गकलिङ्गेषु हूणेषु मगधेषु  
च । वाराणस्यां च यज्ञातं तन्न स्मरसि रे ज्वर ॥ ९ ॥ एकाहिकं  
ब्याहिकं च तथा त्रिदिवसज्वरम् । चातुर्थिकं तथात्युग्रं तथैव  
सततज्वरम् ॥ १० ॥ दोषोत्थं सन्निपातोत्थं तथैवागन्तुकज्वरम् ।  
शमं नयाशु गोविन्द छिन्धि छिन्ध्याशु वेदनाम् ॥ ११ ॥ नेत्रदुःखं  
शिरोदुःखं दुःखं चोदरसंभवम् । अतिकासमतिश्वासमतितापं  
सवेपथुम् ॥ १२ ॥ गुदघ्राणाङ्घ्रिरोगांश्च कुष्ठरोगं तथा क्षयम् ।  
कामलादींस्तथा रोगान्प्रमेहांश्चातिदारुणान् ॥ १३ ॥ भगन्दराति-  
सारांश्च मुखरोगान् सत्वग्भवान् । श्वित्रादीन्मुखरोगांश्च त्वगस्थ्यन्त-  
र्बहिःस्थितान् ॥ १४ ॥ अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रांश्च रोगानन्यांश्च  
दारुणान् । ये वातप्रभवा रोगा ये च पित्तसमुद्भवाः ॥ १५ ॥  
कफोद्भवाश्च ये रोगा ये केचित्सान्निपातिकाः । आगन्तुकाश्च ये  
रोगा लूताविस्फोटकादयः ॥ १६ ॥ ते सर्वे प्रशमं यान्तु वासु-  
देवापमार्जिताः । विलयं यान्तु सर्वे ते विष्णोरुच्चारणेन तु ॥ १७ ॥  
क्षयं गच्छन्तु शेषास्ते चक्रेणाभिहता हरेः । अच्युतानन्तगोविन्द-  
नामोच्चारणभेषजात् ॥ १८ ॥ नश्यन्तु सकला रोगाः सत्यं सत्यं  
वदाम्यहम् ॥ १९ ॥ अच्युतेति मनः पूतमनन्तेति वचः पुनः ।  
गोविन्देति तनुः पूता त्वज्ञातज्ञातपातकैः ॥ १२० ॥ अच्युतानन्त  
गोविन्द परमानन्द माधव । ॐ नमः संपुटीकृत्य जपन्नेवमथो-  
क्षजम् ॥ २१ ॥ सत्यं सत्यं पुनः सत्यमुद्धृत्य भुजमुच्यते । वेद-  
शास्त्रात्परं नास्ति न देवः केशवात्परः ॥ २२ ॥ स्थावरं जङ्गमं चैव  
कृत्रिमं चापि यद्विषम् । दन्तोद्भूतं नखोद्भूतमाकाशप्रभवं विषम्  
॥ २३ ॥ लूतादिप्रभवं चैव विषमत्यन्तदुःखदम् । शमं नयाशु तत्सर्वं

कीर्तितोऽसि जनार्दन ॥ २४ ॥ ग्रहान्प्रेतग्रहांश्चैव तथा वै डाकिनी-  
 ग्रहान् । वेतालांश्च पिशाचांश्च गन्धर्वान् यक्षराक्षसान् ॥ २५ ॥  
 शाकिनीपूतनादींश्च तथा वैनायकग्रहान् । मुखमण्डलिकान्कूरान्  
 रेवतीं वृद्धरेवतीम् ॥ २६ ॥ वृद्धिकाख्यांस्तथा चोग्रांस्तथा मातृ-  
 ग्रहानपि । बालस्य विष्णोश्चरितं हन्तु बालग्रहानिमान् ॥ २७ ॥  
 नरसिंहस्य ते दृष्ट्या दग्धा ये चापि यौवने । सटाकरालवदनो  
 नरसिंहो महाबलः ॥ २८ ॥ ग्रहानशेषान्निःशेषान् करोतु जगतो  
 हि सः ॥ २९ ॥ नरसिंह महासिंह ज्वालामालोज्ज्वलानन ।  
 ग्रहानशेषान्निःशेषान् खाद खादाग्निलोचन ॥ १३० ॥ ये रोगा ये  
 महोत्पाता यद्विषं ये महाग्रहाः । यानि च क्रूरभूतानि ग्रहपीडाश्च  
 दारुणाः ॥ ३१ ॥ व्याघ्रसिंहवराहेषु ग्रहभूतभयेषु च ।  
 शस्त्रक्षतेषु ये रोगा जालगर्दभकादयः ॥ ३२ ॥ यानि च  
 क्रूरभूतानि प्राणिपीडाकराणि च । तानि सर्वाणि सर्वात्मन्परमात्मन्  
 जनार्दन ॥ ३३ ॥ किञ्चिद्रूपं समाश्रित्य वासुदेवाशु नाशय ।  
 क्षिप्वा सुदर्शनं चक्रं ज्वालामालातिभीषणम् ॥ ३४ ॥ सर्वदुष्ट-  
 प्रशमनं कुरु देववराच्युत । सुदर्शन महाज्वाल छिन्धि छिन्धि  
 महायुध ॥ ३५ ॥ तीक्ष्णधार महावेग सूर्यकोटिसमप्रभ । त्रैलोक्य-  
 रक्षाकर्तस्त्वं दानवान्वयमर्दन ॥ ३६ ॥ ज्वलत्पावकसंकाश छिन्धि  
 छिन्ध्याशु वेदनाम् । छिन्धि वातं च लूताश्च छिन्धि रोगं मह-  
 द्विषम् ॥ ३७ ॥ छिन्धि छिन्धि महाव्याधीन् छिन्धि छिन्धि  
 महाग्रहान् । रुजं दाहं च शूलं च निमिषजालगर्दभौ ॥ ३८ ॥  
 सुधन्वाखण्डपरशुर्दारुणो द्रविणप्रदः । हां हां हुं हुं फङ्करेण  
 ठद्वयेन हन द्विषः ॥ ३९ ॥ सुदर्शनस्य मन्त्रेण ग्रहा यान्ति दिशो  
 दश ॥ १४० ॥ ॐ नमो भगवते भो भो सुदर्शन मम दुष्टं

दारय दारय दुरितं हन हन पापं मय मय आरोग्यं कुरु हां हां  
हुं हुं कुरु फद स्वाहा ॥ ४१ ॥ त्रैलोक्यरक्षाकर्तृस्त्वमाज्ञापय  
जनार्दन । सर्वदुष्टानि रक्षांसि क्षपयारिविभीषण ॥ ४२ ॥ प्राच्यां  
रक्ष प्रतीच्यां च दक्षिणोत्तरतस्तथा । ईशान्यां च तथाऽऽग्नेय्यां  
नैऋत्यां वायुदिश्यपि ॥ ४३ ॥ अधरायां तथोर्ध्वायां सदा रक्षां  
करोत्वसौ । रक्षां करोतु भगवान्नरसिंहः स्वर्गार्जितैः ॥ ४४ ॥  
भुव्यन्तरिक्षे च तथा पृष्ठतः पार्श्वतोऽग्रतः । रक्षां करोतु भग-  
वान्बहुरूपी जनार्दनः ॥ ४५ ॥ यथा यज्ञेश्वरो विष्णुर्वेदान्तेष्वपि  
गीयते । तेन सत्येन सकलं दुष्टमस्य प्रशाम्यतु ॥ ४६ ॥ परमात्मा  
यथा विष्णुर्वेदान्तेष्वपि धीयते । तेन सत्येन सकलं दुष्टमस्य  
प्रशाम्यतु ॥ ४७ ॥ यथा विष्णुर्जगत्सर्वं सदैवासुरमानुषम् । तेन  
सत्येन सकलं दुष्टमस्य प्रशाम्यतु ॥ ४८ ॥ यथा विष्णौ स्मृते  
सद्यः संक्षयं याति पातकम् । तेन सत्येन सकलं यन्मयोक्तं  
तथास्तु तत् ॥ ४९ ॥ शान्तिरस्तु शिवं चास्तु दुष्टमस्य  
प्रशाम्यतु । स्वास्थ्यमस्य सदैवास्तु हृषीकेशस्य कीर्तनात्  
॥ १५० ॥ यत् एवागतं पापं तत्रैव प्रतिगच्छतु । यदस्य दुःखं  
तत्सर्वं शमं नयतु माधवः ॥ ५१ ॥ वासुदेवशरीरोत्थैः कुशैः  
संमार्जिता मया । अपामार्जितगोविन्दो नरो नारायणो भवेत्  
॥ ५२ ॥ ममास्तु सर्वदुःखानां प्रशमो वचनाद्धरेः । शान्ताः  
समस्तरोगास्ते ग्रहाः सर्वे विषादयः ॥ ५३ ॥ भूतानि प्रशमं यान्तु  
स्मृते च मधुसूदने । एतत्समस्तरोगेषु ग्रहभूतभयेषु च ॥ ५४ ॥ अपा-  
मार्जनकं शस्त्रं विष्णोर्नामाभिमन्त्रितम् । एते कुशा विष्णुशरीरसंभवा  
जनार्दनाग्रे स्वयमेव चागताः ॥ ५५ ॥ हतो मया दुष्टमशेषमस्य स्वस्थो  
भवत्वेष यथा वचो हरेः ॥ ५६ ॥ शान्तिरस्तु शिवं चास्तु

दुष्टमस्य प्रशाम्यतु । यदस्य दुरितं किञ्चित्क्षिप्तं लवणार्णवे  
 ॥ ५७ ॥ स्वास्थ्यमस्य सदैवास्तु हृषीकेशस्य कीर्तनात् । यत्  
 एवागतं पापं तत्रैव प्रतिगच्छतु ॥ ५८ ॥ एतद्रोगादिपीडासु  
 जन्तूनां हितकाम्यया । विष्णुभक्तेन कर्तव्यमपामार्जनकं परम्  
 ॥ ५९ ॥ अनेन सर्वदुःखानि प्रशमं यान्त्यसंशयम् । सर्वभूत-  
 हितार्थाय कुर्यात्तस्मात्सदैव हि ॥ १६० ॥ य इदं धारयेद्विद्वान्  
 श्रद्धाभक्तिसमन्वितः । ग्रहास्तं नोपसर्पन्ति न रोगा न च राक्षसाः  
 ॥ ६१ ॥ धन्यो यशस्वी शत्रुघ्नः स्ववोऽयं मुनिसत्तम । पठतां  
 शृण्वतां चैव ददाति परमां गतिम् ॥ १६२ ॥ इति श्रीविष्णुधर्मोत्तरे  
 विष्णुरहस्ये पुलस्त्यदाल्भ्यसंवादे श्रीविष्णोरपामार्जनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ५७. लक्ष्मीनृसिंहाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नारसिंहो महासिंहो दिव्यसिंहो महाबलः ।  
 उग्रसिंहो महादेवः स्तंभजश्चोग्रलोचनः ॥ १ ॥ रौद्रः सर्वाद्भुतः  
 श्रीमान् योगानन्दस्त्रिविक्रमः । हरिः कोलाहलश्चक्री विजयो जय-  
 वर्धनः ॥ २ ॥ पञ्चाननः परं ब्रह्म चाघोरो घोरविक्रमः ।  
 ज्वलन्मुखो ज्वालमाली महाज्वालो महाप्रभुः ॥ ३ ॥ निटिलाक्षः  
 सहस्राक्षो दुर्निरीक्ष्यः प्रतापनः । महादंष्ट्रायुधः प्राज्ञश्रृङ्गकोपी  
 सदाशिवः ॥ ४ ॥ हिरण्यकशिपुध्वंसी दैत्यदानवभञ्जनः । गुणभद्रो  
 महाभद्रो बलभद्रः सुभद्रकः ॥ ५ ॥ करालो विकरालश्च विकर्ता  
 सर्वकर्तृकः । शिशुमारखिलोकात्मा ईशः सर्वेश्वरो विभुः ॥ ६ ॥  
 भैरवाडंबरो दिव्यश्चाच्युतः कविमाधवः । अधोक्षजोऽक्षरः शर्वो  
 वनमाली वरप्रदः ॥ ७ ॥ विश्वंभरोऽद्भुतो भव्यः श्रीविष्णुः पुरुषो-  
 त्तमः । अनघास्त्रो नखास्त्रश्च सूर्यज्योतिः सुरेश्वरः ॥ ८ ॥ सहस्रबाहुः

सर्वज्ञः सर्वसिद्धिप्रदायकः । वज्रदंष्ट्रो वज्रनखो महानन्दः परंतपः  
 ॥ ९ ॥ सर्वयंत्रैकरूपश्च सर्वयंत्रविदारणः । सर्वतंत्रात्मकोऽव्यक्तः  
 सुव्यक्तो भक्तवत्सलः ॥ १० ॥ वैशाखशुक्लभूतोत्थशरणागत-  
 वत्सलः । उदारकीर्तिः पुण्यात्मा महात्मा चंडविक्रमः ॥ ११ ॥  
 वेदत्रयप्रपूज्यश्च भगवान्परमेश्वरः । श्रीवत्सांकः श्रीनिवासो जग-  
 द्दयापी जगन्मयः ॥ १२ ॥ जगत्पालो जगन्नाथो महाकायो द्विरूप-  
 भृत् । परमात्मा परंज्योतिर्निर्गुणश्च नृकेसरी ॥ १३ ॥ परतत्त्वं  
 परंधाम सच्चिदानन्दविग्रहः । लक्ष्मीनृसिंहः सर्वात्मा धीरः प्रह्लाद-  
 पालकः ॥ १४ ॥ इदं लक्ष्मीनृसिंहस्य नाश्रामष्टोत्तरं शतम् ।  
 त्रिसंध्यं यः पठेज्जत्तया सर्वाभीष्टमवाप्नुयात् ॥ १५ ॥ इति  
 लक्ष्मीनृसिंहाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ५८. श्रीमद्वादशस्तोत्रम् ।

श्रीवेदव्यासाय नमः ॥ वंदे वंद्यं सदानंदं वासुदेवं निरंजनम् ।  
 इंदिरापतिमाद्यादिवरदेशवरप्रदम् ॥ १ ॥ नमामि निखिलाधीश-  
 किरीटावृष्टपीठवत् । हृत्तमःशमनेऽर्काभं श्रीपतेः पादपंकजम् ॥ २ ॥  
 जांबूनदांबराधारं नितंबं चित्त्यमीशितुः । स्वर्णमंजीरसंवीतमारूढं  
 जगदंबया ॥ ३ ॥ उदरं चित्त्यमीशस्य तनुत्वेऽप्यखिलंभरम् ।  
 बलित्रयांकितं नित्यमुपगूढं श्रियैकया ॥ ४ ॥ स्मरणीयमुरो विष्णो-  
 र्दिरावासमीशितुः । अनंतमंतवदिव भुजयोरंतरं गतम् ॥ ५ ॥  
 शंखचक्रगदापद्मधराश्रित्या हरेर्भुजाः । पीनवृत्ता जगद्रक्षाकेवलो-  
 द्योगिनोऽनिशम् ॥ ६ ॥ सततं चिंतयेत्कंठं भास्वत्कौस्तुभभास-  
 कम् । वैकुण्ठस्याखिला वेदा उद्गीर्यन्तेऽनिशं यतः ॥ ७ ॥ स्मरेत्  
 यामिनीनाथसहस्रामितकांतिमत् । भवतापापनोदीक्यं श्रीपतेर्मुख-

पंकजम् ॥ ८ ॥ पूर्णानन्यसुखोद्गासिमंदस्मितमधीशितुः । गोविंदस्य  
 सदा चिंत्यं नित्यानंदपदप्रदम् ॥ ९ ॥ स्मरामि भवसंतापहानिदा-  
 मृतसागरम् । पूर्णानंदस्य रामस्य सानुरागावलोकनम् ॥ १० ॥  
 ध्यायेदजस्रमीशस्य पद्मजादिप्रतीक्षितम् । भ्रूभंगं-पारमेध्यादिपद-  
 दायि विमुक्तिदम् ॥ ११ ॥ संततं चिंतयेऽनंतमंतकाले विशेषतः ।  
 नैवोदापुर्गुणंतोऽतं यद्गुणानामजादयः ॥ १२ ॥ इति श्रीमद्वादश-  
 स्तोत्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ सुजनोदधिसंवृद्धिपूर्णचंद्रो गुणा-  
 र्णवः । अमंदानंदसान्द्रो नः प्रीयतामिदिरापतिः ॥ १ ॥ रमाच-  
 कोरीविधवे दुष्टदर्पोदबह्वये । सत्पांथजनगोहाय नमो नारायणाय  
 ते ॥ २ ॥ चिदचिद्भेदमखिलं विधायाधाय भुंजते । अन्याकृत-  
 गृहस्थाय रमाप्रणयिने नमः ॥ ३ ॥ अमंदगुणसारोऽपि मंद-  
 हासेन वीक्षितः । नित्यमिदिरयानंदसांद्रो यो नौमि तं हरिम्  
 ॥ ४ ॥ वशी वशे न कस्यापि योऽजितो विजिताखिलः । सर्वकर्ता  
 न क्रियते तं नमामि रमापतिम् ॥ ५ ॥ अगुणाय गुणोद्रेकस्वरूपा-  
 यादिकारिणे । विदारितारिसंघाय वासुदेवाय ते नमः ॥ ६ ॥  
 आदिदेवाय देवानां पतये सादितारये । अनाद्यज्ञानपाराय नमो  
 वरवराय ते ॥ ७ ॥ अजाय जनयित्रेऽस्य विजिताखिलदानव ।  
 अजादिपूज्यपादाक नमस्ते गरुडध्वज ॥ ८ ॥ इंदिरामंदसांद्राग्र्य-  
 कटाक्षप्रेक्षितात्मने । अस्मादिष्टैककार्याय पूर्णाय हरये नमः ॥ ९ ॥  
 इति श्रीमद्वादशस्तोत्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ कुरु भुंक्त्व च कर्म  
 निजं नियतं हरिपादविनम्रधिया सततम् । हरिरेव परो हरिरेव  
 गुरुर्हरिरेव जगत्पितृमातृगतिः ॥ १ ॥ न ततोऽस्त्यपरं जगतीड्य-  
 तमं परमात्परतः पुरुषोत्तमतः । तदलं बहुलोकविचिंतनया प्रवर्णं  
 कुरु मानसमीशपदे ॥ २ ॥ यततोऽपि हरेः पदसंस्मरणे सकलं

ह्यधमाशु लयं व्रजति । स्मरतस्तु विमुक्तिपदं परमं स्फुटमेष्यति  
तत् किमपाक्रियते ॥ ३ ॥ शृणुतामलसत्यवचः परमं शपथेरित-  
मुच्छ्रितबाहुयुगम् । न हरेः परमो न हरेः सदृशः परमः स तु  
सर्वचिदात्मगणात् ॥ ४ ॥ यदि नाम परो न भवेत्स हरिः कथमस्य  
वशे जगदेतदभूत् । यदि नाम न तस्य वशे सकलं कथमेव तु  
नित्यसुखं न भवेत् ॥ ५ ॥ न च कर्मविमामलकालगुणप्रभृतीश-  
मचित्तनु तद्धि यतः । चिदचित्तनुसर्वमसौ तु हरिर्यमयेदिति  
वैदिकमस्ति वचः ॥ ६ ॥ व्यवहारभिदापि गुरोर्जगतां न तु चित्त-  
गता स हि चोद्यपरम् । बहवः पुरुषाः पुरुषप्रवरो हरिरित्यवद-  
स्त्वयमेव हरिः ॥ ७ ॥ चतुराननपूर्वविमुक्तगणा हरिमेत्य तु पूर्व-  
वदेव सदा । नियतोच्चाविनीचतयैव निजां स्थितिमापुरिति स्म परं  
वचनम् ॥ ८ ॥ आनंदतीर्थसंनान्ना पूर्णप्रज्ञाभिधायुजा । कृतं  
हर्यष्टकं भक्त्या पठतः प्रीयते हरिः ॥ ९ ॥ इति श्रीमद्भगवत्पादा-  
चार्यविरचिते द्वादशस्तोत्रे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ निजपूर्णसुखा-  
मितबोधतनुः परशक्तिरनंतगुणः परमः । अजरामरणः सकलार्तिहरः  
कमलापतिरीड्यतमोऽवतु नः ॥ १ ॥ यदसुप्तिगतोऽपि हरिः  
सुखवान् सुखरूपिणमाहुरतो निगमाः । स्वमतिप्रभवं जगदस्य यतः  
परबोधतनुं च ततः स्वपतिम् ॥ २ ॥ बहुचित्रजगद्बहुधाकरणात्पर-  
शक्तिरनंतगुणः परमः । सुखरूपममुष्य पदं परमं स्मरतस्तु भवि-  
ष्यति तत्सततम् ॥ ३ ॥ स्मरणे हि परेशितुरस्य विभोर्मलिनानि  
मनांसि कुतः करणम् । विमलं हि पदं परमं स्वरतं तरुणार्क-  
सवर्णमजस्य हरेः ॥ ४ ॥ विमलैः श्रुतिशाणनिशाततमैः  
सुमनोसिभिराशु निहत्य दृढम् । बलिनं निजवैरिणमात्म-  
तमोभिदमीशमनंतमुपास्व हरिम् ॥ ५ ॥ स हि विश्वसृजो विभु-

शंभुपुरंदरसूर्यमुखानपरानमरान् । सृजतीड्यतमोऽवति हंति निजं  
 पदमापयति प्रणतान्सुधिया ॥ ६ ॥ परमोऽपि रमेशितुरस्य समो  
 न हि कश्चिदभून्न भविष्यति च । क्वचिदद्यतनोऽपि न पूर्णसदा  
 गणितेड्यगुणानुभवैकतनोः ॥ ७ ॥ इति देववरस्य हरेः स्तवनं  
 कृतवान्मुनिरुत्तममादरतः । सुखतीर्थपदाभिहितः पठतस्तदिदं  
 भवति ध्रुवमुच्चसुखम् ॥ ८ ॥ इति श्रीमद्वादशस्तोत्रे चतुर्थोऽध्यायः  
 ॥ ४ ॥ वासुदेवापरिमेयसुधामन् शुद्धसदोदित सुंदरिकांत । धरा-  
 धरधारण वेधुरधर्तः सौधृतिदीधितिबेष्टविधातः ॥ १ ॥ अधिक-  
 बंधं रंधय बोधाच्छिधि पिधानं बंधुरमद्धा । केशव केशवशासक  
 वंदे पाशधरार्चित शूरवरेक्ष ॥ २ ॥ नारायणामलकारण वंदे  
 कारणकारण पूर्ण वरेण्य । माधव माधवसाधक वंदे बोधकबोधक-  
 शुद्धसमाधे ॥ ३ ॥ गोविंद गोविंदपुरंदर वंदे स्कंदसुनंदनवंदित-  
 पाद । विष्णो स्त्रजिष्णो ग्रसिष्णो विवंदे कृष्ण सदुष्णवधिष्णो  
 सुधृष्णो ॥ ४ ॥ मधुसूदन दानवसादन वंदे दैवतमोदित वंदित-  
 पाद । त्रिविक्रम निष्क्रमविक्रम वंदे सुक्रमसंक्रमहुंकृतवक्र ॥ ५ ॥  
 वामन वामनभामन वंदे सामन सीमन शामन सानो । श्रीधर  
 श्रीधर शंधर वंदे भूधरचार्यरकंधरधारिन् ॥ ६ ॥ हृषीकेश सुकेश  
 परेश विवंदे शरणेश कलेश बलेश सुखेश । पद्मनाभ शुभोद्भव  
 वंदे संभृतलोकभराभर भूरे ॥ ७ ॥ दामोदर दूरतरांतर वंदे  
 दारितपारगपार परस्मात् ॥ ८ ॥ आनंदतीर्थमुनींद्रकृता हरिगीति-  
 रियं परमादरतः । परलोकविलोकनसूर्यनिभा हरिभक्तिविवर्धन-  
 शौडतमा ॥ ९ ॥ इति श्रीमद्वादशस्तोत्रे पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥  
 मत्स्यकरूप लयोदविहारिन् वेदविनेतृचतुर्मुखबंध । कूर्मस्वरूपक  
 मंदरधारिन् लोकविधारक देव वरेण्य ॥ १ ॥ सूकररूपक दानव-



शत्रो भूमिविधारक यज्ञवरांग । देव नृसिंह हिरण्यकशत्रो सर्व-  
 भयांतक दैवतबंधो ॥ २ ॥ वामन वामनमाणववेष दैत्यवरांतक  
 कारणरूप । राम भृगूद्वह सूर्जितदीप्ते क्षत्रकुलांतक शंभुवरेण्य  
 ॥ ३ ॥ राघव राघव राक्षसशत्रो मारुतिवल्लभ जानकीकांत ।  
 देवकीनंदन सुंदररूप रुक्मिणीवल्लभ पांडवबंधो ॥ ४ ॥ देवकी-  
 नंदन नंदकुमार वृंदावनांचन गोकुलचंद्र । कंदफलाशन सुंदररूप  
 नंदितगोकुल वंदितपाद ॥ ५ ॥ इंद्रसुतावक नंदकहस्त चंदनचर्चित  
 सुंदरीनाथ । इंद्रिवरोदरदलनयन मंदरधारिन् गोविंद वंदे ॥ ६ ॥  
 चंद्रशतानन कुंदसुहास नंदितदेवतानंद सुपूर्ण । दैत्यविमोहक नित्य-  
 सुखादे देव सुबोधक बुद्धस्वरूप ॥ ७ ॥ दुष्टकुलांतक कल्किस्वरूप  
 धर्मविवर्धन मूलयुगादे । नारायणामलकारणमूर्ते पूर्णगुणार्णव नित्य-  
 विबोध ॥ ८ ॥ सुखतीर्थमुनींद्रकृता हरिगाथा पापहरा शुभनित्य-  
 सुखार्था ॥ ९ ॥ इति श्रीमद्वादशस्तोत्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ विश्व-  
 स्थितिप्रलयसर्गमहाविभूतिवृत्तिप्रकाशनियमावृतिबंधमोक्षाः । यस्या  
 अपांगलवमात्रत ऊर्जिता सा श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं नमामि ॥ १ ॥  
 ब्रह्मेशशक्ररविधर्मशशांकपूर्वगीर्वाणसंततिरियं यदपांगलेशम् ।  
 आश्रित्य विश्वविजयं विसृजत्यर्चित्या श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं  
 नमामि ॥ २ ॥ धर्मार्थकामसुमतिप्रचयाद्यशेषसन्मगलं विदधते  
 यदपांगलेशम् । आश्रित्य तत्पणतसत्पणता अपीड्य श्रीर्यत्कटाक्ष-  
 बलवत्यजितं नमामि ॥ ३ ॥ पङ्कगैनिग्रहनिरस्तसमस्तदोषा ध्यायेति  
 विष्णुमृषयो यदपांगलेशम् । आश्रित्य यानपि समेत्य न याति  
 दुःखं श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं नमामि ॥ ४ ॥ शेषाहिवैरिशिव-  
 शक्रमनुप्रधानचित्रोरुक्रमरचनं यदपांगलेशम् । आश्रित्य विश्व-  
 मखिलं विदधाति धाता श्रीर्यत्कटाक्षबक ॥ ५ ॥ शम्भोऽग्रदीधिति-

हिमाकरसूर्यसुनुः पूर्वं निहत्य निखिलं यदपांगलेशम् । आश्रित्य  
नृत्यति शिवः प्रकटोरुशक्तिः श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं नमामि  
॥ ६ ॥ यत्पादपंकजमहासनतामवाप शर्वादिवंद्यचरणो यदपांग-  
लेशम् । आश्रित्य नागपतिरन्यसुरैर्दुरापां श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं ०  
॥ ७ ॥ नागारिरुग्रबलपौरुष आप विष्णोर्वाहत्वमुत्तमजवो यदपांग-  
लेशम् । आश्रित्य शक्रमुखदेवगणैरर्चित्यं श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्य ०  
॥ ८ ॥ आनंदतीर्थमुनिसन्मुखपंकजोत्थं साक्षाद्रमाहरिमनःप्रिय-  
मुत्तमार्थम् । भक्त्या पठत्यजितमात्मनि सन्निधाय यः स्तोत्रमेत-  
दभियाति तयोरभीष्टम् ॥ ९ ॥ इति श्रीमद्वादशस्तोत्रे सप्तमो-  
ऽध्यायः ॥ ७ ॥ वंदिताशेषबंधोरुवृंदारकं चंदनाचर्चितोदारपीनां-  
सकम् । इंदिराचंचलापांगनीराजितं मंदरोद्धारिवृत्तोद्भुजाभोगिनम् ।  
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामंडलाखंडमंडनम् ॥ १ ॥ सृष्टिसंहारलीला-  
विलासाततं पुष्टपाङ्गुण्यसद्विग्रहोलासिनम् । दुष्टनिःशेषसंहारकर्मोद्यतं  
हृष्टपुष्टानुशिष्टप्रजासंश्रयम् । प्रीणयामो वासुदेवं देवतामंडला-  
खंडमंडनम् ॥ २ ॥ उन्नतप्रार्थिताशेषसंसाधकं सन्नतालौकिकानंदद-  
श्रीप्रदम् । भिन्नकर्माशयप्राणिसंप्रेरकं तन्न किं नेति विद्वत्सु  
मीमांसितम् । प्रीणयामो वासुदेवं देवतामंडलाखंडमंडनम् ॥ ३ ॥  
विप्रमुख्यैः सदा वेदवादोन्मुखैः सुप्रतापैः क्षितीशेश्वरैश्चार्चितम् ।  
अप्रतर्क्यैरुसंविद्गुणं निर्मलं सप्रकाशाजरानंदरूपं परम् । प्रीण-  
यामो ॥ ४ ॥ अत्यथो यस्य केनापि न क्वापि हि प्रत्ययो यद्गुणे-  
षूत्तमानां परः । सत्यसंकल्प एको वरेण्यो वशी मत्यनूनैः सदा  
वेदवाद्बोधितः । प्रीणयामो वासुदेवं देवतामंडलाखंडमंडनम् ॥ ५ ॥  
पश्यतां दुःखसंताननिर्मूलनं दृश्यतां दृश्यतामित्यजेशार्चितम् ।  
नश्यतां दूरगं सर्वदाप्यात्मगं वश्यतां स्वेच्छया सज्जनेष्वागतम् ।

प्रीणयामो० ॥ ६ ॥ अग्रजं यः ससर्जाजमग्र्याकृतिं विग्रहो यस्य सर्वे  
गुणा एव हि । उग्र आद्योऽपि यस्यात्मजाग्र्यात्मजः सदृहीतः सदा  
यः परं दैवतम् । प्रीणयामो० ॥ ७ ॥ अच्युतो यो गुणैर्नित्यमेवाखिलैः  
प्रच्युतोऽशेषदोषैः सदा पूर्णितः । उच्यते सर्ववेदोरुवादैरजः  
स्वर्चितो ब्रह्मरुद्रेन्द्रपूर्वैः सदा । प्रीणयामो० ॥ ८ ॥ धार्यते येन  
विश्वं सदाजादिकं धार्यते शेषदुःखं निजध्यायिनाम् । पार्यते सर्व-  
मन्यैर्न यत्पार्यते कार्यते चाखिलं सर्वभूतैः सदा । प्रीणयामो०  
॥ ९ ॥ सर्वपापानि यत्संस्मृतेः संक्षयं सर्वदा याति भक्त्या  
विशुद्धात्मनाम् । शर्वगुर्वादिगीर्वाणसंस्थानदः कुर्वते कर्म यत्प्राप्तये  
सज्जनाः । प्रीणयामो० ॥ १० ॥ अक्षयं कर्म यस्मिन्परे स्वर्पितं  
प्रक्षयं याति दुःखानि यन्नामतः । अक्षरो योऽजरः सर्वदैवामृतः  
कुक्षिगं यस्य विश्वं सदाजादिकम् । प्रीणयामो० ॥ ११ ॥ नंदि-  
तीर्थोऽसन्नामिनो नंदिनः संदधानाः सदानन्ददेवे मतिम् । मंदहासा-  
रुणापाङ्गदत्तोन्नातिं नंदिताशेषदेवादिबृन्दं सदा । प्रीणयामो० ॥ १२ ॥  
इति श्रीमद्वादशस्तोत्रेऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ अतिमत्ततमोगिरि-  
समिति विभेदनं पितामहभूतिदं गुणगणनिलय । शुभतमकथाशय  
परम सदोदित जगदेककारणं राम रमारमण ॥ १ ॥ विधिभवमुख-  
सुरसततसुवन्दितं रमामनोवल्लभं भव मम शरणम् । शुभतम०  
॥ २ ॥ अगणितगुणगणमयशरीरं हे विगतगुणेतरे भव मम शर-  
णम् । शुभतम० ॥ ३ ॥ अपरिमितसुखनिधिविमलसुदेहं हे  
विगतसुखेतरं भव मम शरणम् । शुभतम० ॥ ४ ॥ प्रचलितलय-  
जलविहरणं शाश्वतसुखमयमीनं हे भव मम शरणम् । शुभतम०  
॥ ५ ॥ सुरदितिजं सुबलं विलुलितं मंदरधरपरं कूर्मं हे भव मम  
शरणम् । शुभतम० ॥ ६ ॥ सगिरिवरधरातलवहं सुसूकरं परमं विबोध

हे भव मम शरणम् । शुभतम० ॥ ७ ॥ अतिबलदितिसुतहृदयवि-  
 भेदन जय नृहरेऽमल भव मम शरणम् । शुभतम० ॥ ८ ॥ बलिमुख-  
 दितिसुतविजयविनाशन जगदवनाजित भव मम शरणम् । शुभतम०  
 ॥ ९ ॥ अविजितकुनृपतिसमितिविखंडन रमावर वीरप भव मम शर-  
 णम् । शुभतम० ॥ १० ॥ खरतरनिशिचरदहन परामृत रघुवर मानद  
 भव मम शरणम् । शुभतम० ॥ ११ ॥ सुललिततनुवर वरद  
 महाबल यदुवर पार्थप भव मम शरणम् । शुभतम० ॥ १२ ॥  
 दितिसुतमोहन विमलविबोधन परगुणबुद्ध हे भव मम शरणम् ।  
 शुभतम० ॥ १३ ॥ कलिमलहुतवह सुभग महोत्सव शरणद  
 कल्कीश हे भव मम शरणम् । शुभतम० ॥ १४ ॥ अखिलजनि-  
 विलय परसुखकारण परपुरुषोत्तम भव मम शरणम् । शुभतम०  
 ॥ १५ ॥ इति तव नुतिवर सततरतेर्भव सुशरणमुखसुखतीर्थमुने-  
 र्भगवन् ॥ १६ ॥ इति श्रीमद्वादशस्तोत्रे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥  
 अव नः श्रीपतिरप्रतिरधिकेशादिभवादे । करुणापूर्ण वरप्रद चरितं  
 ज्ञापय मे ते ॥ १ ॥ सुरवंद्याधिप सद्भरभरिताशेषगुणाऽलम् ।  
 करुणा० ॥ २ ॥ सकलध्वांतविनाशक परमानंदसुधा हे । करुणा०  
 ॥ ३ ॥ त्रिजगत्पोत सदांचितचरणाशापतिधातो । करुणा० ॥ ४ ॥  
 त्रिगुणातीतविधारक परितो देहि सुभक्तिम् । करुणा० ॥ ५ ॥  
 शरणं कारणभावन भव मे तात सदाऽलम् । करुणा० ॥ ६ ॥  
 मरणप्राणद पालक जगदीशाऽव सुभक्तिम् । करुणा० ॥ ७ ॥  
 तरुणादित्यसवर्णकचरणाङ्गामलकीर्ते । करुणा० ॥ ८ ॥ सलिल-  
 प्रोत्थसरागकमणिवर्णोच्चनखादे । करुणा० ॥ ९ ॥ कजत्पूनीनिभ  
 पावन वरजंघामितशक्ते । करुणा० ॥ १० ॥ इमहस्तप्रभ शोभन  
 परमोरःस्थलमाले । करुणा० ॥ ११ ॥ असनोत्फुल्लसुपुष्पकसमवर्णा

वरणांते । करुणा० ॥ १२ ॥ शतमोदोज्ज्वलसुन्दरवरपद्मोत्थितनाभे ।  
 करुणा० ॥ १३ ॥ जगदंबामलसुन्दर गृहवक्षोवरयोगिन् । करुणा०  
 ॥ १४ ॥ जगदाग्रहकपलवसमकुक्षे शरणादे । करुणा० ॥ १५ ॥  
 दितिजांतप्रद चक्रदरगदायुग्वरबाहो । करुणा० ॥ १६ ॥ परमज्ञान-  
 महानिधिवदन श्रीरमणेंदो । करुणा० ॥ १७ ॥ निखिलाघौघ-  
 विनाशक परसौख्यप्रददृष्टे । करुणा० ॥ १८ ॥ परमानंदसुतीर्थ-  
 मुनिराजो हरिगाथात्म् । कृतवाञ्छित्यसुपूर्णैकपरमानंदपदैषी ॥ १९ ॥  
 इति श्रीमद्द्वादशस्तोत्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ उर्दीर्णमजरं  
 दिव्यममृतस्यंघधीशितुः । आनंदस्य पदं वंदे ब्रह्मैन्द्राद्यभिवंदितम्  
 ॥ १ ॥ सर्वदेवपदोद्गीतमिंदिरावासमुत्तमम् । आनंद० ॥ २ ॥  
 सर्वदेवादिदेवस्य विदारितमहत्तमः । आनंद० ॥ ३ ॥ उदारमादरा-  
 क्षित्यमनिघं सुंदरीपतेः । आनंद० ॥ ४ ॥ इंदीवरोदरनिभं सुपूर्णं  
 वाविमोहदम् । आनंद० ॥ ५ ॥ दातृसर्वामरैश्वर्यविमुक्त्यादे-  
 रहोवरम् । आनंद० ॥ ६ ॥ दूरादूरतरं यन्तु तदेवांतिकमंतिकात् ।  
 आनंद० ॥ ७ ॥ पूर्णसर्वगुणैकार्णमनाद्यंतं सुरेशितुः । आनंद०  
 ॥ ८ ॥ आनंदतीर्थमुनिना हरेरानंदरूपिणः ॥ कृतं स्तोत्रमिदं पुण्यं  
 पठन्नानंदतामियात् ॥ ९ ॥ इति श्रीमद्द्वादशस्तोत्रे एकादशोऽध्यायः  
 ॥ ११ ॥ आनंदमुकुंद अरविंदनयन । आनंदतीर्थपरानंदवरद  
 ॥ १ ॥ सुंदरिमंदिरगोविंद वंदे । आ० ॥ २ ॥ चंद्रसुरेंद्रसुवंदित  
 वंदे । आ० ॥ ३ ॥ चंद्रकमंदिरनंदक वंदे । आ० ॥ ४ ॥  
 वृंदारकवृंदसुवंदित वंदे । आ० ॥ ५ ॥ मंदारसूनसुचर्चित वंदे ।  
 आ० ॥ ६ ॥ इंदिरानन्दक सुन्दर वंदे । आनंद० ॥ ७ ॥  
 मंदिरस्यंदनस्यंदक वंदे । आनंद० ॥ ८ ॥ आनंदचंद्रिकास्यंदक  
 वंदे । आनंद० ॥ ९ ॥ इति श्रीमद्द्वादशस्तोत्रे द्वादश० ॥ १२ ॥  
 इति श्रीमद्भगवत्पादाचार्यविरचितं श्रीमद्द्वादशस्तोत्रं समाप्तम् ॥

## ५९. संकष्टनाशनलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमत्पयोनिषिनिकेतन चक्रपाणे भोगीन्द्रभोग-  
मणिरंजितपुण्यमूर्ते । योगीश शाश्वत शरण्य भवाब्धिपोत लक्ष्मी-  
नृसिंह मम देहि करावलंबम् ॥ १ ॥ ब्रह्मोद्गरुद्रमरुदककिरीटकोटि-  
संघट्टितांग्रिकमलामलकांतिकांत । लक्ष्मीलसत्कुचसरोरुहराजहंस  
लक्ष्मीनृसिंह० ॥ २ ॥ संसारघोरगहने चरतो मुरारे मारोग्रभीकर-  
भृगप्रचुरार्दितस्य । आर्तस्य मत्सरनिदाघनिपीडितस्य लक्ष्मीनृसिंह०  
॥ ३ ॥ संसारकूपमतिघोरमगाधमूलं संग्राप्य दुःखशतसर्पसमा-  
कुलस्य । दीनस्य देव कृपणापदमागतस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ४ ॥  
संसारसागरविशालकरालकालनक्रग्रहग्रसननिग्रहविग्रहस्य । व्यग्रस्य  
रागरसनोर्मिनिपीडितस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ५ ॥ संसारवृक्षमघबीज-  
मनंतकर्मशाखाशतं करणपत्रमनंतपुष्पम् । आरुह्य दुःखफलितं  
पततो दयालो लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ६ ॥ संसारसर्पघनवक्रभयोग्रतीव्र-  
दंष्ट्राकरालविषदग्धविनष्टमूर्तेः । नागारिवाहन सुधाब्धिनिवास  
शौरे लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ७ ॥ संसारदावदहनानुरभीकरोरुज्वाला-  
वलीभिरतिदग्धतनूरुहस्य । त्वत्पादपद्मसरसीशरणागतस्य लक्ष्मी-  
नृसिंह० ॥ ८ ॥ संसारजालपतितस्य जगन्निवास सर्वेन्द्रियार्थबद्धि-  
शार्थज्ञषोपमस्य । प्रोत्खंडितप्रचुरतासुकमस्तकस्य लक्ष्मीनृसिंह०  
॥ ९ ॥ संसारभीकरकरींद्रकराभिघातनिष्पिष्टमर्मवपुषः सकलार्ति-  
नाश । प्राणप्रयाणभवभीतिसमाकुलस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ १० ॥  
अंधस्य मे हृतविवेकमहाघनस्य चौरैः प्रभो बलिभिरिन्द्रियनामधेयैः ।  
मोहांधकूपकुहरे विनिपातितस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ११ ॥ लक्ष्मीपते  
कमलनाभ सुरेश विष्णो वैकुण्ठ कृष्ण मधुसूदन पुष्कराक्ष ।  
ब्रह्मण्य केशव जनार्दन वासुदेव देवेश देहि कृपणस्य करावलंबम् ॥

यन्माययोजितवपुःप्रचुरप्रवाहमग्नं शरण्य वितरोह करावलंबम् ।  
लक्ष्मीनृसिंहचरणान्तमधुव्रतेन स्तोत्रं कृतं सुखकरं भुवि शङ्करेण  
॥ १२ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यकृतं संकष्टनाशनलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रं  
संपूर्णम् ॥

### ६०. गोविन्दाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सत्यं ज्ञानमनन्तं नित्यमनाकाशं परमाकाशं  
गोष्ठप्राङ्गणरिङ्गणलोलमनायासं परमायासम् ॥ मायाकल्पितनाना-  
कारमनाकारं भुवनाकारं क्षमामानाथमनाथं प्रणमत गोविन्दं परमा-  
नन्दम् ॥ १ ॥ मृत्क्षामत्सीहेति यशोदाताडनशैशवसंत्रासं  
व्यदितवक्त्रालोकितलोकालोकचतुर्दशलोकालम् ॥ लोकत्रयपुरमूल-  
स्तंभ लोकालोकमनालोकं लोकेशं परमेशं प्रणमत गोविन्दं परमा-  
नन्दम् ॥ २ ॥ त्रैविष्टपरिपुर रघ्नं क्षितिभारघ्नं भवरोगघ्नं कैवल्यं  
नवनीताहारमनाहारं भुवनाहारम् । वैमल्यस्फुटचेतोवृत्तिविशेषा-  
भासमनाभासं शैवं केवलशान्तं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ३ ॥  
गोपालं भूलीलाविग्रहगोपालं कुलगोपालं गोपीखेलनगोवर्धनधृति-  
लीलालालितगोपालम् । गोभिर्निगतदितगोविन्दस्फुटनामानं बहु-  
नामानं गोपीगोचरदूरं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ४ ॥ गोपी-  
मण्डलगोष्ठीभेदं भेदावस्थमभेदाभं शश्वद्रोक्षुरनिर्धूतोत्कृतधूली-  
धूसरसौभाग्यम् । श्रद्धाभक्तिगृहीतानन्दमचिन्त्यं चिन्तितसद्भावं  
चिन्तामणिमहिमानं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ५ ॥ ज्ञान-  
व्याकुलयोषिद्वज्रमुपादायागमुपारूढं व्यादिस्सन्तीरथ दिग्बन्धाद्युप-  
दातुमुपाकर्षन्तम् । निर्धूतद्वयशोकविमोहं बुद्धं बुद्धेरप्यन्तःस्थं सत्ता-  
मात्रशरीरं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ६ ॥ कान्तं कारण-  
कारणमादिमनादिं कालमनाभासं कालिन्दीगतकालियशिरसि मुहु-

नृत्यन्तं सुनृत्यन्तम् । कालं कालकलातीतं कलिताशेषं कलिदोषघ्नं  
 कालत्रयगतिहेतुं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ७ ॥ वृन्दावन-  
 भुवि वृन्दास्कगणवृन्दाराधितमन्देहं कुन्दाभामलमन्दस्मेरसुधानन्दं  
 सुहृदानन्दम् । वन्द्याशेषमहामुनिमानसवन्द्यं नन्दपदद्वन्द्वं वन्द्या-  
 शेषगुणाढ्यं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ८ ॥ गोविन्दाष्टक-  
 मेतदधीते गोविन्दार्पितचेता यो गोविन्दाच्युत माधव विष्णो गोकुल-  
 नायक कृष्णेति । गोविन्दांग्रिसरोजध्यानसुधाजलधौतसमस्ताघो  
 गोविन्दं परमानन्दामृतमन्तःस्थं स समभ्येति ॥ ९ ॥ इति श्रीम-  
 त्परमहंसश्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं गोविन्दाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ६१. लक्ष्मीनरसिंहपंचरत्नस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ त्वत्प्रभुजीव प्रियमिच्छसि चैन्नरहरिपूजां कुरु  
 सततं प्रतिबिम्बालंकृतिधृतिकुशलो बिम्बालंकृतिमातनुते । चेतो-  
 भृङ्ग भ्रमसि वृथा भवमरुभूमौ विरसायां भज भज लक्ष्मीनर-  
 सिंहानघपदसरसिजमकरंदम् ॥ १ ॥ शुक्तौ रजतप्रतिभा जातकट-  
 काद्यर्थसमर्था चेदुःखमयी ते संसृतिरेषा निर्वृतिदाने निपुणा स्यात् ।  
 चेतोभृङ्ग भ्रमसि वृथा भवमरुभूमौ विरसायां भज भज लक्ष्मी-  
 नरसिंहानघपदसरसिजमकरंदम् ॥ २ ॥ आकृतिसाम्याच्छालमलि-  
 कुसुमे स्थलनलिनत्वभ्रममकरोः । गन्धरसाविह किमु विद्येते विफलं  
 आम्यसि भृशविरसेऽस्मिन् । चेतोभृङ्ग भ्रमसि वृथा भवमरुभूमौ विर-  
 सायां भज भज लक्ष्मीनरसिंहानघपदसरसिजमकरंदम् ॥ ३ ॥  
 स्वक्वन्दनवनितादीन् विषयान् सुखदान् मत्वा तत्र विहरसे ।  
 गन्धफलीसदृशा ननु तेऽमी भोगानन्तरदुःखकृतः स्युः । चेतोभृङ्ग  
 भ्रमसि वृथा भवमरुभूमौ विरसायां भज भज लक्ष्मीनरसिंहानघ-



पदसरसिजमकरंदम् ॥ ४ ॥ तव हितमेकं वचनं वक्ष्ये शृणु सुख-  
कामो यदि सततं स्वप्ने दृष्टं सकलं हि मृषा जाग्रति च स्मर तद्वदिति ।  
चेतोभृङ्ग भ्रमसि वृथा भवमरुभूमौ विरसायां भज भज लक्ष्मी-  
नरसिंहानघपदसरसिजमकरंदम् ॥ ५ ॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्य-  
प्रणीतं लक्ष्मीनरसिंहपंचरत्नस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ६२. ध्रुवकृता भगवत्स्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ध्रुव उवाच ॥ योऽन्तः प्रविश्य मम वाचमिमां  
प्रसुप्तां संजीवयत्यखिलशक्तिधरः स्वधाम्ना । अन्यांश्च हस्तचरण-  
श्रवणत्वगादीन् प्राणान्नमो भगवते पुरुषाय तुभ्यम् ॥ १ ॥ एक-  
स्त्वमेव भगवन्निदमात्मशक्त्या मायाख्ययोरुगुणया महदाद्यशेषम् ।  
सृष्ट्वाऽनुविश्य पुरुषस्तदसद्गुणेषु नानेव दारुषु विभावसुवद्विभासि  
॥ २ ॥ त्वद्वत्तया वयुनयेदमचष्ट विश्वं सुप्तप्रबुद्ध इव नाथ भव-  
त्प्रपन्नः । तस्यापवर्ग्यशरणं तव पादमूलं विसर्प्यते कृतविदां कथ-  
मार्तबंधो ॥ ३ ॥ नूनं विमुष्टमतयस्तव मायया ते ये त्वां भवा-  
प्ययविमोक्षणमन्यहेतोः । अर्चन्ति कल्पकतर्हं कुणपोपभोग्यमिच्छन्ति  
यत्स्पर्शजं निरयेऽपि नृणाम् ॥ ४ ॥ या निर्वृतिस्तनुभृतां तव पाद-  
पद्मध्यानाद्भवार्जनकथाश्रवणेन वा स्यात् । सा ब्रह्मणि स्वमहि-  
मन्यपि नाथ मा भूत् किंत्वंतकासिलुलितात् पततां विमानात्  
॥ ५ ॥ भक्तिं मुहुः प्रवहतां त्वयि मे प्रसङ्गो भूयादनंत महता-  
ममलाशयानाम् । येनांजसोल्बणमुख्यसर्गं भवार्ब्धिं नेष्ये भव-  
द्रुणकथामृतपानमत्तः ॥ ६ ॥ ते न स्मरंत्यतितरां प्रियमीशमर्त्य ये  
चान्वदः सुतसुहृद्ब्रह्मवित्तदाराः । ये त्वन्नानाभ भवदीयपदारविंद-

सौगंध्यलब्धहृदयेषु कृतप्रसङ्गाः ॥ ७ ॥ तिर्यङ्गमद्विजसरीसृपदेव-  
 दैत्यमर्त्यादिभिः परिचितं सदसद्विशेषम् । रूपं स्थविष्ठमज ते मह-  
 दाद्यनेकं नातः परं परम वेधि न यत्र वादः ॥ ८ ॥ कल्पांत एत-  
 दखिलं जठरेण गृह्णन् शेते पुमान् स्वदगनंतसखस्तदङ्के । यन्नाभि-  
 सिंधुरुहकाञ्चनलोकपद्मगर्भे द्युमान् भगवते प्रणतोऽस्मि तस्मै ॥ ९ ॥  
 त्वं नित्यमुक्तपरिशुद्धविशुद्ध आत्मा कूटस्थ आदिपुरुषो भगवाँ-  
 ऋयधीशः । यद्बुद्धवस्थितिमखंडितया स्वदृष्ट्या द्रष्टा स्थितावधि-  
 मखो व्यतिरिक्त आस्ते ॥ १० ॥ यस्मिन् विरुद्धगतयो ह्यनिशं  
 पतंति विद्यादयो विविधशक्तय आनुपूर्व्यात् । तद्ब्रह्म विश्वभवमेक-  
 मनंतमाद्यमानंदमात्रमविकारमहं प्रपद्ये ॥ ११ ॥ सत्याशिषो हि  
 भगवँस्तव पादपद्ममाशीस्तथाऽनुभजतः पुरुषार्थमूर्तेः । अप्येवमार्य  
 भगवान् परिपाति दीनान् वाश्रेव वत्सकमनुग्रहकातरोऽस्मान् ॥ १२ ॥  
 मैत्रेय उवाच ॥ अथाभिष्टुत एवं वै सत्सङ्कल्पेन धीमता । भृत्या-  
 नुरक्तो भगवान् प्रतिनन्देदमब्रवीत् ॥ १३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥  
 वेदाहं ते व्यवसितं हृदि राजन्यबालक । तत्प्रयच्छामि भद्रं ते  
 दुरापमपि सुव्रत ॥ १४ ॥ नान्यैरधिष्ठितं भद्र यद्वाजिष्णु ध्रुव-  
 क्षिति । यत्र ग्रहर्क्षताराणां ज्योतिषां चक्रमाहितम् ॥ १५ ॥ मेढ्यां  
 गोचक्रवत्स्थान्नु परस्तात्कल्पवासिनाम् । धर्मोऽग्निः कश्यपः शुक्रो  
 मुनयो ये वनौकसः । चरंति दक्षिणीकृत्य भ्रमंतो यत्सतारकाः  
 ॥ १६ ॥ इष्ट्वा मां यज्ञहृदयं यज्ञैः पुष्कलदक्षिणैः । भुक्त्वा चेद्वा-  
 शिषः सत्या अंते मां संसरिष्यसि ॥ १७ ॥ ततो गंतासि मत्स्थानं  
 सर्वलोकनमस्कृतम् । उपरिष्ठादधिभ्यस्त्वं यतो नावर्तते गतः ॥ १८ ॥  
 इति ध्रुवकृता भगवत्स्तुतिः संपूर्णा ॥

### ६३. शिवकृतं भगवत्स्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शिव उवाच ॥ जितं त आत्मविदुर्य स्वस्तये  
स्वस्तिरस्तु मे । भवता राक्षसा राक्षे सर्वस्मा आत्मने नमः ॥ १ ॥  
नमः पंकजनाभाय भूतसूक्ष्मेन्द्रियात्मने । वासुदेवाय शांताय कूट-  
स्थाय स्वरोचिषे ॥ २ ॥ संकर्षणाय सूक्ष्माय दुरन्तायांतकाय च ।  
नमो विश्वप्रबोधाय प्रद्युम्नायांतरात्मने ॥ ३ ॥ नमो नमोऽनिरुद्धाय  
हृषीकेशेन्द्रियात्मने । नमः परमहंसाय पूर्णाय निमृतात्मने ॥ ४ ॥  
स्वर्गापवर्गद्वाराय नित्यं शुचिपदे नमः । नमो हिरण्यवीर्याय चातु-  
र्होत्राय तंतवे ॥ ५ ॥ नम ऊर्जहृषेत्रय्याःपतये यज्ञरेतसे ।  
तृप्तिदाय च जीवानां नमः सर्वरसात्मने ॥ ६ ॥ सर्वसत्त्वात्मदेहाय  
विशेषाय स्थवीयसे । नमस्त्रैलोक्यपालाय सहस्रोजोबलाय च ॥ ७ ॥  
अर्थलिंगाय नमसे नमोऽन्तर्बहिरात्मने । नमः पुण्याय लोकाय  
अमुष्मै भूरिवर्चसे ॥ ८ ॥ प्रवृत्ताय निवृत्ताय पितृदेवाय कर्मणे ।  
नमो धर्मेविपाकाय मृत्यवे दुःखदाय च ॥ ९ ॥ नमस्त आशिषा-  
मीश मनवे कारणात्मने । नमो धर्माय बृहते कृष्णायाकुण्ठमेधसे ।  
पुरुषाय पुराणाय सांख्ययोगेश्वराय च ॥ १० ॥ शक्तित्रयसमेताय  
मीढुषेऽहंकृतात्मने । चेतआकृतिरूपाय मनोवाचोविभूतये ॥ ११ ॥  
दर्शनं नो दिदृक्षूणां देहि भागवतार्चितम् । रूपं प्रियतमं स्वानां  
सर्वेन्द्रियगुणांजनम् ॥ १२ ॥ स्निग्धप्रावृद्धनःश्यामं सर्वसौंदर्य-  
संग्रहम् । चार्वायतचतुर्बाहुं सुजातरुचिराननम् ॥ १३ ॥ पद्मकाश-  
पलाशाक्षं सुंदरञ्च सुनासिकम् । सुद्विजं सुकपोलास्यं समकर्ण-  
विभूषणम् ॥ १४ ॥ प्रीतिप्रहसितापांगमलकैरुपशोभितम् । लस-  
त्पंकजकिंजल्कदुकूलं मृष्टकुण्डलम् ॥ १५ ॥ स्फुरत्किरीटवलयहार-  
नूपुरमेखलम् । शंखचक्रगदापद्ममालामण्युत्तमर्धिमत् ॥ १६ ॥ सिंह-

स्कंधविषो विभ्रत्सौभाग्यग्रीवकौस्तुभम् । श्रियानपायिन्याक्षिप्त-  
 निकषाश्मोरसोल्लसत् ॥ १७ ॥ पूरेचकसंविभ्रवलिवल्गुदलोदरम् ।  
 प्रतिसंक्रामयद्विश्वं नाभ्यावर्तगभीरया ॥ १८ ॥ श्यामश्रोण्याधि-  
 रोचिष्णु दुकूलस्वर्णमेखलम् । समचारंघ्रिजंघोरुनिभ्रजानुसुदर्शनम्  
 ॥ १९ ॥ पदा शरत्पद्मपलाशरोचिषा नखद्युभिर्नोऽन्तरघं विधुन्वता ।  
 प्रदर्शय स्त्रीयमपास्तसाध्वसं पदं गुरो मार्गगुरुस्तमोजुषाम् ॥ २० ॥  
 पुतद्रूपमनुध्येयमात्मशुद्धिमभीप्सताम् । यद्भक्तियोगोऽभयदः  
 स्वधर्ममनुतिष्ठताम् ॥ २१ ॥ भवान् भक्तिमता लभ्यो दुर्लभः सर्व-  
 देहिनाम् । स्वाराज्यस्याप्यभिमत एकांतेनात्मविद्वतिः ॥ २२ ॥ तं  
 दुराराध्यमारार्थं सतामपि दुरापया । एकांतभक्त्या को वांछेत् पाद-  
 मूलं विना बहिः ॥ २३ ॥ यत्र निर्विघ्नमरणं कृतांतो नाभिमन्यते ।  
 विश्वं विध्वंसयन् वीर्यशौर्यविस्फूर्जितभ्रुवा ॥ २४ ॥ क्षणार्धेनापि तुल्ये  
 न स्वर्गं नापुनर्भवम् । भगवत्संगिसंगस्य मर्यानां किमुताशिषः  
 ॥ २५ ॥ अथानघांघ्रेस्तव कीर्तितीर्थयोरंतर्बहिःस्नानविधूतपाप्म-  
 नाम् । भूतेष्वनुक्रोशसुसत्त्वशालिनां स्यात्संगमोऽनुग्रह एष नस्तव  
 ॥ २६ ॥ न यस्य चित्तं बहिरर्थविभ्रमं तमोगुहायां च विशुद्धमा-  
 विशत् । यद्भक्तियोगानुगृहीतमंजसा मुनिर्विचष्टे ननु तत्र ते गतिम्  
 ॥ २७ ॥ यत्रेदं व्यज्यते विश्वं विश्वस्मिन्नवभाति यत् । तत्त्वं ब्रह्म  
 परं ज्योतिराकाशमिव विस्तृतम् ॥ २८ ॥ यो माययेदं पुरुरूपया-  
 ऽसृजद्विभर्ति भूयः क्षपयत्यविक्रियः । यद्भेदबुद्धिः स दिवात्म-  
 दुःस्थया तमात्मतंत्रं भगवन् प्रतीमहि ॥ २९ ॥ क्रियाकलापैरिदमेव  
 योगिनः श्रद्धान्विताः साधु जयंति सिद्धये । भूतैर्द्रियांतःकरणो-  
 पलक्षितं वेदे च तंत्रे च त एव कोविदाः ॥ ३० ॥ त्वमेक आद्यः  
 पुरुषः सुप्तशक्तिस्तथा रजःसत्त्वतमो विभिद्यते । महानहं खं मरु-

दग्निवार्धराः सुरर्षयो भूतगणा इदं यतः ॥ ३१ ॥ सृष्टं स्वशक्त्ये-  
 दमनुप्रविष्टश्चतुर्विधं पुरमात्मांशकेन । अथो विदुस्तं पुरुषं संतमंत-  
 भुंके हृषीकैर्मधु सारधं यः ॥ ३२ ॥ स एष लोकानतिचंडवेगो  
 विकर्षसि त्वं खलु कालयानः । भूतानि भूतैरनुमेयतत्त्वो घनावली-  
 र्वायुरिवाविषह्य ॥ ३३ ॥ प्रमत्तमुच्चैरितिकृत्यर्चितया प्रवृद्धलोभं  
 विषयेषु लालसम् । त्वमप्रमत्तः सहसाभिपद्यसे क्षुल्लेलिहानोऽहि-  
 रिवास्तुमंतकः ॥ ३४ ॥ कस्त्वत्पदाब्जं विजहाति पंडितो यस्तेऽध्वमान-  
 व्ययमानकंतनः । विशंकयास्मद्गुरुरर्चति स्म यद्विनोपपत्तिं मनव-  
 श्चतुर्दश ॥ ३५ ॥ अथ त्वमसि नो ब्रह्मन् परमात्मन् विपश्चिताम् ।  
 विश्वं रुद्रभयध्वस्तमकुतश्चिद्रया गतिः ॥ ३६ ॥ इदं जपत भद्रं  
 वो विशुद्धा नृपनंदनाः । स्वधर्ममनुतिष्ठंतो भगवत्परिपाशयाः  
 ॥ ३७ ॥ तमेवात्मानमात्मस्थं सर्वभूतेष्ववस्थितम् । पूजयध्वं  
 गृणंतश्च ध्यायंतश्चासकृद्धरिम् ॥ ३८ ॥ इदमाह पुरास्माकं भग-  
 वान् विश्वसृक्पतिः । शृग्व्यादीनामात्मजानां सिसृक्षुः संसिद्धताम्  
 ॥ ३९ ॥ ते वयं नोदिताः सर्वे प्रजासर्गे प्रजेश्वराः । अनेन ध्वस्त-  
 तमसः सिसृक्ष्मो विविधाः प्रजाः ॥ ४० ॥ य इमं श्रद्धया युक्तो  
 मद्गीतं भगवत्स्त्वम् । अघीयानो दुराराध्यं हरिमाराधयत्यसौ  
 ॥ ४१ ॥ विंदते पुरुषोऽमुष्माद्यद्यदिच्छत्यसत्वरम् । मद्गीतगीतास्तु-  
 प्रीताच्छ्रेयसामेकवल्लभात् ॥ ४२ ॥ इदं यः कल्प्य उत्थाय प्राञ्जलिः  
 श्रद्धयान्वितः । शृणुयाच्छ्रावयेन्मर्त्यो मुच्यते कर्मबंधनैः ॥ ४३ ॥  
 इति शिवकृतं भगवत्स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

६४. अमीतिस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अमीतिरिह यज्जुषां यदवधीरितानां भयं भया-  
 भयविधायिनो जगति यन्निदेशे स्थिताः । तदेतदतिलङ्घितदुहिण-

शंभुशक्रादिकं रमासखमधीमहे किमपि रंगधुर्यं महः ॥ १ ॥  
 दयाशिशिरिताशया मनसि मे सदा जागृयुः श्रियाध्युषितवक्षसः  
 श्रितमरुदृधा सैकताः । जगदुरितघस्सरा जलधिडिम्भडम्भस्पृहः  
 सकृत्प्रणतरक्षणप्रथितसंविदः संविदः ॥ २ ॥ यदद्य मितबुद्धिना  
 बहुलमोहभाजा मया गुणप्रथितकायवाङ्मनसि वृत्तिवैचित्र्यतः ।  
 क्षतर्कितहिताहितक्रमविशेषमारभ्यते तदप्युचितमर्चनं परिगृहाण  
 रंगेश्वर ॥ ३ ॥ मरुत्तरणिपावकन्निदशनाथकालादयः स्वकृत्यमधि-  
 कुर्वते त्वदपराधतो बिभ्यतः । महत्किमपि वज्रमुद्यतमिवेति यच्छ-  
 यते तरत्यनत्र यद्भयं य इह तावकस्तावकः ॥ ४ ॥ भवंतमिह  
 यः सुधीर्नियतचेतनाचेतनं पनायति नमस्यति स्मरति वक्ति पर्येति  
 वा । गुणं कमपि वेत्ति वा तव गुणेश गोपायितुः कदाचन कुतश्चन  
 कचन तस्य न स्याद्भयम् ॥ ५ ॥ स्थिते मनसि विग्रहे गुणिनि  
 धातुसाम्ये सति स्मरेदखिलदेहिनं य इह जातुचित्त्वामजम् । तयैव  
 खलु संधया तमथ दीर्घनिद्रावशं स्वयं विहितसंस्मृतिर्नयसि धाम  
 नैःश्रेयसम् ॥ ६ ॥ रमादयित रंगभूरमण कृष्ण विष्णो हरे त्रिवि-  
 क्रम जनार्दन त्रियुगनाथ नारायण । इतीव शुभदानि यः पठति  
 नामधेयानि ते न तस्य यमवश्यता नरकपातभीतिः कुतः ॥ ७ ॥  
 कदाचिदपि रंगभूरसिक यत्र देशे वशी त्वदेकनियताशयस्त्रिदश-  
 वंदितो वर्तते । तदक्षततपोवनं तव च राजधानी स्थिरा सुखस्य  
 सुखमास्पदं सुचरितस्य दुर्गं महत् ॥ ८ ॥ त्रिवर्गपथवर्तिनां  
 त्रिगुणलंघनोद्योगिनां द्विषत्यमथनार्थिनामपि च रंगदृश्योदयाः ।  
 स्वलत्समयकातरीहरणजागरूकाः प्रभो करग्रहणदीक्षिताः क इह  
 तेन दिव्या गुणाः ॥ ९ ॥ बिभेति भवभृत्यभो त्वदुपदेशतीव्रौषधा-  
 त्कदध्वरस्सदुर्विषे बडिशभक्ष्यवत्प्रीयते । अपथ्यपरिहारधीविमुख-

मित्यमाकस्मिकी तमप्यवसरे क्रमादवति वत्सला त्वद्वया ॥ १० ॥  
 अपार्थ इति निश्चितः प्रहरणादियोगस्तव स्वयं वदसि निर्भयस्तदपि  
 रंगं पृथ्वीपते । स्वरक्षणमिवाभवत्प्रणतरक्षणे तावकं यदात्थ  
 परमार्थविन्नियतमंतरात्मेति ते ॥ ११ ॥ लघिष्ठसुखसंगतैः स्वकृत-  
 कर्मनिर्वर्तितैः कलत्रसुतसोदरानुचरबन्धुसंबन्धिभिः । धनप्रभृति-  
 कैरपि प्रचुरभीतिभेदोत्तरैर्न बिभ्रति धृतिं विभो त्वदनुभूतिभोगा-  
 र्थिनः ॥ १२ ॥ न वक्तुमपि शक्यते नरकगर्भवासादिकं वपुश्च  
 बहुधातुकं निपुणचिन्तने तादृशम् । त्रिविष्टपमुखं तथा तव पदस्य  
 देदीप्यतः किमत्र न भयास्पदं भवति रंगं पृथ्वीपते ॥ १३ ॥  
 भवन्ति मुखभेदतो भयनिदानमेव प्रभो शुभाशुभविकल्पिता  
 जगति देशकालादयः । इति प्रचुरसाध्वसे मयि दयिष्यसे त्वं न  
 चेत्क इत्थमनुकम्पिता त्वदनुकम्पनीयश्च कः ॥ १४ ॥ सकृत्पद-  
 नस्पृशामभयदाननित्यव्रती न च द्विरभिभाषसे त्वमिति विश्रुतः  
 स्वोक्तितः । यथोक्तकरणं विदुस्तव तु यातुधानादयः कथं वितथ-  
 मस्तु तत्कृपणसार्वभौमे मयि ॥ १५ ॥ अनुक्षणसमुत्थिते दुरित-  
 वारिधौ दुस्तरे यदि कचन निष्कृतिर्भवति सापि दोषाविला ।  
 तदित्यभगतौ मयि प्रतिविधानमाधीयतां स्वबुद्धिपरिकल्पितं किमपि  
 रंगधुर्यं त्वया ॥ १६ ॥ विषादबहुलादहं विषयवर्गतो दुर्जयाद्वि-  
 भेमि वृजिनोत्तरस्त्वदनुभूतिविच्छेदतः । मया नियतनाथवानयमिति  
 त्वमर्थापयन् दयाघनं जगत्पते दयितं रंगं संरक्ष माम् ॥ १७ ॥  
 निसर्गनिरनिष्टता तव निरम्भसः श्रूयते तत्तत्त्रियुगसृष्टिवद्भवति  
 संहतिः क्रीडितम् । तथापि शरणागतप्रणयभङ्गभीतो भवान्  
 मदिष्टमिह यद्भवेत्किमपि मा स तज्जहापः ॥ १८ ॥ कथाधुसुत-  
 वायसद्विरदपुङ्गवद्रौपदीविभीषणसुजङ्गमत्रजगणाम्बरीषादयः । भव-

त्वदसमाश्रिता भयविमुक्तिमापुर्यथा लभेमहि तथा वयं सपदि  
 रंगधुर्यं त्वया ॥ १९ ॥ भयं शमय रंगधाक्यनितराभिलाषस्पृशां  
 श्रियं बहुलय प्रभो श्रितविपक्षमुन्मूलय । स्वयं समुदितं वपुस्तव  
 निशामयतः सदा वयं त्रिदशनिर्वृतिं भुवि मुकुन्दं विन्देमहि ॥ २० ॥  
 श्रियः परिवृढे त्वयि श्रितजनस्य संरक्षके सदद्भुतगुणोदधाविति सम-  
 र्पितोऽयं भरः । प्रतिक्षणमतः परं प्रथय रंगधामादिषु प्रभुत्वमनुपाधिकं  
 प्रथितहेतिभिर्हेतिभिः ॥ २१ ॥ कलिप्रणिधिलक्षणैः कलितशाक्य-  
 लोकायतैस्तुरुष्कयवनादिभिर्जगति जृम्भमाणं भयम् । प्रकृष्टनिज-  
 शक्तिभिः प्रसभमायुधैः पञ्चभिः क्षितित्रिदशरक्षकैः क्षपय रंगनाथ  
 क्षणात् ॥ २२ ॥ दितिप्रभवदेहमिदहनस्त्रेमसूर्यात्मकं तमःप्रमथनं  
 प्रभो समुदितास्त्रवृन्दं स्वतः । स्ववृत्तिवशवर्तिं तन्निदशवृत्तिं चक्रं  
 पुनः प्रवर्तयतु धाम्नि ते महति धर्मचक्रस्थितिम् ॥ २३ ॥ मनुप्रभृति-  
 मानिते महति रंगधामादिके दनुप्रभवदारुणैर्दनुर्दीर्यमाणं परैः ।  
 प्रकृष्टगुणकः श्रिया वसुधया च संधुक्षितः प्रयुक्तकरुणोदधे प्रश-  
 मय स्वशक्त्या स्वयम् ॥ २४ ॥ भुजङ्गमविहङ्गमप्रवरसैन्यनाथाः  
 प्रभो तथैव कुमुदादयो नगरगोपुरद्वारपाः । अचिन्त्यबलविक्रमा-  
 स्त्वमिव रंग संरक्षका जितं त इति वादिनो जगदनुग्रहे जाग्रतु  
 ॥ २५ ॥ विधिस्त्रिपुरमर्दनस्त्रिदशपुंगवः पावको यमप्रभृतयोऽपि  
 यद्विमतरक्षणे न क्षमाः । रिरक्षिषति यत्र च प्रतिभयं न किञ्चित्क-  
 चित्स नः प्रतिभटान्प्रभो शमय रंगधामादिषु ॥ २६ ॥ स कैटभ-  
 तमोरविर्मधुपरागास्त्रामरुद्धिरण्यगिरिदारणनुदितकालनेमिद्रुमः ।  
 किमत्र बहुना भजन्नवपयोधिमुष्टिन्धयस्त्रिविक्रम भवत्क्रमः क्षिपतु  
 मंक्षु रंगद्विषः ॥ २७ ॥ यतिप्रवरभारतीरसभरेण नीतं वयः  
 प्रफुल्लपलितं शिरः पदमिह क्षमं प्रार्थये । निरस्तरिपुसंभवे क्वचन



रंगमुख्ये विभो परस्परहितैविणां परिसरेषु मां वर्तय ॥ २८ ॥  
प्रबुद्धगुरुवीक्षणप्रथितवैकटेशोज्ज्वामिमामभयसिद्धये पठत रंगभर्तुः  
स्तुतिम् । भयं त्यजत भद्रमित्यभिदधत्स वः केशवः स्वयं  
घनघृणानिधिर्गुणगणेन गोपायति ॥ २९ ॥ इति श्रीमद्वैकटनाथ-  
प्रणीतोऽभीतिस्तवः संपूर्णः ॥

### ६५. मुरारिपञ्चरत्नम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यत्सेवनेन पितृमातृसहोदराणां चित्तं न मोह-  
महिमा मलिनं करोति । इत्थं समीक्ष्य तव भक्तजनान् मुरारे  
मूकोऽस्मि तेंऽद्रिकमलं तदतीव धन्यम् ॥ १ ॥ ये ये विलभ्यमनसः  
सुखमासुकामास्ते ते भवन्ति जगदुद्भवमोहशून्याः । इष्ट्वा विनष्टधन-  
धान्यगृहान् मुरारे मूको० ॥ २ ॥ वस्त्राणि दिवलयमावसतिः श्मशाने  
पात्रं कपालमपि मुंडविभूषणानि । रुद्रे प्रसादमचलं तव वीक्ष्य  
शौरे मूको० ॥ ३ ॥ यत्कीर्तिर्गायनपरस्य विधातृसूनोः कौपीनमैण-  
मजिनं विपुलां विभूतिम् । स्वस्यार्थदिग्भ्रमणमीक्ष्य तु सार्वकालं  
मूको० ॥ ४ ॥ यद्वीक्षणे धृतधियामशनं फलादि वासोऽपि निर्जनवने  
गिरिकंदरासु । वासांसि वल्कलमयानि विलोक्य चैवं मूको० ॥ ५ ॥  
स्तोत्रं पादांबुजस्यैतच्छ्रीशस्य विजितेंद्रियः । पठित्वा तत्पदं याति  
श्लोकार्थज्ञस्तु यो नरः ॥ ६ ॥ इति मुरारिपञ्चरत्नं संपूर्णम् ॥

### ६६. श्रीहरिप्रातःस्मरणम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ग्राह्यग्रस्ते गर्जेद्रे रुवति सरभसं ताक्ष्यमारुह्य  
धावन् व्याघूर्णन्माल्यभूषावसनपरिकरो मेघगंभीरघोषः । आविभ्राणो  
रथांगं शरमसिमभयं शंस्रचापौ सख्येयौ हस्तैः कौमोदकीमप्यवतु  
हरिरसावहसां संहर्तेनः ॥ १ ॥ नक्राक्रान्ते करिद्रि मुकुलितनयने

मूलमूलेऽतिस्त्रिंशे नाहं नाहं न चाहं न च भवति पुनस्तादृशो माह-  
 शेषु । इत्येवं त्यक्तहस्ते सपदि सुरगणे भावश्चान्ये समस्ते मूलं  
 यत्प्रादुरासीत्स दिशतु भगवान् मंगलं संततं नः ॥ २ ॥ प्रातः स्मरामि  
 भवभीतिमहार्तिशांल्यै नारायणं गरुडवाहनमब्जनाभम् । ग्राहामि-  
 भूतमदवारणमुक्तिहेतुं चक्रायुधं तरुणवारिजपत्रनेत्रम् ॥ ३ ॥  
 प्रातर्नमामि मनसा वचसा च मूर्ध्ना पादारविंदयुगलं परमस्य पुंसः ।  
 नारायणस्य नरकार्णवतारणस्य पारायणप्रवणविप्रपरायणस्य ॥ ४ ॥  
 प्रातर्भजामि भजतामभयंकरं तं प्राक्सर्वजन्मकृतपापभयापनुत्त्यै ।  
 यो ग्राहवक्त्रपतितांघ्रिगजेंद्रघोरशोकप्रणाशनकरो घृतशंखचक्रः ॥ ५ ॥  
 श्लोकत्रयमिदं पुण्यं प्रातरूथाय यः पठेत् । लोकत्रयगुरुस्तस्मै  
 दद्यादात्मपदं हरिः ॥ इति श्रीहरिप्रातःस्मरणं संपूर्णम् ॥

### ६७. जगन्नाथाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः । कदाचित्कालिंदीतटविपिनसंगीतकवरो मुदा  
 गोपीनारीवदनकमलास्वादमधुपः । रमाशंभुब्रह्मामरपतिगणेशा-  
 च्छितपदो जगन्नाथस्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ १ ॥  
 भुजे सन्ध्ये वेणुं शिरसि शिखिपिच्छं कटितटे दुकूलं नेत्रांते सहचर-  
 कटाक्षं विदधते । सदा श्रीमद्वृंदावनवसतिलीलापरिचयो जगन्नाथ-  
 स्वामी० ॥ २ ॥ महान्भोधेस्तीरे कनकरुचिरे नीलशिखरे वसन् प्रासा-  
 दांतःसहजबलभद्रेण बलिना । सुभद्रामध्यस्थः सकलसुरसेवाव-  
 सरदो जगन्नाथस्वामी० ॥ ३ ॥ कृपापारावारः सजलजलद-  
 श्रेणिरुचिरो रमावाणीलोमस्फुरदमलपद्मोद्भवमुखैः । सुरेंद्रैराराध्यः  
 श्रुतिगणशिखागीतचरितो जगन्नाथस्वामी० ॥ ४ ॥ रथारूढो गच्छन्  
 पथि मिलितभूदेवपटलैः स्तुतिप्रादुर्भावं प्रतिपदमुपाकर्ण्य सदयः ।  
 दयासिंधुर्बभूवुः सकलजगतां सिंधुसुतया जगन्नाथस्वामी० ॥ ५ ॥

परब्रह्मापीडः कुवलयदलोत्फुल्लनयनो निवासी नीलाद्रौ निहित-  
चरणोऽनंतशिरसि । रसानंदो राधासरसवपुरालिङ्गनसुखो जग-  
न्नाथस्वामी० ॥ ६ ॥ न वै प्रार्थ्यं राज्यं न च कनकतां भोग-  
विभवं न याचेऽहं रम्यां निखिलजनकाम्यां वरवधूम् । सदा काले  
काले प्रमथपतिना गीतचरितो जगन्नाथस्वामी० ॥ ७ ॥ हर त्वं  
संसारं द्रुततरमसारं सुरपते हर त्वं पापानां विततिमपरां यादव-  
पते । अहो दीनानाथं निहितमचलं पातुमचलं जगन्नाथस्वामी  
नयनपथगामी भवतु मे ॥ ८ ॥ इति श्रीशङ्कराचार्यप्रणीतं  
जगन्नाथाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ६८. रमापतिस्मरणम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मुकुन्दमिदीवरपत्रनेत्रं नंदात्मजं योगिमनो-  
निकेतम् । वृन्दारकाभिष्टुतपादपद्मं पार्थस्य मित्रं मनसा स्मरामि  
॥ १ ॥ ब्रह्मेन्द्रगंगाधरवंदिताय मुकुन्ददेवाय परात्पराय । नमः  
समस्तासुरनाशकाय पक्षीशयानाय रमेश्वराय ॥ २ ॥ आश्लिष्ट-  
राधाकुचकुञ्जालाय गोपालकृष्णाय नमोऽस्तु तस्मै । गोवर्धने यो  
गिरिमुच्चशृंगं लोकोपकाराय किलोद्धार ॥ ३ ॥ कृपानिधे दीन-  
शरण्य ! शौरे दैत्याटवीदाव रमेश देव । त्वत्पादपङ्केरुहयुग्मसेवां  
नक्तदिवं प्राप्तुमहं समीहे ॥ ४ ॥ तदा मम स्यादभिलाषसिद्धि-  
स्तदैव जायेत ममातिमोदः । यदा यतीन्द्रिद्धितसच्चरित्रो मयि प्रसन्नो  
भगवान् मुरारिः ॥ ५ ॥ कुशाग्रसूक्ष्मापि मतिर्गतीनां ज्ञातुं न शक्नोति  
तव स्वरूपम् । अहं कथं वा मुसलाग्रबुद्धिर्ज्ञातुं क्षमः स्यां खलु तं  
भवंतम् ॥ ६ ॥ नाहं नदीष्णो निखिलागमेषु न च प्रवीणः कविता-  
कलायाम् । तस्मादशेषान् गदितुं गुणांस्तो शौरे न शक्नो बत  
मंदभायः ॥ ७ ॥ इति रमापतिस्मरणं संपूर्णम् ॥

## ६९. जगन्नाथपञ्चकम् ।

श्रीगणेशाय नमः । रक्तांभोरुहदर्पभं जनमहासौंदर्यनेत्रद्वयं  
मुक्ताहारविलम्बिहेममुकुटं रत्नोष्णवलकुण्डलम् । वर्षामेघसमाननी-  
लवपुषं प्रैवेयहारान्वितं पार्श्वे चक्रधरं प्रसन्नवदनं नीलाद्रिनाथं  
भजे ॥ १ ॥ फुल्लेदीवरलोचनं नवघनश्यामाभिरामाकृतिं  
विश्वेशं कमलाविलासविलसत्पादारविन्दद्वयम् । दैत्यारिं सकलैन्दु-  
मण्डितमुखं चक्राब्जतम्बद्वयं वन्दे श्रीपुरुषोत्तमं प्रतिदिनं  
लक्ष्मीनिवासालयम् ॥ २ ॥ उद्यद्भीरदनीलसुन्दरतनुं पूर्णेन्दुबि-  
म्बाननं राजीवोत्पलपत्रनेत्रयुगलं कारुण्यवारांनिधिम् । भक्तानां  
सकलार्तिनाशनकरं चिन्तार्थिचिन्तामणिं वन्दे श्रीपुरुषोत्तमं प्रतिदिनं  
नीलाद्रिचूडामणिम् ॥ ३ ॥ नीलाद्रौ शङ्खमध्ये शतदलकमले  
रत्नसिंहासनस्थं सर्वालंकारयुक्तं नवघनरुचिरं संयुतं चाग्रजेन ।  
भद्राया वामभागे रथचरणयुतं ब्रह्मरुद्रेन्द्रवंधं वेदानां सारमीशं  
सुजनपरिवृतं ब्रह्मदारुं स्मरामि ॥ ४ ॥ दोभ्यां शोभितलाङ्गलं  
समुसलं कार्द्वरीचञ्चलं रत्नाढ्यं वरकुण्डलं भुजबलैराक्रान्तभूमण्ड-  
लम् । वज्राभामलचारुगण्डयुगलं नागेन्द्रचूडोज्ज्वलं संग्रामे चपलं  
शशाङ्कधवलं श्रीकामपालं भजे ॥ ५ ॥ इति जगन्नाथपञ्चकं संपूर्णम् ॥

## ७०. भक्तेच्छापूर्तिकरं हरिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ एकं वेगवती मध्ये हस्तिशैले च दृश्यते ।  
उपायफलभावेन स्वयं व्यक्तं परं महः ॥ १ ॥ ईष्टे गमयितुं पारमेष्ठ  
सेतुरभंगुरः । यत्र सारस्वतं स्रोतो विश्राम्यति विशृङ्खलम् ॥ २ ॥  
जयति जगदेकसेतुर्वेगवती मध्यलक्षितो देवः । प्रशमयति यः प्र-  
जानां प्रथितः संसारजलधिकलोलान् ॥ ३ ॥ विभातु मे चेतसि

विष्णुसेतुर्वेगापगावेगविघातहेतुः । अमोजयोनेर्यदुपशमासीदभंग-  
रक्षाद्वयमेधदीक्षा ॥ ४ ॥ चतुराननसप्ततंतुगोशा समये तत्परि-  
पंथिनो निरुंधन् । परिपुण्यति मंगलानि पुंसां भगवान् भक्तिमतां  
यथोक्तकारी ॥ ५ ॥ श्रीमान् पितामहवधूपरिचर्यमाणः शेते भुजंग-  
शयने समहामुजंगः । प्रस्थादिशंति भवसंचरणं प्रजानां भक्तानुगंतु-  
रिह तस्य गतागतानि ॥ ६ ॥ प्रशमितहयमेधव्यापदं पद्मयोनेः श्रित-  
जनपरतंत्रं शेषभोगे शयानम् । शरणमुपगताः स्म शांतनिःशेषदोष-  
शतमखमणिसेतुं शाश्वतं वेगवत्याः ॥ ७ ॥ शरणमुपगतानां सोऽय-  
मादेशकारी शमयति परितापं संमुखः सर्वजंतोः । शतगुणपरिणामः  
सन्निधौ यस्य नित्यं वरवितरणभूमा वारणाद्रीश्वरस्य ॥ ८ ॥ कांची-  
भाग्यं कमलनिलया चेतसोऽभीष्टसिद्धिः कल्याणानां निधिरविकलः  
कोऽपि कारुण्यराशिः । पुण्यानां नः परिणतिरसौ भूषयन् भोगि-  
शय्यां वेगासेतुर्जयति विपुलो विश्वरक्षकहेतुः ॥ ९ ॥ वेगासेतोरिदं  
स्तोत्रं वैकुण्ठेन निर्मितम् । ये पठन्ति जनास्तेषां यथोक्तं कुरुते हरिः  
॥ १० ॥ इति भक्तेच्छापूर्तिकरं हरिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



## शिवस्तोत्राणि ।



वेदान्तेषु यमाहुरेकपुरुषं व्याप्य स्थितं रोदसी  
यस्मिन्नीश्वर इत्यनन्यविषयः शब्दो यथार्थाक्षरः ।  
अंतर्यश्च मुमुक्षुभिर्नियमितप्राणादिभिर्मृग्यते  
स स्थाणुः स्थिरभक्तियोगसुगमो निःश्रेयसायास्तु वः ॥

## शिवस्तोत्राणि ।

### ७१. शिवकवचस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीशिवकवचस्तोत्रमंत्रस्य ब्रह्मा  
ऋषिः, अनुष्टुप् छंदः, श्रीसदाशिवरुद्रो देवता, ह्रीं शक्तिः, रं  
कीलकम्, श्रीं ह्रीं क्लीं बीजम्, श्रीसदाशिवप्रीत्यर्थं शिवकवच-  
स्तोत्रजपे विनियोगः । अथ न्यासः । ॐ नमो भगवते ज्वलज्वाला-  
मालिने ॐ ह्रां सर्वशक्तिधात्रे ईशानात्मने अंगुष्ठाभ्यां नमः ।  
ॐ नमो भगवते ज्वलज्वालामालिने ॐ नं रिं नित्यवृत्तिधात्रे  
तत्पुरुषात्मने तर्जनीभ्यां नमः । ॐ नमो भगवते ज्वलज्वालामालिने  
ॐ मं रं अनादिशक्तिधात्रे अधोरात्मने मध्यमाभ्यां नमः । ॐ नमो  
भगवते ज्वलज्वालामालिने ॐ शिं रै स्वतंत्रशक्तिधात्रे वामदेवात्मने  
अनामिकाभ्यां नमः । ॐ नमो भगवते ज्वलज्वालामालिने ॐ वां  
रौ अलुप्तशक्तिधात्रे सद्योजातात्मने कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ नमो  
भगवते ज्वलज्वालामालिने ॐ थं रः अनादिशक्तिधात्रे सर्वात्मने  
करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । एवं हृदयादि । अथ ध्यानम् ॥ वज्रदंष्ट्रं  
त्रिनयनं कालकंठमरिंदमम् । सहस्रकरमत्युग्रं वंदे शंभुसुमापतिम्  
॥ १ ॥ अथापरं सर्वपुराणगुह्यं निःशेषपापौघहरं पवित्रम् । जयप्रदं  
सर्वविपद्प्रमोचनं वक्ष्यामि शैवं कवचं हिताय ते ॥ २ ॥ ऋषभ  
उवाच ॥ नमस्कृत्वा महादेवं विश्वव्यापिनमीश्वरम् । वक्ष्ये शिवमयं  
वर्म सर्वरक्षाकरं नृणाम् ॥ ३ ॥ शुचौ देशे समासीनो यथावत्क-  
ल्पितासनः । जितेंद्रियो जितप्राणश्चितयेच्छिवमव्ययम् ॥ ४ ॥  
हृत्पुंडरीकांतरसन्निविष्टं स्वतेजसा व्यासनभोवकाशम् । अतींद्रियं  
सूक्ष्ममनंतमाद्यं ध्यायेत्परानंदमयं महेशम् ॥ ५ ॥ ध्यानावधूता-

खिलकर्मबंधश्चिरं चिदानंदनिमग्नचेताः । षडक्षरन्याससमाहितात्मा  
 शैवेन कुर्यात्कवचेन रक्षाम् ॥ ६ ॥ मां पातु देवोऽखिलदेवतात्मा  
 संसारकूपे पतितं गभीरे । तन्नाम दिव्यं वरमंत्रमूलं धुनोतु मे  
 सर्वमघं हृदिस्थम् ॥ ७ ॥ सर्वत्र मां रक्षतु विश्वमूर्तिर्ज्योतिर्मयानंद-  
 घनश्चिदात्मा । अणोरणीयानुरुशक्तिरेकः स ईश्वरः पातु भयाद-  
 शेषात् ॥ ८ ॥ यो भूस्वरूपेण विभर्ति विश्वं पायात्स भूमेर्गिरि-  
 शोऽष्टमूर्तिः । योऽपि स्वरूपेण नृणां करोति संजीवनं सोऽवतु मां  
 जलेभ्यः ॥ ९ ॥ कल्पावसाने भुवनानि दग्ध्वा सर्वाणि यो नृत्यति  
 भूरिलीलः । स कालरुद्रोऽवतु मां दवाग्नेर्वात्यादिभीतेरखिलाच्च  
 तापात् ॥ १० ॥ प्रदीप्तविद्युत्कनकावभासो विद्यावराभीतिकुठार-  
 पाणिः । चतुर्मुखस्तत्पुरुषस्त्रिनेत्रः प्राच्यां स्थितं रक्षतु मामजबम्  
 ॥ ११ ॥ कुठारवेदांकुशपाशशूलकपालदक्काक्षगुणानन्दधानः । चतु-  
 र्मुखो नीलरुचिस्त्रिनेत्रः पायादघोरो दिशि दक्षिणस्याम् ॥ १२ ॥  
 कुंदंदुशंखस्फटिकावभासो वेदाक्षमालावरदाभयांकः । त्र्यक्षश्चतुर्वक्त्र  
 उरुप्रभावः सद्योऽधिजातोऽवतु मां प्रतीच्याम् ॥ १३ ॥ वराक्षमा-  
 लाऽभयटंकहस्तः सरोजकिंजल्कसमानवर्णः । त्रिलोचनश्चावचतुर्मुखो  
 मां पायादुदीच्यां दिशि वामदेवः ॥ १४ ॥ वेदाभयेष्टांकुशपाशटंक-  
 कपालदक्काक्षकशूलपाणिः । सितद्युतिः पंचमुखोऽवतान्मामीशान  
 ऊर्ध्वं परमप्रकाशः ॥ १५ ॥ मूर्धानमव्यान्मम चंद्रमौलिर्भालं  
 ममाव्यादध भालनेत्रः । नेत्रे ममाव्याद्भगनेत्रहारी नासां सदा  
 रक्षतु विश्वनाथः ॥ १६ ॥ पायाच्छ्रुती मे श्रुतिगीतकीर्तिः कपोल-  
 मव्यात्सततं कपाली । वक्त्रं सदा रक्षतु पंचवक्त्रो जिह्वां सदा  
 रक्षतु वेदजिह्वः ॥ १७ ॥ कंठं गिरीशोऽवतु नीलकंठः पाणिद्वयं  
 पातु पिताकपाणिः । दोर्मूलमव्यान्मम धर्मबाहुर्वक्षःस्थलं दक्षमखां-



तकोऽध्यात् ॥ १८ ॥ ममोदरं पातु गिरीन्द्रधन्वा मध्यं ममाध्या-  
 न्मदनांतकारी । हेरंबतातो मम पातु नाभिं पायात्कटिं धूर्जटिरीश्वरो  
 मे ॥ १९ ॥ ऊरुद्वयं पातु कुबेरमित्रो जानुद्वयं मे जगदीश्व-  
 रोऽध्यात् । जंघायुगं पुंगवकेतुरध्यात् पादौ ममाध्यात्सुरबंधपादः  
 ॥ २० ॥ महेश्वरः पातु दिनादियामे मां मध्ययामेऽवतु वामदेवः ।  
 त्रिलोचनः पातु तृतीययामे वृषध्वजः पातु दिनांत्ययामे ॥ २१ ॥  
 पायाब्जिशदौ शशिशेखरो मां गंगाधरो रक्षतु मां निशीथे ।  
 गौरीपतिः पातु निशावसाने मृत्युंजयो रक्षतु सर्वकालम् ॥ २२ ॥  
 अंतःस्थितं रक्षतु शंकरो मां स्थाणुः सदा पातु बहिःस्थितं माम् ।  
 तदंतरे पातु पतिः पशूनां सदाशिवो रक्षतु मां समंतात् ॥ २३ ॥  
 तिष्ठंतमध्याद्भुवनैकनाथः पायाद्भुजंतं प्रमथाधिनाथः । वेदांत-  
 वेद्योऽवतु मां निषण्णं मामव्ययः पातु शिवः शयानम् ॥ २४ ॥  
 मार्गेषु मां रक्षतु नीलकंठः शैलादिदुर्गेषु पुरत्रयारिः । अरण्यवासा-  
 दिमहाप्रवासे पायान्मृगव्याध उदारशक्तिः ॥ २५ ॥ कल्पांतकाटो-  
 पपटुप्रकोपस्फुटाट्टहासोच्चलिताण्डकोशः । घोरारिसेनार्णवदुर्निवार-  
 महाभयाद्रक्षतु वीरभद्रः ॥ २६ ॥ पत्त्यश्वमातंगघटावरूथसहस्रल-  
 क्षायुतकोटिभीषणम् । अक्षौहिणीनां शतमाततायिनां छिद्यान्मृदो  
 घोरकुठारधारया ॥ २७ ॥ निहंतु दस्युन्मलयानलार्चिर्ज्वलन्निशूलं  
 त्रिपुरांतकस्य । शार्दूलसिंहर्क्षेष्टकादिहिंजान् संत्रासयत्वीशधनुः  
 पिनाकः ॥ २८ ॥ दुःस्वप्नदुःशकुनदुर्गतिदौर्मनस्वदुर्भिक्षदुर्घ्यसनदुः-  
 सहदुर्घशांसि । उत्पाततापविषभीतिमसद्ब्रह्मार्तिव्याधींश्च नाशयतु मे  
 जगतामधीशः ॥ २९ ॥ ॐ नमो भगवते सदाशिवाय सकलतत्त्वात्मकाय  
 सर्वमंत्रस्वरूपाय सर्वयंत्राधिष्ठिताय सर्वतंत्रस्वरूपाय सर्वतत्त्वविदू-  
 राय ब्रह्मरुद्रावतारिणे नीलकंठाय पार्वतीमनोहरणप्रियाय सोमसूर्या-

मिलोचनाय भस्मोद्धूलितविप्रहाय महामणिसुकुटधारणाय माणिक्य-  
 भूषणाय सृष्टिस्थितिप्रलयकालरौद्रावताराय दक्षाध्वरध्वंसकाय  
 महाकालभेदनाय मूलाधारैकनिलयाय तत्त्वातीताय गंगाधराय  
 सर्वदेवाधिदेवाय षडाश्रयाय वेदांतसाराय त्रिवर्गसाधनायानंत-  
 कोटिब्रह्मांडनायकायानंतवासुकितक्षककर्कोटकशंखकुलिकपद्ममहा-  
 पद्मेत्यष्टमहानागकुलभूषणाय प्रणवस्वरूपाय चिदाकाशायाकाश-  
 दिवस्वरूपाय ग्रहनक्षत्रमालिने सकलाय कलंकरहिताय सकल-  
 लोकैककर्त्रे सकललोकैकभर्त्रे सकललोकैकसंहर्त्रे सकललोकैकगुरवे  
 सकललोकैकसाक्षिणे सकलनिगमगुह्याय सकलवेदांतपारगाय सकल-  
 लोकैकवरप्रदाय सकललोकैकशंकराय शशांकशेखराय शाश्वत-  
 निजावासाय निराभासाय निरामयाय निर्मलाय निर्लोभाय निर्मदाय  
 निश्चिंताय निरहंकाराय निरंकुशाय निष्कलंकाय निर्गुणाय निष्कामाय  
 निरुपप्लवाय निरवद्याय निरंतराय निष्कारणाय निरातंकाय निष्प्रपंचाय  
 निःसंगाया निर्द्वंद्वाय निराधाराय नीरागाय निष्क्रोधाया निर्मलाय  
 निष्पापाय निर्भयाय निर्विकल्पाय निर्भेदाय निष्क्रियाय निस्तुलाय  
 निःसंशयाय निरंजनाय निरुपमविभवाय नित्यशुद्धबुद्धपरिपूर्ण-  
 सच्चिदानंदाद्वयाय परमशांतस्वरूपाय तेजोरूपाय तेजोमयाय जय  
 जय रुद्र महारौद्र भद्रावतार महाभैरव कालभैरव कल्पांतभैरव  
 कपालमालाधर खट्वांगखड्गचर्मपाशांकुशडमरुशूलचापबाणगदा-  
 शक्तिभिर्दिपालतोमरमुसलमुद्गरपाशपरिघभुशुंडीशतप्रीचक्राद्यायुध-  
 भीषणकर सहस्रमुख दंष्ट्राकरालवदन विकटाट्टहासविस्फारित-  
 ब्रह्मांडमंडल नागेंद्रकुंडल नागेंद्रहार नागेंद्रवलय नागेंद्रचर्मधर  
 मृत्युंजय त्र्यंबक त्रिपुरांतक विश्वरूप विरूपाक्ष विश्वेश्वर वृषभ-  
 वाहन विषविभूषण विश्वतोमुख सर्वतो रक्ष रक्ष मां ज्वल ज्वल

महामृत्युमपमृत्युभयं नाशय नाशय चोरभयमुत्सादयोत्सादय  
विषसर्पभयं शमय शमय चोरान्मारय मारय मम शत्रूनुच्चा-  
टयोच्चाटय त्रिशूलेन विदारय विदारय कुठारेण भिधि भिधि  
खड्गेन छिधि छिधि खट्वांगेन विपोथय विपोथय मुसलेन  
निष्पेषय निष्पेषय बाणैः संताडय संताडय रक्षांसि भीषय  
भीषयाशेषभूतानि विद्रावय विद्रावय कूष्मांडवेतालमारीचब्रह्म-  
राक्षसगणान् संत्रासय संत्रासय मामभयं कुरु कुरु विव्रस्तं  
मामाश्वासयाश्वासय नरकमहाभयान्मामुद्धरोद्धर संजीवय संजीवय  
क्षुत्तृब्ध्यां मामाप्याययाप्यायय दुःखातुरं मामानंदयानंदय  
शिवकवचेन मामाच्छादयाच्छादय मृत्युंजय त्र्यंबक सदाशिव  
नमस्ते नमस्ते । ऋषभ उवाच ॥ इत्येतत्कवचं शैवं  
वरदं व्याहृतं मया । सर्वबाधाप्रशमनं रहस्यं सर्वदेहिनाम्  
॥ ३० ॥ यः सदा धारयेन्मर्त्यः शैवं कवचमुत्तमम् । न तस्य  
जायते कापि भयं शंभोरनुग्रहात् ॥ ३१ ॥ क्षीणायुः प्राप्तमृत्युर्वा  
महारोगहतोऽपि वा । सद्यः सुखमवाप्नोति दीर्घमायुश्च विंदति  
॥ ३२ ॥ सर्वदारिद्र्यशमनं सौमंगल्यविवर्धनम् । यो धत्ते कवचं  
शैवं स देवैरपि पूज्यते ॥ ३३ ॥ महापातकसंघातैर्मुच्यते चोप-  
पातकैः । देहांते मुक्तिमाप्नोति शिववर्मानुभावतः ॥ ३४ ॥ त्वमपि  
श्रद्धया वत्स शैवं कवचमुत्तमम् । धारयस्व मया दत्तं सद्यः श्रेयो  
ह्यवाप्स्यसि ॥ ३५ ॥ सूत उवाच ॥ इत्युक्त्वा ऋषभो योगी  
तस्मै पार्थिवसूनवे । ददौ शंखं महारावं खड्गं चारिनिपूदनम्  
॥ ३६ ॥ पुनश्च भस्म संमंत्र्य तदंगं परितोऽस्पृशत् । गजानां  
षट्सहस्रस्य द्विगुणस्य बलं ददौ ॥ ३७ ॥ भस्मप्रभावात्संप्राप्तबलै-  
श्वर्यवृत्तिस्मृतिः । स राजपुत्रः शुशुभे शरदर्क इव श्रिया ॥ ३८ ॥

तमाह प्रांजलिं भूयः स योगी नृपनंदनम् । एष खड्गो मया  
 दत्तस्तपोमंत्रानुभावितः ॥ ३९ ॥ शितधारमिमं खड्गं यस्यै दर्शयसे  
 स्फुटम् । स सद्यो त्रियते शत्रुः साक्षान्मृत्युरपि स्वयम् ॥ ४० ॥  
 अस्य शंखस्य निर्हादं ये शृण्वन्ति तवाहिताः । ते मूर्च्छिताः पति-  
 व्यन्ति न्यस्तशस्त्रा विचेतनाः ॥ ४१ ॥ खड्गशङ्खाविमौ दिव्यौ  
 परसैन्यविनाशिनौ । आत्मसैन्यस्य पक्षाणां शौर्यैतेजोविवर्धनौ  
 ॥ ४२ ॥ एतयोश्च प्रभावेण शैवेन कवचेन च । द्विषद्सहस्र-  
 नागानां बलेन महतापि च ॥ ४३ ॥ भस्मधारणसामर्थ्याच्छत्रुसैन्यं  
 विजेष्यसि । प्राप्य सिंहासनं पित्र्यं गोसासि पृथिवीमिमाम् ॥ ४४ ॥  
 इति भद्रायुषं सम्यगनुशास्य समावृकम् । ताभ्यां संपूजितः सोऽथ  
 योगी स्वैरगतिर्ययौ ॥ ४५ ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे  
 शिवकवचस्तोत्रं समाप्तम् ॥

### ७२. शिवमानसपूजा ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ रत्नैः कल्पितमासनं हिमजलैः स्नानं च  
 दिव्यांबरं नानारत्नविभूषितं मृगमदामोदांकितं चंदनम् । जाती-  
 चंपकबिल्वपत्ररचितं पुष्पं च धूपं तथा दीपं देव दयानिधे पशुपते  
 हृत्कल्पितं गृह्यताम् ॥ १ ॥ सौवर्णे नवरत्नखंडरचिते पात्रे घृतं  
 पायसं भक्ष्यं पंचविधं पयोदधियुतं रंभाफलं पानकम् । शाकानाम-  
 युतं जलं रुचिकरं कर्पूरखंडोज्ज्वलं तांबूलं मनसा मया विरचितं  
 भक्त्या प्रभो स्वीकुरु ॥ २ ॥ छत्रं चामरयोर्युगं व्यजनकं  
 चादर्शकं निर्मलं वीणाभेरिमृदंगकाहलकलागीतं च नृत्यं तथा ।  
 साष्टांगं प्रणतिः स्तुतिर्बहुविधा ह्येतत्समस्तं मया संकल्पेन  
 समर्पितं तव विभो पूजां गृहाण प्रभो ॥ ३ ॥ आत्मा त्वं गिरिजा

मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं पूजा ते विषयोपभोगरचना  
निद्रा समाधिस्थितिः । संचारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि  
सर्वा गिरो यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शंभो तवाराधनम् ॥ ४ ॥  
करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽप-  
राधम् । विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व जय जय करुणाब्धे  
श्रीमहादेव शंभो ॥ ५ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचिता शिव-  
मानसपूजा समाप्ता ॥

### ७३. शिवापराधक्षमापनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ आदौ कर्मप्रसंगात् कलयति कलुषं मातृकुक्षौ  
स्थितं मां विष्णुमूत्रामेध्यमध्ये कथयति नितरां जाठरो जातवेदाः ।  
यद्यद्वै तत्र दुःखं व्यथयति नितरां शक्यते केन वक्तुं क्षंतव्यो  
मेऽपराधः शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेव शंभो ॥ १ ॥  
बाल्ये दुःखातिरेकान्मललुलितवपुः स्तन्यपाने पिपासा नो शक्त-  
श्चेन्द्रियेभ्यो भवगुणजनिता जंतवो मां तुदन्ति । नानारोगा-  
दिदुःखाद्भुदनपरवशः शंकरं न स्मरामि क्षंतव्यो मेऽपराधः शिव  
शिव० ॥ २ ॥ प्रौढोऽहं यौवनस्थो विषयविषधरैः पंचभिर्मर्मसंधौ  
दष्टो नष्टोऽविवेकः सुतधनयुवतिस्वादसौख्ये निषण्णः । शैवीर्चिता-  
विहीनं मम हृदयमहो मानगर्वाधिखंडं क्षंतव्यो मेऽपराधः शिव  
शिव० ॥ ३ ॥ वार्धक्ये चेन्द्रियाणां विगतगतिमतिश्चाभिदैवादितापैः  
पापै रोगैर्वियोगैस्त्वनवसितवपुः प्रौढिहीनं च दीनम् । मिथ्यामोहा-  
भिलाषैर्भ्रमति मम मनो भूर्जटेर्ध्यानशून्यं क्षंतव्यो मेऽपराधः शिव  
शिव० ॥ ४ ॥ नो शक्यं स्मार्तकर्म प्रतिपदगहनप्रत्यवायाकुलार्थ्य  
श्रौते वार्ता कथं मे द्विजकुलविहिते ब्रह्ममार्गेऽसुरारे । ज्ञातो धर्मो  
विचारैः श्रवणमननयोः किं निदिध्यासितव्यं क्षंतव्यो मेऽपराधः

शिव शिव० ॥ ५ ॥ स्नात्वा प्रत्यूषकाले स्नपनविधिविधौ नाहृतं  
 गांगतोयं पूजार्थं वा कदाचिद्बहुतरगहनात्खंडबिल्वीदलानि ।  
 नानीता पद्ममाला सरसि विकसिता गंधपुष्पैस्त्वदर्थं क्षंतव्यो मेऽप-  
 राधः शिव शिव० ॥ ६ ॥ दुग्धैर्मध्वाज्ययुक्तैर्दधिसितसहितैः स्नापितं  
 नैव लिंगं नो लिप्तं चंदनाद्यैः कनकविरचितैः पूजितं न प्रसूनैः ।  
 धूपैः कर्पूरदीपैर्विविधरसयुतैर्नैव भक्ष्योपहारैः क्षंतव्यो मेऽपराधः  
 शिव शिव० ॥ ७ ॥ ध्यात्वा चित्ते शिवाख्यं प्रचुरतरधनं नैव  
 दत्तं द्विजेभ्यो हव्यं ते लक्षसंख्यैर्हुतवहवदने नार्पितं बीजमंत्रैः ।  
 नो तप्तं गांगतीरे व्रतजपनियमै रुद्रजाप्यैर्न वेदैः क्षंतव्यो मेऽपराधः  
 शिव शिव० ॥ ८ ॥ स्थित्वा स्थाने सरोजे प्रणवमयमरुत्कुण्डले  
 सूक्ष्ममार्गे शांते स्वांते प्रलीने प्रकटितविभवे ज्योतिरूपेऽपराख्ये ।  
 लिंगाग्रे ब्रह्मवाक्ये सकलतनुगतं शंकरं न स्मरामि क्षंतव्यो मेऽपराधः  
 शिव शिव० ॥ ९ ॥ नमो निःसंगशुद्धस्त्रिगुणविरहितो ध्वस्तमोहांध-  
 कारो नासाग्रे न्यस्तदृष्टिर्विदितभवगुणो नैव दृष्टः कदाचित् ।  
 उन्मन्याऽवस्थया त्वां विगतकलिमलं शंकरं न स्मरामि क्षंतव्यो  
 मेऽपराधः शिव शिव० ॥ १० ॥ चंद्रोद्भासितशेखरे स्मरहरे  
 गंगाधरे शंकरे सपैर्भूषितकंठकर्णविवरे नेत्रोत्थवैश्वानरे । दंतित्व-  
 कृतसुंदरांबरधरे त्रैलोक्यसारे हरे मोक्षार्थं कुरु चित्तवृत्तिमखिला-  
 मन्यैस्तु किं कर्मभिः ॥ ११ ॥ किं वाऽनेन धनेन वाजिकरिभिः  
 प्राप्तेन राज्येन किं किं वा पुत्रकलत्रमित्रपशुभिर्देहेन गेहेन किम् ।  
 ज्ञात्वैतत्क्षणभंगुरं सपदि रे त्याज्यं मनो दूरतः स्वात्मार्थं गुरु-  
 वाक्यतो भज भज श्रीपार्वतीवल्लभम् ॥ १२ ॥ आयुर्नश्यति पश्य-  
 तां प्रतिदिनं याति क्षयं यौवनं प्रत्यायांति गताः पुनर्न दिवसाः  
 कालो जगद्भक्षकः । लक्ष्मीस्तोयतरंगभंगचपला विद्युच्चलं जीवितं

तस्मान्मां शरणागतं शरणद त्वं रक्ष रक्षाधुना ॥ १३ ॥ करचरण-  
कृतं वाक्कायजं कर्मजं वा श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽपराधम् ।  
विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव  
शंभो ॥ १४ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं शिवापराधक्षमा-  
मापनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ७४. रावणकृतशिवतांडवस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः । जटाकटाहसंभ्रमभ्रमत्रिलिपनिर्झरीविलोलवी-  
चिवल्लरीविराजमानमूर्धनि । धगद्धगद्धगज्ज्वलल्ललाटपट्टपावके  
किशोरचंद्रशेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम ॥ १ ॥ धराधरेंद्रनंदिनीविलास-  
बंधुबंधुरस्फुरद्दिगंतसंततिप्रमोदमानमानसे । कृपाकटाक्षधोरणीनिरु-  
द्धदुर्धरापदि क्वचिच्चिदंबर मनो विनोदमेतु वस्तुनि ॥ २ ॥ जटा-  
भुजंगपिंगलस्फुरत्फणामणिप्रभाकदंबकुंकुमद्रवप्रलिसदिग्वधूमुखे ।  
मदांधासिंधुरस्फुरत्त्वगुत्तरीयमेदुरे मनो विनोदमद्भुतं बिभर्तु भूत-  
भर्तारि ॥ ३ ॥ सहस्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखरप्रसूनधूलिधोरणीवि-  
धूसरांग्रिपीठभूः । भुजंगराजमालया निबद्धजाटजूटकः श्रियै  
चिराय जायतां चकोरबंधुशेखरः ॥ ४ ॥ ललाटचत्वरज्ज्वलद्धनंज-  
यस्फुलिंगभानिपीतपंचसायकं नमत्रिलिपनायकम् । सुधामयूख-  
लेख्या विराजमानशेखरं महाकपालिसंपदे शिरो जटालमस्तु न  
॥ ५ ॥ करालभालपट्टिकाधगद्धगद्धगज्ज्वलद्धनंजयाधरीकृतप्रचंडपं-  
चसायके । धराधरेंद्रनंदिनीकुचाप्रचित्रपत्रकप्रकल्पनैकशिल्पिनि  
त्रिलोचने मतिर्मम ॥ ६ ॥ नवीनमेघमंडलीनिरुद्धदुर्धरस्फुरत्कुह-  
निशीथिनीतमःप्रबंधबंधुकंधरः । निर्लिपनिर्झरीधरस्तनोतु कृत्तिसिं-  
धुरः कलानिधानबंधुरः श्रियं जगद्गुरंधरः ॥ ७ ॥ प्रफुल्लनीलपंकज-  
प्रपंचकालिमच्छटाविडंबिकंठकंधरारुचिप्रबंधकंधरम् । स्वरच्छिदं

पुरच्छिदं भवच्छिदं मखच्छिदं गजच्छिदांधकच्छिदं तमंतकच्छिदं भजे  
 ॥ ८ ॥ अगर्वसर्वमंगलाकलाकदंबमंजरीरसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणामधु-  
 व्रतम् । स्मरांतकं पुरांतकं भवांतकं मखांतकं गजांतकांधकांतकं तमं-  
 तकांतकं भजे ॥ ९ ॥ जयत्वदभ्रविभ्रमभ्रमद्भुजंगमस्फुरद्भगद्भगद्विनि-  
 र्गमत्करालभालहव्यवाट् । धिमिद्विमिद्विमिध्वनन्मृदंगतुंगमंगलध्व-  
 निक्रमप्रवर्तितप्रचंडतांडवः शिवः ॥ १० ॥ दृषद्विचित्रतल्पयोर्भुजंग-  
 मौक्तिकस्रजोर्गिरिष्ठरत्नलोष्टयोः सुहृद्विपक्षपक्षयोः । तृणारविंदचक्षुषोः  
 प्रजामहीमहेंद्रयोः समं प्रवर्तयन्मनः कदा सदाशिवं भजे ॥ ११ ॥  
 कदा निर्लिपनिर्झरीनिकुंजकोटरे वसन्विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरःस्थ-  
 मंजलिं वहन् । विमुक्तलोललोचनाललामभाललभ्रकः शिवेति  
 मंत्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम् ॥ १२ ॥ इमं हि नित्यमेवमुक्त-  
 मुत्तमोत्तमं स्तवं पठन्स्मरन्बुवन्नरो विशुद्धिमेति संततम् । हरे  
 गुरौ स भक्तिमाशु याति नान्यथा गतिं विमोहनं हि देहिनां तु  
 शंकरस्य चिंतनम् ॥ १३ ॥ पूजावसानसमये दशवक्त्रगीतं  
 यः शंभुपूजनमिदं पठति प्रदोषे । तस्य स्थिरां रथगजेंद्रतुरंगयुक्तां  
 लक्ष्मीं सदैव सुमुखीं प्रददाति शंभुः ॥ १४ ॥ इति श्रीरावण-  
 विरचितं शिवतांडवस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ७५. शिवमहिम्नः स्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पुष्पदंत उवाच ॥ महिम्नः पारं ते परमविदुषो  
 यद्यसदृशी स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः । अथावाच्यः  
 सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन् ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः  
 परिकरः ॥ १ ॥ अतीतः पंथानं तव च महिमा वाङ्मानसयोरत-  
 द्वावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि । स कस्य स्तोतव्यः कति-  
 विधगुणः कस्य विषयः पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न



वचः ॥ २ ॥ मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवतस्तव ब्रह्मर्क्षि  
 वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम् । मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः  
 पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता ॥ ३ ॥ तवैश्वर्यं यत्तज्ज-  
 गदुदयरक्षाप्रलयकृन्नयीवस्तु व्यस्तं तिसृषु गुणमिन्नासु तनुषु ।  
 अभव्यानामस्मिन्वरद रमणीयामरमणीं विहंतुं व्याक्रोशीं विदधत  
 इहैके जडधियः ॥ ४ ॥ किमीहः किंकायः स खलु किमुपायश्चि-  
 भुवनं किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च । अतर्क्यैश्वर्ये  
 त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः कुतर्कोऽयं कांश्चिन्मुखरयति मोहाय  
 जगतः ॥ ५ ॥ अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगता-  
 मधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति । अनीदो वा कुर्यान्भुवन-  
 जनने कः परिकरो यतो मंदास्त्वां प्रत्यमरवर संशेरत इमे ॥ ६ ॥  
 त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति प्रसिद्धे प्रस्थाने परमि-  
 दमदः पथ्यमिति च । रुचीनां वैचित्र्यादजुकुटिलनानापथजुषां  
 नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ॥ ७ ॥ महोक्षः खट्वांगं  
 परशुरजिनं भस्म फणिनः कपालं चेतीयत्तव वरद तंत्रोपकरणम् ।  
 सुरास्तां तामृद्धिं दधति तु भवद्भूषणहितां न हि स्वात्मारामं  
 विषयमृगतृष्णा भ्रमयति ॥ ८ ॥ ध्रुवं कश्चित्सर्वं सकलमपरस्त्व-  
 ध्रुवमिदं परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये । समस्तेऽप्ये-  
 तस्मिन्पुरमथन तैर्विस्मित इव स्तुवजिह्वेमि त्वां न खलु ननु घृष्टा  
 मुखरता ॥ ९ ॥ तवैश्वर्यं यत्ताद्यदुपरि विरिञ्चिर्हरिरधः परिच्छेत्तुं  
 यातावनलमनलस्कंधवपुषः । ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृण्य्यां गिरिश  
 यत् स्वयं तस्ये ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति ॥ १० ॥ अयत्ना-  
 दापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं दशास्यो यद्वाहूनमृत रणकंदूपर-  
 वशान् । शिरःपद्मश्रेणीरचितचरणांभोरुहबलेः स्थिराया-

स्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम् ॥ ११ ॥ अमुष्य त्वत्सेवा-  
समधिगतसारं भुजवनं बलात्कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ विक्रम-  
यतः । अलभ्या पातालेऽप्यलसचलितांगुष्ठशिरसि प्रतिष्ठा त्वय्या-  
सीद्भुवमुपचितो मुह्यति खलः ॥ १२ ॥ यद्विद्धि सुत्राम्णो वरद  
परमोच्चैरपि सतीमधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रिभुवनः । न तच्चित्रं  
तस्मिन्वरिवसितरि त्वच्चरणयोर्न कस्या उन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्य-  
वनतिः ॥ १३ ॥ अकाण्डब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपाविधेयस्याऽऽ-  
सीद्यस्त्रिनयन विषं संहतवतः । स कल्माषः कंठे तव न कुरुते न  
श्रियमहो विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभंगव्यसनिनः ॥ १४ ॥ असि-  
द्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे निवर्तते नित्यं जगति जयिनो  
यस्य विशिखाः । स पश्यन्नीश त्वामितरसुरसाधारणमभूत् स्मरः  
स्मर्तव्यात्मा न हि वशिषु पथ्यः परिभवः ॥ १५ ॥ मही पादाघाता-  
द्भजति सहसा संशयपदं पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम् ।  
मुहुर्द्यौर्दौःस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु  
वामैव विभुता ॥ १६ ॥ वियद्वापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः  
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते । जगद्दीपाकारं जलधि-  
वलयं तेन कृतमित्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम दिव्यं तव वपुः ॥ १७ ॥  
रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो रथांगे चन्द्राकौ रथचरण-  
पाणिः शर इति । दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाण्डबरविधिविधेयैः  
क्रीडत्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः ॥ १८ ॥ हरिस्ते साहस्रं  
कमलबलिमाधाय पदयोर्यदेकोने तस्मिन्निजमुदहरन्नेत्रकमलम् ।  
गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर  
जागर्ति जगताम् ॥ १९ ॥ कृतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतु-  
मतां क कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते । अतस्त्वां संप्रेक्ष्य

क्रतुषु फलदानप्रतिभुवं श्रुतौ श्रद्धां बद्धा कृतपरिकरः कर्मसु जनः  
 ॥ २० ॥ क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृतामृषीणामाख्यं  
 शरणद सदस्याः सुरगणाः । क्रतुश्रेष्ठस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो  
 ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मत्पात्राः ॥ २१ ॥ प्रजानाथं  
 नाथ प्रसन्नमभिर्गन्तुं स्वां दुहितरं गतं रोहिण्युतां रिरमयिषुमृष्यस्य  
 वपुषा । धनुःपाणेर्यातं दिवमपि सपत्नाकृतममुं त्रसन्तं तेऽद्यापि  
 त्यजति न मृगव्याधरभसः ॥ २२ ॥ स्वलावण्याशंसाधृतधनुष-  
 मङ्गाय नृणवत्पुरः सुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुण्यायुधमपि । यदि स्त्रैणं  
 देवी यमनिरत देहार्थघटनादवेति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः  
 ॥ २३ ॥ इमशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचराश्चिताभस्मा-  
 लेपः स्वर्गपि नृकरोटीपरिकरः । अमंगल्यं शीलं तव भवतु नामै-  
 वमखिलं तथापि स्मर्तृणां वरद परमं मंगलमाप्ति ॥ २४ ॥ मनः प्रत्य-  
 विचिन्ते सविधमवधायात्तमरुतः प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्संगित-  
 दशः । यदालोक्याह्लादं हृद इव निमज्ज्यामृतमये दधत्यंतस्तत्त्वं किमपि  
 यमिनस्तत्किल भवान् ॥ २५ ॥ त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं  
 हुतवहस्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च । परिच्छि-  
 ज्जामेवं त्वयि परिणता बिभ्रतु गिरं न विश्वस्तत्त्वं वयमिह तु  
 यत्त्वं न भवसि ॥ २६ ॥ त्रयीं तिस्रो वृत्तीन्निभुवनमथो त्रीनपि  
 सुरानकाराद्यैर्बर्णैश्चिभिरभिदधत्तीर्णविकृति । तुरीयं ते धाम ध्वनि-  
 भिरविहंभानमणुभिः समस्तं व्यस्तं त्वां शरणद गृणात्योमिति पदम्  
 ॥ २७ ॥ भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सहमहांस्तथा भीमेशा-  
 नाविति यदभिधानाष्टकमिदम् । अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देव  
 श्रुतिरपि प्रियायासौ धाम्ने प्रविहितनमस्योऽस्मि भवते ॥ २८ ॥  
 नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर

महिष्ठाय च नमः । नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो  
 नमः सर्वस्यै ते तदिदमिति सर्वाय च नमः ॥ २९ ॥ बहलरजसे  
 विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो  
 नमः । जनसुखकृते सत्त्वोद्विक्तौ मृडाय नमो नमः प्रमहसि पदे  
 निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ॥ ३० ॥ कृशपरिणति चेत्तः क्लेशवश्यं  
 क चेदं क च तव गुणसीमोलङ्घिनी शश्वद्विद्धिः । इति चकितम-  
 मंदीकृत्य मां भक्तिराधाद्वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् ॥ ३१ ॥  
 अस्मितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिंधुपात्रे सुरतरुवरशाखा लेखनी  
 पत्रमुर्वी । लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सार्वकालं तदपि तव  
 गुणानामीश पारं न याति ॥ ३२ ॥ असुरसुरमुनीन्द्रैर्वर्षितस्यंदुर्मौले-  
 ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य । सकलगणवरिष्ठः पुष्पदंतामि-  
 धानो रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार ॥ ३३ ॥ अहरहरनवद्यं  
 धूर्जटेः स्तोत्रमेतत्पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान्यः । स भवति  
 शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथाऽत्र प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान्कीर्तिमांश्च  
 ॥ ३४ ॥ महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः । अघोराब्जापरो  
 मंत्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम् ॥ ३५ ॥ दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं  
 यागादिकाः क्रियाः । महिम्नः स्तवपाठस्य कलां नाहंति षोडशीम्  
 ॥ ३६ ॥ कुसुमदशननामा सर्वगंधर्वराजः शशिधरवरमौलेर्देव-  
 देवस्य दासः । स गुरुनिजमहिम्नो अष्ट एवास्य रोषास्तवनमिदम-  
 कार्षीद्विव्यदिव्यं महिम्नः ॥ ३७ ॥ सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं  
 पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्यचेताः । व्रजति शिवसमीपं  
 किंनरैः स्तूयमानः स्तवनमिदममोघं पुष्पदंतप्रणीतम् ॥ ३८ ॥

१ अस्याग्रे 'आसमाप्तं' इत्यादिप्रक्षिप्तश्लोकाः कचिद्वृश्यन्ते ।

श्रीपुष्पदंतमुखपंकजनिर्गतेन स्तोत्रेण किल्बिषहरेण हरप्रियेण ।  
 कंठस्थितेन पठितेन समाहितेन सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः  
 ॥ ३९ ॥ इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छंकरपादयोः । अर्पिता तेन  
 देवेशः प्रीयतां मे सदाशिवः ॥ ४० ॥ इति श्रीपुष्पदंतविरचितं  
 शिवमहिम्नः स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ७६. शिवपंचाक्षरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नागेंद्रहाराय त्रिलोचनाय भस्मांगरागाय  
 महेश्वराय । नित्याय शुद्धाय दिगंबराय तस्मै नकाराय नमः शिवाय  
 ॥ १ ॥ मंदाकिनीसलिलचंदनचर्चिताय नंदीश्वरप्रमथनाथमहे-  
 श्वराय । मंदारपुष्पबहुपुष्पसुपूजिताय तस्मै मकाराय नमः शिवाय  
 ॥ २ ॥ शिवाय गौरीवदनाब्जवृंदसूर्याय दक्षाध्वरनाशकाय । श्रीनील-  
 कंठाय वृषध्वजाय तस्मै शिकाराय नमः शिवाय ॥ ३ ॥ वसिष्ठ-  
 कुंभोज्ञवगौतमार्यमुनीन्द्रदेवार्चितशेखराय । चंद्रार्कवैश्वानरलोचनाय  
 तस्मै वकाराय नमः शिवाय ॥ ४ ॥ यक्षस्वरूपाय जटाधराय  
 पिनाकहस्ताय सनातनाय । दिव्याय देवाय दिगंबराय तस्मै  
 यकाराय नमः शिवाय ॥ ५ ॥ पंचाक्षरमिदं पुण्यं यः पठेच्छिव-  
 संनिधौ । शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥ ६ ॥ इति  
 श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं शिवपंचाक्षरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ७७. शिवषडक्षरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐकारं बिंदुसंयुक्तं नित्यं ध्यायति योगिनः ।  
 कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमो नमः ॥ १ ॥ नमंति ऋषयो  
 देवा नर्मत्यप्सरसां गणाः । नरा नमंति देवेशं नकाराय नमो नमः  
 ॥ २ ॥ महादेवं महात्मानं महाध्यानं परायणम् । महापापहरं

देवं मकाराय नमो नमः ॥ ३ ॥ शिवं शांतं जगन्नाथं लोकानुग्रह-  
कारकम् । शिवमेकपदं नित्यं शिकाराय नमो नमः ॥ ४ ॥ वाहनं  
वृषभो यस्य वासुकिः कंठभूषणम् । वामे शक्तिधरं देवं वकाराय  
नमो नमः ॥ ५ ॥ यत्र यत्र स्थितो देवः सर्वव्यापी महेश्वरः ।  
यो गुरुः सर्वदेवानां यकाराय नमो नमः ॥ ६ ॥ षडक्षरमिदं  
स्तोत्रं यः पठेच्छिवसंनिधौ । शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते  
॥ ७ ॥ इति श्रीरुद्रयामले उमामहेश्वरसंवादे शिवषडक्षरस्तोत्रं  
संपूर्णम् ॥

### ७८. उपमन्युकृतशिवस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जय शंकर पार्वतीपते मृड शंभो शशिखंडमंडन ।  
मदनांतक भक्तवत्सल प्रियकैलास दयासुधांबुधे ॥ १ ॥ सद्गुणायकथा-  
स्वपंडितो हृदये दुःखशरेण खंडितः । शशिखंडशिखंडमंडनं शरणं  
यामि शरण्यमीश्वरम् ॥ २ ॥ महतः परितः प्रसर्पतस्तमसो दर्शन-  
मेदिनो भिदे । दिननाथ इव स्वतेजसा हृदयव्योम्नि मनागुदेहि नः ॥ ३ ॥  
न वयं तव चर्मचक्षुषा पदवीमप्युपवीक्षितुं क्षमाः । कृपयाऽभयदेन  
चक्षुषा सकलेनेश विलोकयाशु नः ॥ ४ ॥ त्वदनुस्मृतिरेव पावनी  
स्तुतियुक्ता न हि वक्तुमीश सा । मधुरं हि पयः स्वभावतो  
ननु कीदृक्सितशर्करान्वितम् ॥ ५ ॥ सविषोऽप्यमृतायते भवाच्छव-  
मुंडाभरणोऽपि पावनः । भव एव भवांतकः सतां समदृष्टिर्विष-  
मोक्षणोऽपि सन् ॥ ६ ॥ अपि शूलधरो निरामयो दृढवैराग्य-  
रतोऽपि रागवान् । अपि भैक्ष्यचरो महेश्वरश्चरितं चित्रमिदं हि ते  
प्रभो ॥ ७ ॥ वितरत्यभिवांछितं दशा परिदृष्टः किल कल्पपादपः ।  
हृदये स्मृत एव धीमते नमतेऽभीष्टफलप्रदो भवान् ॥ ८ ॥ सह-

सैव भुजंगपाशवान्विनिगृह्णाति न यावदंतकः । अभयं कुरु ताव-  
दाशु मे गतजीवस्य पुनः किमौषधैः ॥ ९ ॥ सविषैरिव भीमपद्म-  
गैर्विषयैरेभिरलं परिक्षतम् । अमृतैरिव संभ्रमेण मामभिर्षिचाशु  
दयावलोकनैः ॥ १० ॥ मुनयो बहवोऽद्य धन्यतां गमिताः  
स्वाभिमतार्थदर्शिनः । करुणाकर येन तेन मामवसन्नं ननु पश्य  
चक्षुषा ॥ ११ ॥ प्रणमाम्यथ यामि चापरं शरणं कं कृपणाभय-  
प्रदम् । विरहीव विभो प्रियामयं परिपश्यामि भवन्मयं जगत्  
॥ १२ ॥ बहवो भवताऽनुकंपिताः किमितीक्षान न माऽनुकंपसे ।  
दधता किमु मंदराचलं परमाणुः कमठेन दुर्धरः ॥ १३ ॥ अशुचिं  
यदि माऽनुमन्यसे किमिदं मूर्खि कपालदाम ते । उत शाठ्यम-  
साधुसंगिनं विषलक्ष्मासि न किं द्विजिह्वरुक् ॥ १४ ॥ क इशं  
विदधामि किं करोम्यनुतिष्ठामि कथं भयाकुलः । क नु तिष्ठसि  
रक्ष रक्ष मामयि शंभो शरणागतोऽस्मि ते ॥ १५ ॥ विलुठाम्य-  
वनौ किमाकुलः किमुरो हन्मि शिरश्छिनधि वा । किमु रोदिमि  
रारटीमि किं कृपणं मां न यदीक्षसे प्रभो ॥ १६ ॥ शिव सर्वग  
शर्व शर्मदं प्रणतो देव दयां कुरुष्व मे । नम ईश्वर नाथ दिक्पते  
पुनरेवेश नमो नमोऽस्तु ते ॥ १७ ॥ शरणं तरुणेंदुशेखरः शरणं  
मे गिरिराजकन्यका । शरणं पुनरेव तावुमौ शरणं नान्यदुपैमि  
दैवतम् ॥ १८ ॥ उपमन्युकृतं स्तवोत्तमं जपतः शंसुसमीप-  
वर्तिनः । अभिवाञ्छितभाग्यसंपदः परमायुः प्रददाति शंकरः ॥ १९ ॥  
उपमन्युकृतं स्तवोत्तमं प्रजपेद्यस्तु शिवस्य संनिधौ । शिवलोक-  
मवाप्य सोऽचिरात्सह तेनैव शिवेन मोदते ॥ २० ॥ इत्युपमन्यु-  
कृतं शिवस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## ७२. द्वादशज्योतिर्लिंगस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सौराष्ट्रदेशे विशदेऽतिरम्ये ज्योतिर्मयं चन्द्र-  
 कलावतंसम् । भक्तिप्रदानाय कृपावतीर्णं तं सोमनाथं शरणं प्रपद्ये  
 ॥ १ ॥ श्रीशैलसंगे विबुधातिसंगे तुलाद्रितुंगेऽपि मुदा वसंतम् ।  
 तमर्जुनं मल्लिकपूर्वमेकं नमामि संसारसमुद्रसेतुम् ॥ २ ॥ अवन्ति-  
 कायां विहितावतारं मुक्तिप्रदानाय च सज्जनानाम् । अकालमृत्योः  
 परिरक्षणार्थं वंदे महाकालमहासुरेशम् ॥ ३ ॥ कावेरिकानर्मदयोः  
 पवित्रे समागमे सज्जनतारणाय । सदैव मांधातृपुरे वसंतमोकार-  
 मीशं शिवमेकमीडे ॥ ४ ॥ पूर्वोत्तरे प्रज्वलिकानिधाने सदा वसंतं  
 गिरिजासमेतम् । सुरासुराराधितपादपद्मं श्रीवैद्यनाथं तमहं नमामि  
 ॥ ५ ॥ याम्ये सदंगे नगरेऽतिरम्ये विभूषितांगं विविधैश्च भोगैः ।  
 सद्भक्तिमुक्तिप्रदमीशमेकं श्रीनागनाथं शरणं प्रपद्ये ॥ ६ ॥ महाद्रि-  
 पार्श्वे च तटे रमतं संपूज्यमानं सततं मुनीन्द्रैः । सुरासुरैर्यक्षमहोर-  
 गाद्यैः केदारमीशं शिवमेकमीडे ॥ ७ ॥ सद्याद्रिशिर्षे विमले  
 वसंतं गोदावरीतीरपवित्रदेशे । यद्दर्शनात्पातकमाशु नाशं प्रयाति  
 तं त्र्यंबकमीशमीडे ॥ ८ ॥ सुताम्रपर्णीजलराशियोगे निबध्य सेतुं  
 विशिखैरसंख्यैः । श्रीरामचन्द्रेण समर्पितं तं रामेश्वराख्यं नियतं  
 नमामि ॥ ९ ॥ यं डाकिनीशाकिनिकासमाजे निषेव्यमाणं पिशि-  
 ताशनैश्च । सदैव भीमादिपदप्रसिद्धं तं शंकरं भक्तहितं नमामि  
 ॥ १० ॥ सानन्दमानन्दवने वसंतमानन्दकंदं हतपापघृदम् । चारा-  
 णसीनाथमनाथनाथं श्रीविश्वनाथं शरणं प्रपद्ये ॥ ११ ॥ इलापुरे  
 रम्यविशालकेऽस्मिन्समुल्लसंतं च जगद्ग्रेण्यम् । वंदे महोदार-  
 तरस्वभावं घृष्णेश्वराख्यं शरणं प्रपद्ये ॥ १२ ॥ ज्योतिर्मयद्वादश-



लिंगकानां शिवात्मनां प्रोक्तमिदं क्रमेण । स्तोत्रं पठित्वा  
मनुजोऽतिभक्त्या फलं तदालोक्य निजं भजेच्च ॥ १३ ॥ इति  
श्रीद्वादशज्योतिर्लिंगस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ८०. शिवभुजंगस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ गलद्धानगांडं मिलद्भुगखंडं चलच्चारुशुंडं जग-  
न्नाणशौडम् । लसदंतकांडं विपद्भगचंडं शिवप्रेमार्पिंडं भजे वक्र-  
तुंडम् ॥ १ ॥ अनाद्यंतमाद्यं परं तत्त्वमर्थं चिदाकारमेकं तुरीयं  
त्वमेयम् । हरिब्रह्ममृग्यं परब्रह्मरूपं मनोवागतीतं महः शैवमीडे  
॥ २ ॥ स्वशक्त्यादिशक्त्यंतर्लिहासनस्थं मनोहारिसर्वांगरत्नादिभूषम् ।  
जटाहींदुर्गंगास्थिशय्यकर्मौलिं परं शक्तिमित्रं नुमः पंचवक्त्रम् ॥ ३ ॥  
शिवेशानतत्पूरुषाघोरवामादिभिर्ब्रह्मभिर्हन्मुखैः पद्भिरंगैः । अनौ-  
पम्यषट्त्रिंशतं तत्त्वविद्यामतीतं परं त्वां कथं वेत्ति को वा  
॥ ४ ॥ प्रवालप्रवाहप्रभाशोणमर्धं मरुत्स्वन्मणिश्रीमहःश्याम-  
मर्धम् । गुणस्थूतमेकं वपुश्चैकमंतः स्मरामि स्मरापत्तिसंपत्तिहेतुम्  
॥ ५ ॥ स्वसेवासमायातदेवासुरेन्द्रनमन्मौलिमंदारमालाभिषिक्तम् ।  
नमस्त्यामि शंभो पद्मभोरुहं ते भवांभोजिपोतं भवानीविभाव्यम्  
॥ ६ ॥ जगन्नाथ मन्नाथ गौरीसनाथ प्रपन्नानुकंपिन्विपन्नार्तिहा-  
रिन् । महःस्तोममूर्ते समस्तैकबन्धो नमस्ते नमस्ते पुनस्ते नमोऽस्तु  
॥ ७ ॥ महादेव देवेश देवाधिदेव स्मरारे पुरारे यमारे हरेति ।  
ब्रुवाणः स्मरिष्यामि भक्त्या भवंतं ततो मे दयाशील देव प्रसीद  
॥ ८ ॥ विरूपाक्ष विश्वेश विद्यादिकेश त्रयीमूल शंभो शिव त्र्यंबक  
त्वम् । प्रसीद स्मर त्राहि पश्याव पुण्य क्षमस्वामुहि त्र्यक्ष पाहि  
त्वमस्मान् ॥ ९ ॥ त्वदन्यः शरण्यः प्रपन्नस्त्य नेति प्रसीद स्मरन्नेव

हन्यास्तु दैन्यम् । न चेत्ते भवेद्भक्तवात्सल्यहानिस्ततो मे दयालो  
 दयां संनिधेहि ॥ १० ॥ अयं दानकालस्त्वहं दानपात्रं भवाज्ञाय  
 दाता त्वदन्यन्न याचे । भवद्भक्तिमेव स्थिरां देहि मह्यं कृपाशील  
 शंभो कृतार्थोऽसि तस्मात् ॥ ११ ॥ पशुं वेत्सि चेन्मां त्वमेवा-  
 धिरुढः कलंकीति वा मूर्ध्नि धत्से त्वमेव । द्विजिह्वः पुनः सोऽपि  
 ते कंठभूषा त्वदंगीकृताः शर्वं सर्वेऽपि धन्याः ॥ १२ ॥ न शक्नोमि  
 कर्तुं परद्रोहलेशं कथं प्रीयसे त्वं न जाने गिरीश । तदा हि प्रस-  
 न्नोऽसि कस्यापि कांतासुतद्रोहिणो वा पितृद्रोहिणो वा ॥ १३ ॥  
 स्तुतिं ध्यानमर्चा यथावद्विधातुं भजन्नप्यजानन्महेशावलंबे । त्रसंतं  
 सुतं त्रातुमग्रे मृकंडेर्यमप्राणनिर्वापणं त्वत्पदाब्जम् ॥ १४ ॥ अकंठे  
 कलंकादनगे भुजंगादपाणौ कपालादभालेऽनलाक्षात् । अमौलौ  
 शशांकादवामे कलत्रादहं देवमन्यं न मन्ये न मन्ये ॥ १५ ॥ इति  
 श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं शिवभुजंग-  
 स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ८१. शिवस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ गले कलितकालिमः प्रकटितेंदुभालस्थले  
 विनाटितजटोत्करं रुचिरपाणिपाथोरुहे । उदंचितकपालकं जघन-  
 सीन्नि संदर्शितद्विपाजिनमनुक्षणं किमपि धाम वंदामहे ॥ १ ॥  
 वृषोपरि परिस्फुरद्धवलधाम धाम श्रियां कुबेरगिरिगौरिमप्रभवगर्व-  
 निर्वासि तत् । क्वचित्पुनरुमाकुचोपचितकुंकुमै रंजितं गजाजिन-  
 विराजितं वृजिनभंगबीजं भजे ॥ २ ॥ उदित्चरविलोचनत्रयविसृत्वर-  
 ज्योतिषा कलाकरकलाकरव्यतिकरेण चाहर्निशम् । विकासितजटा-  
 टवीविहरणोत्सवप्रोल्लसत्तरामरतरंगिणीतरलचूडमीडे मृडम् ॥ ३ ॥  
 विहाय कमलालयाविलसितानि विद्युन्नदीविडंबनपट्टानि मे विहरणं

विधत्तां मनः । कपर्दिनि कुमुद्वतीरमणखंडचूडामणौ कटीतटपटी-  
भवत्करटिचर्मणि ब्रह्मणि ॥ ४ ॥ भवद्भवनदेहलीनिकटतुंडदंडाहति-  
त्रुटन्मुकुटकोटिभिर्मधवदादिभिर्भूयते । व्रजेम भवदंतिकं प्रकृतिमेत्य  
पैशाचिकीं किमित्यमरसंपदः प्रमथनाथ नाथामहे ॥ ५ ॥ त्वदर्चन-  
परायणप्रमथकन्यकालुंठितप्रसूनसफलद्रुमं कमपि शैलमाशास्महे ।  
अलं तटवितर्दिकाशयितसिद्धसीमंतिनीप्रकीर्णसुमनोमनोरमणमेरुणा  
मेरुणा ॥ ६ ॥ न जातु हर यातु मे विषयदुर्विलासं मनो मनोभवकथास्तु  
मे न च मनोरथातिथ्यभूः । स्फुरस्फुरतरंगिणीतटकुटीरकोटौ वसन्त्ये  
शिव दिवानिशं तव भवानिपूजापरः ॥ ७ ॥ विभूषणसुरापगाशु-  
चितरालवालावलीवलद्वहलसीकरप्रकरसेकसंवर्धिता । महेश्वरसुर-  
द्रुमस्फुरितसज्जटामंजरी निमज्जनफलप्रदा मम नु हंत भूयादियम्  
॥ ८ ॥ बहिर्विषयसंगतिप्रतिनिवर्तिताक्षावलेः समाधिकलितारत्मनः  
पशुपतेरशेषात्मनः । शिरःसुरसरित्तीकुटिलकल्पकल्पद्रुमं निशा-  
करकलामहं बहुविभूश्यमानां भजे ॥ ९ ॥ त्वदीयसुरवाहिनीविमल-  
वारिधारावलज्जटागहनगाहिनी मतिरियं मम क्रामतु । उपोत्तम-  
सरित्तीविटपिताटवी प्रोल्लसत्तपस्विपरिषत्तुलाममलमल्लिकाम प्रभो  
॥ १० ॥ इति लंकेश्वरविरचिता शिवस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ८२. महारुद्रस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वाण्या ओङ्काररूपिण्या अंत उक्तोऽस्य  
नान्यथा । सुरस्त्रिभुवनेशः स नः सर्वांतःस्थितोऽवतु ॥ १ ॥ देवोऽयं  
सर्वदेवाद्यः सूरिरुन्मत्तवस्थितः । बाहो बलीवर्दकोऽस्य याचकस्येष्टदः  
स तु ॥ २ ॥ नंदिस्कंवाधिरूढोऽपि त्रिप्रमित्यतिगः स्वभूः । दशा  
यस्य न शंभुं तं संतं वंदेऽखिलात्मकम् ॥ ३ ॥ सद्योजातोऽष्टमूर्तिः स  
भूतवंदिस्तुतो जितः । रक्ष मन्मथहन्त्राय तोकचर्माणमद्य माम् ॥ ४ ॥

स्वतो हेतोर्जगद्धेतो दयानाथांबिकापते । तीव्रासुहृन्निविहृत्तापा-  
 न्मृत्योश्च मामव ॥ ५ ॥ कृतागसमपि त्राह्यत्रेर्मृत्योस्त्वं च  
 भिषक्तमः । तत्संधिं भिंधि सर्वाक्योनेर्मुचस्व मां शिव ॥ ६ ॥  
 श्रीद पुष्टिद ते व्यासं दिक्षु क्षीरनिभं यशः । रुक्मार्ष्टिकृद्रक्ष मां त्वं  
 गंगा यन्मूर्ध्नि चर्क्षराट् ॥ ७ ॥ द्रष्टा वसति सर्वत्र बत मामीक्षसे  
 न किम् । स्तुतेर्धर्मेशशक्तिर्निरस्तमृत्योनमेजते ॥ ८ ॥ तिष्ठानंदद  
 चित्ते मे समंतात् परिपालय ॥ ९ ॥ इति श्रीवासुदेवानंदसरस्वती-  
 विरचितं महारुद्रस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ८३. वेदसारशिवस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पशूनां पतिं पापनाशं परेशं गजेंद्रस्य कृत्ति  
 चसानं वरेण्यम् । जटाजूटमध्ये स्फुरद्गङ्गावारिं महादेवमेकं स्मरामि  
 स्मरारिम् ॥ १ ॥ महेशं सुरेशं सुरारातिनाशं विभुं विश्वनाथं  
 विभूलंगभूषम् । विरूपाक्षमिद्वर्कवह्नित्रिनेत्रं सदानंदमीडे प्रभुं  
 पंचवक्त्रम् ॥ २ ॥ गिरीशं गणेशं गले नीलवर्णं गवेंद्रादिरूढं  
 गणातीतरूपम् । भवं भास्वरं भस्मना भूषितांगं भवानीकलत्रं  
 भजे पंचवक्त्रम् ॥ ३ ॥ शिवाकांतं शंभो शशांकार्धमौले  
 महेशान शूलिन् जटाजूटधारिन् । त्वमेको जगद्व्यापको विश्वरूप  
 प्रसीद प्रसीद प्रभो पूर्णरूप ॥ ४ ॥ परात्मानमेकं जगद्वीजमाद्यं  
 निरीहं निराकारमोकारवेद्यम् । यतो जायते पालयते येन विश्वं  
 तमीशं भजे लीयते यत्र विश्वम् ॥ ५ ॥ न भूमिर्न चापो न  
 वह्निर्न वायुर्न चाकाशमास्ते न तंद्रा न निद्रा । न ग्रीष्मो न शीतं  
 न देशो न वेषो न यस्यास्ति मूर्तिस्त्रिमूर्तिं तमीडे ॥ ६ ॥ अजं  
 शाश्वतं कारणं कारणानां शिवं केवलं भासकं भासकानाम् ।

तुरीयं तमःपारमार्थतहीनं प्रपद्ये परं पावनं द्वैतहीनम् ॥ ७ ॥  
 नमस्ते नमस्ते विभो विश्वमूर्ते नमस्ते नमस्ते चिदानन्दमूर्ते । नमस्ते  
 नमस्ते तपोयोगगम्य नमस्ते नमस्ते श्रुतिज्ञानगम्य ॥ ८ ॥ प्रभो  
 शूलपाणे विभो विश्वनाथ महादेव शंभो महेश त्रिनेत्र । शिवाकांत  
 शांत स्मरारे पुरारे त्वदन्यो वरेण्यो न मान्यो न गण्यः ॥ ९ ॥  
 शंभो महेश करुणामय शूलपाणे गौरीपते पशुपते पशुपाशनाशिन् ।  
 काशीपते करुणया जगदेतदेकस्त्वं हंसि पासि विदधासि महे-  
 श्वरोऽसि ॥ १० ॥ त्वत्तो जगद्भवति देव भय स्मरारे त्वय्येव  
 तिष्ठति जगन्मृड विश्वनाथ । त्वय्येव गच्छति लयं जगदेतदीश  
 लिंगात्मकं हर चराचरविश्वरूपिन् ॥ ११ ॥ इति श्रीमच्छंकरा-  
 चार्यविरचितो वेदसारशिवस्तवः संपूर्णः ॥

#### ८४. लिंगाष्टकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्ममुरारिसुरार्चितलिंगं निर्मलमासितशोभित-  
 लिंगम् । जन्मजद्रुःखविनाशकलिंगं तद्वर्णमामि सदाशिवलिंगम्  
 ॥ १ ॥ देवमुनिप्रवरार्चितलिंगं कामदहं करुणाकरलिंगम् । रावण-  
 दर्पविनाशनलिंगं तद्व० ॥ २ ॥ सर्वसुगंधिसुलेपितलिंगं बुद्धि-  
 विवर्धनकारणलिंगम् । सिद्धसुरासुरवंदितलिंगं तद्व० ॥ ३ ॥  
 कनकमहामणिभूषितलिंगं फणिपतिवेष्टितशोभितलिंगम् । दशसु-  
 यज्ञविनाशनलिंगं तद्व० ॥ ४ ॥ कुंकुमचंदनलेपितलिंगं पंकजहार-  
 सुशोभितलिंगम् । संचितपापविनाशनलिंगं तद्व० ॥ ५ ॥ देवगणा-  
 र्चितसेवितलिंगं भावैर्भक्तिभिरेव च लिंगम् । दिनकरकोटिभा-  
 करलिंगं तद्व० ॥ ६ ॥ अष्टदलोपरिवेष्टितलिंगं सर्वसमुद्भवकारण-  
 लिंगम् । अष्टदरिद्रविनाशितलिंगं तद्व० ॥ ७ ॥ सुरगुरुसुरवर-  
 पूजितलिंगं सुरवनपुष्पसदार्चितलिंगम् । परात्परं परमात्मकलिंगं

तत्प्र० ॥ ८ ॥ लिंगाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ । शिव-  
लोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥ ९ ॥ इति श्रीलिंगाष्टकस्तोत्रं  
संपूर्णम् ॥

### ८५. सदाशिवेन्द्रस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ परतत्त्वलीनमनसे प्रणमद्भवबन्धमोचनायाशु ।  
प्रकटितपरतत्त्वाय प्रणतिं कुर्मः सदाशिवेन्द्राय ॥ १ ॥ परमशिवे-  
न्द्रकराम्बुजसंभूताय प्रणम्रवरदाय । पदधूतर्पकजाय प्रणतिं०  
॥ २ ॥ विजननदीकुंजगृहे मंजुलपुलिनैकमंजुतरतल्पे । शयनं  
कुर्वाणाय प्रणतिं० ॥ ३ ॥ कामाहिद्विजपतये शमदममुखदिव्य-  
रत्नवारिधये । शमनाय मोहविततेः प्रणतिं० ॥ ४ ॥ नमदात्म-  
बोधदात्रे रमते परमात्मतत्त्वसौधाग्रे । समबुद्धयेऽश्महेम्नोः प्रणतिं०  
॥ ५ ॥ गालिताविद्याहालाहलहतपुर्यष्टकाय बोधेन । मोहांध-  
काररवये प्रणतिं० ॥ ६ ॥ शममुखषट्कमुमुक्षाविवेकवैराग्यदान-  
निरताय । तरसा नतजनततये प्रणतिं० ॥ ७ ॥ सिद्धांतकल्पवल्ली-  
मुखकृतिकर्त्रे कपालिभक्तिकृते । करतलमुक्तिफलाय प्रणतिं०  
॥ ८ ॥ तृणपङ्कलिसवपुषे तृणतोऽप्यधरं जगद्विलोकयते । वन-  
मध्यविहरणाय प्रणतिं० ॥ ९ ॥ निगृहीतहृदयहरये प्रगृहीतात्म-  
स्वरूपरत्नाय । प्रणताब्धिपूर्णशशिने प्रणतिं० ॥ १० ॥ अज्ञान-  
तिमिररवये प्रज्ञानांभोधिपूर्णचन्द्राय । प्रणतावधिपिनशुचये प्रणतिं०  
॥ ११ ॥ मतिमलमोचनदक्षप्रत्यग्ब्रह्मैक्यदाननिरताय । स्मृति-  
मात्रतुष्टमनसे प्रणतिं० ॥ १२ ॥ निजगुरुपरम शिवेन्द्रश्चाधित-  
विज्ञानकाष्ठाय । निजतत्त्वनिश्चलहृदे प्रणतिं० ॥ १३ ॥ प्रविलाप्य  
जगदशेषं परिशिष्टखंडवस्तुनिरताय । आस्यप्रासान्नभुजे प्रणतिं०  
॥ १४ ॥ उपधानीकृतबाहुः परिरब्धविरक्तिरामो यः । वसनीकृत-

स्वायास्मै प्रणतिं० ॥ १५ ॥ सकलागमान्तसारप्रकटनदक्षाय नम्र-  
 पक्षाय । सच्चित्सुखरूपाय प्रणतिं० ॥ १६ ॥ द्राक्षाशिक्षणचतुर-  
 न्याहाराय प्रभूतकरुणाय । वीक्षापावितजगते प्रणतिं० ॥ १७ ॥  
 योऽनुत्पन्नविकारो बाहौ म्लेच्छेन छिन्नपतितेऽपि । अविदितमम-  
 तायास्मै प्रणतिं० ॥ १८ ॥ न्यपतन्सुमानि भूर्धनि येनोच्चरितेषु  
 नामसुप्रस्य । तस्मै सिद्धवराय प्रणतिं० ॥ १९ ॥ यः पापिनोऽपि  
 लोकान् तरसा प्रकरोति पुण्यनिष्ठाग्र्यान् । करुणाम्बुराशयेऽस्मै  
 प्रणतिं० ॥ २० ॥ सिद्धेश्वराय बुद्धेः शुद्धिप्रदपादपद्मनमनाय ।  
 बद्धौ प्रमोचकाय प्रणतिं० ॥ २१ ॥ हृदाय लोकविततेः पद्याव-  
 लिदाय जन्ममूकेभ्यः । प्रणतेभ्यः पदयुगले प्रणतिं० ॥ २२ ॥  
 जिह्वोपस्थरतानप्याहोच्चारेण जातु नैजस्य । कुर्वाणाय विरक्ता-  
 न्प्रणतिं० ॥ २३ ॥ कमनीयकवनकर्त्रे शमनीयभयापहारचतुराय ।  
 तपनीयसदृशवपुषे प्रणतिं० ॥ २४ ॥ तारकविद्यादात्रे तारकप-  
 तिगर्ववारकास्याय । तारजपप्रवणाय प्रणतिं० ॥ २५ ॥ सूकोऽपि  
 यत्कृपा चेष्टोकोत्तरकीर्तिराशु जायेत । अद्भुतचरितायास्मै  
 प्रणतिं० ॥ २६ ॥ दुर्जनदूरायतरां सज्जनसुलभाय हस्तपात्राय ।  
 तरुतलनिकेतनाय प्रणतिं० ॥ २७ ॥ भवसिंधुधारयित्रे भवभक्ताय  
 प्रणम्रवश्याय । भवबन्धविरहिताय प्रणतिं० ॥ २८ ॥ त्रिविध-  
 स्यापि त्यागं वपुषः कर्तुं स्थलत्रये य इव । अकरोत्समाधिमस्मै  
 प्रणतिं० ॥ २९ ॥ कामिनमपि जितहृदयं कूरं शान्तं जडं सुधि-  
 यम् । कुरुते यत्करुणाऽस्मै प्रणतिं० ॥ ३० ॥ वेदस्मृतिस्थविद्व-  
 ल्लक्षणलक्ष्येषु संदिहानानाम् । निश्चयकृते विहर्त्रे प्रणतिं० ॥ ३१ ॥  
 बालारुणिभवपुषे लीलानिर्भूतकामगर्वाय । लोलाय चित्तिपरस्यां  
 प्रणतिं० ॥ ३२ ॥ शरणीकृताय सुगुणैणीकृतरक्तपङ्कजाताय ।

धरणीसद्वक्षमाय प्रणतिं० ॥ ३३ ॥ प्रणताय यतिवरेण्यैर्गण-  
 नाथेनाप्यसाध्यविघ्नहृते । गुणदासीकृतजगते प्रणतिं० ॥ ३४ ॥  
 सहमानाय सहस्राण्यप्यपराधान्प्रणम्रजनरचितान् । सहसैव मोक्ष-  
 दात्रे प्रणतिं० ॥ ३५ ॥ धृतदेहाय नतावलितूणप्रज्ञाप्रदान-  
 वाञ्छातः । श्रीदक्षिणवक्त्राय प्रणतिं कुर्मः सदाशिवेन्द्राय ॥ ३६ ॥  
 तापत्रयार्तहृदयस्तापत्रयहारदक्षनमनमहम् । गुरुवरबोधितमहि-  
 मनू शरणं यास्ये तवांग्रिकमलयुगम् ॥ ३७ ॥ सदात्मनि विलीन-  
 हृत्सकलवेदशास्त्रार्थवित् सरित्तटविहारकृत् सकललोकहृतापहृत् ।  
 सदाशिवपदांबुजप्रणतलोकलभ्य प्रभो सदाशिवयतीद् सदा मयि  
 कृपामपारां कुरु ॥ ३८ ॥ पुरा यवनकर्तनखवदमन्दरक्तोऽपि यः  
 पुनः पदसरोरुहप्रणतमेनमेनोविधिम् । कृपापरवशः पदं पतनव-  
 र्जितं प्राप यत्सदाशिवयतीद् स मय्यनवधिं कृपां सिञ्चतु ॥ ३९ ॥  
 हृषीकहृतचेतसि प्रहृतदेहके रोगकैरनेकवृजिनालये शमदमादि-  
 दिग्गंघोजिह्वते । तवांग्रिपतिते यतौ यतिपते महायोगिराद् सदा-  
 शिव कृपां मयि प्रकुरु हेतुशून्यां द्रुतम् ॥ ४० ॥ न चाहमति-  
 चातुरीरचितशब्दसङ्घैः स्तुतिं विधातुमपि च क्षमो न च जपादिके-  
 ऽप्यस्ति मे । बलं बलवतां वर प्रकुरु हेतुशून्यां विभो सदाशिव  
 कृपां मयि प्रवर योगिनां सत्वरम् ॥ ४१ ॥ शब्दार्थविज्ञानयुता  
 हि लोके वसन्ति लोका बहवः प्रकामम् । निष्ठायुता न श्रुतदृष्टपूर्वा  
 विना भवंतं यतिराज नूनम् ॥ ४२ ॥ स्तोकार्चनप्रीतहृदम्बुजाय  
 पादाब्जचूडापररूपधर्त्रे । शोकापहर्त्रे तरसा नतानां पाकाय  
 पुण्यस्य नमो यतीश ॥ ४३ ॥ नाहं हृषीकाणि विजेतुमीशो नाहं  
 सपर्याभजनादि कर्तुम् । निसर्गया खं दययैव पाहि सदाशिवेमं  
 करुणापयोधे ॥ ४४ ॥ कृतयाऽनयानतावलिकोटिगतेनातिमन्द-



बोधेन । मुदमेहि नित्यतृप्तप्रवर स्तुत्या सदाशिवायाञ्च ॥ ४५ ॥  
इति श्रीजगद्गुरुशृङ्गारिश्रीसच्चिदानंदशिवाभिनवनृसिंहभारती-  
स्वामिभिर्विरचिता सदाशिवमहेन्द्रस्तुतिः समाप्ता ॥

### ८६. शिवस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ स्फुटं स्फटिकसप्रभं स्फुटितहारकश्रीजटं शशांक-  
दलशेखरं कपिलफुल्लनेत्रत्रयम् । तरक्षुवरकृत्तिमद्भुजगभूषणं भूति-  
मत्कदा नु शितिकंठ ते वपुरवेक्षते वीक्षणम् ॥ १ ॥ त्रिलोचन  
बिलोचने लसति ते ललामायिते स्मरो नियमघस्मरो नियमिनाम-  
भूद्वस्मसात् । स्वभक्तिलतया वशीकृतवती सतीयं सती स्वभक्त-  
वशतो भवानपि वशी प्रसीद प्रभो ॥ २ ॥ महेश महितोऽसि  
तत्पुरुष पुरुषाग्र्यो भवानघोररिपुघोर तेऽनघम वामदेवांजलिः ।  
नमः सपदिजात ते त्वमिति पंचरूपोचितप्रपंचचयपंचवृन्मम  
मनस्तमस्ताडय ॥ ३ ॥ रसाघनरसानलानिलवियद्विवस्वद्विधुप्रय-  
ष्टुषु निविष्टमित्यज भजामि मूर्त्यष्टकम् । प्रशांतमुत भीषणं सुवन-  
मोहनं चेत्यहो वपूंषि गुणभूषितेऽहमहमात्मनोऽहंभिदे ॥ ४ ॥  
विमुक्तिपरमाध्वनां तव षडध्वनामास्पदं पदं निगमवेदिनो अगति  
वामदेवादयः । कथञ्चिदुपशिक्षिता भगवतैव संबिद्वते वयं तु विर-  
लांतराः कथमुमेश तन्मन्महे ॥ ५ ॥ कठोरितकुठारया ललित-  
शूलया वाहया रणङ्गमरुणा स्फुरद्भरिण्या सखद्वांगया । चलाभिर-  
चलाभिरप्यगणिताभिरुत्थतश्चतुर्दश जगंति ते जय जयेत्युर्बि-  
स्मयम् ॥ ६ ॥ पुरा त्रिपुररंधनं विविधदैत्यविध्वंसनं पराक्रम-  
परंपरा अपि परा न ते विस्मयः । अमर्षिबलहर्षितक्षुभितवृत्त-  
नेत्रोज्ज्वलज्वलज्वलनहेलया शलमितं हि लोकत्रयम् ॥ ७ ॥ सहस्र-  
नयनो गुहः सहस्रद्वारश्चिर्विशुद्धहृत्पतिरुताप्पतिः ससुरसिद्धविद्या-

धराः । भवत्पदपरायणाः श्रियमिमां ययुः प्रार्थितां भवान् सुरतरु-  
 भृशं शिव शिवां शिवावल्लभ ॥ ८ ॥ तव प्रियतमादतिप्रियतमं  
 सदैवांतरं पयस्युपहितं घृतं स्वयमिव श्रियो वल्लभम् । विबुध्य  
 लघुबुद्धयः स्वपरपक्षलक्ष्यायितं पठन्ति हि लुठन्ति ते शठहृदः शुचा  
 शुंठिताः ॥ ९ ॥ निवासनिलया चिता तव शिरस्ततेर्मालिका कपाल-  
 मपि ते करे त्वमशिवोऽस्यनंतर्धियाम् । तथापि भवतः पदं शिव-  
 शिवेत्यदो जल्पतामर्किंचन न किंचन वृजिनमस्ति भस्मीभवेत्  
 ॥ १० ॥ त्वमेव किल कामधुक् सकलकाममापूरयन् सदा त्रिनयनो  
 भवान्वहति चार्चि नेत्रोद्भवम् । विषं विषधरान्दधत्पिबसि तेन  
 चानंदवान्विरुद्धचरितोचिता जगदधीश ते भिक्षुता ॥ ११ ॥ नमः  
 शिवशिवाशिवाशिवशिवार्थकृन्ताशिवं नमो हरहराहराहरहरांतरं मे  
 दशम् । नमो भवभवाभवप्रभव भूतये मे भवान्नमो मृड नमो  
 नमो नम उमेश तुभ्यं नमः ॥ १२ ॥ सतां श्रवणपद्धतिं सरतु  
 सन्नतोकेत्यसौ शिवस्य करुणांकुरात्प्रतिकृतात्सदा सोचिता । इति  
 प्रथितमानसो व्यधित नाम नारायणः शिवस्तुतिमिमां शिवं  
 लिकुचिसूरिसूनुः सुधीः ॥ १३ ॥ इति श्रीमल्लिकुचिसूरिसूनु-  
 नारायणपंडिताचार्यविरचिता शिवस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ८७. अनादिकल्पेश्वरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कर्पूरगौरो भुजगेंद्रहारो गंगाधरो लोकहिता-  
 वरः सः । सर्वेश्वरो देववरोऽप्यघोरो योऽनादिकल्पेश्वर एव सोऽसौ  
 ॥ १ ॥ कैलासवासी गिरिजाविलासी श्मशानवासी सुमनोनिवासी ।  
 काशीनिवासी विजयप्रकाशी यो० ॥ २ ॥ त्रिशूलधारी भवदुःख-  
 हारी कंदर्पवैरी रजनीशधारी । कपर्दधारी भजकानुसारी यो०  
 ॥ ३ ॥ लोकाधिनाथः प्रमथाधिनाथः कैवल्यनाथः श्रुतिशास्त्रनाथः ।

विद्यार्थनाथः पुरुषार्थनाथो यो० ॥ ४ ॥ लिंगं परिच्छेत्तुमधोगतस्य  
 नारायणश्चोपरि लोकनाथः । बभूवतुस्तावपि नो समर्थो यो० ॥ ५ ॥  
 यं रावणस्ताण्डवकौशलेन गीतेन चातोषयदस्य सोऽत्र । कृपाकटाक्षेण  
 समृद्धिमाप यो० ॥ ६ ॥ सकृच्च बाणोऽवनमय्य शीर्षं यस्याग्रतः  
 सोऽप्यलभत्समृद्धिम् । देवेंद्रसंपत्त्यधिकां गरिष्ठां यो० ॥ ७ ॥ गुणा-  
 न्विमातुं न समर्थं एष वेषश्च जीवोऽपि विकुण्ठितोऽस्य । श्रुतिश्च नूनं  
 चकितं बभाषे यो० ॥ ८ ॥ अनादिकल्पेश उमेश एतत् स्तवाष्टकं  
 यः पठति त्रिकालम् । स धौतपापोऽम्विल्लोकबंधं शैवं पदं यास्यति  
 भक्तिमौक्षेत् ॥ ९ ॥ इति श्रीवासुदेवानंदसरस्वतीकृतमनादिकल्पे-  
 श्वरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ८८. शिवानन्दलहरी ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पुरे पौरान्पश्यन्नरयुवतिनामाकृतिमयान्  
 सुवेशान् स्वर्णालंकरणकलिताञ्चित्रसदृशान् । स्वयं साक्षी दृष्टेत्यपि  
 च कलयंस्तैः सह रमन् मुनिर्न व्यामोहं भजति गुरुदीक्षाक्षततमा  
 ॥ १ ॥ वने वृक्षान्पश्यन् दलफलभराग्रमुशिखान्वनच्छायाच्छान्  
 बहुलकलकूजद्विजगणान् । भक्षन् घञ्जे रात्राववनितलतल्पैकशयनो  
 मुनिर्न० ॥ २ ॥ कदाचिद्व्यासादे कचिदपि तु सौधे च ध्वले  
 कदाकाले शैले कचिदपि च कूले च सरिताम् । कुटीरे दांतानां  
 मुनिजनवराणामपि बसन् मुनिर्न० ॥ ३ ॥ कचिद्दालैः सार्धं करतल-  
 जतालैश्च हसितैः कचिद्वै तारुण्यांकितचतुरनार्यां सह रमन् ।  
 कचिद्वृद्धैश्चिन्तां कचिदपि तदन्यैश्च विलपन् मुनिर्न० ॥ ४ ॥ कदा-  
 चिद्विद्वद्भिर्विविधसुपुरानंदरसिकैः कदाचित्काव्यालंकृतसरसालैः  
 कविवरैः । वदन्वादांस्तर्कैरनुमितिपरैस्तार्किकवरैर्मुनिर्न० ॥ ५ ॥  
 कदा ध्यानाभ्यासैः कचिदपि सपर्यां विकसितैः सुगंधैः सत्पुष्पैः

क्वचिदपि दलैरेव विमलैः । प्रकुर्वन्देवस्य प्रमुदितमनाः संस्तुतिपरो  
 मुनिर्न० ॥ ६ ॥ शिवायाः शंभोर्वा क्वचिदपि च विष्णोरपि कदा  
 गणाध्यक्षस्यापि प्रकटतपनस्यापि च कदा । पठन्वै नामालिं नयन-  
 रचितानन्दसलिलो मुनिर्न० ॥ ७ ॥ कदा गङ्गांभोभिः क्वचिदपि च  
 कूपोत्थितजलैः क्वचित्कासारोत्थैः क्वचिदपि सदुष्णैश्च शिशिरैः ।  
 भजन्ब्रानैर्भूत्या क्वचिदपि च कर्पूरनिभया मुनिर्न० ॥ ८ ॥ कदाचि-  
 ज्जागृत्वा विषयकरणैः संभ्यवहरन् कदाचित्त्वप्सस्थानपि च विषयानेव  
 च भजन् । कदाचित्सौषुप्तं सुखमनुभवन्नेव सततं मुनिर्न० ॥ ९ ॥  
 कदाप्याशावासाः क्वचिदपि च दिव्याम्बरधरः क्वचित्पञ्चास्योत्थां  
 त्वचमपि दधानः कटितटे । मनस्वी निःशंकः स्वजनहृदयानन्द-  
 जनको मुनिर्न० ॥ १० ॥ कदाचित्सत्त्वस्थः क्वचिदपि रजोवृत्ति-  
 युगतस्तमोवृत्तिः कापि त्रितयरहितः कापि च पुनः । कदाचित्संसारी  
 श्रुतिपथविहारी क्वचिदपि मुनिर्न० ॥ ११ ॥ कदाचिन्मौनस्थः  
 क्वचिदपि च व्याख्याननिरतः कदाचित्सानन्दं हसति रभसत्यक्त-  
 वचसा । कदाचिल्लोकानां व्यवहृतिसमालोकनपरो मुनिर्न० ॥ १२ ॥  
 कदाचिच्छक्तीनां विकचमुखपद्मेषु कवलान्क्षिपंस्तासां कापि स्वय-  
 मपि च गृह्णन्स्वमुखतः । महाद्वैतं रूपं निजपरविहीनं प्रकटयन्  
 मुनिर्न० ॥ १३ ॥ क्वचिच्छैवैः सार्धं क्वचिदपि च शक्तैः सह वसन्  
 कदा विष्णोर्भक्तैः क्वचिदपि च सौरैः सह वसन् । कदा गाणापत्यै-  
 रीतसकलभेदोऽद्वयतया मुनिर्न० ॥ १४ ॥ निराकारं कापि क्वचिदपि  
 च साकारममलं निजं शैवं रूपं विविधगुणभेदेन बहुधा । कदाश्चर्यं  
 पश्यन्किमिदमिति हृष्यन्नापि कदा मुनिर्न० ॥ १५ ॥ कदा द्वैतं  
 पश्यन्नखिलमपि सत्यं शिवमयं महावाक्यार्थानामवगतसमभ्यासव-  
 शतः । गतद्वैताभावः शिव शिव शिवेत्येव विलपन् मुनिर्न० ॥ १६ ॥

इमां मुक्तावस्थां परमशिवसंस्थां गुरुकृपासुधापांशावाप्यां सहज-  
सुखवाप्यामनुदिनम् । मुहुर्मज्जन्मज्जन् भजति सुकृती चेन्नरव-  
रस्तदा योगी त्यागी कविरिति वदन्तीह कवयः ॥ १७ ॥ मौने  
मौनी गुणिनि गुणवान् पंडिते पंडितश्च दीने दीनः सुखिनि सुखवान्  
भोगिनि प्रासभोगः । मूर्खे मूर्खो युवतिषु युवा वाग्मिनि प्रौढ-  
वाग्मी धन्यः कोऽपि त्रिभुवनजयी योवधूतेऽवधूतः ॥ १८ ॥  
इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचिता श्रीशिवानंदलहरी संपूर्णा ॥

### ८९. सदाशिवपञ्चरत्नम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यत्संदर्शनमात्राद्भक्तिर्जाताप्यविद्वक्कणस्य ।  
तत्संदर्शनमधुना कृत्वा नूनं कृतार्थोऽस्मि ॥ १ ॥ योऽनिशमात्म-  
न्येव ह्यात्मानं संदधद्दीध्याम् । भस्मच्छन्नाल इव जडाकृति-  
श्चरति तं नौमि ॥ २ ॥ यस्य विलोकनमात्राद्भेतसि संजायते शीघ्रम् ।  
वैराग्यमचलमखिलेष्वपि विषयेषु प्रणौमि तं यमिनम् ॥ ३ ॥  
पुरतो भवतु कृपाब्धिः पुरवैरिनिविष्टमानसः सोऽयम् । परमशिवे-  
न्द्रकराम्बुजसंजातो यः सदाशिवेन्द्रो मे ॥ ४ ॥ उन्मत्तवत्संचर-  
तीह शिष्यस्तवेति लोकस्य वचांसि शृण्वन् । खिद्यद्बुवाचास्य गुरुः  
पुराहो ह्युन्मत्तता मे न हि तादृशीति ॥ ५ ॥ पञ्चकमेतद्भक्त्या  
श्लोकानां विरचितं लोके । यः पठति सोऽपि लभते कुरुणां शीघ्रं  
सदाशिवेन्द्रस्य ॥ ६ ॥ इति सदाशिवपञ्चरत्नं संपूर्णम् ॥

### ९०. पशुपत्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पशुपतीदुपतिं धरणीपतिं भुजगलोकपतिं च  
सतीपतिम् । प्रणतभक्तजनार्तिहरं परं भजत रे मनुजा गिरिजापतिम्  
॥ १ ॥ न जनको जननी न च सोदरो न तनयो न च भूरिबलं

कुलम् । अवति कोऽपि न कालवशं गतं भजत रे मनुजा गिरिजा-  
पतिम् ॥ २ ॥ मुरजडिंङ्गिमवाद्यविलक्षणं मधुरपंचमनाद्विशारदम् ।  
प्रमथभूतगणैरपि सेवितं भजत रे मनुजा० ॥ ३ ॥ शरणदं सुखदं  
शरणान्वितं शिव शिवेति शिवेति नतं नृणाम् । अभयदं करुणा-  
वरुणालयं भजत रे मनुजा० ॥ ४ ॥ नरशिरोरन्वितं मणिकुंडलं  
भुजगहारमुदं वृषभध्वजम् । चितिरजोधवलीकृतविग्रहं भजत रे  
मनुजा० ॥ ५ ॥ मखविनाशकरं शशिशेखरं सततमध्वरभाजिफलप्र-  
दम् । प्रलयदग्धसुरासुरमानवं भजत रे मनुजा० ॥ ६ ॥ मदमपास्य  
विरं हृदि संस्थितं मरणजन्मजरामयपीडितम् । जगदुदीक्ष्य समीप-  
मयाकुलं भजत रे मनुजा० ॥ ७ ॥ हरिविरंचिसुराधिपपूजितं यम-  
जनेशधनेशनमस्कृतम् । त्रिनयनं भुवनत्रितयाधिपं भजत रे  
मनुजा० ॥ ८ ॥ पशुपतेरिदमष्टकमद्भुतं विरचितं पृथिवीपतिसूरिणा ।  
पठति संश्रृणुते मनुजः सदा शिवपुरीं वसते लभते मुदम् ॥ ९ ॥  
इति श्रीपशुपत्यष्टकं संपूर्णम् ॥

### ९१. विश्वेश्वरनीराजनम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सत्यं ज्ञानं शुद्धं पूर्णं हृदि भातं, वन्दे शम्भुं  
शांतं मायागुणरहितम् । साक्षिरूपं तत्त्वं विद्वद्भिर्गम्यं, वेदैर्ज्ञेयं  
नित्यं गुरुभक्तैर्वन्द्यम् । ॐ हर हर हर महादेव ॥ १ ॥ देवान् भीतान्  
इष्ट्वा यः कृपयाविष्टो, विषपानमपि कृत्वाऽसितकंठो जातः ।  
त्रिपुरं विभिदे युद्धे दुर्भेद्यं सर्वैस्तं वन्दे सर्वेशं देवैर्हृदि ध्यातम् ।  
ॐ हर हर० ॥ २ ॥ विघ्नविनाशनकर्ता भवतां यस्तातः, पूज्यो  
निखिलैर्देवैर्दुरितं हरतु नः । स्कंदः पुत्रो बलवान् तारकासुरहंता  
स्वमात्रे वरदाता ब्रह्मचर्यं धर्ता । ॐ हर हर० ॥ ३ ॥ दशमुखबाण-  
प्रभृतयो भक्तास्ते जाताः, नाहं वक्तुं शक्तः परिगणनं कृत्वा । ये

देवानामैश्वर्यं स्वाधीनं चक्रुः, तेषां चित्रं वीर्यं तव कृपया जातम् ।  
 ॐ हर हर० ॥ ४ ॥ पूजां कर्तुं विष्णुर्नेत्रं त्वयि समर्प्य, राज्यं  
 कुरुते जगतां त्रयाणां तव दृष्ट्या । यतीनां हृदये स्थित्वा कामं  
 नाशयिता, गंगाधर शिव शंकर गिरिजाधीशस्त्वम् । ॐ हर  
 हर० ॥ ५ ॥ संहर्तुं शिवरूपमुग्रं तव ध्यात्वा भीता देवाः सर्वे  
 भक्तिं त्वयि चक्रुः । दुःखं दृष्ट्वा जगति शरणं त्वां यामो देवा-  
 नामपि देवं महादेवं प्रणुमः । ॐ हर हर० ॥ ६ ॥ त्यक्त्वा धर्मं  
 ब्रह्मा दुहितर्यासक्तः, दंडं प्राप्तस्त्वत्तः पंथानं नीतः । विद्योप-  
 देष्टुस्त्वत्तः सनकाद्या भक्ताः, उपदेशं शृण्वन्ति वैराग्ये सक्ताः ।  
 ॐ हर हर० ॥ ७ ॥ प्राणान्ते वै काश्यां मुक्तिं सर्वेभ्यो वेद-  
 पुराणैः कथितां ददते नित्यं यः । सर्वज्ञं तमनादिं स्तौति यो  
 भक्त्या, अर्थं कामं धर्मं मोक्षं लभते सः ॥ ॐ हर हर हर  
 महादेव ॥ ८ ॥ इत्यच्युतानन्दगिरिविरचितं विश्वेश्वरनीराजनं  
 संपूर्णम् ॥

### ९२. विश्वनाथाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ गंगातरंगारमणीयजटाकलापं गौरीनिरंतर-  
 विभूषितवामभागम् । नारायणप्रियमनंगमदापहारं वाराणसीपुर-  
 पतिं भज विश्वनाथम् ॥ १ ॥ वाचामगोचरमनेकगुणस्वरूपं वागी-  
 शविष्णुसुरसेवितपादपीठम् । बामेन विप्रह्वरेण कलत्रवर्तं वारा-  
 णसी० ॥ २ ॥ भूताधिपं भुजगभूषणभूषितांगं व्याघ्राजिनांबरधरं  
 जटिलं त्रिनेत्रम् । पाशांकुशाभयवरप्रदशूलपाणिं वाराणसी०  
 ॥ ३ ॥ शीतांशुशोभितकिरीटविराजमानं भालेक्षणानलविशोषित-  
 पंचबाणम् । नागाधिपारचितभासुरकर्णपूरं वाराणसी० ॥ ४ ॥  
 पंचाननं दुरितमत्तमतंगजानां नागांतर्कं दनुजपुंगवपञ्चगानाम् ।

दावानलं मरणशोकजराटवीनां वाराणसी० ॥ ५ ॥ तेजोमयं  
सगुणनिर्गुणमद्वितीयमानंदकंदमपराजितमप्रमेयम् । नागात्मकं  
सकलनिष्कलमात्मरूपं वाराणसी० ॥ ६ ॥ आशां विहाय परिहृत्य  
परस्य निर्दां पापे मतिं च सुनिवार्य मनः समाधौ । आदाय  
हृत्कमलमध्यगतं परेशं वाराणसी० ॥ ७ ॥ रागादिदोषरहितं  
स्वजनानुरागवैराग्यशांतिनिलयं गिरिजासहायम् । माधुर्यधैर्यसुभगं  
गरलाभिरामं वाराणसी० ॥ ८ ॥ वाराणसीपुरपतेः स्तवनं शिवस्य  
व्याख्यातमष्टकमिदं पठते मनुष्यः । विद्यां श्रियं विपुलसौख्यम-  
नंतकीर्तिं संप्राप्य देहविलये लभते च मोक्षम् ॥ ९ ॥ विश्वनाथा-  
ष्टकमिदं यः पठेच्छिवसन्निधौ । शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह  
भोदते ॥ १० ॥ इति श्रीव्यासकृतं विश्वनाथाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ९.३. शिवनामावल्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ हे चंद्रचूड मदनांतक शूलपाणे स्थाणो  
गिरीश गिरिजेश महेश शंभो । भूतेश भीतभयसूदन मामनाथं  
संसारदुःखगहनाजगदीश रक्ष ॥ १ ॥ हे पार्वतीहृदयवल्लभ चंद्रमौले  
भूताधिप प्रमथनाथ गिरीशजाप । हे वामदेव भव रुद्र पिनाकपाणे  
संसार० ॥ २ ॥ हे नीलकंठ वृषभध्वज पंचवक्त्र लोकेश शेषवल्लभ  
प्रमथेश शर्व । हे धूर्जटे पशुपते गिरिजापते मां संसार० ॥ ३ ॥  
हे विश्वनाथ शिव शंकर देवदेव गंगाधर प्रमथनाथक नंदिकेश ।  
बाणेश्वरांशकरिपो हर लोकनाथ संसार० ॥ ४ ॥ वाराणसीपुरपते  
मणिकर्णिकेश वीरेश दक्षमखकाल विभो गणेश । सर्वज्ञ सर्व-  
हृदयैकनिवास नाथ संसार० ॥ ५ ॥ श्रीमन्महेश्वर कृपामय हे  
दयालो हे व्योमकेश शितिकंठ गणाधिनाथ । भस्मांगराग नृकपाल-  
कलापमाल संसार० ॥ ६ ॥ कैलासशैलविनिवास वृषाकपे हे



मृत्युञ्जय त्रिनयन त्रिजगन्निवास । नारायणप्रिय मदापह शक्ति-  
नाथ संसार० ॥ ७ ॥ विश्वेश विश्वभवनाशितविश्वरूप विश्वात्मक  
त्रिभुवनैकगुणाभिवेश । हे विश्वबन्धुकरुणामय दीनबन्धो संसार०  
॥ ८ ॥ गौरीविलासभुवनाय महेश्वराय पञ्चाननाय शरणागतरक्ष-  
काय । शर्वाय सर्वजगतामधिपाय तस्मै दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः  
शिवाय ॥ ९ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं शिवनामावल्यष्टकं  
संपूर्णम् ॥

### ९४. प्रदोषस्तोत्राष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सत्यं ब्रवीमि परलोकहितं ब्रवीमि सारं  
ब्रवीम्युपनिषद्बुद्धयं ब्रवीमि । संसारमुलबणमसारमवाप्य जंताः  
सारोऽयमीश्वरपदांबुरुहस्य सेवा ॥ १ ॥ ये नार्थयन्ति गिरिशं  
समये प्रदोषे ये नार्चितं शिवमपि प्रणमन्ति चान्ये । एतत्कथां  
श्रुतिपुटैर्न पिबन्ति मूढास्ते जन्मजन्मसु भवन्ति नरा दरिद्राः ॥ २ ॥  
ये वै प्रदोषसमये परमेश्वरस्य कुर्वन्त्यनन्यमनसोऽग्निसरोजपूजाम् ।  
नित्यं प्रवृद्धधनधान्यकलत्रपुत्रसौभाग्यसंपदधिकास्त इहैव लोके  
॥ ३ ॥ कैलासशैलभुवने त्रिजगज्जनित्रीं गौरीं निवेद्य कनकाचित-  
रत्नपीठे । नृत्यं विधातुमभिवाञ्छति शूलपाणौ देवाः प्रदोषसमये तु  
भजन्ति सर्वे ॥ ४ ॥ वाग्देवी धृतवल्लकी शतमुखो वेणुं दधत्पद्मज-  
स्तालोन्निद्रकरो रमा भगवती गेयप्रयोगान्विता । विष्णुः सांद्रमृदंग-  
वादनपटुर्देवाः समन्तात्स्थिताः सेवन्ते तमनु प्रदोषसमये देवं मूढा-  
नीपतिम् ॥ ५ ॥ गंधर्वयक्षपतगोरगासिद्धसाध्यविद्याधरामरवरा-  
प्सरसां गणांश्च । येऽन्ये त्रिलोकनिलयाः सहभूतवर्गाः प्राप्ते  
प्रदोषसमये हरपार्श्वसंस्थाः ॥ ६ ॥ अतः प्रदोषे शिव एक  
एव पूज्योऽथ नान्ये हरिपद्मजायाः । तस्मिन्महेशे विधिनेज्य-  
बु० १२

माने सर्वे प्रसीदन्ति सुराधिनाथाः ॥ ७ ॥ एष ते तनयः पूर्व-  
जन्मनि ब्राह्मणोत्तमः । प्रतिग्रहैर्वयो निन्ये न दानाद्यैः सुकर्मभिः  
॥ ८ ॥ अतो दारिद्र्यमापन्नः पुत्रस्ते द्विजभामिनि । तद्दोषपरिहारार्थं  
शरणं यातु शंकरम् ॥ ९ ॥ इति स्कांदोक्तं प्रदोषस्तोत्राष्टकं संपूर्णम् ॥

### ९५. चंद्रशेखराष्टकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ चंद्रशेखर चंद्रशेखर चंद्रशेखर पाहि माम् ।  
चंद्रशेखर चंद्रशेखर चंद्रशेखर रक्ष माम् ॥ १ ॥ रत्नसानुशरासनं  
रजताद्रिशृंगनिकेतनं सिंजिनीकृतपद्मगेश्वरमच्युताननसायकम् ।  
क्षिप्रदग्धपुरत्रयं त्रिदिवालयैरभिवंदितं चंद्रशेखरमाश्रये मम किं  
करिष्यति वै यमः ॥ २ ॥ पंचपादपुष्पगंधपदांबुजद्वयशोभितं  
भाललोचनजातपावकदग्धमन्मथविग्रहम् । भस्मदिग्धकलेवरं  
भवनाशनं भवमव्ययं चंद्रशेखर० ॥ ३ ॥ सत्तवारणमुख्यचर्म-  
कृतोत्तरीयमनोहरं पंकजासनपद्मलोचनपूजितांगिसरोरुहम् । देव-  
सिंधुतरंगसीकरसिक्तशुभ्रजटाधरं चंद्रशेखर० ॥ ४ ॥ यक्षराजसखं  
भगाक्षहरं भुजंगविभूषणं शैलराजसुतापरिष्कृतचारुवामकलेवरम् ।  
क्ष्वेडनीलगलं परश्वधधारिणं मृगधारिणं चंद्रशेखर० ॥ ५ ॥  
कुंडलीकृतकुंडलेश्वरकुंडलं वृषवाहनं नारदादिमुनीश्वरस्तुतवैभवं  
भुवनेश्वरम् । अंधकांधकमाश्रितामरपादपं शमनांतकं चंद्रशेखर०  
॥ ६ ॥ भेषजं भवरोगिणामखिलपदामपहारिणं दक्षयज्ञविनाशनं  
त्रिगुणात्मकं त्रिविलोचनम् । भुक्तिमुक्तिफलप्रदं सकलाघसंघ-  
निबर्हणं चंद्रशेखर० ॥ ७ ॥ भक्तवत्सलमर्चितं निधिमक्षयं हरि-  
दंबरं सर्वभूतपतिं परात्परमप्रमेयमनुत्तमम् । सोमवारिदभूद्भुता-  
शनसोमपानिलखाकृतिं चंद्रशेखर० ॥ ८ ॥ विश्वसृष्टिविधायिनं  
पुनरेव पालनतत्परं संहरंतमपि प्रपंचमशेषलोकनिवासिनम् ।

क्रीडयंतमहर्निशं गणनाथयूथसमन्वितं चंद्रशेखरं ॥ ९ ॥ मृत्यु-  
भीतमृकंडसूनुकृतस्तवं शिवसंनिधौ यत्र कुत्र च यः पठेन्न हि  
तस्य मृत्युभयं भवेत् । पूर्णमायुररोगितामखिलार्थसंपदमादरं  
चंद्रशेखर एव तस्य ददाति मुक्तिमयवतः ॥ १० ॥ इति श्रीचंद्र-  
शेखराष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ९६. निर्वाणदशकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ न भूमिर्न तोयं न तेजो न वायुर्न खं नैन्द्रियं  
वा न तेषां समूहः । अनैकांतिकत्वात्सुषुप्त्यैकसिद्धस्तदेकोऽवशिष्टः  
शिवः केवलोऽहम् ॥ १ ॥ न वर्णा न वर्णाश्रमाचारधर्मा न मे  
धारणाध्यानयोगादयोऽपि । अनात्माश्रयोऽहं ममाध्यासहाना-  
त्तदेको ॥ २ ॥ न माता पिता वा न देवा न लोका न वेदा न  
यज्ञा न तीर्थं नृवंति । सुषुप्तौ निरस्तातिशून्यात्मकत्वात्तदेको ॥ ३ ॥  
न सांख्यं न शैवं न तत्पांचरात्रं न जैनं न मीमांसकादेर्मतं वा ।  
विशिष्टानुभूत्या विशुद्धात्मकत्वात्तदेको ॥ ४ ॥ न शुक्लं न कृष्णं  
न रक्तं न पीतं न पीनं न कुब्जं न दुस्त्वं न दीर्घम् । अरूपं तथा  
ज्योतिराकारकत्वात्तदेको ॥ ५ ॥ न जाग्रन्न मे स्वप्नको वा सुषुप्तिर्न  
विश्वो न वा तैजसः प्राज्ञको वा । अविद्यात्मकत्वाद्भ्रयाणां तुरीयं  
तदेको ॥ ६ ॥ न शास्ता न शास्त्रं न शिष्यो न शिक्षा न च त्वं  
न चाहं न चार्थं प्रपञ्चः । स्वरूपावबोधाद्विकल्पासहिष्णुस्तदेको ॥  
७ ॥ न चोर्ध्वं न चाधो न चांतर्न बाह्यं न मध्यं न तिर्यङ् न  
पूर्वा परा दिक् । वियव्यापकत्वादखंडैकरूपस्तदेको ॥ ८ ॥  
अपि व्यापकत्वादितत्त्वात्प्रयोगात्स्वतःसिद्धभावादनन्याश्रयत्वात् ।  
जगत्तुच्छमेतत्समस्तं तदन्यस्तदेको ॥ ९ ॥ न चैकं तदन्यद्वितीयं  
कुतः स्यान्न चाकेवलत्वं न वा केवलत्वम् । न शून्यं न चाशून्यम-

द्वैतकत्वात्कथं सर्ववेदांतसिद्धं ब्रवीमि ॥ १० ॥ इति श्रीमच्छंकरा-  
चार्यविरचितं निर्वाणदशकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ९७. शिवरक्षास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीशिवरक्षास्तोत्रमन्त्रस्य याज्ञवल्क्य  
ऋषिः, श्रीसदाशिवो देवता, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीसदाशिव  
प्रीत्यर्थं शिवरक्षास्तोत्रजपे विनियोगः ॥ चरितं देवदेवस्य महादेवस्य  
पावनम् । अपारं परमोदारं चतुर्वर्गस्य साधनम् ॥ १ ॥ गौरी-  
विनायकोपेतं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रकम् । शिवं ध्यात्वा दशभुजं शिव-  
रक्षां पठेन्नरः ॥ २ ॥ गङ्गाधरः शिरः पातु भालमर्बेन्दुशेखरः ।  
नयने मदनध्वंसी कर्णौ सर्पविभूषणः ॥ ३ ॥ घ्राणं पातु पुरारारि-  
मुंघ्रं पातु जगत्पतिः । जिह्वां वागीश्वरः पातु कन्धरां शितिकन्धरः  
॥ ४ ॥ श्रीकण्ठः पातु मे कण्ठं स्कन्धौ विश्वेश्वरन्धरः । भुजौ  
भूभारसंहर्ता करौ पातु पिनाकधृक् ॥ ५ ॥ हृदयं शंकरः पातु  
जठरं गिरिजापतिः । नाभिं मृत्युञ्जयः पातु कटी व्याघ्राजिनाम्बरः  
॥ ६ ॥ सक्थिनी पातु दीनार्तशरणागतवत्सलः । ऊरू महेश्वरः  
पातु जानुनी जगदीश्वरः ॥ ७ ॥ जङ्घे पातु जगत्कर्ता गुल्फौ पातु  
गणाधिपः । चरणौ करुणासिन्धुः सर्वाङ्गानि सदाशिवः ॥ ८ ॥  
एतां शिवबलोपेतां रक्षां यः सुकृती पठेत् । स भुक्त्वा सकला-  
न्कामान् शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥ ९ ॥ ग्रहभूतपिशाचाद्याल्लोक्ये  
विचरन्ति ये । दूरादाशु पलायन्ते शिवनामाभिरक्षणात् ॥ १० ॥  
अभयंकरनामेदं कवचं पार्वतीपतेः । भक्त्या विभर्ति यः कण्ठे  
तस्य वश्यं जगन्नयम् ॥ ११ ॥ इमां नारायणः स्वप्ने शिवरक्षां  
यथादिशत् । प्रातरुत्थाय योगीन्द्रो याज्ञवल्क्यस्तथाऽलिखत्  
॥ १२ ॥ इति श्रीयाज्ञवल्क्यप्रोक्तं शिवरक्षास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## १८. महामृत्युञ्जयस्तोत्रम् ।

श्रीराणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीमहामृत्युञ्जयस्तोत्रमन्त्रस्य श्रीमा-  
 र्कण्डेय ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमृत्युञ्जयो देवता, गौरी  
 शक्तिः, मम सर्वारिष्टसमस्तमृत्युशान्त्यर्थं सकलैश्वर्यप्राप्त्यर्थं जपे  
 विनियोगः । अथ ध्यानम् ॥ चन्द्रार्काग्निविलोचनं स्मितमुखं  
 पद्मद्वयान्तःस्थितं मुद्रापाशमृगाक्षसत्रविलसत्पाणिं हिमांशुप्रभुम् ।  
 कोटीन्दुप्रगलत्सुधासुततनुं हारादिभूषोज्ज्वलं कान्तं विश्वविमोहनं  
 पशुपतिं मृत्युञ्जयं भावयेत् । ॐ रुद्रं पशुपतिं स्थाणुं  
 नीलकण्ठमुमापतिम् । नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति  
 ॥ १ ॥ नीलकण्ठं कालमूर्तिं कालज्ञं कालनाशनम् । नमामि  
 शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥ २ ॥ नीलकण्ठं विरूपाक्षं  
 निर्मलं निलयप्रभम् । नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति  
 ॥ ३ ॥ वामदेवं महादेवं लोकनाथं जगद्गुरुम् । नमामि शिरसा  
 देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥ ४ ॥ देवदेवं जगन्नाथं देवेशं  
 वृषभध्वजम् । नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति  
 ॥ ५ ॥ गङ्गाधरं महादेवं सर्वाभरणभूषितम् । नमामि शिरसा  
 देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥ ६ ॥ अनायः परमानन्दं कैवल्य-  
 पदगामिनि । नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥ ७ ॥  
 स्वर्गापवर्गदातारं सृष्टिस्थितिबिनाशकम् । नमामि शिरसा देवं किं  
 नो मृत्युः करिष्यति ॥ ८ ॥ उत्पत्तिस्थितिसंहारकर्तारमीश्वरं गुरुम् ।  
 नमामि शिरसा देवं किं नो मृत्युः करिष्यति ॥ ९ ॥ मार्कण्डेयकृतं  
 स्तोत्रं यः पठेच्छिवसन्निधौ । तस्य मृत्युभयं नास्ति नाग्निचौरभयं  
 क्वचित् ॥ १० ॥ शतावर्तं प्रकर्तव्यं संकटे कष्टनाशनम् । शुचि-  
 र्भूत्वा पठेत्स्तोत्रं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥ ११ ॥ मृत्युञ्जय महादेव

त्राहि मां शरणागतम् । जन्ममृत्युजरारोगैः पीडितं कर्मबन्धनैः  
 ॥ १२ ॥ तावतस्त्वद्गतप्राणस्त्वच्चित्तोऽहं सदा मृड । इति  
 विज्ञाप्य देवेशं त्र्यम्बकाख्यं मनुं जपेत् ॥ १३ ॥ नमः शिवाय  
 साम्बाय हरये परमात्मने । प्रणतक्लेशनाशाय योगिनां पतये नमः  
 ॥ १४ ॥ शताङ्गायुर्मन्त्रः । ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रः हन हन दह  
 दह पच पच गृहाण गृहाण मारय मारय मर्दय मर्दय महामहाभैरव  
 भैरवरूपेण धुनय धुनय कम्पय कम्पय विघ्नय विघ्नय विश्वेश्वर  
 क्षोभय क्षोभय कटुकटु मोहय मोहय हुं फट् स्वाहा इति मन्त्रमात्रेण  
 समाभीष्टो भवति ॥ १५ ॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे मार्कण्डेयकृत-  
 महामृत्युञ्जयस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ९९. मृत्युञ्जयमानसपूजास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कैलासे कमनीयरत्नखचिते कल्पद्रुमूले स्थितं  
 कर्पूरस्कटिकेन्दुसुन्दरतनुं कात्यायनीसेवितम् । गङ्गातुङ्गतरङ्गरञ्जित-  
 जटाभारं कृपासागरं कण्ठालंकृतशेषभूषणमसुं मृत्युञ्जयं भावये  
 ॥ १ ॥ आगत्य मृत्युञ्जय चन्द्रमौले व्याघ्राजिनालंकृत शूलपाणे ।  
 स्वभक्तसंरक्षणकामधेनो प्रसीद विश्वेश्वर पार्वतीश ॥ २ ॥ भास्व-  
 न्मौक्तिकतोरणे मरकतस्तम्भायुतालंकृते सौधे धूपसुवासिते माणिमये  
 माणिक्यदीपाञ्जिते । ब्रह्मेन्द्रामरयोगिपुङ्गवगणैर्युक्ते च कल्पद्रुमैः  
 श्रीमृत्युञ्जय सुस्थिरो भव विभो माणिक्यसिंहासने ॥ ३ ॥ मन्दार-  
 मल्लीकरवीरमाधवीपुन्नागनीलोत्पलचम्पकान्वितैः । कर्पूरपाटीरसुवा-  
 सितैर्जलैराघ्रस्त्व मृत्युञ्जय पाद्यमुत्तमम् ॥ ४ ॥ सुगन्धपुष्पप्रकरैः  
 सुवासितैर्विद्यद्दीशीतलवारिभिः शुभैः । त्रिलोकनाथार्तिहरार्घ्य-  
 मादराद्गृहाण मृत्युञ्जय सर्ववन्दित ॥ ५ ॥ हिमाम्बुवासितैस्तोयैः  
 शीतलैरतिपावनैः । मृत्युञ्जय महादेव शुद्धाचमनमाचर ॥ ६ ॥

गुडदधिसहितं मधुप्रकीर्णं सुघृतसमन्वितधेनुदुग्धयुक्तम् । शुभकर  
मधुपर्कमाहर त्वं त्रिनयन मृत्युहर त्रिलोकवन्द्य ॥ ७ ॥ पञ्चाक्ष  
शान्त पञ्चाक्ष पञ्चपातकसंहर । पञ्चामृतस्नानमिदं कुरु मृत्युञ्जय  
प्रभो ॥ ८ ॥ जगन्त्रयीख्यातसमस्ततीर्थसमाहृतैः कल्मषहारिभिश्च ।  
स्नानं सुतोयैः समुदाचर त्वं मृत्युञ्जयानन्तगुणाभिराम ॥ ९ ॥  
आनीतेनातिशुभ्रेण कौशेयेनामरद्रुमात् । मार्जयामि जटाभारं शिव  
मृत्युञ्जय प्रभो ॥ १० ॥ नानाहेमविचित्राणि चौरचीनाम्बराणि  
च । विविधानि च दिव्यानि मृत्युञ्जय सुधारय ॥ ११ ॥ विशुद्ध-  
मुक्ताफलजालरम्यं मनोहरं काञ्चनहेमसूत्रम् । यज्ञोपवीतं परमं  
पवित्रमाधत्स्व मृत्युञ्जय भक्तिगम्य ॥ १२ ॥ श्रीगन्धं घनसार-  
कुङ्कुमयुतं कस्तूरिकापूरितं कालेयेन हिमाम्बुना विरचितं मन्दार-  
संवासितम् । दिव्यं देव मनोहरं मणिमये पात्रे समारोपितं सर्वाङ्गेषु  
विलेपयामि सततं मृत्युञ्जय श्रीविभो ॥ १३ ॥ अक्षतैर्धवलैर्दिव्यैः  
सम्यक्तिलसमन्वितैः । मृत्युञ्जय महादेव पूजयामि वृषध्वज ॥ १४ ॥  
चम्पकपङ्कजकुन्दैः करवीरमल्लिकाकुसुमैः । विस्तारय निजमुकुटं  
मृत्युञ्जय पुण्डरीकनयनात् ॥ १५ ॥ माणिक्यपादुकाद्वन्द्ये मौनि-  
हृत्पद्ममन्दिरे । पादौ सत्पद्मसदृशौ मृत्युञ्जय निवेशय ॥ १६ ॥  
माणिक्यकेयूरकिरीटहारैः काञ्चीमणिस्थापितकुञ्जालैश्च । मञ्जीर-  
मुख्याभरणैर्मनोज्ञैरङ्गानि मृत्युञ्जय भूषयामि ॥ १७ ॥ गजवदन-  
स्कन्दधृतेनातिस्वच्छेन चामरयुगेन । गलदलकामनपद्मं मृत्युञ्जय  
भावयामि हृत्पद्मे ॥ १८ ॥ मुक्तातपत्रं शशिकोटिशुभ्रं शुभप्रदं काञ्चन-  
दण्डयुक्तम् । माणिक्यसंस्थापितहेमकुम्भं सुरेश मृत्युञ्जय तेऽर्प-  
यामि ॥ १९ ॥ मणिमुकुरे निष्पटले त्रिजगद्गाढान्वकारससाधे ।  
कन्दर्पकोटिसदृशं मृत्युञ्जय पश्य वदनमात्मीयम् ॥ २० ॥ कर्पूरचूर्णं

कपिलाज्यपूतं दास्यामि कालेयसमन्वितैश्च । समुद्भवं पावनगन्ध-  
 धूपितं मृत्युञ्जयाङ्गं परिकल्पयामि ॥ २१ ॥ वर्तित्रयोपेतमखण्ड-  
 दीप्त्या तमोहरं बाह्यमथान्तरं च । राज्यं समस्तामरवर्गहृद्यं सुरेश  
 मृत्युञ्जय वंशदीपम् ॥ २२ ॥ राजान्नं मधुरान्वितं च मृदुलं  
 माणिक्यपात्रे स्थितं हिङ्गूजीरकसन्मरीचमिलितैः शाकैरनेकैः शुभैः ।  
 शाकं सम्यगपूपपूपसहितं सद्योघृतेनाद्भुतं श्रीमृत्युञ्जय पार्वतीप्रिय  
 विभो सापोशनं भुज्यताम् ॥ २३ ॥ कूष्माण्डवार्ताकपटोलिकानां  
 फलानि रम्याणि च कारवेष्ट्याः । सुपाकयुक्तानि ससौरभाणि  
 श्रीकण्ठ मृत्युञ्जय भक्षयेत् ॥ २४ ॥ शीतलं मधुरं स्वच्छं पावनं  
 वासितं लघु । मध्ये स्त्रीकुरु पानीयं शिव मृत्युञ्जय प्रभो ॥ २५ ॥  
 शर्करामिलितं क्षिग्धं दुग्धघ्नं गोघृतान्वितम् । कदलीफलसंमिश्रं  
 भुज्यतां मृत्युसंहर ॥ २६ ॥ केवलमतिमाधुर्यं दुग्धैः क्षिग्धैश्च  
 शर्करामिलितैः । एलामरीचमिलितं मृत्युञ्जय देव भुङ्क्ष्व परमा-  
 न्नम् ॥ २७ ॥ रम्भाचूतकपित्थकण्टकफलैर्द्राक्षारसस्वादुमत्स्वर्जरैर्म-  
 धुरेश्मुखण्डशकलैः सन्नारिकेलाम्बुभिः । कर्पूरेण सुवासितैर्गुडजलै-  
 र्माधुर्ययुक्तैर्विभो श्रीमृत्युञ्जय पूरय त्रिभुवनाधारं विशालोदरम्  
 ॥ २८ ॥ मनोहरम्भावनखण्डखण्डितात्रुचिप्रदान्सर्षपजीरकांश्च ।  
 ससौरभान्सैन्धवसेवितांश्च गृहाण मृत्युञ्जय लोकवन्द्य ॥ २९ ॥  
 हिङ्गूजीरकसहितं विमलामलकं कपित्थमतिमधुरम् । विसखण्डाँल-  
 वणयुतान्मृत्युञ्जय तेऽर्पयामि जगदीश ॥ ३० ॥ एलाशुण्ठीस-  
 हितं दध्यघ्नं चारु हेमपात्रस्थम् । अमृतप्रतिनिधिमाढ्यं मृत्युञ्जय  
 भुज्यतां त्रिलोकेश ॥ ३१ ॥ जम्बीरनीराञ्जितशृङ्गवेरं मनोहरान-  
 म्लशलादुखण्डान् । मृदूपदंशान्सहितोपभुङ्क्ष्व मृत्युञ्जय श्रीक-  
 र्ण्यसमुद्र ॥ ३२ ॥ नागररामठयुक्तं सुललितजम्बीरनीरसंपूर्णम् ।



मथितं सैन्धवसहितं पिब हर मृत्युञ्जय क्रतुध्वंसिन् ॥ ३३ ॥  
मन्दारहेमाम्बुजगन्धयुक्तैर्मन्दाकिनीनिर्मलपुण्यतोरैः । गृहाण मृत्यु-  
ञ्जय पूर्णकाम श्रीमत्परापोशनमञ्जकेश ॥ ३४ ॥ गगनधुनीधिमल-  
जलैर्मृत्युञ्जय पद्मरागपात्रगतैः । मृगमदचन्दनपूर्णं प्रक्षालय चारु  
हस्तपदयुग्मम् ॥ ३५ ॥ पुष्पागमल्लिकाकुन्दवासितैर्जङ्घवीजलैः ।  
मृत्युञ्जय महादेव पुनराचमनं कुरु ॥ ३६ ॥ भौक्तिकचूर्णसमेतैर्मृ-  
गमदघनसारवासितैः पूगैः । पूगैः स्वर्णसमानैर्मृत्युञ्जय तेऽर्पयामि  
ताम्बूलम् ॥ ३७ ॥ नीराजनं निर्मलदीप्तिमद्भिर्दीपाङ्कुरैस्त्वलमुच्छि-  
तैश्च । घण्टानिनादेन समर्पयामि मृत्युञ्जयाय त्रिपुरान्तकाय ॥ ३८ ॥  
विरिञ्चिमृष्यामरवृन्दवन्दिते सरोजमत्स्याङ्कितचक्रचिह्निते । ददामि  
मृत्युञ्जय पादपङ्कजे फणीन्द्रभूषे पुनरर्घ्यमीश्वर ॥ ३९ ॥ पुष्पा-  
गनीलोत्पलकुन्दजातीमन्दारमल्लीकरवीरपङ्कजैः । पुष्पाञ्जलिं बिल्व-  
दलैस्तुलस्या मृत्युञ्जयाङ्घ्रौ विनिवेशयामि ॥ ४० ॥ पदे पदे  
सर्वतमोनिःकुन्तनं पदे पदे सर्वशुभप्रदायकम् । प्रदक्षिणं भक्तियुतेन  
चेतसा करोमि मृत्युञ्जय रक्ष रक्ष माम् ॥ ४१ ॥ नमो गौरीशाय  
स्फटिकधवलाङ्गाय च नमो नमो लोकेशाय स्तुतविषुधलोकाय  
च नमः । नमः श्रीकण्ठाय क्षपितपुरदैत्याय च नमो नमो भाला-  
शाय स्मरमदविनाशाय च नमः ॥ ४२ ॥ संसारे जनितापरोग-  
सहिते तापत्रयाक्रन्दिते नित्यं पुत्रकलत्रवित्तविलसत्पाशैर्निबद्धं  
दृढम् । गर्वान्धं बहुपापवर्गसहितं कारुण्यदृष्ट्या विभो श्रीमृत्युञ्जय  
पार्वतीप्रिय सदा मां पाहि सर्वेश्वर ॥ ४३ ॥ सौधे रत्नमये नवो-  
त्पलदलाकीर्णे च तल्पान्तरे कौशेयेन मनोहरेण धवलेनाच्छादिते  
सर्वेशः । कर्पूराञ्जितदीपदीप्तिमिलिते रम्योपधानद्वये पार्वत्याः  
करपद्मलालितपदं मृत्युञ्जय भावये ॥ ४४ ॥ चतुश्चत्वारिंशद्भि-

लसदुपचारैरभिमर्तैर्मनःपद्मे भक्त्या बहिरपि च पूजां शुभकरीम् ।  
 करोति प्रत्यूषे निशि दिवसमध्येऽपि च पुमान्प्रयाति श्रीमृत्युञ्ज-  
 पदमनेकाद्भुतपदम् ॥ ४५ ॥ प्रातर्लिङ्गमुमापतेरहरहः संदर्शनात्स्व-  
 र्गदं मध्याह्ने हयमेधतुल्यफलदं सायन्तने मोक्षदम् । भानोरस्तमये  
 प्रदोषसमये पञ्चाक्षराराधनं तत्कालत्रयतुल्यमिष्टफलदं सद्योऽनवद्यं  
 दृढम् ॥ ४६ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यस्य श्रीगोविन्द-  
 भगवत्पूज्यपादशिष्यस्य श्रीमच्छंकराचार्यस्य कृतौ श्रीमृत्युञ्ज-  
 मानसपूजास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १००. काशीविश्वनाथस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कण्ठे यस्य लसत्करालगरलं गङ्गाजलं मस्तके  
 वामाङ्गे गिरिराजराजतनया जाया भवानी सती । नन्दिस्कन्द-  
 गणाधिराजसहिता श्रीविश्वनाथप्रभुः काशीमन्दिरसंस्थितोऽखिल-  
 गुरुर्देवात्सदा मङ्गलम् ॥ १ ॥ यो देवैरसुरैर्मुनीन्द्रतनयैर्गन्धर्व-  
 यक्षोरगैर्नागैर्भूतलवासिभिर्द्विजवरैः संसेवितः सिद्धये । या गङ्गोत्त-  
 रवाहिनी परिसरे तीर्थैरसंख्यैर्वृता सा काशी त्रिपुरारिराजनगरी  
 देयात् ॥ २ ॥ तीर्थानां प्रवरा मनोरथकरी संसारपारापरानन्दा  
 नन्दिगणेश्वरैरुपहिता देवैरशेषैः स्तुता । या शंभोर्मणिकुण्डलैक-  
 कणिका विष्णोस्तपोदीर्घिका सेयं श्रीमणिकर्णिका भगवती देयात् ॥  
 ३ ॥ पृषा धर्मपताकिनी तटरुहासेवावसञ्चाकिनी पश्यन्पातकिनी  
 भगीरथतपःसाफल्यदेवाकिनी । प्रेमारूढपताकिनी गिरिसुता सा  
 केकरास्वाकिनी काश्यामुत्तरवाहिनी सुरनदी देयात् ॥ ४ ॥  
 विन्नाबासनिवासकारणमहागण्डस्थलालम्बितः सिन्दूरारुणपुञ्जचन्द्र-  
 किरणप्रच्छादिनागच्छविः । श्रीविश्वेश्वरवल्लभो गिरिजया सानन्द-  
 कानन्दितः खेरास्यस्तव दुण्डिराजमुदितो दे० ॥ ५ ॥ केदारः

कलशेश्वरः पशुपतिर्धर्मेश्वरो मध्यमो ज्येष्ठेशो पशुपश्च कन्दुकशिवो  
 विवेश्वरो जम्बुकः । चन्द्रेशो ह्यमृतेश्वरो भृगुशिवः श्रीवृद्धकालेश्वरो  
 मध्येशो मणिकर्णिकेश्वरशिवो दे० ॥ ६ ॥ गोकर्णस्त्वथ भारभूत-  
 नुवनः श्रीचित्रगुप्तेश्वरो यक्षेशस्तिलपर्णसंगमशिवो शैलेश्वरः  
 कश्यपः । नागेशोऽग्निशिवो निषीश्वरशिवोऽगस्तीश्वरस्तारकज्ञाने-  
 शोऽपि पितामहेश्वरशिवो दे० ॥ ७ ॥ ब्रह्माण्डं सकलं मनोपितरसै  
 रत्नैः पयोभिर्हरं खेलैः पूरयते कुटुम्बनिलयान् शंभोर्विलासप्रदा ।  
 नानादिव्यलताविभूषितवपुः काशीपुराधीश्वरी श्रीविश्वेश्वरसुन्दरी  
 भगवती दे० ॥ ८ ॥ या देवी महिषासुरप्रमथनी या चण्डमुण्डा-  
 पहा या शुम्भासुररक्तबीजदमनी शक्रादिभिः संस्तुता । या शूला-  
 सिधनुःशराभयकरा दुर्गादिसंदक्षिणामाश्रित्याश्रितविघ्नशंसमयतु दे०  
 ॥ ९ ॥ आद्या श्रीर्विकटा ततस्तु विरजा श्रीमङ्गला पार्वती  
 विख्याता कमला विशालनयना ज्येष्ठा विशिष्टानना । कामाक्षी च  
 हरिप्रिया भगवती श्रीघण्टघण्टादिका मौर्या षष्टिसहस्रमातृसहिता  
 दे० ॥ १० ॥ आदौ पञ्चनदं प्रयागमपरं केदारकुण्डं कुरुक्षेत्रं  
 मानसकं सरोऽमृतजलं शावत्य तीर्थं परम् । मत्स्योदयं च दण्ड-  
 खाण्डसलिलं मन्दाकिनी जम्बुकं घण्टाकर्णसमुद्रकूपसहितो दे०  
 ॥ ११ ॥ रेवाकुण्डजलं सरस्वतिजलं दुर्वासकुण्डं ततो लक्ष्मी-  
 तीर्थलवाङ्कुशस्य सलिलं कन्दर्पकुण्डं तथा । दुर्गाकुण्डमसीजलं  
 हनुमतः कुण्डप्रतापोर्जितः प्रज्ञानप्रमुखानि वः प्रतिदिनं दे० ॥ १२ ॥  
 आद्यः कूपवरस्तु कालदमनः श्रीवृद्धकूपोऽपरो विख्यातस्तु परा-  
 शरस्तु विदितः कूपः सरो मानसः । जैगीषव्यमुनेः शशाङ्कनृपतेः  
 कूपस्तु धर्मोद्भवः ख्यातः सप्तसमुद्रकूपसहितो दे० ॥ १३ ॥  
 लक्ष्मीनायकविन्दुमाधवहरिर्लक्ष्मीनृसिंहस्ततो गोविन्दस्त्वथ गोपि-

काप्रियतमः श्रीनारदः केशवः । गङ्गाकेशववामनाख्यतदनु श्वेतो  
 हरिः केशवः प्रह्लादादिसमस्तकेशवगणो दे० ॥ १४ ॥ लोलार्को  
 विमलार्कमायुस्वरविः संवर्तसंज्ञो रविर्विख्यातो दुपदुःखखोल्कमरुणः  
 प्रोक्तोत्तरार्को रविः । गङ्गार्कस्त्वथ वृद्धवृद्धिविबुधा काशीपुरी-  
 संस्थिताः सूर्या द्वादशसंज्ञकाः प्रतिदिनं दे० ॥ १५ ॥ आद्यो  
 दुग्ण्डविनायको गणपतिश्चिन्तामणिः सिद्धिदः सेनाविघ्नपतिस्तु  
 वक्रवदनः श्रीपाशपाणिः प्रभुः । आशापक्षविनायकाप्रषकरो मोदा-  
 दिकः षड्गुणो लोलार्कादिविनायकाः प्रतिदिनं दे० ॥ १६ ॥ हेरम्बो  
 नलकूबरो गणपतिः श्रीभीमचण्डीगणो विख्यातो मणिकर्णिका-  
 गणपतिः श्रीसिद्धिदो विघ्नपः । मुण्डश्चण्डमुखश्च कष्टहरणः  
 श्रीदण्डहस्तो गणः श्रीदुर्गाख्यगणाधिपः प्रतिदिनं दे० ॥ १७ ॥  
 आद्यो भैरवभीषणस्तदपरः श्रीकालराजः क्रमाच्छ्रीसंहारकभैरव-  
 स्त्वथ रुद्रश्चोन्मत्तको भैरवः । क्रोधश्चण्डकपालभैरववरः श्रीभूत-  
 नाथादयो द्वाष्टौ भैरवमूर्तयः प्रतिदिनं दे० ॥ १८ ॥ आधा-  
 तोऽम्बिकया सह त्रिनयनः सार्धं गणैर्नन्दितां काशीमाशु विशन्  
 हरः प्रथमतो वार्षध्वजेऽवस्थितः । आयाता दश धेनवः सुकपिला  
 दिव्यैः पयोभिर्हरं ख्यातं तदृषभध्वजेन कपिलं दे० ॥ १९ ॥  
 आनन्दाख्यवनं हि चम्पकवनं श्रीनैमिषं खाण्डवं पुण्यं चैत्ररथं  
 त्वक्षाकविपिनं रम्भावनं पावनम् । दुर्गारण्यमयोऽपि कैरववनं  
 वृन्दावनं पावनं विख्यातानि वनानि त्रः प्रतिदिनं दे० ॥ २० ॥  
 अलिकुलदलनीलः कालदंष्ट्राकरालः सजलजलदनीलो व्यालयज्ञो-  
 पवीतः । अभयवरदहस्तो डामरोद्दामनादः सकलदुरितभक्षो मङ्गलं  
 वो ददातु ॥ २१ ॥ अर्धाङ्गो विकट्या गिरीन्द्रतनयः गौरी सती  
 सुन्दरी सर्वाङ्गे विलसद्विमूर्तिधवलो कालो विशालेक्षणः । वीरेशः

सहनन्दिभृङ्गिसहितः श्रीविश्वनाथः प्रभुः काशीमन्दिरसंस्थितोऽखिलगुरुर्देयात्सदा मङ्गलम् ॥ २२ ॥ यः प्रातः प्रयतः प्रसन्नमनसा प्रेमप्रमोदाकुलः ख्यातं तत्र विशिष्टपादभुवनेन्द्रादिभिर्यत्स्तुतम् । प्रातः प्राङ्मुखमासनोत्तमगतो ब्रूयाच्छृणोत्यादरात् काशीवासमुखान्यवाप्य सततं प्रीते शिवे धूर्जटेः ॥ २३ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं काशीविश्वनाथस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १०१. शिवाष्टोत्तरनामशतकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देवा उचुः ॥ जय शम्भो विभो रुद्र स्वयंभो जय शंकर । जयेश्वर जयेशान जय सर्वज्ञ कामद ॥ १ ॥ नीलकण्ठ जय श्रीद श्रीकण्ठ जय धूर्जटे । अष्टमूर्तेऽनन्तमूर्ते महामूर्ते जयानघ ॥ २ ॥ जय पापहरानङ्गनिःसङ्गाभङ्गनाशन । जय त्वं त्रिदशाधार त्रिलोकेश त्रिलोचन ॥ ३ ॥ जय त्वं त्रिपथाधार त्रिमार्ग त्रिभिरूर्जित । त्रिपुरारे त्रिधामूर्ते जयैकत्रिजटात्मक ॥ ४ ॥ शशिशेखर शूलेश पशुपाल शिवाप्रिय । शिवात्मक शिव श्रीद सुहृच्छ्रीशतनो जय ॥ ५ ॥ सर्व सर्वेश भूतेश गिरिश त्वं गिरीश्वर । जयोग्ररूप भीमेश भव भर्ग जय प्रभो ॥ ६ ॥ जय दक्षाध्वरध्वंसिन्नन्धकध्वंसकारक । रुण्डमालिन्कपालिस्त्वं मुजङ्गाजिनभूषण ॥ ७ ॥ दिगम्बर दिशानाथ श्योमकेश चितांपते । जयाधार निराधार भस्माधार धराधर ॥ ८ ॥ देवदेव महादेव देवतेशादिदैवत । वह्निवीर्य जय स्थाणो जयायोनिजसम्भव ॥ ९ ॥ भव शर्व महाकाल भस्माङ्ग सर्पभूषण । त्र्यम्बक स्थपते वाचांपते भो जगतांपते ॥ १० ॥ शिपिविष्ट विरूपाक्ष जय लिङ्गवृषध्वज । नीललोहित पिङ्गाक्ष जय खट्वाङ्गमण्डन ॥ ११ ॥ कृत्तिवास अहिर्बुध्न्य मृडानीश जटाम्बुधृत् । जगद्धातर्जगन्मात-

जैगत्तात जगद्गुरो ॥ १२ ॥ पञ्चवक्त्र महावक्त्र कालवक्त्र  
गजास्थभृत् । दशबाहो महाबाहो महावीर्य महाबल ॥ १३ ॥  
अघोरघोरवक्त्र त्वं सद्योजात उमापते । सदानन्द महानन्द नन्द-  
मूर्ते जयेश्वर ॥ १४ ॥ एवमष्टोत्तरशतं नाम्नां देवकृतं तु ये ।  
शम्भोर्भक्त्या स्मरन्तीह शृण्वन्ति च पठन्ति च ॥ १५ ॥ न तापा-  
स्त्रिविधास्तेषां न शोको न रुजादयः । ग्रहगोचरपीडा च तेषां  
कापि न विद्यते ॥ १६ ॥ श्रीः प्रज्ञाऽऽरोग्यमायुष्यं सौभाग्यं  
भाग्यमुन्नतिम् । विद्या धर्म मतिः शम्भोर्भक्तितेषां न संशयः  
॥ १७ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे सद्वात्रिंशष्टे शिवाष्टोत्तरनामशतक-  
स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १०२. शिवस्तवराजः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सूत उवाच ॥ एकदा नारदो योगी परानुग्रह-  
तत्परः । विमत्सरो वीतरागो ब्रह्मलोकमुपाययौ ॥ १ ॥ तत्र दृष्ट्वा  
समासीनं विधातारं जगत्पतिम् । प्रणम्य शिरसा भूमौ कृताञ्ज-  
लिरभाषत ॥ २ ॥ नारद उवाच ॥ ब्रह्मजगत्पते तात नतोऽस्मि  
त्वत्पदाम्बुजम् । कृपया परया देव यत्पृच्छामि तदुच्यताम् ॥ ३ ॥  
श्रुतिशास्त्रपुराणानि त्वदास्यात्संश्रुतानि च । तथापि मन्मनो याति  
संदेहं मोहकारणम् ॥ ४ ॥ सर्वमन्नाधिको मन्त्रः सदा जाप्यः क  
उच्यते । सर्वध्यानादिकं ध्यानं सदा ध्येयमिहास्ति किम् ॥ ५ ॥  
वेदोपनिषदां सारमायुःश्रीजयवर्धनम् । मुक्तिकाङ्क्षुपरैर्नित्यं कः  
स्तवः पठ्यते बुधैः ॥ ६ ॥ इमं मत्संशयं तात त्वं भेत्तासि न  
कश्चन । ब्रूहि कारुण्यभावेन मङ्गं शुश्रूषवे हितम् ॥ ७ ॥ श्रुत्वा-  
ऽङ्गजवचो वेधा हृदि हर्षमुपागतः । देवदेवं शिवाकान्तं नत्वा चाह  
मुनीश्वरम् ॥ ८ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ साधु पृष्टं महाप्राज्ञ लोकानुग्रह-

तत्पर । सत्सर्वं ते प्रवक्ष्यामि गोपनीयं प्रयत्नतः ॥ ९ ॥ प्रणवं  
 पूर्वमुच्चार्य नमःशब्दं समुच्चरेत् । सचतुर्थ्यैकवचनं शिवं चैव  
 समुच्चरेत् ॥ १० ॥ एष शैवो महामन्त्रः षड्गुणोऽख्यो विमुक्तिदः ।  
 सर्वमन्त्राधिकः प्रोक्तः शिवेन ज्ञानरूपिणा ॥ ११ ॥ अनेन मन्त्र-  
 राजेन नाशयितुं न शक्यते । तच्च पापं न पश्यामि मार्गमाणोऽपि  
 सर्वदा ॥ १२ ॥ अयं संसारदावाग्निर्मोहसागरवाढवः । तस्मात्प्र-  
 यत्नतः पुत्र मन्त्रो ग्राह्यो मुमुक्षुभिः ॥ १३ ॥ मातृपुत्रादिहा योऽपि  
 वेदधर्मविवर्जितः । सकृदुच्चारणादस्य सायुज्यमुक्तिमाप्नुयात् ॥ १४ ॥  
 किं पुनर्वक्ष्यते पुत्र स्वाचारपरिनिष्ठितः । सर्वमन्त्रान्विमृज्य त्वमिमं  
 मन्त्रं सदा जप ॥ १५ ॥ ध्यानं तेऽहं प्रवक्ष्यामि ज्ञात्वा यन्मुच्यते  
 चिरात् । वेदोपनिषदोक्तं च योगगम्यं सनातनम् ॥ १६ ॥ इन्द्रि-  
 याणि नियम्यादौ यतवाग्यतमानसः । स्वस्तिकाद्यासनयुतो हृदि  
 ध्यानं समारभेत् ॥ १७ ॥ नाभिनालं हृदिस्थं च षड्गुणं परि-  
 कल्पयेत् । रक्तवर्णमष्टदलं चन्द्रसूर्यादिशोभितम् ॥ १८ ॥ समन्ता-  
 त्कल्पवृक्षेण वेष्टितं कान्तिमत्सदा । तन्मध्ये शंकरं ध्यायेद्देवदेवं  
 जगद्गुरुम् ॥ १९ ॥ कर्पूरसदृशं चन्द्रशेखरं शूलपाणिनम् । त्रिलो-  
 चनं महादेवं द्विभुजं भस्मभूषितम् ॥ २० ॥ परार्धभूषणयुतं  
 कणनूपुरमण्डितम् । सरत्नमेखलाबद्धकटिवस्त्रं सकुण्डलम् ॥ २१ ॥  
 नीलकण्ठं जटावन्तं सकिरीटं सुशोभितम् । प्रैवेयादिप्रबन्धाढ्यं  
 पार्वतीसहितं पुरम् ॥ २२ ॥ कृपालुं जगदाधारं स्कन्दादिपरि-  
 वेष्टितम् । इन्द्रेण पूजितं यक्षराजेन व्यजितं विभुम् ॥ २३ ॥  
 प्रेतराजस्तुतं नीरनाथेन नमितं मुहुः । ब्रह्मणा गीयमानं च त्रिणु-  
 वन्धं मुनिस्तुतम् ॥ २४ ॥ ध्यानमेतन्मया ख्यातं सूत वेदान्त-  
 शेखरम् । सर्वपापक्षयकरं जयसंपत्तिवर्धनम् ॥ २५ ॥ अनेन सदृशं

तात नास्ति संसारतारकम् । सर्वध्यानादिकं ध्यानं गोपनीयं सुत  
 त्वया ॥ २६ ॥ कायवाङ्मानसोत्थं यत्पापमन्यच्च विद्यते । तत्सर्वं  
 नाशमायाति ध्यानात्सत्यं वचो मम ॥ २७ ॥ वेदशास्त्रपुराणानि  
 सेतिहासानि यानि च । ध्यानस्य तानि सर्वाणि कलां नार्हन्ति  
 षोडशीम् ॥ २८ ॥ प्रेम्णा कुरु महाभाग ध्यानमेतद्विमुक्तिदम् ।  
 अथ ते वच्म्यहं योगिन् स्तवं सर्वोत्तमं च यत् ॥ २९ ॥ ब्रह्मास्यैव  
 ऋषिः प्रोक्तोऽनुष्टुप् छन्दः प्रकीर्तितम् । शिवो वै दैवतं प्रोक्तं बीजं  
 मृत्युञ्जयं मतम् ॥ ३० ॥ कीलकं नीलकण्ठश्च शक्तिः प्रोक्ता  
 हरस्तथा । नियोगः सर्वसिद्ध्यर्थं मुक्तिकामाय वै मतः ॥ ३१ ॥  
 शिरस्यास्ये हृदि पदे कठ्यां बाह्वोस्तु व्यापके । ऋष्यादीनि क्रमाद्यु-  
 जेत्साङ्गुष्ठाङ्गुलिभिः सुत ॥ ३२ ॥ मन्त्रन्यासं ततः कुर्याच्छृणु  
 चैकाग्रमानसः । षडक्षराणि युञ्जीयादङ्गुष्ठाद्यङ्गुलीषु च ॥ ३३ ॥  
 हृदये च शिरस्येव शिखायां कवचे यथा । नेत्रत्रये तथाऽङ्गे च  
 वर्णा ह्येवं च षट् क्रमात् ॥ ३४ ॥ नमः स्वाहा वषट् हुं च  
 सर्वोषट् फट्क्रमो वदेत् । मन्त्रन्यासमिमं कृत्वा स्तवन्यासं समा-  
 चरेत् ॥ ३५ ॥ शिवं मृडं पशुपतिं शंकरं चन्द्रशेखरम् । भवं  
 चैव क्रमादेवमङ्गुष्ठादिहृदादिषु ॥ ३६ ॥ सर्वन्यासान्प्रयुञ्जीत चतु-  
 र्थीसहितान्सुत । नमोयुताक्षमश्चैव शिरसादिषु वर्जयेत् ॥ ३७ ॥  
 शिवं सर्वात्मकं सर्वपतिं सर्वजनप्रियम् । सर्वदुःखहरं चैव मोहनं  
 गिरिशं भजे ॥ ३८ ॥ कामदं कामदं कान्तं कालमृत्युनिवर्तकम् ।  
 कलावन्तं कलाधीशं वन्देऽहं गिरिजापतिम् ॥ ३९ ॥ परेशं परमं  
 देवं परब्रह्म परात्परम् । परपीडाहरं नित्यं प्रणमामि वृषध्वजम्  
 ॥ ४० ॥ लोकेशं लोकवन्द्यं च लोककर्तारमीश्वरम् । लोकपालं  
 हरं वन्दे धीरं शशिविभूषणम् ॥ ४१ ॥ शिवापतिं गिरिपतिं



सर्वदेवपतिं विभुम् । प्रमथाधिपतिं सूक्ष्मं नौम्यहं शिखि-  
 लोचनम् ॥ ४२ ॥ भूतेशं भूतनाथं च भूतप्रेतविनाशनम् । भूधरं  
 भूपतिं शान्तं शूलपाणिमहं भजे ॥ ४३ ॥ कैलासवासिनं रौद्रं  
 फणिराजविभूषणम् । फणिबद्धजटाजूटं प्रणमामि सदाशिवम्  
 ॥ ४४ ॥ नीलकण्ठं दशभुजं त्र्यक्षं धूम्रविलोचनम् । दिगंबरं  
 दिशाधीशं नमामि विषभूषणम् ॥ ४५ ॥ मुक्तीशं मुक्तिदं मुक्तं  
 मुक्तगम्यं सनातनम् । सत्पतिं निर्मलं शंभुं नतोऽस्मि सकलार्थदम्  
 ॥ ४६ ॥ विश्वेशं विश्वनाथं च विश्वपालनतत्परम् । विश्वमूर्तिं विश्व-  
 हरं प्रणमामि जटाधरम् ॥ ४७ ॥ गङ्गाधरं कपालाक्षं पद्मवक्त्रं  
 त्रिलोचनम् । विद्युत्कोटिप्रतीकाशं वन्देऽहं पार्वतीपतिम् ॥ ४८ ॥  
 स्फटिकाभं जनार्तिघ्नं देवदेवमुमापतिम् । त्रिपुरारिं त्रिलोकेशं  
 नतोऽस्मि भवतारकम् ॥ ४९ ॥ अव्यक्तमक्षरं दान्तं मोहसागर-  
 तारकम् । स्तुतिप्रियं भक्तिगम्यं सदा वन्दे हरिप्रियम् ॥ ५० ॥  
 अमलं निर्मलं नाथमपमृत्युभयापहम् । भीमयुद्धकरं भीमवरदं तं  
 नतोऽस्म्यहम् ॥ ५१ ॥ हरिचक्रप्रदं योगिष्येयमूर्तिं सुमङ्गलम् ।  
 गजचर्माम्बरधरं प्रणमामि विभूतिदम् ॥ ५२ ॥ आनन्दकारिणं  
 सौम्यं सुन्दरं भुवनेश्वरम् । काशीप्रियं काशिराजं वरदं प्रणतोऽ-  
 स्म्यहम् ॥ ५३ ॥ श्मशानवासिनं भव्यं ग्रहपीडाविनाशनम् ।  
 महान्तं प्रणवं योगं भजेऽहं दीनरक्षकम् ॥ ५४ ॥ ज्योतिर्मयं  
 ज्योतिरूपं जितक्रोधं तपस्विनम् । अनन्तं स्वर्गदं स्वर्गपालं वन्दे  
 निरंजनम् ॥ ५५ ॥ वेदवेद्यं पापहरं गुप्तनाथमतीन्द्रियम् ।  
 सत्यात्मकं सत्यहरं निरीहं तं नतोऽस्म्यहम् ॥ ५६ ॥ द्वीपिचर्मो-  
 च्छरीयं च शवमूर्धाविभूषणम् । अस्थिमालं श्वेतवर्णं नमामि चन्द्र-  
 शेखरम् ॥ ५७ ॥ शूलिनं सर्वभूतस्थं भक्तोद्धरणसंस्थितम् । लिङ्ग-

मूर्तिं सिद्धसेव्यं सिद्धसिद्धिप्रदायकम् ॥ ५८ ॥ अनादिनिधनाख्यं  
 तं रामसेव्यं जयप्रदम् । योधादिं यज्ञभोक्तारं वन्दे नित्यं परावरम्  
 ॥ ५९ ॥ अचिन्त्यमचलं विष्णुं महाभागवतोत्तमम् । परत्रं परवेद्यं  
 च वन्दे वैकुण्ठनायकम् ॥ ६० ॥ आनन्दं निर्भयं भक्तवाञ्छितार्थ-  
 प्रदायकम् । भवानीपतिमाचार्यं वन्देऽहं नन्दिकेश्वरम् ॥ ६१ ॥  
 सोमप्रियं सोमनाथं यक्षराजनिषेवितम् । सर्वाधारं सुविस्तारं प्रण-  
 मामि विभूतिदम् ॥ ६२ ॥ अनन्तनामानमनन्तरूपमनादिमध्यान्त-  
 मनादिसत्त्वम् । चिद्रूपमेकं भवनागसिंहं भजामि नित्यं भुवनाधि-  
 नाथम् ॥ ६३ ॥ वेदोपगीतं विधुशेखरं च सुरारिनाथार्चितपाद-  
 पद्मम् । कर्पूरगौरं भुजगेन्द्रहारं जानामि तत्त्वं शिवमेव नान्यम्  
 ॥ ६४ ॥ गणाधिनाथं शितिकंठमाद्यं तेजस्विनं सर्वमनोभिरामम् ।  
 सर्वज्ञमीशं जगदात्मकं च पञ्चाननं नित्यमहं नमामि ॥ ६५ ॥  
 विश्वसृजं नृत्यकरं प्रियं तं विश्वात्मकं विश्वविधूतपापम् ।  
 मृत्युञ्जयं भालविलोचनं च चेतः सदा चिन्तय देवदेवम्  
 ॥ ६६ ॥ कपालिनं सर्वकृतावतंसं मनोवचोगोचरमम्बुजाक्षम् ।  
 क्षमांस्त्रुधिं दीनदयाकरं तं नमामि नित्यं भवरोगवैद्यम् ॥ ६७ ॥  
 सर्वान्तरस्थं जगदादिहेतुं कालज्ञमात्मानमनन्तपादम् । अनन्त-  
 बाहूदरमस्तकाक्षं ललाटनेत्रं भज चन्द्रमौलिम् ॥ ६८ ॥ सर्वप्रदं  
 भक्तसुखावहं च पुष्पायुधादिप्रणतिप्रियं च । त्रिलोकनाथं ऋण-  
 बन्धनाशं भजस्व नित्यं प्रणतार्तिनाशम् ॥ ६९ ॥ आनन्दमूर्तिं  
 सुखकल्पवृक्षं कुमारनाथं विद्युत्प्रपञ्चम् । यज्ञादिनाथं परमप्रकाशं  
 नमामि विश्वभरमीशितारम् ॥ ७० ॥ इत्येवं स्तवमाख्यातं शिवस्य  
 परमात्मनः । पापक्षयकरं पुत्र सायुज्यमुक्तिदायकम् ॥ ७१ ॥  
 सर्वरोगहरं मोक्षप्रदं सिद्धिप्रदायकम् । भाङ्गल्यं भुक्तिमुक्त्यादि-

साधनं जयवर्धनम् ॥ ७२ ॥ सर्वस्तबोत्तमं विद्धि सर्ववेदान्त-  
 शेखरम् । पठस्वानुदिनं तात प्रेम्णा भक्त्या विशुद्धिकृत् ॥ ७३ ॥  
 गोहा स्त्रीबालविप्रादिहन्तान्यत्पापकृत्तथा । विश्वासघातचारी च  
 स्वाद्यपेयादिदूषकः ॥ ७४ ॥ कोटिजन्मार्जितैः पापैरसंख्यातैश्च  
 वेष्टितः । अष्टोत्तरशतात्पाठाद् शुद्धो भवति निश्चितम् ॥ ७५ ॥  
 महारोगयुतो वापि मृत्युग्रहयुतस्तथा । त्रिंशत्तदस्य पठनात्सर्वदुःखं  
 विनश्यति ॥ ७६ ॥ राजवश्ये सहस्रं तु स्त्रीवश्ये च तदर्धकम् ।  
 मित्रवश्ये पञ्चशतं पाठं कुर्यात्समाहितः ॥ ७७ ॥ लक्षपाठाद्भवेच्चैव  
 शिव एव न संशयः । बहुना किमिहोक्तेन भावनासिद्धिदायकः  
 ॥ ७८ ॥ पार्वत्या सहितं गिरीन्द्रशिखरे मुक्तामये सुन्दरे पीठे  
 संस्थितमिन्दुशेखरमहर्नाथादिसंसेवितम् । पञ्चास्यं फणिराजकङ्क-  
 णधरं गङ्गाधरं शूलिनं त्र्यक्षं पापहरं नमामि सततं पञ्चासनस्थं  
 शिवम् ॥ ७९ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे ब्रह्मनारदसंवादे शिवस्तवराजः  
 संपूर्णः ॥

### १०३. गौरीगिरीशस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ चंद्रार्धप्रविभासिमस्तकतटौ तंद्राबिहीनौ सदा  
 भक्तौघप्रतिपालने निजतनुच्छायाजितार्कायुतौ । शृङ्गाद्रिस्थविवाह-  
 मंडपगतौ कारुण्यवारांनिधी कल्याणं तनुतां समस्तजगतां गौरी-  
 गिरीशौ मुदा ॥ १ ॥ अन्योन्यार्चनतत्परौ मधुरवाक्संतोषितान्यो-  
 न्यकौ चंद्रार्धचितशेखरौ प्रणमतामिष्टार्थदौ सत्वरम् । शृङ्गाद्रिस्थ-  
 विवाहमंडपगतौ शृङ्गारजन्मावनी कल्याणं तनुतां समस्तजगतां  
 गौरीगिरीशौ मुदा ॥ २ ॥ सौंदर्येण परस्परं प्रमुदितावन्योन्यचित्त-  
 स्थितौ राकाचंद्रसमानवक्रकमलौ पादाब्जकलंकृतौ । शृङ्गाद्रिस्थ-

विवाहमंडपगतौ गंगातटावासिनौ कल्याणं तनुतां समस्तजगतां  
 गौरीगिरीशौ मुदा ॥ ३ ॥ सिंहोक्षाग्र्यगती महोन्नतपदं संप्रापयंतौ  
 नतानहोराशिनिवारणैकनिपुणौ ब्रह्मोप्रविण्णवर्चितौ । शृङ्गाद्रिस्थ-  
 विवाहमंडपगतौ गांगेयभूषोज्ज्वलौ कल्याणं तनुतां समस्तजगतां  
 गौरीगिरीशौ मुदा ॥ ४ ॥ कस्तूरीधनसारचर्चिततनू प्रस्तूयमानौ  
 सुरैरस्तूकृत्या प्रणतेष्टपूरणकरौ वस्तूपलब्धिप्रदौ । शृङ्गाद्रिस्थविवाह-  
 मंडपगतावंगावधूतेंदुभौ कल्याणं तनुतां समस्तजगतां गौरीगिरीशौ  
 मुदा ॥ ५ ॥ वाणीनिर्जितहंसकोकिलरवौ पाणीकृतांभोरुहौ वेणीकेश-  
 विनिर्जिताहिचपलौ क्षोणीसमानक्षमौ । शृङ्गाद्रिस्थविवाहमंडपगतौ  
 तुंगेष्टजालप्रदी कल्याणं तनुतां समस्तजगतां गौरीगिरीशौ मुदा  
 ॥ ६ ॥ कामापत्तिविभूतिकारणदशौ सोमार्धभूषोज्ज्वलौ सामान्नाय-  
 सुगीयमानचरितौ रामार्चिताङ्घ्रिद्वयौ । शृङ्गाद्रिस्थविवाहमंडपगतौ  
 माणिक्यभूषान्वितौ कल्याणं तनुतां समस्तजगतां गौरीगिरीशौ  
 मुदा ॥ ७ ॥ दंभाहंकृतिदोषशून्यपुरुषैः संभावनीयौ सदा जंभा-  
 रातिमुखामरेंद्रविनुतौ कुंभात्मजाद्यर्चितौ । शृङ्गाद्रिस्थविवाहमंडप-  
 गतौ वाग्दानदीक्षाधरौ कल्याणं तनुतां समस्तजगतां गौरीगिरीशौ  
 मुदा ॥ ८ ॥ शोपानुग्रहशक्तिदाननिपुणौ तापापनोदक्षमौ शोपान-  
 क्रमतोऽधिकारिभिरनुप्राप्यौ क्षमासागरौ । शृङ्गाद्रिस्थविवाहमंडप-  
 गतौ लावण्यपाथोनिधी कल्याणं तनुतां समस्तजगतां गौरीगिरीशौ  
 मुदा ॥ ९ ॥ शोणांभोरुहतुल्यपादयुगलौ बाणार्चनातोषितौ  
 वीणाघट्टमुनिगीयमानविभवौ बालारुणाभांबरौ । शृङ्गाद्रि-  
 स्थविवाहमंडपगतौ तुल्याधिकैर्बर्जितौ कल्याणं तनुतां समस्त-  
 जगतां गौरीगिरीशौ मुदा ॥ १० ॥ इति गौरीगिरीशस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

१०४. शिवपादादिकेशान्तवर्णनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्याणं वो विधत्तां कटकतटलसत्कल्पवाहीनि-  
कुञ्जक्रीडासंसक्तविद्याधरनिबहवधूगीतरुद्रापदानः । तारैर्हैरम्बनादै-  
स्तरलितनिनदचारकारातिकेकी कैलासः शर्वनिर्वृत्यभिजनकपदः  
सर्वदा पर्वतेन्द्रः ॥ १ ॥ यस्य प्राहुः स्वरूपं सकलदिविषदां सार-  
सर्वस्वयोगं यस्येषुः शार्ङ्गधन्वा समजनि जगतां रक्षणे जागरूकः ।  
मौर्वीं दर्वाकराणामपि च परिवृढः पूज्यी सा च लक्ष्यं सोऽब्ध्या-  
दब्ध्याजमस्मानशिवभिदनिशं नाकिनां श्रीपिनाकः ॥ २ ॥  
आतङ्कावेगहारी सकलदिविषदामङ्घ्रिपद्माश्रयाणां मातङ्गाद्युग्रदैत्य-  
प्रकरतनुगलद्रक्तधाराक्तधारः । क्रूरः सूरायुतानामपि च परिभवं  
स्वीयभासा वितन्वन् घोराकारः कुठारो दृढतरदुरिताख्याटवीं  
पाटयेन्नः ॥ ३ ॥ कालारातेः कराग्रे कृतवसतिरुरःशाणशातो  
रिपूणां काले काले कुलाद्रिप्रवरतनयया कल्पितस्नेहलेपः ।  
पायाशः पावकार्चिःप्रसरसखमुखः पापहन्ता नितान्तं शूलः श्रीपाद-  
सेवाभजनरसजुषां पालनैकान्तशीलः ॥ ४ ॥ देवस्याङ्गाश्रयायाः  
कुलगिरिदुहितुर्नैत्रकोणप्रचारप्रस्तारानत्युदारान्पिपठिषुरिव यो नित्य-  
मत्यादरेण । आचत्ते भङ्गितुङ्गैरनिक्षमवयवैरन्तरङ्गं समोदं सोमा-  
पीडस्य सोऽयं प्रदिशतु कुशलं पाणिरङ्गः कुरङ्गः ॥ ५ ॥ कण्ठ-  
प्रान्तावसज्जत्कनकमयमहाघण्टिकाघोरघोषैः कण्ठारवैरकुण्ठैरपि  
भरितजगच्चक्रवालान्तरालः । चण्डः प्रोद्गण्डशृङ्गः ककुदकबलितो-  
तुङ्गकैलासशृङ्गः कण्ठे कालस्य बाहः शमयतु शमलं शाश्वतः  
शाकरेन्द्रः ॥ ६ ॥ निर्यहानाम्बुधारापरिमलतरलीभूतलोलम्ब-  
पालीशङ्कारैः शंकराद्रेः शिखरशतदरीः पूरयन्भूरिघोषैः । शार्वः  
सौवर्णशैलप्रतिमपृथुपुः सर्वविघ्नपहर्ता शर्वाण्याः पूर्वसुनुः स

भवतु भवतां स्वस्तिदो हस्तिवक्रः ॥ ७ ॥ यः पुण्यैर्देवतानां सम-  
जनि शिवयोः श्लाघ्यवीर्यैकमत्या यन्नास्ति श्रूयमाणे दितिजभटघटा  
भीतिभारं भजन्ते । भूयात्सोऽयं विभूत्यै निशितशरशिखापादित-  
क्रौञ्चशैलः संसारागाधकूपोदरपतितसमुत्तारकस्तारकारिः ॥ ८ ॥  
आरूढः प्रौढवेगप्रविजितपवनं तुङ्गतुङ्गं तुरङ्गं चैलं नीलं वसानः  
करतलविलसत्काण्डकोदण्डदण्डः । रागद्वेषादिनानाविधमृगपटली-  
भीतिहृद्भूतभर्ता कुर्वन्नाखेटलीलां परिलसतु मनःकानने मामकीने  
॥ ९ ॥ अम्भोजाभ्यां च रम्भारथचरणलताद्वन्द्वकुम्भीन्द्रकुम्भै-  
र्विम्बेनेन्दोश्च कम्बोरुपरि विलसता विद्रुमेणोत्पलाभ्याम् । अम्भो-  
देनापि संभावितमुपजनिताङ्गम्बरं शम्बरारैः शम्भोः संभोगयोग्यं  
किमपि धनमिदं संभवेत्संपदे नः ॥ १० ॥ वेणीसौभाग्यविस्मा-  
पिततपनसुताचारुवेणीविलासान्वाणीनिर्धूतवाणीकरतलविधृतोदार-  
व्रीणाविरावान् । एणीनेत्रान्तभङ्गीनिरसननिपुणापाङ्गकोणानुपासे  
शोणान्प्राणानुदूढप्रतिनवसुषमाकन्दलानिन्दुमौलेः ॥ ११ ॥ नृत्ता-  
रम्भेषु हस्ताहतमुरजधिमीधिकृतैरत्युदारैश्चित्तानन्दं विधत्ते सदसि  
भगवतः संततं यः स नन्दी । चण्डीशाद्यास्तथाऽन्ये चतुरगुणगण-  
प्रीणितस्वामिसत्कारोत्कर्षोद्यत्पसादाः प्रमथपरिवृद्धाः सन्तु संतोषिणो  
नः ॥ १२ ॥ मुक्तामाणिक्यजालैः परिकलितमहासालमालोकनीयं  
प्रत्युत्पानधरलैर्दिशि दिशि भवनैः कल्पितैर्दिकपतीनाम् । उद्यानैर-  
द्रिकन्यापरिजनवनितामाननीयैः परीतं हृद्यं हृद्यस्तु नित्यं मम  
भुवनपतेर्धाम सोमार्धमौलेः ॥ १३ ॥ स्तम्भैर्जम्भारिरत्नप्रवरविरचितैः  
संभृतोपान्तभागं शुम्भत्सोपानमार्गं शुचिमणिनिचयैर्गुम्फितानल्प-  
शिल्पम् । कुम्भैः संपूर्णशोभं शिरसि सुघटितैः शातकुम्भैरपङ्कैः  
शम्भोः संभावनीयं सकलमुनिजनैः स्वस्तिदं स्यात्सदा नः ॥ १४ ॥

न्यस्तो मध्ये सभायाः परिसरविलसत्पादपीठभिरामो हृद्यः पादैश्च-  
तुर्भिः कनकमणिमयैरुच्चकैरुज्ज्वलात्मा । वासोरत्नेन केनाप्यधिकमृदु-  
तरेणास्तृतो विस्तृतश्रीपीठः पीडाभरं नः शमयतु शिवयोः स्वैर-  
संवासयोग्यः ॥ १५ ॥ आसीनस्याधिपीठं त्रिजगदधिपतेरङ्घ्रिपी-  
ठानुषक्तौ पाथोजाभोगभाजौ परिमृदुलतलोह्यासिपद्माभिलेखौ । पातां  
पादाबुभौ तौ नमदमरकिरीटोल्लसच्चारुहीरश्रेणीशोणायमानोद्धतन-  
खदशकोद्भासमानौ समानौ ॥ १६ ॥ यच्चादौ वेदवाचां निगदति  
निखिलं लक्षणं पश्चिक्तुलक्ष्मीसंभोगसौख्यं विरचयति ययोश्चापरे  
रूपभेदे । शंभोः संभावनीये पदकमलसमासङ्गतस्तुङ्गशोभे  
माङ्गल्यं नः समग्रं सकलसुखकरे नूपुरे पूरयेताम् ॥ १७ ॥ अङ्गे  
शृङ्गारयोनेः सपदि शलभतां नेत्रवह्नौ प्रयाते शत्रोरुद्धृत्य तस्मादि-  
पुधियुगमधो न्यस्तमग्रे किमेतत् । शङ्कामित्थं नतानाममरपरिष-  
दामन्तरङ्कुरयत्तत्संघातं चारु जङ्गायुगमखिलपतेरंहसां संहरेच्चः  
॥ १८ ॥ जानुद्वन्द्वेन मीनध्वजनृवरसमुद्रोपमानेन साकं राजन्तौ  
राजरम्भाकरिकरकनकस्तम्भसंभावनीयौ । ऊरु गौरीकराम्भो-  
रुहसरससमामर्दनानन्दभाजौ चारु दूरीक्रियेतां दुरितमुपचितं  
जन्मजन्मान्तरे नः ॥ १९ ॥ आमुक्तानर्घरत्नप्रकरकरपरिष्वक्त-  
कल्याणकाञ्चीदाज्ञा बद्धेन दुग्धद्युतिनिचयमुषा चीनपट्टाम्बरेण ।  
संवीते शैलकन्यासुचरितपरिपाकायमाने नितम्बे नित्यं नर्नतुं  
चित्तं मम निखिलजगत्स्वामिनः सोममौलेः ॥ २० ॥ सम्भ्या-  
कालानुरज्यद्दिनकरसरुचा कालधौतेन गाढं व्यानद्धः स्निग्धमुग्धः  
सरसमुदरबन्धेन वीतोपमेन । उद्दीप्तैः स्वप्रकाशैरुपचितमहिमा  
मन्मथारुरुदारो मध्यो मिथ्यार्थसङ्ग्रहं मम दिशतु सदा संगतिं  
मङ्गलानाम् ॥ २१ ॥ नाभीचक्रालवालान्नवनवसुषमाद्रोहदश्रीपरी-

तादुद्गच्छन्ती पुरस्तादुदरपथमतिक्रम्य वक्षः प्रयान्ती । श्यामा कामा-  
गमार्थप्रकथनलिपिवद्भासते या निकामं सा मां सोमार्धमौलेः सुखयतु  
सततं रोमवल्लीमतल्ली ॥ २२ ॥ आश्लेषेष्वाद्रिजायाः कठिनकुचतटी-  
लिसकाश्मीरपङ्कव्यासङ्गादुद्यदर्कद्युतिभिरुपचितस्पर्धमुहामहद्यम् ।  
दक्षारतेरुदप्रतिनवमणिमालावलीभासमानं वक्षो विक्षोभितार्धं  
सततनतिजुषां रक्षतादक्षतं नः ॥ २३ ॥ वामाङ्के विस्फुरन्त्याः कर-  
तलविलसच्चारुरक्तोत्पलायाः कान्ताया वामवक्षोरुहभरशिखरो-  
न्मर्दनव्यग्रमेकम् । अन्यांस्त्रीनप्युदारान्वरपरशुमृगालंकृतानिन्दु-  
मौलेर्बाहुनाबद्धहेमाङ्गदमणिकटकानन्तरालोकयामः ॥ २४ ॥ सम्भ्रा-  
न्तायाः शिवायाः पतिविलयभिया सर्वलोकोपतापात्संविभ्रस्यापि  
विष्णोः सरभसमुभयोर्वारणप्रेरणाभ्याम् । मध्ये त्रैशङ्कवीयामनु-  
भवति दशां यत्र हालाहलोष्मा सोऽयं सर्वापदां नः शमयतु  
निचयं नीलकण्ठस्य कण्ठः ॥ २५ ॥ हृद्यैरद्रीन्द्रकन्यामृदुदशन-  
पदैर्मुद्रितो विद्रुमश्रीरुद्ध्योतन्त्या नितान्तं धवलधवल्या मिश्रितो  
दन्तकांत्या । मुक्तामाणिक्यजालव्यतिकरसदृशा तेजसा भासमानः  
सद्योजातस्य दद्यादधरमणिरसौ संपदां संचयं नः ॥ २६ ॥ कर्णा-  
लंकारनानामणिकररुचां संचयैरञ्चितायां वर्ण्यायां स्वर्णपद्मोदर-  
परिविलसत्कर्णिकासन्निभायाम् । पद्भ्यां प्राणवायोः प्रणतजन-  
हृदम्भोजवासस्य शंभोर्नित्यं नश्चित्तमेतद्विरचयतु सुखेनासिकां  
नासिकायाम् ॥ २७ ॥ अत्यंतं भासमाने रुचिरतररुचां संगमात्स-  
न्मणीनामुद्यच्छण्डांशुधामप्रसरनिरसनस्पष्टदृष्टापदाने । भूयास्तां भूतये  
नः करिवरजयिनः कर्णपाशावलम्बे भक्तालीभालसज्जनिमरणलिपेः  
कुंडले कुंडले ते ॥ २८ ॥ याभ्यां कालव्यवस्था भवति तनुमतां  
यो मुखं देवतानां येषामाहुः स्वरूपं जगति मुनिवरा देवतानां



त्रयीं ताम् । रुद्राणीवक्रपङ्केरुहसतविहारोत्सुकेंदीवरेभ्यस्तेभ्य-  
स्त्रिभ्यः प्रणामाञ्जलिमुपरचये त्रीक्षणस्वेक्षणेभ्यः ॥ २९ ॥ वामं  
वामाङ्गगाया वदनसरसिजे व्यावलङ्गुलभाया व्यानन्नेष्वन्यदन्यत्पु-  
नरलिकभवं वीतनिःशेषरौक्ष्यम् । भूयो भूयोऽपि मोदाक्षिपतदति-  
दयाशीतलं चूतबाणे दक्षारेरीक्षणानां त्रयमपहरतादाशु तापत्रयं  
नः ॥ ३० ॥ यस्मिन्नर्धेदुमुग्धश्रुतिनिचयतिरस्कारनिस्तद्रकांतौ  
काश्मीरक्षोदसंकल्पितमिव रुचिरं चित्रकं भाति नेत्रम् । तस्मिन्नु-  
ल्लीलचिह्नीनटवरतरुणीलास्यरङ्गायमाणे कालारेः फालदेशे विहरतु  
हृदयं वीतचिंतांतरं नः ॥ ३१ ॥ स्वामिन्गङ्गामिवाङ्गीकुरु तव  
शिरसा मामपीत्यर्थयन्तीं धन्यां कन्यां खरांशोः शिरसि वहति  
किन्वेष कारुण्यशाली । इत्थं शंकां जनानां जनयदतिघनं कैशिकं  
कालमेघच्छायं भूयादुदारं त्रिपुरविजयिनः श्रेयसे भूयसे नः  
॥ ३२ ॥ शृङ्गाराकल्पयोग्यैः शिखरिवरसुतासत्सखीहस्तलूनैः  
सूनैराबद्धमालावलिपरिविलसत्सौरभाकृष्टभृङ्गम् । तुङ्गं माणिक्य-  
कान्त्या परिहसितसुरावासशैलेंद्रशृङ्गं संघं नः संकटानां विघटयतु  
सदा काकटीकं किरीटम् ॥ ३३ ॥ वकाकारः कलङ्की जडतनुरह-  
मर्प्यग्निसवानुभावाबुत्तंसत्वं प्रयातः सुलभतरघृणास्यंदिनश्रद्धमौलेः ।  
तस्सेवंतां जनौषाः शिवमिति निजयाऽवस्थयैव जुवाणं बंदे देवस्य  
शंभोर्मुकुटमुघटितं मुग्धपीयूषभानुम् ॥ ३४ ॥ कात्मा संकुलमल्ली-  
कुसुमधवलया व्याप्य विश्वं विराजन् वृत्ताकारो वितन्वन् मुहुरपि  
च परां निर्वृतिं पादभाजाम् । सानन्दं नन्दिदोष्णा मणिकटकवता  
वाह्यमानः पुरारेः श्वेतच्छत्राख्यशीतश्रुतिरपहरतादापदस्तापदां नः  
॥ ३५ ॥ दिव्याकल्पोज्ज्वलानां शिवगिरिसुतयोः पार्श्वयोराग्नि-  
तानां रुद्राणीसत्सखीनामतितरलकटाक्षाञ्जलैरञ्जितानाम् । उद्वेल

द्वाहुवल्लीविलसनसमये चामरान्दोलनीनामुद्धतः कङ्कणालीवलयक-  
लकलो वारयेदापदो नः ॥ ३६ ॥ स्वर्गैकः सुन्दरीणां सुललितवपुषां  
स्वामिसेवापराणां वल्गाङ्गुषाणि वक्त्राम्बुजपरिविगलन्मुग्धगीतामृ-  
तानि । नित्यं नृत्तान्युपासे भुजविधुतिपदन्यासभावावलोकप्रत्युद्यत्प्री-  
तिमाद्यत्यमथनटनटीदत्तसम्भावनानि ॥ ३७ ॥ स्थानप्राप्त्या स्वराणां  
किमपि विशदतां व्यञ्जयन्मञ्जुवीणास्वानावच्छिन्नतालक्रमममृतमि-  
वास्वाद्यमानं शिवाभ्याम् । नानारागातिहृद्यं नवरसमधुरस्तोत्रजातानु-  
विद्धं गानं वीणामहर्षेः कलमतिललितं कर्णपूरायतां नः ॥ ३८ ॥ चेतो  
जातप्रमोदं सपदि विदधती प्राणिनां वाणिनीनां पाणिद्वन्द्वप्रजाप्र-  
सुललितरणितस्वर्णतालानुकूला । स्वीयारावेण पाथोधरवरपटुना  
नादयन्ती मयूरी मायूरी मन्दभावं मणिमुरजभवा मार्जना मार्ज-  
येन्नः ॥ ३९ ॥ देवेभ्यो दानवेभ्यः पितृमुनिपरिषत्सिद्धविद्याधरेभ्यः  
साध्येभ्यश्चारणेभ्यो मनुजपशुपतजातिकीटादिकेभ्यः । श्रीकैलासप्र-  
रूढास्तृणविटपिमुखाश्चापि ये मन्ति तेभ्यः सर्वेभ्यो निर्विचारं  
नतिमुपरचये शर्वपादाश्रयेभ्यः ॥ ४० ॥ ध्यायन्नित्यं प्रभाते प्रति-  
दिवसमिदं स्तोत्ररत्नं पठेद्यः किंवा ब्रूमस्तदीयं सुचरितमथवा कीर्त-  
यामः समाप्तात् । सम्पजातं समग्रं सदसि बहुमतिं सर्वलोकप्रियत्वं  
सम्प्राप्यायुःशता ते पदमयति परब्रह्मणो मन्मथारेः ॥ ४१ ॥ इति  
श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यस्य श्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपादशिष्यस्य  
श्रीमच्छंकराचार्यस्य कृतौ शिवपादादिकेशान्तवर्णनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

१०५. अर्धनारीनटेश्वरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ चापेयगौरार्धशरीरकायै कर्पूरगौरार्धशरीर-  
काय । धम्मिल्लकायै च जटाधराय नमः शिवायै च नमः शिवाय  
॥ १ ॥ कस्तूरिकाकुङ्कुमचर्चितायै चितारजपुञ्जविचर्चिताय । कृत-

स्मरायै विकृतस्मराय नमः शिवायै च नमः शिवाय ॥ २ ॥ चल-  
त्कणत्कं कणनूपुरायै पादाब्जराजत्फणिनूपुराय । हेमांगदायै भुज-  
गांगदाय नमः शिवायै च नमः शिवाय ॥ ३ ॥ विशालनीलो-  
त्पललोचनायै विकासिपंकेरुहलोचनाय । समेक्षणायै विषमेक्षणाय  
नमः शिवायै च नमः शिवाय ॥ ४ ॥ मंदारमालाकलिता-  
लकायै कपालमालांकितकंधराय । दिव्यांबरायै च दिगंबराय  
नमः शिवायै च नमः शिवाय ॥ ५ ॥ अंभोधरश्यामलकुंतलायै  
तडित्प्रभाताम्रजटाधराय । निरीश्वरायै निखिलेश्वराय नमः शिवायै  
च नमः शिवाय ॥ ६ ॥ प्रपंचसृष्ट्युन्मुखलास्यकायै समस्तसंहारक-  
तांडवाय । जगज्जनन्यै जगदेकपित्रे नमः शिवायै च नमः शिवाय  
॥ ७ ॥ प्रदीप्तरत्नोज्ज्वलकुंडलायै स्फुरन्महापद्मगभूषणाय । शिवा-  
न्वितायै च शिवान्विताय नमः शिवायै च नमः शिवाय ॥ ८ ॥  
पुतपटेदष्टकमिष्टदं यो भक्त्या स मान्यो भुवि दीर्घजीवी । प्राप्नो-  
ति सौभाग्यमनंतकालं भूयास्सदा तस्य समस्तसिद्धिः ॥ ९ ॥ इति  
श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीगोविंदभगवत्पूज्यपादशिष्यश्रीम-  
च्छंकरभगवत्प्रणीतमर्धनारीनटेश्वरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

१०६. शिवकेशादिपादान्तवर्णनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देवासुर्भूतिं राजत्सरससुरसरित्पारपर्यन्तनिर्य-  
व्यांशुस्तम्बाः पिशङ्गास्तुलितपरिणतारकशालीलता वः । दुर्बाराप-  
त्तिगर्तश्रितनिखिलजनोत्तारणे रजुमूता घोराघोर्वाहदहलीदहन-  
शिखिशिखाः शर्म शार्वाः कपर्दाः ॥ १ ॥ कुर्वन्निर्वाणमार्गप्रगमपरि-  
लसद्द्रव्यसोपानशङ्कां शक्रारीणां पुराणां त्रयविजयकृतस्पष्टरेखाय-  
माणम् । अव्यादव्याजमुच्चैरलिकहिमधराधित्यकान्तस्निग्धोज्ज्वाह-  
व्यामं सृडानीकमितरुद्रुपरुक्पाण्डरं वक्षिषुण्डम् ॥ २ ॥ कुन्ध्यद्वौरी-

प्रसादानतिसमयपदाङ्गुष्ठसंक्रान्तलाक्षाबिन्दुस्पर्धि सरारेः स्फटि-  
कमणिदृषन्मग्रमाणिक्यशोभम् । मूर्ध्युद्यद्दिव्यसिन्धोः पतितशफरि-  
काकारि वो मस्तकं स्तादस्तोकापत्तिकृत्यै द्रुतवहकणिकामोक्षरुक्ष  
सदाक्षि ॥ ३ ॥ भूत्यै दग्भूतयोः स्याद्यदहिमहिमरुग्बिम्बयोः  
स्निग्धवर्णो दैत्यौघध्वंसशंसी स्फुट इव परिवेषावशेषो विभाति ।  
सर्गस्थित्यन्तवृत्तिर्मयि समुपगतेऽतीव निर्वृत्तगर्वं शर्वाणीभर्तुरुच्चै-  
र्युगलमथ दधद्विभ्रमं तद्भुवोर्वः ॥ ४ ॥ युग्मे रुक्माब्जपिङ्गे ग्रह  
इव पिहिते द्वाग्ययोः प्राग्दुहित्रा शैलस्य ध्वान्तनीलाम्बररचितबृह-  
त्कङ्कुकोऽभूत्पद्मः । ते त्रैनेत्रे पवित्रे त्रिदशवरघटामित्रजैत्रोग्रशस्त्रे  
नेत्रे नेत्रे भवेतां द्रुतमिह भवतामिन्द्रियाश्चास्त्रियन्तुम् ॥ ५ ॥  
चण्डीवक्त्रार्पणेष्वोस्तदनु भगवतः पाण्डुरुक्पाण्डुगण्डप्रोद्यत्कण्डूं  
विनेतुं वितनुत इव ये रत्नकोणैर्विघृष्टिम् । चण्डार्चिर्मण्डलाभे  
सततनतजनध्वान्तखण्डातिशौण्डे चाण्डीशे ते श्रिये सामधिकमव-  
नताखण्डले कुण्डले वः ॥ ६ ॥ खट्वाङ्गोदग्रपाणेः स्फुटविकटपुटो  
वक्ररन्ध्रप्रवेशग्रेऽसूदञ्चत्फणोरुष्वसदतिधवलाहीन्द्रशङ्कां दधानः ।  
युष्माकं कम्पवक्राम्बुरुहपरिलसत्कर्णिकाकारशोभः शश्वन्नाणाय  
भूयादलमतिविमलोत्तुङ्गकोणः स घोणः ॥ ७ ॥ क्रुध्यत्यद्वा ययोः  
स्वां तनुमतिलसतोर्बिम्बितां लक्षयन्ती भर्त्रे स्पर्धातिविघ्ना मुहुरितर-  
वधूशङ्कया शैलकन्या । युष्मांस्तौ शश्वदुच्चैरबहुलदशमीशर्वरीशा-  
तिष्ठुभ्रावव्यास्तां दिव्यसिन्धोः कमितुरवनमल्लोकपालौ कपोलौ  
॥ ८ ॥ यो भासा भात्युपान्तस्थित इव निभृतं कौस्तुभो द्रष्टु-  
मिच्छन् सोऽथस्नेहाभितान्तं गलगतगरलं पत्युरुच्चैः पशूनाम् ।  
प्रोद्यत्येष्णा यमाद्रौ पिबति गिरिसुता संपदः सातिरेका लोकाः  
शोणीकृतान्ता यदधरमहसा सोऽधरो वो विघ्नताम् ॥ ९ ॥ अत्यर्थं

राजते या वदनशशधरादुद्रुलङ्घारुवाणीपीयूषाम्भःप्रवाहप्रसरपरिल-  
सत्फेनबिन्दावलीव । देयात्सा दन्तदक्षिश्वरमिह दनुदायाददौषा-  
रिकस्य धृत्या दीप्तेन्दुकुन्दच्छविरमलतरप्रोन्नताग्रा मुदं वः ॥ १० ॥  
न्यकुर्वन्धुर्वराभृन्निभघनसमयोद्धृष्टमेवौषधोषं स्फूर्जेद्वाधुर्युत्थितोरुध्व-  
नितमपि परब्रह्मभूतो गभीरः । सुव्यक्तो व्यक्तमूर्तेः प्रकटितकरणः  
प्राणनाथस्य सत्याः प्रीत्या वः संविदध्यात्फलविकलमलं जन्म नादः  
स नादः ॥ ११ ॥ भासा यस्य त्रिलोकी लसति परिलसत्फेनबिन्दूर्ण-  
वान्तव्यामप्रेवातिगौरस्तुलितसुरसरिद्वारिपूरप्रसारः । पीनात्सा  
दन्तभाभिर्भृशमहहकारातिभीमः सदेष्टां पुष्टां तुष्टिं कृपीष्ट स्फुट-  
मिह भवतामट्टहासोऽष्टमूर्तेः ॥ १२ ॥ सद्योजाताख्यमाप्यं यदुविमल-  
मुदग्वर्ति यद्दामदेवं नाम्ना हेम्ना सहस्रं जलदनिभमघोराङ्ग्यं  
दक्षिणं यत् । यद्वालार्कप्रभं तत्पुरुषनिगदितं पूर्वमीशानसंज्ञं  
यद्विष्यं तानि शम्भोर्भवदभिलषितं पञ्च दद्युर्मुखाणि ॥ १३ ॥ आत्म-  
प्रेम्णो भवान्या स्वयमिव रचिताः सादरं सांवनन्या मप्या तिस्रः  
सुनीलाञ्जननिभगररेखाः समामान्ति यस्याम् । आकल्पान-  
ल्पभासा भृशरुचिरतरा कम्बुकल्पाऽम्बिकायाः पत्युः सात्यन्त-  
मन्तर्विलसतु सततं मन्थरा कम्बरा वः ॥ १४ ॥ वक्त्रेन्दोर्दन्त-  
लक्ष्म्याश्विरमधरमहाकौस्तुभस्याप्युपान्ते सोत्थानां प्रार्थयन् यः  
स्थितिमचलमुवे वारयन्त्यै निवेशम् । प्रायुक्तेवाशिषो यः प्रतिपद-  
ममृतत्वे स्थितः कालशत्रोः कालं कुर्वन् गलं वो हृदयमयमलं  
क्षालयेत्कालकूटः ॥ १५ ॥ प्रौढप्रेमाकुलाया इदतरपरिरम्भेषु पर्व-  
न्तुमुख्याः पार्वत्याश्चारुचामीकरवलयपदैरङ्कितं काम्तिशालि । रङ्ग-  
आगाङ्गदाढ्यं सततमविहितं कर्म निर्मूलयेत्तद्गोमूलं निर्मलं यद्वदि  
दुरितमपास्यार्जितं धूर्जटेर्वैः ॥ १६ ॥ कण्ठाश्लेषार्थमाप्ता दिव इव

कमितुः स्वर्गसिन्धोः प्रवाहाः क्रान्त्यै संसारसिन्धोः स्फटिकमणि-  
महासंक्रमाकारदीर्घाः । तिर्यग्विष्कम्भभूतास्त्रिभुवनवसतेर्भिन्नदैत्ये-  
भेदेहा बाहा वस्ते हरस्य द्रुतमिह निवहानंहसां संहरन्तु ॥ १७ ॥  
वक्षो दक्षद्विषोऽलं स्मरभरविनमदक्षजाक्षीणवक्षोजान्तर्निक्षिप्तशुम्भ-  
न्मलयजमिलितोद्भासि भस्मोक्षितं यत् । क्षिप्रं तद्रक्षचक्षुः श्रुति-  
गणफणरत्नौघभाभीक्ष्णशोभं युष्माकं शश्वदेनः स्फटिकमणिशिला-  
मण्डलामं क्षिणोतु ॥ १८ ॥ मुक्तामुक्ते विचित्राकुलवलिलहरी-  
जालशालिन्यबाह्वन्नाभ्यावर्ते विलोलद्वुजगवरयुते कालशत्रोर्वि-  
शाले । युष्मच्चित्तत्रिधामा प्रतिनवरुचिरे मन्दिरे कान्तिलक्ष्म्याः  
शेतां शीतांशुगौरे चिरतरमुदरक्षीरसिन्धौ सलीलम् ॥ १९ ॥  
वैयाघ्री यत्र कृत्तिः स्फुरति हिमगिरेर्विस्तृतोपत्यकान्तः सान्द्रा-  
वश्यायमिश्रा परित इव वृता नीलजीमूतमाला । आबद्धाहीन्द्र-  
काञ्चीगुणमतिपृथुलं शैलजाक्रीडभूमिस्तद्वो निःश्रेयसे स्याज्जघनम-  
तिघनं बालशीतांशुमौलेः ॥ २० ॥ पुष्टावष्टम्भभूतौ पृथुतरजघन-  
स्यापि नित्यं त्रिलोक्याः सम्यग्वृत्तौ सुरेन्द्रद्विरदवरकरोदारकान्ति  
दधानौ । सारावूरू पुरारेः प्रसममरिघटावस्मरौ भस्मशुभ्रौ भक्तै-  
रत्यार्द्रचित्तरधिकमवनतौ वाञ्छितं वो विधत्ताम् ॥ २१ ॥ आन-  
न्दायेन्दुकान्तोपलरचितसमुद्रायिते ये मुनीनां चित्तादर्शं निधातुं  
विदधति चरणे ताण्डवाकुञ्जनानि । काञ्चीभोगीन्द्रभूर्ध्नां प्रतिमुहु-  
रुपधानायमाने क्षणं ते कान्ते स्तामन्तकारेर्धुतिविजितसुधाभानुनी  
जानुनी वः ॥ २२ ॥ मञ्जीरीभूतभोगिप्रवरगणफणामण्डलान्तर्नि-  
तान्तव्यादीर्घानर्घरत्नद्युतिकिसलयिते स्तूयमाने द्युसद्भिः । बिभ्रत्यौ  
विभ्रमं वः स्फटिकमणिबृहद्वण्डवद्भासिते ये जङ्घ शङ्खेन्दुशुभ्रे भृश-  
मिह भवतां मानसे शूलपाणेः ॥ २३ ॥ अस्तोकस्तोमशस्त्रैरपचि-

तिममलां भूरिभावोपहारैः कुर्वन्निः सर्वदोषैः सततममिदृतौ ब्रह्म-  
विदेवलाद्यैः । सम्यक्सम्पूज्यमानाविह हृदि सरसीवानिशं युष्मदीये  
शर्वस्य क्रीडतां तौ प्रपदवरवृहत्कच्छपावच्छभासौ ॥ २४ ॥ याः  
स्वस्यैकांशपातादितिबहलगलद्रक्तवक्त्रं प्रणुन्नप्राणं प्राक्प्रोक्षयन्प्राङ्  
निजमचलवरं चालयन्तं दशास्यम् । पादाङ्गुल्यो दिशन्तु द्रुतमयुगदशः  
कल्मषप्लोषकल्याः कल्याणं फुल्लमाल्यप्रकरविलसिता वः प्रणद्धा-  
हिवल्लयः ॥ २५ ॥ प्रह्वप्राचीनबर्हिःप्रमुखसुरवरप्रस्फुरन्मौलिसक्त-  
ज्यायोरत्नोत्करोत्तरविरतममला भूरिनीराजिता या । प्रोदप्राप्रा  
प्रदेयात्ततिरिव रुचिरा तारकाणां निनान्तं नीलप्रीथस्य पादाम्बुलह-  
विलसिता सा नखालीः सुखं वः ॥ २६ ॥ सत्याः सत्याननेन्दा-  
वपि सविधगते ये विक्रासं दधाने स्वान्ते स्वां ते लभन्ते श्रियमिह  
सरसीवामरा ये दधानाः । लोलं लोलम्बकानां कुलमिव सुधियां  
सेवते ये सदा स्तां भूत्यै भूत्यैणपाणेर्विमलतररुचस्ते पदाम्भोरुद्वे  
वः ॥ २७ ॥ येषां रागादिदोषाश्चतमति यतयो यान्ति मुक्ति-  
प्रसादाद्ये वा नम्रात्ममूर्तिद्युसदशिपरिषन्मूर्तिं शेषायमाणाः ।  
श्रीकण्ठस्यारुणोद्यच्छरणसरसिजप्रोत्थितास्ते भवाख्यात्पारावाराखिरं  
वो दुरितहतिक्वतस्तारयेयुः परागाः ॥ २८ ॥ भूम्ना यस्यास्तसीम्ना  
भुवनमनुसृतं यत्परं धाम धाम्नां साक्षामाप्तायतत्त्वं यदपि च  
परमं यदुणातीतमाद्यम् । यच्चाहोहन्निरीहं गगनमिति मुहुः प्राहु-  
रुच्चैर्महान्तो माहेशं तन्महो मे महितमहरहर्मोहरोहं निहन्तु ॥ २९ ॥  
इति श्रीमत्परमहंसपरिवाजकाचार्यस्य श्रीगोविन्दभगवत्पादशिष्यस्य  
श्रीमच्छंकराचार्यस्य कृतौ शिवकेशादिपादान्तवर्णनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

१०७. अपराधभंजनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शान्तं पद्मासनस्थं शशधरमुकुटं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं  
शूलं वज्रं च खड्गं परशुमपि वरं दक्षिणाङ्गे बह्वैतम् । नागं पाशं च

घण्टां डमरुकसहितं चांकुशं वामभागे नानालंकारदीप्तं स्फटिक-  
मणिनिभं पार्वतीशं भजामि ॥ १ ॥ वंदे देवमुमापतिं सुरगुरुं वंदे  
जगत्कारणं वंदे पद्मगभूषणं मृगधरं वंदे पशूनां पतिम् । वंदे  
सूर्यशशांकवह्निनयनं वंदे मुकुंदप्रियं वंदे भक्तजनाश्रयं च वरदं  
वंदे शिवं शंकरम् ॥ २ ॥ आदौ कर्मप्रसंगात्कलयति कलुषं  
मातृकुक्षौ स्थितः सन् विण्मूत्रामेध्यमध्ये व्यथयति नितरां जाठरो  
जातवेदाः । यद्यद्वा सांब दुःखं विषयति विषमं शक्यते केन  
वक्तुं क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेव शंभो  
॥ ३ ॥ बाल्ये दुःखातिरेको मललुलितवपुः स्तन्यपाने पिपासा  
नो शक्यं चेन्द्रियेभ्यो भवगुणजनिता जन्तवो मां तुदन्ति । नाना-  
रोगोत्थदुःखादुदरपरिवशः शंकरं न स्मरामि क्षन्तव्यो मेऽपराधः  
शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेव शंभो ॥ ४ ॥ प्रौढोऽहं यौव-  
नस्थो विषयविषधरैः पञ्चमिर्मर्मसन्धौ दृष्टो नष्टो विवेकः सुतधन-  
युवतिस्वादुसौख्ये निषण्णाः । शैवे चिन्ताविहीनं मम हृदयमहो  
मानगर्वाधिरूढं क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भोः श्रीमहा-  
देव शंभो ॥ ५ ॥ वार्धक्ये चेन्द्रियाणां विगतगतनतैराधिदैवा-  
दितापैः पापै रोगैर्वियोगैरसदृशवपुषं प्रौढहीनं च दीनम् । मिथ्या-  
मोहाभिलाषैर्भ्रमति मम मनो धूर्जटेर्ध्यानशून्यं क्षन्तव्यो मेऽपराधः  
शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेव शंभो ॥ ६ ॥ नो शक्यं स्मार्त-  
कर्म प्रतिपदगहनप्रत्यवायाकुलाख्यं श्रौतं वार्ता कथं मे द्विजकुल-  
विहिते ब्रह्ममार्गे च सारे । नष्टो धर्म्यो विचारः श्रवणमननयोः  
को निदिध्यासितव्यः क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भोः  
श्रीमहादेव शंभो ॥ ७ ॥ स्नात्वा प्रत्यूषकाले स्नपनविधिविधौ  
नाहृतं गाङ्गतोयं पूजार्थं वा कदाचिद्बहुतरुगहनात् खण्डबिल्वै-



कपत्रम् । नानीता पद्ममाला सरसि विकसिता गन्धपुष्पे त्वदर्धं  
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेव शंभो  
॥ ८ ॥ दुर्गधैर्मध्वाज्ययुक्तैर्घटशतसहितैः स्नापितं नैव लिङ्गं नो  
लितं चंदनाद्यैः कनकविरचितैः पूजितं न प्रसूनैः । धूपैः कर्पूरदीपै-  
र्विविधरसयुतैर्नैव भक्ष्योपहारैः क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव  
शिव भोः श्रीमहादेव शंभो ॥ ९ ॥ नम्रो निःसङ्गशुद्धस्त्रिगुणवि-  
रहितो ध्वस्तमोहान्धकारो नासाग्रे न्यस्तदृष्टिर्विहरभवगुणैर्नैव दृष्टं  
कदाचित् । उन्मत्तावस्थया त्वां विगतकलमलं शंकरं न स्मरामि  
क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेव शंभो  
॥ १० ॥ ध्यानं चित्ते शिवाख्यं प्रचुरतरधनं नैव दत्तं द्विजेभ्यो  
हव्यं ते लक्षसंख्यं हुतवहवदने नार्पितं बीजमंत्रैः । नो जप्तं गांग-  
तीरे व्रतपरिचरणै रुद्रजप्यैर्न वेदैः क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव  
शिव भोः श्रीमहादेव शंभो ॥ ११ ॥ स्थित्वा स्थाने सरोजे  
प्रणवमयमरुत्कुम्भके सूक्ष्ममार्गे शांते स्वांते प्रलीने प्रकटितगाहने  
ज्योतिरूपे पराख्ये । लिंगं तद्ब्रह्माख्यं सकलमभिमतं नैव दृष्टं  
कदाचित्क्षन्तव्यो मेऽपराधः शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेव  
शंभो ॥ १२ ॥ आयुर्नश्यति पश्यतां प्रतिदिनं याति क्षयं यौवनं  
प्रत्यायाति गताः पुनर्न दिवसाः काळो जगद्भक्षकः । लक्ष्मीस्तोय-  
तरंगभंगचपला विद्युच्चलं जीवनं तस्मान्मां शरणागतं शरणद त्वं  
रक्ष रक्षाधुना ॥ १३ ॥ चंद्रोज्जासितशेखरे स्मरहरे गंगाधरे शंकरे  
सर्पैर्भूषितकण्ठकर्णविवरे नेत्रोत्थवैश्वानरे । दंतित्वक्कृतिसुंदरांबरधरे  
त्रैलोक्यसारे हरे मोक्षार्थं कुरु चित्तवृत्तिममलामन्यैस्तु किं कर्मभिः  
॥ १४ ॥ किं दानेन घनेन वाजिकारिभिः प्राप्तेन राज्येन किं किं वा  
पुत्रकलत्रमित्रपशुभिर्देहेन गोहेन किम् । ज्ञात्वैतत्क्षणभंगुरं सपदि

रे त्याज्यं मनो दूरतः स्वात्मार्थं गुरुवाक्यतो भज भज श्रीपार्वती-  
वल्लभम् ॥ १५ ॥ करचरणकृतं वा कायजं कर्मजं वा श्रवण-  
नयनजं वा मानसं वाऽपराधम् । विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्ष-  
मस्व जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव शंभो ॥ १६ ॥ गात्रं  
भस्मासितं स्मितं च हसितं हस्ते कपालं सितं खट्वांगं च सितं सितश्च  
वृषभः कर्णे सिते कुण्डले । गंगाफेनसितं जटावलयकं चंद्रः सितो  
मूर्धनि सोऽयं सर्वसितो ददातु विभवं पापक्षयं शंकरः ॥ १७ ॥  
इत्यपराधमंजनस्तोत्रं समाप्तम् ॥

### १०८. निर्वाणषट्कम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मनोबुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं न च श्रोत्रजिह्वे  
न च घ्राणनेत्रे । न च व्योम भूमिर्न तेजो न वायुश्चिदानंदरूपः  
शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥ १ ॥ न च प्राणसंज्ञो न वै पंचवायुर्न वा  
सप्तधातुर्न वा पंचकोशः । न वाक्पाणिपादं न चोपस्थपायू चिदा-  
नंद० ॥ २ ॥ न मे द्वेषरागौ न मे लोभमोहौ मदो नैव मे नैव  
मात्सर्यभावः । न धर्मो न चार्थो न कामो न मोक्षश्चिदा० ॥ ३ ॥  
न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुःखं न मंत्रो न तीर्थं न वेदा न  
यज्ञाः । अहं भोजनं नैव भोज्यं न भोक्ता चिदा० ॥ ४ ॥ न  
मृत्युर्न शंका न मे जातिभेदः पिता नैव मे नैव माता च जन्म ।  
न बंधुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्यश्चिदा० ॥ ५ ॥ अहं निर्विकल्पी  
निराकाररूपी विभुत्वाच्च सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणाम् । न चासंगतं नैव  
मुक्तिर्न मेयश्चिदा० ॥ ६ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं निर्वाण-  
षट्कं संपूर्णम् ॥

## १०९. भक्तशरणस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ आर्द्रातःकरणस्त्वं यस्मादीशान भक्तवृन्देषु ।  
 आर्द्रोत्सवप्रियोऽतः श्रीकंठात्रास्ति नैव संदेहः ॥ १ ॥ द्रष्टुंस्तवोत्स-  
 वस्य हि लोकान्पापाक्तया मृत्योः । मा भीरस्त्विति शंभो मध्ये  
 तिर्यग्गतागतैर्ब्रूषे ॥ २ ॥ प्रकरोति करुणयार्द्रान् शंभुर्नम्रानिति प्रबो-  
 धाय । धर्मोऽयं किल लोकानार्द्रान्कुस्तेऽद्य गौरीश ॥ ३ ॥ आर्द्रा  
 नटेशस्य मनोऽब्रवृत्तिरित्यर्थसंबोधकृते जनानाम् । आर्द्रैर्क्षे एवोत्स-  
 वमाह शस्तं पुराणजालं तव पार्वतीश ॥ ४ ॥ बाणार्चने भगवतः  
 परमेश्वरस्य प्रीतिर्भवेन्निरुपमेति यतः पुराणैः । संबोध्यते परशिवस्य  
 ततः करोति बाणार्चनं जगति भक्तियुता जनालिः ॥ ५ ॥ यथांघ्रकं  
 त्वं विनिहत्य शीघ्रं लोकस्य रक्षामकरोः कृपाब्धे । तथाज्ञतां मे  
 विनिवार्य शीघ्रं विद्यां प्रयच्छाशु सभाधिनाथ ॥ ६ ॥ इति  
 भक्तशरणस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## ११०. श्रीकालांतकाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कमलापतिमुखसुरवरपूजित काकोलभासित-  
 ग्रीव । काकोदरपतिभूषण कालांतक पाहि पार्वतीनाथ ॥ १ ॥  
 कमलाभिमानवारणदक्षांघ्रे विमलशेमुपीदायिन् । नतकामित-  
 फलदायक कालांतक पाहि पार्वतीनाथ ॥ २ ॥ करुणासागर शंभो  
 शरणागतलोकरक्षणधुरीण । कारण समस्तजगतां कालांतक पाहि  
 पार्वतीनाथ ॥ ३ ॥ प्रणतार्तिहरणदक्ष प्रणवप्रतिपाद्य पर्वतावास ।  
 प्रणमामि तव पदाब्जे कालांतक पाहि पार्वतीनाथ ॥ ४ ॥ मंदार  
 नतजनानां वृंदारकवृंदगेयसुचरित्र । मुनिपुत्रसृत्युहारिन् कालांतक  
 पाहि पार्वतीनाथ ॥ ५ ॥ मारारण्यद्वानल मापावारींद्रकुंभसंजात ।  
 मातंगार्चमवासः कालांतक पाहि पार्वतीनाथ ॥ ६ ॥ मोहोदधकार-

भानो मोदितगिरिजामनःसरोजात । मोक्षप्रदं प्रणमतां कालांतक  
पाहि पार्वतीनाथ ॥ ७ ॥ विद्यानायकं मह्यं विद्यां दत्त्वा निवार्य  
चाविद्याम् । विद्याधरादिसेवितं कालांतकं पाहि पार्वतीनाथ ॥ ८ ॥  
कालांतकाष्टकमिदं पठति जनो यः कृतादरो लोके । कालांतक-  
प्रसादात्कालकृता भीर्न संभवेत्तस्य ॥ ९ ॥ इति कालांतकाष्टकं  
संपूर्णम् ॥

### १११. शंभुस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कैलासशैलनिलयात्कलिकल्मषघ्नाच्चंद्रार्धभूषि-  
तजटाद्वटमूलवासात् । नम्रोत्तमांगविनिवेशितहस्तपद्माच्छंभोः परं  
किमपि दैवमहं न जाने ॥ १ ॥ नाकाधिनाथकरपल्लवसेवितांघ्रे-  
नांगास्त्रघणमुखविभासितपार्श्वभागात् । निर्व्याजपूर्णकरुणास्त्रिखिला-  
मरेण्याच्छंभोः परं किमपि दैवमहं न जाने ॥ २ ॥ मौनीन्द्रस्त्र-  
णकृते जितकालगर्वात्पापाब्धिशोषणविधौ जितवाडवाम्नेः । मारांग-  
भस्मपरिलेपनशुक्लगात्राच्छंभोः परं किमपि दैवमहं न जाने ॥ ३ ॥  
विज्ञानमुद्रितकराच्छरदिंदुशुभ्राद्विज्ञानदाननिरताजडपङ्कयेऽपि ।  
वेदांतगोचरणाद्विधिविष्णुसेव्याच्छंभोः परं किमपि दैवमहं न  
जाने ॥ ४ ॥ इति शंभुस्तवः संपूर्णः ॥

### ११२. परमात्माष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ परमात्मैस्तव प्राप्तौ कुशलोऽस्मि न संशयः ।  
तथापि मे मनो दुष्टं भोगेषु रमते सदा ॥ १ ॥ यदा यदा तु वैराग्यं  
भोगेभ्यश्च करोम्यहम् । तदैव मे मनो मूढं पुनर्भोगेषु गच्छति ॥ २ ॥  
भोगान्भुक्त्वा सुदं याति मनो मे चञ्चलं प्रभो । तव स्मृतिर्यदायाति  
तदा याति बहिर्मुखम् ॥ ३ ॥ प्रत्यहं शास्त्रनिचयं चिन्तयामि समा-  
हितः । तथापि मे मनो मूढं त्यक्त्वा त्वां भोगमिच्छति ॥ ४ ॥ शोक-

मोहौ मानमदौ तवाशानाद्भवन्ति वै । यदा बुद्धिपथं यासि यान्ति  
ते विलयं तदा ॥ ५ ॥ कृपा कुरु तथा नाथ त्वयि चित्तं स्थिरं यथा ।  
मम स्याज्ज्ञानसंयुक्तं तव ध्यानपरायणम् ॥ ६ ॥ मायया ते विमू-  
ढोऽस्मि न पश्यामि हिताहितम् । संसारापारपायोधौ पतितं मां  
समुद्धर ॥ ७ ॥ परमार्त्तस्त्वयि सदा मम स्याद्विश्रला मतिः ।  
संसारदुःखगहनात्त्वं सदा रक्षको मम ॥ ८ ॥ परात्मन इदं स्तोत्रं  
मोहविच्छेदकारकम् । ज्ञानदं च भवेद्गुणां योगानन्देन निर्मितम्  
॥ ९ ॥ इति श्रीयोगानन्दतीर्थविरचितं परमात्माष्टकं संपूर्णम् ॥

### ११३. शिवजयवादस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जय जय गिरिजालंकृतविग्रह, जय जय  
चिन्तामिलदिवपाल । जय जय सर्वविपत्तिविनाशन, जय जय  
शंकर दीनदयाल ॥ १ ॥ जय जय सकलसुरासुरसेवित, जय जय  
वांछितदानवितंद्र । जय जय लोकालोकधुरंधर जय जय नागेश्वर  
धृतचंद्र ॥ २ ॥ जय जय हिमाचलनिवासिन्, जय जय कल्या-  
कल्पितार्तिग । जय जय संसृतिरचनाशिल्पिन्, जय जय भक्त-  
हृदंबुजगृंग ॥ ३ ॥ जय जय भोगिफणामणिरंजित, जय जय  
भूतिविभूषितदेह । जय जय पितृवनकेलिपरायण, जय जय गौरी-  
विभ्रमगेह ॥ ४ ॥ जय जय गांगतरंगलुलितजट, जय जय मंगल-  
पूरसमुद्र । जय जय बोधविजृम्भणकारण, जय जय मानसपूर्तिविनिद्र  
॥ ५ ॥ जय जय दयातरंगितलोचन, जय जय चित्रचरित्रपवित्र ।  
जय जय शब्दब्रह्मविकाशक, जय जय किष्किपतापप्रवित्र ॥ ६ ॥  
जय जय तंत्रनिरूपणतत्पर, जय जय योगविक्रस्वरधाम । जय जय  
मदनमहाभटभजन, जय जय पूरितपूजककाम ॥ ७ ॥ जय जय  
गंगाधर विश्वेश्वर, जय जय पतितपवित्रविधान । जय जय बर्बनाद

कृपाकर, जय जय शिव शिव सौख्यनिधान ॥ ८ ॥ य इमं शिव-  
जयवादमुदारं, पठति सदा शिवघात्रि । तस्य सदाशिवशासन-  
योगान्माद्यति संपन्नास्त्रि ॥ ९ ॥ इति शिवजयवादस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ११४. कालभैरवाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देवराजसेव्यमानपावनांत्रिपंकजं व्यालयज्ञसूत्र-  
मिंदुशेखरं कृपाकरम् । नारदादियोगिवृंदवदितं दिगंबरं काशिका-  
पुराधिनाथकालभैरवं भजे ॥ १ ॥ भानुकोटिभास्वरं भवाब्धिधारकं  
परं नीलकंठमीप्सितार्थदायकं त्रिलोचनम् । कालकालमंबुजाक्षमक्ष-  
शूलमक्षरं काशिका० ॥ २ ॥ शूलटंकपाशदंडपाणिमादिकारणं  
इयामकायमादिदेवमक्षरं निरामयम् । भीमविक्रमं प्रभुं विचित्र-  
तांडवप्रियं काशिका० ॥ ३ ॥ मुक्तिमुक्तिदायकं प्रशस्तचारुविग्रहं  
भक्तवत्सलं स्थितं समस्तलोकविग्रहम् । विनिष्कण्ठमनोज्ञहेमकिंकि-  
णीलसत्कर्ति काशिका० ॥ ४ ॥ धर्मसेतुपालकं स्वधर्ममार्गनाशकं  
कर्मपाशमोचकं सुशर्मदायकं विभुम् । स्वर्णवर्णशेषपाशशोभितां-  
गमंडलं काशिका० ॥ ५ ॥ रत्नपादुकाप्रभाभिरामपादयुग्मकं  
नित्यमद्वितीयमिष्टदैवतं निरंजनम् । मृत्युदर्पनाशनं करालदंष्ट्रमोक्षणं  
काशिका० ॥ ६ ॥ अट्टहासभिन्नपद्मजांडकोशसंततिं दृष्टिपातनष्ट-  
पापजालमुग्रशासनम् । अष्टसिद्धिदायकं कपालमालिकंधरं  
काशिका० ॥ ७ ॥ भूतसंघनायकं विशालकीर्तिदायकं काशिवास-  
लोकपुण्यपापशोधकं विभुम् । नीतिमार्गकोविदं पुरातनं जगत्पतिं  
काशिका० ॥ ८ ॥ कालभैरवाष्टकं पठति ये मनोहरं ज्ञानमुक्ति-  
साधनं विचित्रपुण्यवर्धनम् । शोकमोहदैन्यलोभकोपतापनाशनं  
प्रयांति कालभैरवांत्रिसंनिधिं नरा ध्रुवम् ॥ ९ ॥ इति श्रीमच्छं-  
कराचार्यविरचितं कालभैरवाष्टकं संपूर्णम् ॥

११५. शिवभुजंगप्रयातस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यदा दारुणाभाषणा भीषणा मे भविष्यत्यु-  
पांते कृतांतस्य दूताः । तदा मन्मनस्त्वत्पदांभोरुहस्यं कथं निश्चलं  
स्यान्नमस्तेऽस्तु शंभो ॥ १ ॥ यदा दुर्निवारव्यथोऽहं शयानो लुठञ्चिः-  
श्वसन्निसृताभ्यक्तवाणिः । तदा जङ्घुकन्याजलालंकृतं ते जटामण्डलं  
मन्मनोमंदिरं स्यात् ॥ २ ॥ यदा पुत्रमित्रादयो मत्सकाशे रुदत्यस्य  
हा कीदृशीयं दशेति । तदा देवदेवेश गौरीश शंभो नमस्ते शिवा-  
येत्यजस्रं ब्रवाणि ॥ ३ ॥ यदा पश्यतां मामसौ वेत्ति नास्मानयं  
हास एवेति वाचो वदेयुः । तदा भूतिभूषं भुजंगावनदं पुरारे  
भवतं स्फुटं भावयेयम् ॥ ४ ॥ यदा पारमच्छायमस्थानम-  
द्भिर्जनैर्वा विहीनं गमिष्यामि दूरम् । तदा तं निरुधन् कृतांतस्य मार्गं  
महादेव मह्यं मनोज्ञं प्रयच्छ ॥ ५ ॥ यदा रौरवादीन् स्मरन्नेव भीत्या  
ब्रजाम्येव मोहं पतिष्यामि घोरे । तदा मामहो नाथ कस्तारयिष्यत्य-  
नाथं पराधीनमर्धेन्दुमौले ॥ ६ ॥ यदा श्वेतपत्रायतालङ्घ्यशक्ते  
कृतांतान्नयं भक्तवात्सल्यभावात् । तदा पाहि मां पार्वतीवल्लभान्यं  
न पश्यामि पातारमेतादृशं मे ॥ ७ ॥ इदानीमिदानीं मतिर्मे  
भवित्रीत्यहो संततं चिंतया पीडितोऽस्मि । कथं नाम मा भून्मनो-  
वृत्तिरेषा नमस्ते गतीनां गते नीलकण्ठ ॥ ८ ॥ जमर्यादमेवासुमा-  
बालवृद्धं हरतं कृतांतं समीक्ष्यामि भीतः । स्तुतौ तावदस्यां तवैव  
प्रसादाद्भवानीपते निर्भयोऽहं भवानि ॥ ९ ॥ जराजन्मगर्भाधि-  
वासादिदुःखान्यसङ्ख्यानं जह्यां जगन्नाथ केन । भवंतं विना मे  
गतिर्नैव शंभो दयालो न जागर्ति किं वा दया ते ॥ १० ॥ शिवा-  
येति शब्दो नमःपूर्वं एष स्मरन्मुक्तिकृन्मृत्युहा तत्त्ववाची । ममेक्षान  
मामान्मनस्तो वचस्तः सदा मह्यमेतत्पदानं प्रयच्छ ॥ ११ ॥

त्वमप्येव मां पश्य शीतांशुमौलिप्रिये मेषजं त्वं भवव्याधिशाल्यै ।  
 बृहत्क्लेशभाजं पदाभोजपोते भवान्धौ निमग्नं नयस्वाद्य पारम् ॥ १२ ॥  
 अनेन स्तवेनादरादम्बिकेशं परां भक्तिमातन्वता ये  
 नमन्ति । मृतौ निर्भयास्ते ह्यनंतं लभन्ते हृदंभोजमध्ये समा-  
 सीनमीशम् ॥ १३ ॥ अकण्ठे कलङ्कादनङ्गे भुजङ्गादपाणौ कपाला-  
 दभालेऽनलाक्षात् । अमौलौ शशाङ्कादहं देवमन्यं न मन्ये न मन्ये  
 न मन्ये न मन्ये ॥ १४ ॥ किरीटे निशीशो ललाटे हुताशो भुजे  
 भोगिराजो गले कालिमा च । तनौ कामिनी यस्य तुल्यं न देवं  
 न जाने न जाने न जाने न जाने ॥ १५ ॥ अयं दानकालस्त्वहं  
 दानपात्रं भवानेव दाता त्वदन्यं न याचे । भवभक्तिमेव स्थिरां  
 देहि मम कृपाशील शंभो कृतार्थोऽस्मि यस्मात् ॥ १६ ॥  
 शिवोऽहं शिवोऽहं शिवोऽहं शिवोऽहं शिवाद्वान्यथा दैवतं नाभि-  
 जाने । महादेव शंभो गिरीश त्रिशूलिन् त्वयीदं समस्तं विभा-  
 तीति यस्मात् ॥ १७ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य-  
 श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं शिवभुजङ्गप्रयातस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ११६. शङ्कराष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ हे वामदेव शिवशंकर दीनबन्धो काशीपते  
 पशुपते पशुपाशनाशिन् । हे विश्वनाथ भवबीज जनार्तिहारिन्  
 संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥ १ ॥ हे भक्तवत्सल सदाशिव  
 हे महेश हे विश्वतात जगदाश्रय हे पुरारे । गौरीपते मम पते  
 मम प्राणनाथ संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥ २ ॥ हे दुःखभ-  
 ञ्जक विभो गिरिजेश शूलिन् हे वेदशास्त्रनिवेद्य जनैकबन्धो । हे  
 व्योमकेश भुवनेश जगद्विशिष्ट संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष  
 ॥ ३ ॥ हे धूर्जटे गिरिश हे गिरिजार्धदेह हे सर्वभूतजनक प्रमथेश



देव । हे सर्वदेवपरिपूजितपादपद्म संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष  
॥ ४ ॥ हे देवदेव वृषभध्वज नन्दिकेश कालीपते गणपते गज-  
चर्मवासः । हे पार्वतीश परमेश्वर रक्ष शंभो संसारदुःखगहनाह्वनाच्च  
शश्वत् ॥ ५ ॥ हे वीरभद्र भववैद्य पिनाकपाणे हे मीलकंठ  
मदनान्त शिवाकलत्र । वाराणसीपुरपते भवभीतिहारिन् संसारदुःख-  
गहनाज्जगदीश रक्ष ॥ ६ ॥ हे कालकाल मृड शर्व सदासहाय  
हे भूतनाथ भवबाधक हे त्रिनेत्र । हे यज्ञशासक यमान्तक योगि-  
वन्द्य संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥ ७ ॥ हे वेदवेद्य शशिरोस्वर  
हे दयालो हे सर्वभूतप्रतिपालक शूलपाणे । हे चन्द्रसूर्य शिखितेत्र  
चिदेकरूप संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥ ८ ॥ श्रीशंकराष्ट-  
कमिदं योगानन्देन निर्मितम् । सायंप्रातः पठेन्नित्यं सर्वपापविना-  
शकम् ॥ ९ ॥ इति श्रीयोगानन्दतीर्थविरचितं शङ्कराष्टकं  
संपूर्णम् ॥

### ११७. हिमालयकृतशिवस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ हिमालय उवाच ॥ त्वं ब्रह्मा सृष्टि-  
कर्ता च त्वं विष्णुः परिपालकः । त्वं शिवः शिव-  
दोऽनंतः सर्वसंहारकारकः ॥ १ ॥ त्वमीश्वरो गुणातीतो ज्योतीरूपः  
सनातनः । प्रकृतः प्रकृतीशश्च प्राकृतः प्रकृतेः परः ॥ २ ॥ नाना-  
रूपविधाता त्वं भक्तानां ध्यानहेतवे । येषु रूपेषु यत्पीतिस्तत्तत्त्वं  
बिभर्षि च ॥ ३ ॥ सूर्यस्त्वं सृष्टिजनक आधारः सर्वतेजसाम् ।  
सोमस्त्वं सत्यपाता च सततं शीतरश्मिना ॥ ४ ॥ वायुस्त्वं वरुण-  
स्त्वं च विद्वांश्च विदुषां गुरुः । मृत्युंजयो मृत्युमृत्युः कालकालो  
यमांतकः ॥ ५ ॥ वेदस्त्वं वेदकर्ता च वेदवेदांगपारगः । विदुषां  
जनकस्त्वं च विद्वांश्च विदुषां गुरुः ॥ ६ ॥ मंत्रस्त्वं हि जपस्त्वं हि

तपस्त्वं तत्फलप्रदः । वाक् त्वं रागाधिदेवी त्वं तत्कर्ता तद्गुरुः स्वयम् ॥ ७ ॥ अहो सरस्वतीबीजं कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः । इत्येवमुक्त्वा शैलेंद्रस्तस्थौ धृत्वा पदांबुजम् ॥ ८ ॥ तत्रोवासं तमाबोधय चावरुह्य वृषाच्छिवः । स्तोत्रमेतन्महापुण्यं त्रिसंध्यं यः पठेन्नरः ॥ ९ ॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यो भयेभ्यश्च भवार्णवे । अपुत्रो लभते पुत्रं मासमेकं पठेद्यदि ॥ १० ॥ भार्याहीनो लभेन्नार्या सुशीलां सुमनोहराम् । चिरकालगतं वस्तु लभते सहसा ध्रुवम् ॥ ११ ॥ राज्यभ्रष्टो लभेद्राज्यं शंकरस्य प्रसादतः । कारागारे श्मशाने च शत्रुप्रसोऽतिसंकटे ॥ १२ ॥ गभीरेऽतिजलाकीर्णे भग्नपोते विषादने । रणमध्ये महामीते हिंस्रजंतुसमन्विते ॥ १३ ॥ यः पठेच्छ्रद्धया सम्यक् स्तोत्रमेतज्जगद्गुरोः । सर्वतो मुच्यते स्तुत्वा शंकरस्य प्रसादतः ॥ १४ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्ते महापुराणे श्रीकृष्ण-जन्मखंडे हिमालयकृतं शिवस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ११८. शिवाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रभुं प्राणनाथं विभुं विश्वनाथं जगन्नाथनाथं सदानंदभाजाम् । भवद्भग्यभूतेश्वरं भूतनाथं शिवं शंकरं शंभुमीशानमीडे ॥ १ ॥ गले हंडमालं तनौ सर्पजालं महाकालकालं गणेशाधिपालम् । जटाजूटमंगोत्तरगैर्विशालं शिवं ॥ २ ॥ सुदामाकरं मंडनं मंडयंतं महामंडलं भस्मभूषाधरं तम् । अनार्दिह्यपारं महामोहमारं शिवं ॥ ३ ॥ तटाधोनिवासं महाष्टाट्टहासं महापापनाशं सदा सुप्रकाशम् । गिरीशं गणेशं सुरेशं महेशं शिवं ॥ ४ ॥ गिरींद्रात्मजासंगृहीतार्धदेहं गिरौ संस्थितं सर्वदा-सन्नगोहम् । परब्रह्म ब्रह्मादिभिर्वर्चमानं शिवं ॥ ५ ॥ कपालं त्रिशूलं कराभ्यां दधानं पदांभोजनन्नाय कामं ददानम् । बलीवर्द-

यानं सुराणां प्रधानं शिवं ॥ ६ ॥ शरच्चन्द्रगात्रं गुणानन्दत्रं पा  
त्रिनेत्रं पवित्रं धनेशस्य मित्रम् । अपर्णाकलत्रं चरित्रं विचित्रं  
शिवं ॥ ७ ॥ हरं सर्पहारं चित्ताभूविहारं भवं वेदसारं सदा  
निर्विकारम् । इमशाने वसंतं मनोजं दहतं शिवं ॥ ८ ॥ स्तवं यः  
प्रभाते नरः शूलपाणेः पठेत्सर्वदा भर्गभावानुरक्तः । स पुत्रं धनं  
धान्यमित्रं कलत्रं विचित्रं समासाद्य मोक्षं प्रयाति ॥ ९ ॥ इति  
श्रीशिवाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ११९. द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्मरणम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मलिकार्जुनम् ।  
उज्जयिन्यां महाकालमौकारममलेश्वरम् ॥ १ ॥ परल्यां वैजनाथं च  
ढाकिन्यां भीमशंकरम् । सेतुबन्धे तु रामेश नागेश दारुकावने  
॥ २ ॥ वाराणस्यां तु विश्वेशं त्र्यम्बकं गौतमीतटे । हिमालयं तु  
केदारं घुसृणेशं शिवालये ॥ ३ ॥ एतानि ज्योतिर्लिङ्गानि सायं  
प्रातः पठेन्नरः । सप्तजन्मकृतं पापं स्मरणेन विनश्यति ॥ ४ ॥ इति  
द्वादशज्योतिर्लिङ्गस्मरणं संपूर्णम् ॥

### १२०. दारिद्र्यदहनशिवस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विश्वेश्वराय नरकार्णवतारणाय कर्णामृताय  
शशिशेखरधारणाय । कर्पूरकांतिधवलाय जटाधराय दारिद्र्यदुःख-  
दहनाय नमः शिवाय ॥ १ ॥ गौरीप्रियाय रजनीशकलाधराय  
कालांतकाय भुजगाधिपकंकणाय । गंगाधराय गजराजविमर्दनाय  
दारिद्र्य ॥ २ ॥ भक्तिप्रियाय भवरोगभयापहाय उग्राय दुर्गाभव-  
सागरतारणाय । ज्योतिर्मयाय गुणनामसुनृत्यकाय दारिद्र्य ॥ ३ ॥  
चर्माधराय शवभस्मविलेपनाय भालेक्षणाय मणिकुण्डलमञ्जिताय ।  
मंजीरपादयुगलाय जटाधराय दारिद्र्य ॥ ४ ॥ पंचाननाय फणिराज-

विभूषणाय हेमांशुकाय भुवनत्रयमंडिताय । आनंदभूमिवरदाय  
 तमोमयाय दारिद्र्य० ॥ ५ ॥ भानुप्रियाय भवसागरतारणाय  
 कालांतकाय कमलासनपूजिताय । नेत्रत्रयाय शुभलक्षणलक्षिताय  
 दारिद्र्य० ॥ ६ ॥ रामप्रियाय रघुनाथवरप्रदाय नागप्रियाय नरकार्णव-  
 तारणाय । पुण्येषु पुण्यभरिताय सुरार्चिताय दारिद्र्य० ॥ ७ ॥  
 मुक्तेश्वराय फलदाय गणेश्वराय गीतप्रियाय वृषभेश्वरवाहनाय ।  
 मातंगचर्मवसनाय महेश्वराय दारिद्र्य० ॥ ८ ॥ वसिष्ठेन कृतं  
 स्तोत्रं सर्वरोगनिवारणम् । सर्वसंपत्करं शीघ्रं पुत्रपौत्रादिवर्धनम् ।  
 त्रिसंध्यं यः पठेन्नित्यं स हि स्वर्गमवाप्नुयात् ॥ ९ ॥ इति  
 श्रीवसिष्ठविरचितं दारिद्र्यदहनशिवस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १२१. ईश्वरप्रार्थनास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ईश्वरं शरणं यामि क्रोधमोहादिपीडितः ।  
 अनार्यं पतितं दीनं पाहि मां परमेश्वर ॥ १ ॥ प्रभुस्त्वं जगतां  
 स्वामिन् वश्यं सर्वं तवास्ति च । अहमज्ञो विमूढोऽस्मि त्वां न  
 जानामि हे प्रभो ॥ २ ॥ ब्रह्मा त्वं च तथा विष्णुस्त्वमेव च  
 महेश्वरः । तव तत्त्वं न जानामि पाहि मां परमेश्वर ॥ ३ ॥ त्वं पिता  
 त्वं च मे माता त्वं बन्धुः करुणानिधे । त्वां विना नहि चान्योऽस्ति  
 मम दुःखविनाशकः ॥ ४ ॥ अन्तकाले त्वमेवासि मम दुःख-  
 विनाशकः । तस्माद्वै शरणोऽहं ते रक्ष मां हे जगत्पते ॥ ५ ॥  
 पितापुत्रादयः सर्वे संसारे सुखभागिनः । विपत्तौ परिजातायां  
 कोऽपि वार्ता न पृच्छति ॥ ६ ॥ कामक्रोधादिभिर्युक्तो लोभमोहादि-  
 कैरपि । तान्विनश्यात्मनो वैरीन् पाहि मां परमेश्वर ॥ ७ ॥ अनेके  
 रक्षिताः पूर्वं भवता दुःखपीडिताः । क गता ते दया चाद्य पाहि  
 मां हे जगत्पते ॥ ८ ॥ न त्वां विना कश्चिदस्ति संसारे मम

रक्षकः । शरणं त्वा प्रपन्नोऽहं ब्राहि मां परमेश्वर ॥ ९ ॥ ईश्वर-  
प्रार्थनास्तोत्रं योगानन्देन निर्मितम् । यः पठेद्भक्तिसंयुक्तः तत्पेशः  
संप्रसीदति ॥ १० ॥ इति श्रीयोगानन्दतीर्थविरचितं ईश्वरप्रार्थना-  
स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १२२. कल्किकृतशिवस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ गौरीनाथं विश्वनाथं शरण्यं भूतावासं वासुकी-  
कण्ठभूषम् । त्र्यक्षं पंचास्यादिदेवं पुराणं वंदे सांद्रानंदसंदोहदक्षम्  
॥ १ ॥ योगाधीशं कामनाशं करालं गंगासंगहृद्भ्रमूर्धानमीशम् ।  
जटाजूटादोपरिक्षिप्तभावं महाकालं चंद्रभालं नमामि ॥ २ ॥  
श्मशानस्थं भूतवेतालसंगं नानाशस्त्रैः खड्गशूलादिमिश्रं । व्यग्रात्युग्रा  
बाहवो लोकनाशे यस्य क्रोधोद्भूतलोकोऽस्तमेति ॥ ३ ॥ यो भूतादिः  
पंचभूतैः सिसृक्षुस्तन्मात्रात्मा कालकर्मस्वभावैः । प्रहृत्पदे प्राप्य  
जीवत्वमीशो ब्रह्मानंदे क्रीडते तं नमामि ॥ ४ ॥ स्थितो विष्णुः  
सर्वजिष्णुः सुरात्मा लोकान्साधून्धर्मसेतुन्विभर्ति । ब्रह्माक्षं शे  
योऽभिमानो गुणात्मा शब्दाद्यंगैस्तं परेशं नमामि ॥ ५ ॥ यस्या-  
ज्ञया वायवो वान्ति लोके ज्वलत्यग्निः सविता याति तप्यन् ।  
शीतांशुः स्वे तारकासंग्रहश्च प्रवर्तते तं परेशं प्रपद्ये ॥ ६ ॥ यस्य  
श्वासात्सर्षपात्री धरित्री देवो वर्षस्यंशु कालः प्रमाता । मेरुर्मध्ये  
भुवनानां च भर्ता तमीशानं विश्वरूपं नमामि ॥ ७ ॥ इति  
श्रीकल्किपुराणे कल्किकृतशिवस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १२३. सदाशिवाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शीर्षजटागणभारं गरलाहारं समस्तसंहारम् ।  
कैलासाद्रिचिहारं पारं भववारिधेरहं वंदे ॥ १ ॥ चंद्रकलोज्ज्वलभालं  
कण्ठव्यालं जगन्नयीपालम् । कृतनरमस्तकभालं कालं कालस्य

कोमलं वंदे ॥ २ ॥ कोपेक्षणहतकामं स्वात्मारामं नगेंद्रजावामम् ।  
 संसृतिशोकविरामं श्यामं कंठेन कारणं वंदे ॥ ३ ॥ कटितटविलसित-  
 नागं खंडितयागं महाद्भुतत्यागम् । विगतविषयरसरागं भागं यज्ञेषु  
 बिभ्रतं वंदे ॥ ४ ॥ त्रिपुरादिकदनुजांतं गिरिजाकांतं सदैव संशां-  
 तम् । लीलाविजितकृतांतं भांतं स्वांतेषु देहिनां वंदे ॥ ५ ॥  
 सुरसरिदाडुतकेशं त्रिदशकुलेशं हृदालयावेशम् । विगताशेषक्लेशं  
 देशं सर्वेष्टसंपदां वंदे ॥ ६ ॥ करतलकलितपिनाकं विगतजराकं  
 सुकर्मणां पाकम् । परपदवीतवराकं नाकंगमपूगवंदितं वंदे ॥ ७ ॥  
 भूतिविभूषितकायं दुस्तरमायं विवर्जितापायम् । प्रमथसमूहसहायं  
 सायंप्रातर्निरंतरं वंदे ॥ ८ ॥ यस्तु पदाष्टकमेतद्ब्रह्मानंदेन निर्मितं  
 नित्यम् । पठति समाहितचेताः प्राप्नोत्यंते स शैवमेव पदम् ॥ ९ ॥  
 इति श्रीमत्परमहंसस्वामिब्रह्मानंदविरचितं सदाशिवाष्टकं संपूर्णम् ॥

### १२४. असितकृतशिवस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ असित उवाच ॥ जगद्गुरो नमस्तुभ्यं शिवाय  
 शिवदाय च । योगीन्द्राणां च योगीन्द्र गुरुणां गुरवे नमः ॥ १ ॥  
 मृत्योर्भृत्युस्वरूपेण मृत्युसंसारखंडन । मृत्योरीश मृत्युबीज मृत्युंजय  
 नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥ कालरूपं कलयतां कालकालेश कारण ।  
 कालादतीत कालस्थ कालकाल नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥ गुणातीत  
 गुणाधार गुणबीज गुणात्मक । गुणीश गुणिनां बीज गुणिनां गुरवे  
 नमः ॥ ४ ॥ ब्रह्मस्वरूप ब्रह्मज्ञ ब्रह्मभावे च तत्पर । ब्रह्मबीज-  
 स्वरूपेण ब्रह्मबीज नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥ इति स्तुत्वा शिवं नत्वा  
 पुरस्तस्थौ मुनीश्वरः । दीनवत्साश्रुनेत्रश्च पुलकांचितविग्रहः ॥ ६ ॥  
 असितेन कृतं स्तोत्रं भक्तियुक्तश्च यः पठेत् । वर्षमेकं हविष्याशी  
 शंकरस्य महात्मनः ॥ ७ ॥ स लभेद्द्वैष्णवं पुत्रं ज्ञानिनं चिर-

जीविनम् । भवेदनाड्यो दुःखी च मूको भवति पंडितः ॥ ८ ॥  
 अभायो लभते भार्या सुशीला च पतिव्रताम् । इह लोके सुखं  
 भुक्त्वा यात्यन्ते शिवसंनिधिम् ॥ ९ ॥ इदं स्तोत्रं पुरा दत्तं  
 ब्रह्मणा च प्रचेतसे । प्रचेतसा स्वपुत्रायासिताय दत्तमुत्तमम्  
 ॥ १० ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्ते महापुराणे श्रीकृष्णजन्मखंडे अस्ति-  
 कृतशिवस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १२५. चंद्रचूडालाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यमनियमाद्यंगयुनैर्योनैर्यत्पादपंकजं द्रष्टुम् ।  
 प्रयतंते मुनिवर्यास्तमहं प्रणमामि चंद्रचूडालम् ॥ १ ॥ यमगर्भ-  
 भंजनचणं नमतां सर्वेष्टदानधौरयम् । शमदमसाधनसंपलभ्यं प्रण-  
 मामि चंद्रचूडालम् ॥ २ ॥ यं द्रोणबिल्वमुख्यैः पूजयतां द्वारि  
 मत्तमातंगाः । कंठे लसंति विद्यास्तमहं प्रणमामि चंद्रचूडालम्  
 ॥ ३ ॥ नलिनभवपद्मनेत्रप्रमुखामरसेन्यमानपदपद्मम् । नतजन-  
 विद्यादानप्रवणं प्रणमामि चंद्रचूडालम् ॥ ४ ॥ नुतिमिर्देववराणां  
 मुखरीकृतमंदिरद्वारम् । स्तुतमादिमवाक्त्ततिभिः सततं प्रणमामि  
 चंद्रचूडालम् ॥ ५ ॥ जंतोस्तव पादपूजनकरणात्करपद्मगाः पुमर्थाः  
 स्युः । मुरहरपूजितपादं तमहं प्रणमामि चंद्रचूडालम् ॥ ६ ॥ चेतसि  
 चिंतयतां यत्पदपद्मं सत्त्वं ब्रह्मात् । निःसरति वाक्सुधामा तमहं  
 प्रणमामि चंद्रचूडालम् ॥ ७ ॥ नम्राज्ञानतमस्ततिदूरीकरणाय नेत्र-  
 लक्ष्माद्यः । धत्तेऽग्निचंद्रसूर्यास्तमहं प्रणमामि चंद्रचूडालम् ॥ ८ ॥  
 अष्टकमेतत्पठतां स्पष्टतरं कष्टनाशनं पुंसाम् । अष्ट ददाति हि  
 सिद्धिरिष्टसमष्टीश्च चंद्रचूडालः ॥ ९ ॥ इति चंद्रचूडालाष्टकं  
 संपूर्णम् ॥

## १२६. शिवभक्तिकल्पलतिकास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीकान्तपद्मजमुखैर्हृदि चिंतनीयं श्रीमत्क  
 शंकर भवचरणारविंदम् । काहं तदेतदुपसेवितुमीहमानो हा हंत  
 कस्य न भवाम्युपहासपात्रम् ॥ १ ॥ अद्राक्षमंप्रिकमलं न तवेति  
 यन्मे दुःखं यदप्यनवमृश्य दुरात्मतां स्वाम् । पादांबुजं तव दिदक्ष  
 इतीदृगागः पातोऽनले प्रतिकृतिर्गिरिशैतयोर्मै ॥ २ ॥ दौरात्म्यतो  
 मम भवत्पददर्शनेच्छा मंतुस्तथापि तव सा भजनात्मिकेति ।  
 स्यादीशितुर्मयि दयैव दयामकार्षीरश्मादिभिः प्रहृतवत्सु न किं  
 विभो त्वम् ॥ ३ ॥ दुःखानलोदरनिपातनपूर्वदेष्णेष्वर्थानामुत-  
 मुखेष्वनुराग आगः । स्यात्ते हवे तव दयालुतया त्वदानस्याद्यै-  
 विभो तद्वधूय विभवि चास्मान् ॥ ४ ॥ ईशान रक्षितुमिमान्यद-  
 पेक्षसे त्वं नत्यादिकं तदपनेतुमतिप्रसंगम् । किं हीयते तदनुपाधि-  
 कृपालुता ते संवित्सुखस्य न हि ते प्रियमप्रियं वा ॥ ५ ॥ अप्या-  
 हर प्रहर संहर वाग्वदस्य त्रातास्युपात्तममुना मम नाम हीति ।  
 एवं विभो तनुभृतामवनेऽयुपायान्नेपी कथं परमकारुणिकोऽसि  
 न त्वम् ॥ ६ ॥ त्राता दयाजलनिधिः स्मृतिमात्रलभ्यः क्षंताग-  
 सामिति भवद्यशसा हृतात्मा । स्वामस्मरन्वत मलीमसतामलजो  
 भक्तिं भवत्यभिलषामि विगस्तु यन्माम् ॥ ७ ॥ शर्मासिरातिविह-  
 तिश्च भवत्प्रसादं शंभोर्विना न हि नृणां स च नांतरा याम् ।  
 यस्यां विधिः श्वभुगपि क्षमते समं तां त्वद्भक्तिमिच्छतु न कः  
 स्वविनाशमीरुः ॥ ८ ॥ भक्तिर्विभात्ययि महत्यपरं तु फलिव-  
 स्येवं ग्रहो ननु भवत्कृपयैव लभ्यः । लब्धस्त्वसौ फलममुष्य लमे  
 न किं वा तां हंत ते तदयशो मम इद्रुजा च ॥ ९ ॥ त्वद्भक्त्य-  
 संभवशुचं प्रतिकारशून्यामंतर्वहन्निखिलमीश सुखं च दुःखम् ।



उद्धंघलप्र इव दुःखतयैव मन्ये संतान्वसीति मयि हंत कदा दयेथाः  
 ॥ १० ॥ भक्तिं भवत्यविहितां वहतस्तु तद्विशेषोपलंभविरहाहि-  
 तमस्तु दुःखम् । तस्याः प्रतीपततिभिर्हृतिजं कथं वा दुःखं सहे मयि  
 कदेश कृपा भवेत्ते ॥ ११ ॥ लभः कृतांतवदनेऽस्मि लभे च  
 नाद्याप्यच्छां रतिं त्वयि शिवेत्यवसीदतो मे । त्वद्विस्मृतिं कुषि-  
 षयाभिरतिप्रचारैस्तन्वन् हि मां हसपदं तनुषे ब्रुवे किम् ॥ १२ ॥  
 बद्धस्पृहं रुचिरकांचनभूषणादौ बालं फलादिभिरिव त्वयि भक्ति-  
 योगे । आशाभराकुलमहो करुणानिधे मामर्थांतरैर्हृतधियं कुरुषे  
 किमेवम् ॥ १३ ॥ तिक्तग्रहोऽधि मधुरं मधुरग्रहोऽधि तिक्तं यथा  
 भुजगदष्टतनोस्तथाऽहम् । त्वय्यस्तरक्तिरितरत्र तु गाढमग्नः  
 शोच्योऽश्मनोऽपि हि भवामि किमन्यदीश ॥ १४ ॥ त्वत्संस्मृति-  
 त्वदभिधानसमीरणादिसंभावनास्पदममी मम संतु शोकाः । मा  
 संतु च त्वदनुषक्तिमुषः प्रहर्षा मा त्वत्पुरःस्थितिपुषेश इशानुपश्य  
 ॥ १५ ॥ संपातनं ननु सुखेषु निपातनं वा दुःखेष्वथान्यदपि वा  
 भवदेकतानम् । यत्कल्पयेन्ननु धिया शिव तद्विधेहि नावैम्यहं मम  
 हितं शरणं गतस्त्वाम् ॥ १६ ॥ दुःखं प्रदित्सुरयि मे यदि न प्रदद्या  
 दुःखापहं पुरहर त्वयि भक्तियोगम् । त्वद्भक्त्यलामपरिञ्चितनसंभवं मे  
 दुःखं प्रदेहि तव कः पुनरत्र भारः ॥ १७ ॥ भक्त्या त्वयीश कति  
 नाश्रुपरीतदृष्ट्या संजातगद्गदगिरोत्पुलकांगयद्व्या । धन्याः पुनंति  
 भुवनं मम सा न हीति दुःखेऽपि का नु तव दुर्लभता विधित्सा  
 ॥ १८ ॥ त्वद्भक्तिरेव तदनवासिभुगप्युदारा श्रीः सा च तावक-  
 जनाश्रयणे च लभ्या । उल्लंघ्य तावकजनान् हि तदर्धनागस्त्वय्याः  
 सहस्र तदिदं भगवन्नमस्ते ॥ १९ ॥ सेवा त्वदाश्रयवतां प्रणयश्च

तेषु सिध्येद्दुःखो मम यथाशु तथा दयाद्राम् । इष्टिं तवार्पय  
 मयीश दयांबुराशे मैवं विभो विमुखता मयि दीनबंधो ॥ २० ॥  
 गौरीसखं हिमकरप्रभमंबुदामं श्रीजानि वा शिववपुस्तव तज्जुषो ये ।  
 ते त्वां श्रिता वहसि मूर्ध्नि तदंग्रिरेणुं तत्सेवनं मम कथं नु दयां  
 विना ते ॥ २१ ॥ त्वद्भक्तिकल्पलतिकां कृपयार्पयेश भवित्तसीक्षि  
 भवदीयकथासुधाभिः । तां वर्धय त्वदनुरागफलाढ्यमौलिं तन्मूल  
 एव खलु मुक्तिफलं चकास्ति ॥ २२ ॥ निःस्वो धनागम इव  
 त्वदुपाश्रितानां संदर्शने प्रमुदितस्त्वयि सांद्रहार्दः । आलोकयन्  
 जगदशेषमिदं भवंतं कार्यस्त्वयेश कृपयाहमपास्तखेदः ॥ २३ ॥ यो  
 भक्तिकल्पलतिकाभिधर्मिंदुमौल्लेखं स्तवं पठति तस्य तदैव देवः ।  
 तुष्टः स्वभक्तिमखिलेष्टबुद्धं ददाति यां प्राप्य नारदमुखैरुपयाति  
 साम्यम् ॥ २४ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमदभिनव-  
 नृसिंहभारतीस्वामिविरचितं शिवभक्तिकल्पलतिकास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १२७. सुवर्णमालास्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ कथमपि मद्रसनां त्वद्गुणलेशविशोधयामि  
 विभो । सांब सदाशिव शंभो शंकर शरणं मे तव चरणयुगम्  
 ॥ १ ॥ आखंडलमदखंडनपंडित तंडुप्रिय चंडीश विभो ।  
 सांब० ॥ २ ॥ इभचर्मांबर शंबररिपुवपुरपहरणोज्ज्वलनयन विभो ।  
 सांब० ॥ ३ ॥ ईश गिरीश नरेश परेश महेश बिलेशयभूषण  
 भो । सांब० ॥ ४ ॥ उमया दिव्यसुमंगलविग्रहयालिङ्गितवामांग  
 विभो । सांब० ॥ ५ ॥ ऊरीकुरु मामशमनाथं दूरीकुरु मे दुरितं  
 भो । सांब० ॥ ६ ॥ ऋषिवरमानसहंस चराचरजननस्थितिकारण  
 भो । सांब० ॥ ७ ॥ ऋक्षाधीशकिरीट महोक्षारूढ विष्टतरुद्राक्ष  
 विभो । सांब० ॥ ८ ॥ लवर्णद्वन्द्वमवृंतसुकुसुममिवाद्भौ तवार्प-

यामि विभो । सांब० ॥ ९ ॥ एकं सदिति श्रुत्या त्वमेव सदसीत्यु-  
पास्यहे मृड भो । सांब० ॥ १० ॥ ऐक्यं निजभक्तेभ्यो वितरसि  
विश्वभरोऽत्र साक्षी भो । सांब० ॥ ११ ॥ ओमिति तव निर्देशी  
मायास्माकं मृडोपकर्त्री भो । सांब० ॥ १२ ॥ औदास्यं स्फुटयति  
विषयेषु दिगम्बरता च तवैव विभो । सांब० ॥ १३ ॥ अन्तःकरण-  
विशुद्धिं भक्तिं च त्वयि सर्तौ प्रदेहि विभो । सांब० ॥ १४ ॥  
अतोपाधिसमस्तज्यसौ रूपैर्जगन्मयोऽसि विभो । सांब० ॥ १५ ॥  
करुणावरुणालय मयि दास उदासस्तवोचितो न हि भो । सांब०  
॥ १६ ॥ खलसहवासं विषट्य सतामेव संगमनिशं भो । सांब०  
॥ १७ ॥ गरलं जगदुपकृतये मिलितं भवता समोऽस्मि कोऽत्र  
विभो । सांब० ॥ १८ ॥ घनसारगौरगात्र प्रभुरजटाजूटबद्धांग  
विभो । सांब० ॥ १९ ॥ शसिः सर्वशरीरेष्वखंडिता या विभाति  
सा सा त्वं भो । सांब० ॥ २० ॥ चपलं मम हृदयकर्पिं विषयदुश्चरं  
दृढं बधान विभो । सांब० ॥ २१ ॥ छाया स्थाणोरपि तव तारं  
नमतां हरत्यहो शिव भो । सांब० ॥ २२ ॥ जय कैलासनिवास  
प्रसथगणाधीश भूसुरार्चित भो । सांब० ॥ २३ ॥ क्षणुतक्कांकि-  
णुक्षणुतकिटतकशब्दैर्नटसि महानट भो । सांब० ॥ २४ ॥ ॥ ज्ञानं  
विशेषावृत्तिरहितं कुरु मे गुरुस्त्वमेव विभो । सांब० ॥ २५ ॥  
टंकारस्तव धनुषो दलयति हृदयं द्विषामशमिरिव भो । सांब०  
॥ २६ ॥ ठाकृतिरिव तव माया बहिरंतःशून्यरूपिणी खलु भो ।  
सांब० ॥ २७ ॥ डंबरमंथुरहामपि दलयत्यनघं त्वद्विषयुगलं  
भो । सांब० ॥ २८ ॥ डकाक्षसूत्रशूलद्रुहिणकरोटीसमुल्लसत्कर  
भो । सांब० ॥ २९ ॥ णाकारगर्भिणी चेच्छुभदा ते शरणगति-  
र्नृणामिह भो । सांब० ॥ ३० ॥ तव मन्वतिसंजपतः सद्यस्तरति

नरो हि भवार्धिं भो । सांब० ॥ ३१ ॥ धूत्कारस्तस्य मुखे भूयात्ते  
 नाम नास्ति यस्य विभो । सांब० ॥ ३२ ॥ दयनीयश्च दयालुः  
 कोऽस्ति मदन्यस्त्वदन्य इव वह भो । सांब० ॥ ३३ ॥ धर्मस्था-  
 पनदक्ष व्यक्ष गुरो दक्षयज्ञशिक्षक भो । सांब० ॥ ३४ ॥ ननु  
 ताडितोऽसि धनुषा लुब्धधिया त्वं पुरा नरेण विभो । सांब०  
 ॥ ३५ ॥ परिमातुं तव मूर्तिं नालमजस्तत्परात्परोऽसि विभो ।  
 सांब० ॥ ३६ ॥ फलमिह नृतया जनुषस्त्वत्पदसेवा सनातनेश  
 विभो । सांब० ॥ ३७ ॥ बलमारोग्यं चायुस्त्वद्गुणरुचितां चिरं  
 प्रदेहि विभो । सांब० ॥ ३८ ॥ भगवन् भर्गं भयापह भूतपते भूति-  
 भूषितांग विभो । सांब० ॥ ३९ ॥ महिमा तव नहि माति श्रुतिषु  
 हिमानीधरात्मजाधव भो । सांब० ॥ ४० ॥ यमनियमादिभि-  
 र्गैर्यमिनो हृदये भजंति स त्वं भो । सांब० ॥ ४१ ॥ रजावहि-  
 रिव शुक्तौ रजतमिव त्वयि जगंति मांति विभो । सांब० ॥ ४२ ॥  
 लब्ध्वा भवत्प्रसादाच्चक्रं विधुरवति लोकमग्निलं भो । सांब०  
 ॥ ४३ ॥ वसुधातद्वरतच्छयरथमौर्वीशरपराकृतासुर भो । सांब०  
 ॥ ४४ ॥ शर्वं देव सर्वोत्तम सर्वद दुर्वृत्तगर्वहरण विभो । सांब०  
 ॥ ४५ ॥ षड्विपुषड्भिर्षड्विकारहर सन्मुख षण्मुखजनक विभो ।  
 सांब० ॥ ४६ ॥ सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्मेत्येतल्लक्षणलक्षित भो ।  
 सांब० ॥ ४७ ॥ हाहाहूहूमुखसुरगायकगीतापदानपथ विभो ।  
 सांब० ॥ ४८ ॥ कादिर्न हि प्रयोगस्तदन्तमिह मंगलं सदाऽस्तु विभो ।  
 सांब० ॥ ४९ ॥ क्षणमिव दिवसान्नेष्यति त्वत्पदसेवाक्षणोत्सुकः  
 शिव भो । सांब सदाशिव शंभो शंकर शरणं मे तव चरणयुगम्  
 ॥ ५० ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीगोविंदभगवत्पूज्य-  
 पादशिष्यस्य श्रीशंकरभगवतः कृतौ सुवर्णमालास्तुतिः संपूर्णा ॥

## १२८. विश्वेशलहरी ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सिद्धिबुद्धिपतिं वंदे श्रीगणाधीश्वरं मुदा ।  
 तस्य यो वंदनं कुर्यात् स श्रीनां योगमिन्वति ॥ १ ॥ वंदे काशी-  
 पतिं काशी जाता यत्कृपया पुरी । प्रकाशनार्थं भक्तानां होतारं  
 रत्नधातमम् ॥ २ ॥ भक्तावनं करोमीति मा गर्वं वह शंकर । तेभ्यः  
 स्वपूजाग्रहणान्तवेतस्सत्यमंगिरः ॥ ३ ॥ मुधा लक्ष्मीं कामयेते  
 चंचलां सकला जनाः । काशीरूपां कामयेऽहं लक्ष्मीमनपगामिनीम्  
 ॥ ४ ॥ प्राप्नुवंतु जना लक्ष्मीं मदांधनृपसेवनात् । लभे विश्वेश-  
 सेवातो गामश्वं पुरुषानहम् ॥ ५ ॥ न मत्कुटुम्बरक्षार्थं माहूयामि  
 श्रियं बुधाः । विश्वेश्वराराधनार्थं श्रियं देवीमुपह्वये ॥ ६ ॥ आपात-  
 रमणीयेयं श्रीर्मदांधकरी चला । असारसंस्तौ काशीं सा हि श्रीर-  
 मृता सताम् ॥ ७ ॥ काशी गंगान्नपूर्णा च विश्वेशाद्याश्च देवताः ।  
 अवंतु बालमशं मामुशतीरिव मातरः ॥ ८ ॥ सदैव दुःस्वकारिणीं  
 न संसृतिं हि कामये शिवप्रियां सुखप्रदां परां पुरीं हि कामये ।  
 स्वभक्तदुःखहारकं मनोरथप्रपूरकं शिवं सदा मुदा भजे महैरजाय  
 चक्षसे ॥ ९ ॥ स्वसेवकमुतादीनां पालनं कुर्वते नृपाः । पात्ये-  
 वास्मास्तु विश्वेश गीर्वाणः पाहि नः सुतान् ॥ १० ॥ निषेभ्य  
 काशिकां पुरीं सदाशिवं प्रपूज्य वै गुरोर्मुखारविंदतः सदादिरूप-  
 मद्वयम् । विचार्य रूपमात्मनो निषेभ्य नश्वरं जडं चिदात्मना  
 तमोभिर्दधनेन हन्मि वृद्धिक्कम् ॥ ११ ॥ हे मागीरधि हे काशि  
 हे विश्वेश्वर ते सदा । कलयामि स्तवं श्रेष्ठमेव रारंतु ते  
 हृदि ॥ १२ ॥ विश्वनाथ सदा काश्यां देह्यस्मभ्यं धनं परम् ।  
 पुरा युद्धेषु दैत्यानां विग्रहे त्वां धनंजयम् ॥ १३ ॥ अविनाशि  
 पुरा दत्तं भक्तेभ्यो द्रविणं त्वया । काशिविश्वेशगंगे स्वामथ

ते स्तुन्नमीमहे ॥ १४ ॥ संसारदावबह्वौ मां पतितं दुःखितं तव ।  
 विश्वेश पाहि गंगाधैरागत्य वृषभिः सुतम् ॥ १५ ॥ काशीं प्रति  
 वयं याम दयया विश्वनाथ ते । तत्रैव वासं कुर्याम वृक्षे न  
 वसतिं वयः ॥ १६ ॥ हे सरस्वति हे गंगे हे कालिंदि सदा वयम् ।  
 भजामामृतरूपं तं यो वः शिवतमो रसः ॥ १७ ॥ विश्वनाथेदमेव  
 त्वां याचाम सततं वयम् । स्थित्वा काश्यामध्वरे त्वां हविष्मंतो  
 जरामहे ॥ १८ ॥ सर्वासु सोमसंस्थासु काश्यामिन्द्रस्वरूपिणे । हे  
 विश्वेश्वर ते नित्यं सोमं चोदामि पीतये ॥ १९ ॥ काश्यां रौद्रेषु  
 चान्येषु यजाम त्वां मन्त्रेषु वै । हे विश्वेश्वर देवैस्त्वं रारंधि सवनेषु  
 नः ॥ २० ॥ मां मोहाद्या दुर्जनाश्च बाधते निष्पयोजनम् । विश्वे-  
 श्वर ततो मे त्वां वरून्नीं धिषणां वह ॥ २१ ॥ रुद्राक्षभस्मधारी  
 त्वां काश्यां स्तौमीश संस्तवैः । त्वत्पादांबुजभृंगं मां न स्तोतारं  
 निदेकरः ॥ २२ ॥ विहाय चंचलं बधूसुतादिकं हि दुःखदं  
 त्वदीयकामसंयुता भवेम काशिकापुरी । स्वसेवकार्तिनाशक प्रकृष्ट-  
 संविदर्पक भवैव देव संततं ह्युतत्वमस्युर्वसो ॥ २३ ॥ विश्वेश  
 काश्यां गंगायां स्नात्वा त्वां रम्यवस्तुभिः । पूजयाम वयं भक्त्या  
 कुशिकासो अवस्यवः ॥ २४ ॥ विश्वेश नित्यमस्मभ्यं भयमुत्पादयंति  
 ये । तेषां विधायोपमर्दं ततो नो अभयं कृधि ॥ २५ ॥ राक्षसानां  
 स्वभावोऽयं बाध्या विश्वेश जीवकाः । भक्तानुकंपया शंभो सर्वं  
 रक्षो निबर्हय ॥ २६ ॥ विश्वेश्वर सदा ऋतः संसारार्णवज्जनात् । मां  
 पालय सदेति त्वां पुरुहूतमुपब्रुवे ॥ २७ ॥ इदं विमृश्य नश्वरं  
 जडं सदैव दुःखदं समर्चितुं शिवं गताः परां पुरीं यतो द्विजाः ।  
 ततोऽभिगम्य तां पुरीं समर्च्य वस्तुभिः परैः शिवं स्वभक्तमुक्तिदं  
 तमिह्यस्वित् ईमहे ॥ २८ ॥ काश्यां वयं सदैव त्वां यजाम

सकलैर्मलैः । विश्वेश्वर त्वं समग्रैर्देवैरासत्सि बहिषि ॥ २९ ॥ यक्षे-  
 श्वरेण रक्षितं श्रेष्ठ धनमखेषु ते । देहि मयाय शंकर ह्यसम्यम-  
 प्रतिष्कृतः ॥ ३० ॥ मत्पूर्वजा महाशैवा भस्मरुद्राक्षधारिणः ।  
 विश्वेश्वर सुरेषु त्वामद्वयमिव येमिरे ॥ ३१ ॥ शंभोर्विधाय येऽर्चनं  
 तिष्ठन्ति तत्परा यदा । तान् शंकरो मिरे द्रुतं यूथेन वृष्णिरेजति  
 ॥ ३२ ॥ त्वां पूजयामीश सुरं मानसैर्विष्यवस्तुभिः । हे विश्वेश्वर  
 देवैस्त्वं सोम रारंभि नो हृदि ॥ ३३ ॥ प्रादुर्भवसि सद्यस्त्वं क्लेशो  
 भक्तजने यदा । ततोऽहं क्लेशवान् कुर्वे सद्योजाताय वै नमः ॥ ३४ ॥  
 वामदेवेति मनू रम्यतां यस्य संजगौ । ईशस्तस्मात्क्रियते वामदेवाय  
 ते नमः ॥ ३५ ॥ दयासिन्धो दीनबन्धो योऽस्तीश वरदः करः । अस्माकं  
 वरदानेन स युक्तस्तेऽस्तु दक्षिणः ॥ ३६ ॥ दुष्टभीतस्य मे नित्यं  
 करस्तेऽभयदायकः । महेशाभयदाने स्यादुत सत्यः शतक्रतो ॥ ३७ ॥  
 महेश्वरीयपदपद्मसेवकः पुरंदरादिपदनिःस्पृहः सदा । जनोऽस्ति यः  
 सततदुर्गतः प्रभो पृणक्षि वसुना भवीयसा ॥ ३८ ॥ रक्षणाय  
 नास्ति मे त्वां विनेश साधनम् । निश्चयेन हे शिव त्वामवस्युराचके  
 ॥ ३९ ॥ रोगैर्दुःखैर्वैरिगणैश्च युक्तास्त्वद्दासत्वाच्छंकर तत्सहस्र ।  
 रम्यं स्तोत्रं शेषकरं वचो वा यत्किंचिद्वाहं त्वायुरिदं वदामि ॥ ४० ॥  
 ध्यायाम वस्तु शंकरं याचाम भाम शंकरम् । कुर्याम कर्म शंकरं  
 वोचेम शंतमं हृदे ॥ ४१ ॥ माता तातः स्वादिष्टं च पौष्टिकं  
 मन्वाते वाक्यं बालस्य कुत्सितम् । यद्वत्तद्वाक्यं मेऽस्तु शंभवे  
 स्वादोः स्वादीयो रुद्राय बंधनम् ॥ ४२ ॥ शिवं सुगन्धिसंयुतं  
 स्वभक्तपुष्टिवर्धनम् । सुदीनभक्तपालकं त्रियम्बकं यजामहे  
 ॥ ४३ ॥ देव देव गिरिजावल्लभ त्वं पाहि पाहि शिव शंभो महेश ।  
 यद्वदामि सततं स्तोत्रवाक्यं तज्जुषस्व कृधि मा देववन्तम् ॥ ४४ ॥

त्यक्त्वा सदा निष्फलकार्यभारं धृत्वा सदा शंकरनामसारम् ।  
 हे जीव जन्मांतकनाशकारं यक्ष्यामहे सौमनसाय रुद्रम् ॥ ४५ ॥  
 स्थित्वा काश्यां निर्मलगंगातोये स्नात्वा संपूज्य त्रिदशेश्वरं  
 वै । तस्य स्तोत्रं पापहरैस्तु देव भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम  
 देवाः ॥ ४६ ॥ वाराणस्यां शंकरं सुराढ्यं संपूज्येशं वसुभिः  
 सुकांतैः । अग्रे नृत्यतः शिवस्य रूपं भद्रं पश्येमाक्षमिर्यजत्राः  
 ॥ ४७ ॥ इच्छामस्त्वां पूजयितुं वयं विश्वेश संततम् । प्रयच्छ नो  
 धनं श्रेष्ठं यशसं धीरवत्तमम् ॥ ४८ ॥ काश्यामुषित्वा गंगायां  
 स्नात्वा संपूज्य शंकरम् । ध्यात्वा तच्चरणौ नित्यमलक्ष्मीर्नाशया-  
 म्यहम् ॥ ४९ ॥ असत्पदं स्वहर्षदं न चान्यहर्षदायकं सदा मुदा  
 प्रसूर्यथा शृणोति भाषितं शिशोः । शिवापगाशिवाबलाशिवालय-  
 समन्वितस्तथा शिवेश नः सुरैर्गिरामुपश्रुतिं चर ॥ ५० ॥ सगरस्या-  
 त्मजा गंगे मताः संतारितास्त्वया । अगस्त्यात्मजा तस्मात् किं न  
 तारयसि ध्रुवम् ॥ ५१ ॥ प्रायिकोऽयं प्रवादोऽस्तु तरंति तव  
 संनिधौ । तारकं नाम ते गंगे संनिधेः किं प्रयोजनम् ॥ ५२ ॥  
 मीनैरायतलोचने वसुमुखीवाब्जेन रोमावलीयुक्तो राजवतीव  
 पद्ममुकुलैः शैवालवह्ण्या युतैः । उद्भास्वजघनेन वालपुलिनैरुद्यद्भु-  
 जेवोर्मिभिर्गतेनोद्भवलनाभिकं विलसत्येषा परं जाह्नवी ॥ ५३ ॥  
 शृंगारितां जलचरैः शिवसुंदरांगसंगां सदापहतविश्वधवांतरंगाम् ।  
 शृंगाकुलांबुजगलन्मकरंदतुंदशृंगावलीविलसितां कलयेऽथ गंगाम्  
 ॥ ५४ ॥ विश्वेशोऽसि धनाधिपप्रियसखा किं चान्नपूर्णापतिर्जामाता  
 धरणीभृतो निरुपमाष्टैश्वर्ययुक्तः स्वयम् । चत्वार्येव तथापि  
 दास्यसि फलान्यात्माध्रयांते चिरं तेभ्योऽतो बत युज्यते पशुपते  
 लब्धावतारस्तव ॥ ५५ ॥ दोषाकरं वहसि मूर्ध्नि कलंकवंतं कंठे



द्विजिह्वमतिवक्रगतिं सुवोरम् । पापीत्ययं मयि कुतो न कृपां  
करोषि युक्तैव ते विषमदृष्टिरतो महेश ॥ ५६ ॥ अस्ति त्रिनेत्रसु-  
हुराजकला ममेति गर्वायते ह्यतितरां वत विश्वनाथ । त्वद्वासिनो  
जननकाशिशशांकचूडाभालेक्षणाश्च न भवंति जनाः किंवतः  
॥ ५७ ॥ कामं संत्यज नश्वरेऽत्र विषये वामं पदं मा विश क्षेमं  
चात्मन जाचर त्वमदयं कामं स्मरस्वांतकम् । भीमं दंडधरस्य  
योगिहृदयारामं शिरप्रोक्षसस्सोमं भावय विश्वनाथमनिशं सोमं  
सखे मानसे ॥ ५८ ॥ संपूज्य त्रिदशवरं सदाशिवं यो विश्वेशस्तुति-  
लहरीं सदा पठेद्द्वै । कैलासे शिवपदकंजराजहंस आकल्पं स हि  
निवसेच्छिवस्वरूपः ॥ ५९ ॥ अनेन प्रीयतां देवो भगवान् काशि-  
कापतिः । श्रीविश्वनाथः पूर्वपामस्याकं कुलदैवतम् ॥ ६० ॥ इयं  
विश्वेशलहरी रचिता खण्डयज्वना । विश्वेशतुष्टिदा नित्यं वसतां  
हृदये सताम् ॥ ६१ ॥ नाम्ना गुणैश्चापि शिवैव माता तातः  
शिवस्वम्बकयज्वनामा । महारिदेवः कुलदैवतं मे श्रीकौशिक-  
स्यास्ति कुले च जन्म ॥ ६२ ॥ इति श्रीगणेशदीक्षितात्मजान्यम्बक-  
दीक्षिततनूजखण्डराजदीक्षितविरचिता विश्वेशलहरी संपूर्णा ॥

### १२९. विष्णुकृतशिवस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ ॐ नमो भगवते महा-  
पुरुषाय सर्वगुणसंख्यानामानंतायाम्यक्ताय नम इति ॥ १ ॥ भजे  
भवान्या रणपादपंकजं भगस्य कृत्स्नस्य परं परायणम् । भक्तेष्वलं  
भावितभूतभावनं भवापहं त्वा भवभावमीश्वरम् ॥ २ ॥ न यस्य  
मायागुणचित्तवृत्तिमिर्निरीक्षतो ह्यप्यपि दृष्टिरज्यते । ईशे यथा  
नोऽजितमन्युरंहसां कलं न मन्येत जिगीपुरात्मनः ॥ ३ ॥ अस-  
दृशो यः प्रतिभाति मायया क्षीत्रेव मध्वासवताम्रलोचनः । न

नागवध्वोऽर्हण ईशिरे हिया यत्पादयोः स्पर्शनवर्षितेन्द्रियाः ॥ ४ ॥  
 यमादुरस्य स्थितिजन्मसंयमं त्रिभिर्विहीनं यमनंतमृष्टयः । न  
 वेदसिद्धार्थमिव क्वचिस्थितं भूमंडलं मूर्धसहस्रधामसु ॥ ५ ॥  
 यस्याद्य आसीद्गुणविग्रहो महान्विज्ञानधिष्ण्यो भगवानजः किल ।  
 यत्संभवोऽहं त्रिवृता स्वतेजसा वैकारिकं तामसमैन्द्रियं सृजे ॥ ६ ॥  
 एते वयं यस्य वशे महात्मनः स्थिताः शकुंता इव सूत्रयंत्रिताः ।  
 महानहं वैकृततामसैन्द्रियाः सृजाम सर्वे यदनुग्रहादिदम् ॥ ७ ॥  
 यन्निर्मितां कर्ह्यपि कर्मपर्वणीं मायां जनोऽयं गुणसर्गमोहितः ।  
 न वेद निस्तारणयोगमंजसा तस्मै नमस्ते विलयोदयात्मने  
 ॥ ८ ॥ इति श्रीमद्भागवतान्तर्बर्ति विष्णुकृतं शिवस्तोत्रं  
 समाप्तम् ॥

### १३०. चन्द्रमौलीशस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐकारजपरतानामोकारार्थं मुदा विवृण्वान-  
 नम् । ओजःप्रदं नतेभ्यस्तमहं प्रणमामि चंद्रमौलीशम् ॥ १ ॥  
 नम्रसुरासुरनिकरं नलिनाहंकारहारिपदयुगलम् । नमदिष्टदानधीरं  
 सततं प्रणमामि चंद्रमौलीशम् ॥ २ ॥ मननाद्यत्पदयोः खलु  
 महतीं सिद्धिं जवात्प्रपद्यते । मंदेतरलक्ष्मीप्रदमनिशं प्रणमामि  
 चंद्रमौलीशम् ॥ ३ ॥ शितिकंठमिन्दुदिनकरशुचिलोचनमंबुजाक्ष-  
 विधिलेख्यम् । नतमतिदानधुरीणं सततं प्रणमामि चंद्रमौलीशम्  
 ॥ ४ ॥ वाचो विनिवर्तते यस्मादप्राप्य सह हृदैवेति । गीयंते  
 श्रुतिततिभिस्तमहं प्रणमामि चंद्रमौलीशम् ॥ ५ ॥ यच्छंति  
 यत्पदांबुजभक्ताः कुतुकात्स्वभक्तेभ्यः । सर्वानपि पुरुषार्थास्तमहं  
 प्रणमामि चंद्रमौलीशम् ॥ ६ ॥ पंचाक्षरमनुवर्णैरादौ कृतां

स्तुतिं पठन्नेनाम् । प्राप्य इहां शिवमर्क्तिं भुक्त्वा भोगौल्लभेत  
मुक्तिमपि ॥ ७ ॥ इति चंद्रमौलीशस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १३१. जन्मसागरोत्तारणस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीरामपूजितपदांबुज चापपाणे श्रीचक्रराज-  
कृतवास कृपांबुराशे । श्रीसेतुमूलचरणप्रवणांतरंग श्रीरामनाथ  
लघु तारय जन्मवार्धिम् ॥ १ ॥ नम्राघवृंदविनिवारणबद्धदीक्ष  
शैलाधिराजतनयापरिरब्धवर्ष्मन् । श्रीनाथमुख्यसुरवर्यनिषेवितांब्रे  
श्रीरामनाथ लघु तारय जन्मवार्धिम् ॥ २ ॥ शूराहितेभवदनाश्रित-  
पार्श्वभाग कूरारिवर्गविजयप्रद श्रीघ्रमेव । साराखिलागमतदंतपुरा-  
णपङ्केः श्रीरामनाथ लघु तारय जन्मवार्धिम् ॥ ३ ॥ शब्दादिमेषु  
विषयेषु समीपगेष्वप्यासक्तिगंधरहिताब्जिजपादनम्रान् । कुर्वाण  
कामदहनाक्षिलसल्ललाट श्रीरामनाथ लघु तारय जन्मवार्धिम्  
॥ ४ ॥ इति जन्मसागरोत्तारणस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १३२. अभिलाषाष्टकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ एकं ब्रह्मैवाद्भितीयं समस्तं सत्यं सत्यं नेह  
नानास्ति किञ्चित् । एको रुद्रो न द्वितीयोऽवतस्थे तस्मादेकं त्वां  
प्रपद्ये महेशम् ॥ १ ॥ एकः कर्ता त्वं हि सर्वस्य शंभो नानारूपे-  
स्त्वेकरूपोऽप्यरूपः । यद्व्यत्यक्पूर्ण एकोऽप्यनेकस्तस्मान्नान्यं त्वां  
विनेशं प्रपद्ये ॥ २ ॥ रजौ सर्पः श्रुतिक्रियायां च रौप्यं पयःपूरस्त-  
नृगाख्ये मरीचौ । यद्वत्तद्वद्विष्वगेव प्रपन्नो यस्मिन् ज्ञाते तं प्रपद्ये  
महेशम् ॥ ३ ॥ तोये शैत्यं दाहकत्वं च बह्नौ तापो भानौ शीत-  
भानौ प्रसादः । पुष्पे गन्धो दुग्धमज्ये च सर्पिर्वत्तच्छंभो त्वं  
ततस्त्वां प्रपद्ये ॥ ४ ॥ शब्दं गृह्णात्यभवास्त्वं हि जिघ्रेरघ्राणस्त्वं  
व्यंग्रिरायासि दूरात् । व्यक्षः पश्येस्त्वं रसज्ञोऽन्यजिह्वः कस्त्वां

सम्यग्वेत्त्यतस्त्वां प्रपद्ये ॥ ५ ॥ नो वेदस्त्वामीश साक्षाद्विवेद नो  
 वा विष्णुर्नो विधाताऽखिलस्य । नो योगीन्द्रा नेन्द्रमुख्याश्च देवा  
 भक्तो वेद त्वामतस्त्वां प्रपद्ये ॥ ६ ॥ नो ते गोत्रं नेश जन्मापि  
 नाख्या नो त्वा रूपं नैव शीलं न देशः । इत्थंभूतोऽपीश्वरस्त्वं त्रिलोक्या  
 सर्वान्कामान् पूरयेस्तद्भजे त्वाम् ॥ ७ ॥ त्वत्तः सर्वं त्वं हि सर्वं  
 स्मरारे त्वं गौरीशस्त्वं च नमोऽतिशान्तः । त्वं वै शुद्धस्त्वं युवा  
 त्वं च बालस्तत्त्वं यत्किं नास्त्यतस्त्वां नतोऽसि ॥ ८ ॥ स्तुत्वेति  
 विप्रो निपपात भूमौ स दंडवद्भावदतीव हृष्टः । तावत्स तालो-  
 ऽखिलबृहद्बृहद्ः प्रोवाच भूदेव वरं वृणीहि ॥ ९ ॥ तत उत्थाय  
 हृष्टात्मा मुनिर्विश्वानरः कृती । प्रत्यब्रवीत्किमज्ञातं सर्वज्ञस्य तव  
 प्रभो ॥ १० ॥ सर्वान्तरात्मा भगवान् सर्वः सर्वप्रदो भवान् ।  
 बाष्पां प्रति नियुंक्ते मां किमीशो दैन्यकारिणीम् ॥ ११ ॥ इति  
 श्रुत्वा वचस्तस्य देवो विश्वानरस्य ह । शुचेः शुचिव्रतस्याथ शुचि-  
 स्सित्वाग्रवीच्छिशुः ॥ १२ ॥ बाल उवाच ॥ त्वया शुचे शुचि-  
 ष्मत्यां योऽभिलाषः कृतो हृदि । अचिरेणैव कालेन स भविष्यत्य-  
 संशयम् ॥ १३ ॥ तव पुत्रत्वमेग्यामि शुचिष्मत्यां महामते ।  
 ख्यातो गृहपतिर्नाज्ञा शुचिः सर्वामरप्रियः ॥ १४ ॥ अभिला-  
 षाष्टकं पुण्यं स्तोत्रमेतन्मयेरितम् । अब्दं त्रिकालपठनात्कामदं  
 शिवसंनिधौ ॥ १५ ॥ एतत्स्तोत्रस्य पठनं पुत्रपौत्रधनप्रदम् । सर्व-  
 शान्तिकरं वापि सर्वापत्त्यरिनाशनम् ॥ १६ ॥ स्वर्गापवर्गसंपत्ति-  
 कारकं नात्र संशयः । प्रातरुत्थाय सुज्जातो लिङ्गमभ्यर्च्य शोभवम्  
 ॥ १७ ॥ वर्षं जपन्निदं स्तोत्रमपुत्रः पुत्रवान् भवेत् । वैशाखे  
 कार्तिके माघे विशेषनियमैर्युतः ॥ १८ ॥ यः पठेत् ज्ञानसमये स  
 लभेत्सकलं फलम् । कार्तिकस्य तु मासस्य प्रसादादहसन्वयः ॥ १९ ॥

तव पुत्रत्वमेष्यामि यास्त्वन्यस्तत्पठिष्यति । अभिलाषाष्टकमिदं  
न देयं यस्य कस्यचित् ॥ २० ॥ गोपनीयं प्रयत्नेन महा-  
बन्ध्याप्रसूतिकृत् । स्त्रिया वा पुरुषेणापि नियमाङ्गिगसंनिधौ  
॥ २१ ॥ अद्दं जसमिदं स्तोत्रं पुत्रदं नात्र संशयः । इत्युक्त्वा-  
न्तर्दधे बालः सोऽपि विप्रो गृहं ययौ ॥ २२ ॥ इति श्रीस्कंद-  
पुराणे काशीखंडेऽभिलाषाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १३३. श्रीदूर्वेशस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ गणनाथपण्मुखयुक्तो गिरिजासंश्लेषतुष्टहृद-  
याङ्गः । दूर्वाभिव्यपुरस्थान् लोकान् परिपातु भक्तिविनययुतान् ॥ १ ॥  
विद्यानाथ विनीतिभक्तिसहितान् लोकान् कृपावारिधे दूर्वाभिव्यपुर-  
स्थितान् करुणया पाहीभवक्रे यथा । विद्यायुःसुखयुक्तिसक्तिभिरलं  
युक्तान् विधायानिर्गं शांत्याद्यैरपि दिव्यमुक्तिपदवीसंदर्शकैः शंकर  
॥ २ ॥ इति श्रीदूर्वेशस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १३४. शशांकमौलीश्वरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मांगल्यदाननिरत प्रणमज्जनानां मांघातुमुख्य-  
धरणीपतिर्चितितांत्रे । मांघांधकारविनिवारणखंडमानो मां पाहि  
धीरगुरुभूत शशांकमौले ॥ १ ॥ मां प्राप्नुयादखिलसौख्यकरी  
सुधीश्च मार्कंदतुल्यकविता सकलाः कलाश्च । काचित्कमत्पदसरो-  
जनतेर्हि स त्वं मां पाहि धीरगुरुभूत शशांकमौले ॥ २ ॥ मातंग-  
कृत्तिवसन प्रणतार्तिहारिन्मायासरिपतिविशोषणवाडवाग्ने । मानो-  
न्नतिप्रद निजांघ्रिजुषां नराणां मां पाहि धीरगुरुभूत शशांकमौले  
॥ ३ ॥ इति शशांकमौलीश्वरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## १३५. विश्वमूर्तिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अकारणयाखिलकारणाय नमो महाकारण-  
 कारणाय । नमोऽस्तु कालानललोचनाय कृतागसं मामव विश्वमूर्ते  
 ॥ १ ॥ नमोऽस्त्वहीनाभरणाय नित्यं नमः पशूनां पतये मृडाय ।  
 वेदांतवेद्याय नमो नमस्ते कृता० ॥ २ ॥ नमोऽस्तु भक्तेहितदानदात्रे  
 सर्वौषधीनां पतये नमोऽस्तु । ब्रह्मण्यदेवाय नमो नमस्ते कृतागसं०  
 ॥ ३ ॥ कालाय कालानलसन्निभाय हिरण्यगर्भाय नमो नमस्ते ।  
 हालाहलादाय सदा नमस्ते कृतागसं० ॥ ४ ॥ विरिञ्चिनारायणदाक्र-  
 मुख्यैरज्ञातवीर्याय नमो नमस्ते । सूक्ष्मातिसूक्ष्माय नमोऽब्रह्मं  
 कृतागसं० ॥ ५ ॥ अनेककोटीदुर्निभाय तेऽस्तु नमो गिरीणां  
 पतयेऽब्रह्मं । नमोऽस्तु ते भक्तविपद्भराय कृतागसं० ॥ ६ ॥ सर्वा-  
 तस्त्राय विशुद्धधात्रे नमोऽस्तु ते दुष्टकुलांतकाय । समस्ततेजोनिधये  
 नमस्ते कृतागसं० ॥ ७ ॥ यज्ञाय यज्ञादिफलप्रदात्रे यज्ञस्वरूपाय  
 नमो नमस्ते । नमो महानंदमयाय नित्यं कृतागसं० ॥ ८ ॥ इति  
 स्तुतो महादेवो दक्षं प्राह कृताञ्जलिम् । यत्तेऽभिलषितं दक्ष तत्ते  
 दास्याम्यहं ध्रुवम् ॥ ९ ॥ अन्यच्च शृणु भो दक्ष यच्च किञ्चिद्ब्रवी-  
 म्यहम् । यत्कृतं हि मम स्तोत्रं त्वया भक्त्या प्रजापते ॥ १० ॥ ये  
 श्रद्धया पठिष्यन्ति मानवाः प्रत्यहं शुभम् । निष्कल्मषा भविष्यन्ति  
 सापराधा अपि ध्रुवम् ॥ ११ ॥ इति दक्षकृतं विश्वमूर्तिस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

## १३६. भवभंजनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ रदच्छदाधःकृतबिम्बगर्वः पदप्रणम्राहित-  
 सर्वविद्यः । कैलासशृङ्गादृतनित्यवासो धुनोतु शीघ्रं भवबन्धमीशः  
 ॥ १ ॥ राकाशशाङ्कप्रतिमानकान्तिः कोकाहितप्रोल्लसदुत्तमाङ्ग ।

शैलेन्द्रजालिङ्गितवामभागो धुनोतु शीघ्रं भवबन्धमीशः ॥ २ ॥  
 य इदं परमं स्तोत्रं भवभंजननामकम् । संपठेत् प्रातरुत्थाय  
 शुचिर्भूत्वा समाहितः ॥ ३ ॥ भवदुःखविनिर्मुक्तो जायते सुर-  
 पूजितः । न पुनर्लभते जन्म मुधि शंभुप्रसादतः ॥ ४ ॥ इति  
 भवभंजनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १३७. अष्टमूर्तिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ईशा वास्यमिदं सर्वं चक्षोः सूर्यो अजायत ।  
 इति श्रुतिरुवाचातो महादेवः परावरः ॥ १ ॥ अष्टमूर्तेरसौ सूर्यो  
 मूर्तित्वे परिकल्पितः । नेत्रत्रिलोचनस्यैकमसौ सूर्यस्तदाश्रितः ॥ २ ॥  
 यस्य भासा सर्वमिदं विभातीति श्रुतेरिमे । तमेव भांतमीशानमनु-  
 भांति खगादयः ॥ ३ ॥ ईशानः सर्वविद्यानां भूतानां चेति च  
 श्रुतेः । वेदादीनामप्यधीशः स ब्रह्मा कैर्न पूज्यते ॥ ४ ॥ यस्य  
 संहारकाले तु न किञ्चिदवशिष्यते । सृष्टिकाले पुनः सर्वं स एकः  
 सृजति प्रभुः ॥ ५ ॥ सूर्याचंद्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् ।  
 इति श्रुतेर्महादेवः श्रेष्ठोऽयः सकलाश्रितः ॥ ६ ॥ विश्वं भूतं  
 भवज्जन्म्यं सर्वं रुद्रात्मकं श्रुतम् । सृष्ट्युज्जयस्तारकोऽतः स यज्ञस्य  
 प्रसाधनः ॥ ७ ॥ विषमाक्षोऽपि समदृक् सशिवोऽपि शिवः स च ।  
 वृषसंस्थोऽप्यतिवृषो गुणात्माऽप्यगुणोऽमलः ॥ ८ ॥ यदाज्ञा-  
 मुद्गहंत्यत्र शिरसा सासुराः सुराः । अन्नं वातो वर्ष इतीषवो यस्य  
 स विश्वपाः ॥ ९ ॥ भिषक्तमं त्वा भिषजां शृणोमीति श्रुतेरयम् ।  
 स्वभक्तसंसारमहारोगहर्ताऽपि शंकरः ॥ १० ॥ इत्यष्टमूर्तिस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

## १३८. इन्दुमौलिस्मरणस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कलय कलाविल्ववरं कलया नीहारदीधितेः  
 शीर्षम् । सततमलंकुर्वाण प्रणतावनदीक्ष यक्षराजसख ॥ १ ॥  
 कांतागेन्द्रसुतायाः शांताहंकारचित्यचिद्रूप । कांतारखेलनरूपे  
 शांतांतःकरणं दीनमव शंभो ॥ २ ॥ दाक्षायणीमनोबुजभानो  
 व्रीक्षावितीर्णविनतेष्ट । द्वाक्षामधुरिममदभरशिक्षाकर्त्री प्रदेहि  
 मम वाचम् ॥ ३ ॥ पारदसमानवर्णो नीरदनीकाशदिव्यगल-  
 देशः । पादनतदेवसंघः पशुमनिशं पातु मामीशः ॥ ४ ॥ भव  
 शंभो गुरुरूपेणाशु मेऽद्य करुणाब्धे । चिरतरमिह वासं कुरु  
 जगतीं रक्षन् प्रबोधदानेन ॥ ५ ॥ यक्षाधिपसखमनिशं रक्षाचतुरं  
 समस्तलोकानाम् । व्रीक्षादापितकवितं दाक्षायण्याः पतिं नौमि  
 ॥ ६ ॥ यमनियमन्तिरतलभ्यं शमदममुखषड्दानकृतदीक्षम् ।  
 रमणीयपदसरोजं शमनाहितमाश्रये सततम् ॥ ७ ॥ यमिहन्मान-  
 सहसं शमिताघौघं प्रणाममात्रेण । अमितायुःप्रदपूजं कमितारं  
 नौमि शैलतनयायाः ॥ ८ ॥ येन कृतमिन्दुमौले मानववर्येण  
 तावकस्मरणम् । तेन जितं जगदखिलं को न मृते सुरार्यतुल्येन  
 ॥ ९ ॥ इति इन्दुमौलिस्मरणस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## १३९. ईशानस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यः षड्वक्त्रगजाननाद्भुतसुताविष्कारणव्यंजिता-  
 चित्तोत्पादनवैभवां गिरिसुतां मायां निजान्गे दधत् । सेव्यां  
 संसृतिहानये त्रिपथगां विद्यां च मूर्ध्ना वहन् स्वं ब्रह्मत्वमभिव्य-  
 नक्ति भजतः पायात् स गंगाधरः ॥ १ ॥ यस्यालोच्य कपर्ददुर्ग-  
 विलुठङ्गांबुशौक्ल्याच्छतामाधुर्याणि पराजयोदितशुचा क्षीणः कला-  
 मात्रवाम् । बिभ्रत् पित्सति नूनमुत्कटजटाजूटोच्चकूटाच्छशी लाला-



द्राक्षिशिखासु सोऽस्तु भजतां भव्याय गंगाधरः ॥ २ ॥ यल्लाळाट-  
 कृपीटयोनिस्ततासंगाद्विलीनः शशी गंगारूपमुपेत्य तत्प्रशमनाशक्तः  
 कृशांगः शुचा । उद्धृणाति तनुं त्रपापरवशो मन्ये जटादामभिः  
 पायात् स्तव्यविभाव्यनव्यचरितो भक्तान् स गंगाधरः ॥ ३ ॥  
 अकारुडधराधराधिपसुतामौदर्यसंतर्जिता गंगा यस्य कपर्ददुर्गमवने  
 लीना विलीना हिया । चिंतापांडुतनुः स्वलंत्यविरतं पार्श्वत्यसूया-  
 स्सितैरंतर्धि बहु मन्यतेऽस्तु भजतां भूत्यै स गंगाधरः ॥ ४ ॥  
 मुग्धां स्निग्ध इव प्रतार्य गिरिजामर्धाद्भृदानच्छलाक्षित्योद्यद्गुलभ्रमां  
 त्रिपथगामात्मोत्तमांगे वहन् । स्थाने यो विषमेक्षणत्वपदवीमारो-  
 प्यते कोविदः प्रच्छन्नप्रणयकमोऽस्तु भजतां प्रीत्यै स गंगाधरः  
 ॥ ५ ॥ संवासजसुरासुरपिंपरिपद्वाकीर्णपुष्पाञ्जलिप्रश्नोत्तन्मकरंद-  
 बिंदुसततासारः पतन्मस्तकं । यस्याविश्रमसंभृतस्त्रिपथगानाज्ञा  
 जनैः ख्याप्यते स त्रैलोक्यनिपेवितांघ्रियुगलः पुष्पातु गंगाधरः ॥ ६ ॥  
 यस्मिन्दुद्धततांडवैकरसतासाटोपनाट्यक्रमे विस्त्रस्तासु जटासु भासुर-  
 तनुधाराशतैः पातुका । गंगाजंगमवारिपर्वतधियं चित्ते विधत्ते  
 सतामेवं चित्रविभूतिरस्तु भजतां भव्याय गंगाधरः ॥ ७ ॥ यो  
 गंगापयसि प्रभो तव महानत्यादरः कल्पते संमूर्च्छद्विषयापनाय  
 विधये कुध्यस्यसत्योक्तये । ईशानस्तवसागरांतगमने वाण्यः पुरा-  
 ण्योऽक्षमाः संक्षिप्येत्यममिष्टुतः ससितगुः प्रीतोऽस्तु गंगाधरः  
 ॥ ८ ॥ इतीशानस्तवः संपूर्णः ॥



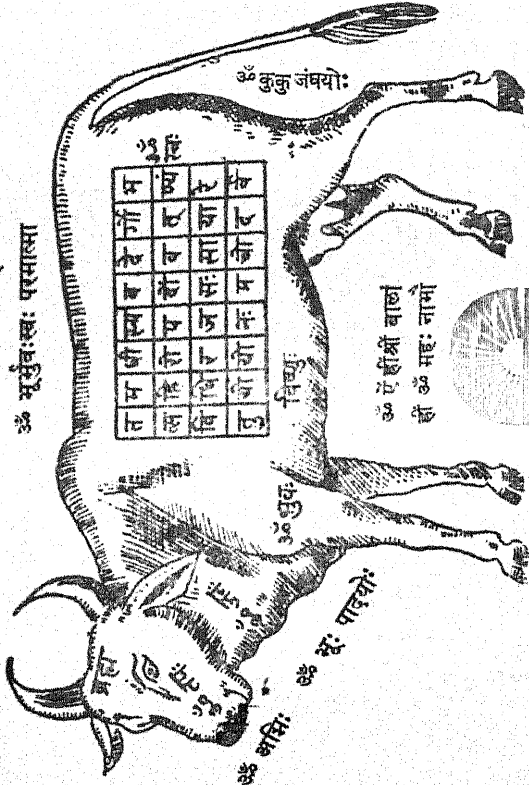
# गायत्रीस्तोत्राणि ।

ॐ स्वः पुच्छे

ॐ सत्यं शिरसि

सौख्यायनयोत्रम्

ॐ भूर्भुवःस्वः परमात्मा



म	प	र	व
ग	र	य	द
दे	व	म	जो
ब	हो	म	म
स्व	य	ज	न
षी	ते	र	यो
म	हि	वि	हो
त	स	वि	हो

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बालं  
ह्रीं ॐ महः नामौ



ॐ भूर्भुवःस्वः तत्सर्वितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

## गायत्रीस्तोत्राणि ।

१४०. गायत्रीशापोद्धारस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीब्रह्मशापविमोचनमंत्रस्य निग्रहा-  
नुग्रहकर्ता प्रजापतिर्ऋषिः, कामदुषा गायत्री छंदः, ॐ ब्रह्मशाप-  
विमोचनी गायत्री शक्तिर्देवता, ब्रह्मशापविमोचनार्थे जपे विनि-  
योगः ॥ सवितुर्ब्रह्म मेत्युपासनात्तद्ब्रह्मविदो विदुस्तां प्रयतन्ति धीराः ।  
सुमनसा वाचा समाग्रतः । ब्रह्मशापाद्विमुक्ता भव ॥ ॐ विश्वा-  
मित्रशापविमोचनमंत्रस्य नूतनसृष्टिकर्ता विश्वामित्रऋषिः, वारुणेहा  
गायत्रीछंदः, भुक्तिमुक्तिप्रदः विश्वामित्रानुगृहीता गायत्री शक्तिः,  
सविता देवता, विश्वामित्रशापविमोचनार्थे जपे विनियोगः ॥  
तत्त्वानि चांगेव्वभिचितो धियांसस्त्रिगर्भा यदुद्भवां देवाश्चोच्चिरे विश्व-  
सृष्टिम् । तां कल्याणीमिष्टकरीं प्रपद्ये यन्मुखाभिःसूतो वेदगर्भः ॥  
ॐ गायत्रि त्वं विश्वामित्रशापाद्विमुक्ता भव ॥ ॐ वसिष्ठशाप-  
विमोचनमंत्रस्य वसिष्ठऋषिः, विश्वोद्भवा गायत्रीछंदः, वसिष्ठा-  
नुगृहीता गायत्री शक्तिर्देवता, वसिष्ठशापविमोचनार्थे जपे विनि-  
योगः ॥ तत्त्वानि चांगेव्वभिचितो धियांसः ध्यायति विष्णोरायु-  
धानि बिभ्रत् । जनानता सा परमा च शश्वत् । गायत्रीमासाच्छुर-  
नुत्तम च धाम ॥ ॐ गायत्रीवसिष्ठशापाद्विमुक्ता भव । सोऽहमक-  
महं ज्योतिरर्को ज्योतिरहं शिवः । आत्मज्योतिरहं शुक्लं शुक्लं ज्योती-  
रसोऽहमोम् ॥ अहो विष्णुमहेशो दिव्ये सिद्धि सरस्वति । अजरे  
अमरे चैव दिव्ययोनि नमोऽस्तु ते ॥ अथ गायत्रीध्यानम् ॥ यद्देवैः  
सुरपूजितं परतरं सामर्थ्यतारात्मकं पुद्गागांबुजपुष्पनागवकुलैः  
केसैः शुक्लैर्वर्चितम् । नित्यं ध्यानसमस्तदीप्तिकरणं कालाभिरुदीपनं

तत्संहारकरं नमामि सततं पातालसंस्थं सुखम् ॥ इति गायत्री-  
शापोद्धारस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १४१. गायत्रीकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीपार्वत्युवाच ॥ देवदेव महादेव संसारार्णव-  
तारकम् । गायत्रीकवचं देव कृपया कथय प्रभो ॥ १ ॥ श्रीमहादेव  
उवाच ॥ मूलाधारे स्थिता नित्यं कुंडली तत्त्वरूपिणी । सूक्ष्माति-  
सूक्ष्मपरमा विसतंतुस्वरूपिणी ॥ २ ॥ विद्युत्पुञ्जप्रतीकाशा कुंडली  
श्रुतिसर्पिणी । परस्य ब्रह्मग्रहणी पञ्चाशद्वर्णरूपिणी ॥ ३ ॥ शिवस्य  
नर्तकी नित्या परब्रह्मप्रपूजिता । ब्राह्मण्यैव गायत्री चिदानंद-  
स्वरूपिणी ॥ ४ ॥ ब्रह्मण्यवर्त्मवातेयं प्राणात्मा नित्यनूतनात् । नित्यं  
तिष्ठति सानंदा कुंडली तव विग्रहे ॥ ५ ॥ अतिगोप्यं महत्पुण्यं  
त्रिकोटीतीर्थसंयुतम् । सर्वज्ञानमयी देवी सर्वदानमयी सदा ॥ ६ ॥  
सर्वसिद्धिमयी देवी पार्वती प्राणवल्लभा । ॐ ॐ ॐ ॐ भूः ॐ  
ॐ भुवः ॐ ॐ स्वः ॐ ॐ त ॐ ॐ त्स ॐ ॐ वि ॐ ॐ तु  
ॐ ॐ व ॐ ॐ रे ॐ ॐ ण्यं ॐ ॐ भ ॐ ॐ गों ॐ ॐ  
दे ॐ ॐ वं ॐ ॐ स्य ॐ ॐ धी ॐ ॐ म ॐ ॐ हि ॐ  
ॐ धि ॐ ॐ यो ॐ ॐ यो ॐ ॐ नः ॐ ॐ प्र ॐ ॐ चो  
ॐ ॐ द ॐ ॐ यात् ॐ ॐ । ॐ भूः ॐ पातु मे मूलं चतु-  
र्दलसमन्वितम् । ॐ भुवः ॐ पातु मे लिङ्गं सजलं षड्दलात्मकम्  
॥ ७ ॥ ॐ स्वः ॐ पातु मे कंठं सकाशां दलषोडशम् । ॐ त  
ॐ पातु मे रूपं ब्रह्माणं कारणं परम् ॥ ८ ॥ ॐ त्स ॐ पातु मे  
ब्रह्माणं पातु सदा मम । ॐ वि ॐ पातु मे गंधं सदा शिशिर-  
संयुतम् ॥ ९ ॥ ॐ तु ॐ पातु मे स्पर्शं शरीरस्य च कारणम् ।  
ॐ वं ॐ पातु मे शब्दं शब्दविग्रहकारणम् ॥ १० ॥ ॐ रे ॐ

पातु मे नित्यं सदा तत्त्वशरीरकम् । ॐ ण्यं ॐ पातु मे ह्यक्षं सर्व-  
 तत्त्वैककारणम् ॥ ११ ॥ ॐ म ॐ पातु मे श्रोत्रं श्रवणस्य च  
 कारणम् । ॐ गौं ॐ पातु मे घ्राणं गंधोपादानकारणम् ॥ १२ ॥  
 ॐ दे ॐ पातु मे वास्यं सभायां शब्दरूपिणी । ॐ व ॐ पातु मे बाहु-  
 युगलं ब्रह्मकारणम् ॥ १३ ॥ ॐ स्य ॐ पातु मे लिङ्गं षड्दलं  
 षड्दलैर्युतम् । ॐ धी ॐ पातु मे नित्यं प्रकृतिं शब्दकारणम्  
 ॥ १४ ॥ ॐ म ॐ पातु मे नित्यं मनोब्रह्मस्वरूपिणम् । ॐ हि ॐ  
 पातु मे बुद्धिं परब्रह्ममयं सदा ॥ १५ ॥ ॐ धिय ॐ पातु मे नित्य-  
 महंकारं यथा तथा । ॐ यो ॐ पातु मे नित्यं जलं सर्वत्र सर्वदा ।  
 ॐ नः ॐ पातु मे नित्यं तेजःपुत्रो यथा तथा ॥ १६ ॥ ॐ प्र ॐ  
 पातु मे नित्यमनिलं कार्यकारणम् । ॐ चो ॐ पातु मे नित्यमाकाशं  
 शिवसन्निभम् ॥ १७ ॥ ॐ द ॐ पातु मे जिह्वां जपयज्ञस्य  
 कारणम् । ॐ यात् ॐ मे नित्यं शिवज्ञानमयं सदा ॥ १८ ॥  
 तत्त्वानि पातु मे नित्यं गायत्री परदैवतम् । कृष्णा मे सततं पातु  
 ब्रह्माणी भूर्भुवःस्वरोम् ॥ १९ ॥ ॐ अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य  
 परब्रह्म ऋषिः, ऋग्यजुःसामाथर्वाणश्छन्दांसि, ब्रह्मा देवता, धर्माय-  
 काममोक्षार्थं जपे विनियोगः ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्वरेण्यं  
 भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् । कामकोषादिकं  
 सर्वं स्मरणाद्याति दूरतः । इदं कवचमज्ञात्वा मङ्गलविधां जपेद्यदि  
 ॥ २० ॥ शतकोटिजपेनापि न सिद्धिर्जायते प्रिये । गायत्री-  
 कवचात्सर्वं स्मरणात्सिद्ध्यति ध्रुवम् ॥ २१ ॥ पठित्वा कवचं विप्रो  
 गायत्रीं सकृदुच्चेत् । सर्वपापविनिर्मुक्तो जीवन्मुक्तो भवेद्बुद्धिः  
 ॥ २२ ॥ इदं कवचमज्ञात्वा त्वन्यथा कवचं पठेत् । सर्वं तस्य  
 वृथा देवि त्रैलोक्यसंगकाविकम् ॥ २३ ॥ गायत्रीकवचं यस्य

जिह्वायां विद्यते सदा । तदाऽमृतमयी जिह्वा पवित्रा जपपूजने  
 ॥ २४ ॥ इदं कवचमज्ञात्वा ब्रह्मविद्यां जपेद्यदि । व्यर्थं भवति  
 चार्वङ्गि तज्जपो वनरोदनम् ॥ २५ ॥ ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्ग-  
 नागमः । महान्ति पातकान्यस्य स्मरणाद्यान्ति दूरतः ॥ २६ ॥  
 नश्वरं मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्रविनिर्मितम् ॥ २७ ॥ वातपित्त-  
 कफैर्युक्तं स्थूलदेहं तदुच्यते । सूक्ष्मं ज्योतिर्मयं 'देहं' पञ्चभूतात्मकं  
 विदुः ॥ २८ ॥ महापद्मवनांतस्थं सर्वावयवसंयुतम् । आधार-  
 देहसंबंधाद्गायत्री ब्रह्मणः स्वयम् ॥ २९ ॥ एतदेव परं ब्रह्म कथिते  
 उभयात्मके । ब्राह्मणस्यैव जीवात्मा गायत्रीसहितो वपुः ॥ ३० ॥  
 आत्मनां हृदयांभोजे प्रदीपकलिकोपमम् । निर्धूमं च यथा ज्योति-  
 स्तैलाग्निवर्तियोगतः ॥ ३१ ॥ तज्ज्योतिः परमं ब्रह्म शुभदं नात्र  
 संशयः । गायत्रीकवचं न्यासं मातृकास्थानसंक्षिप्तं ॥ ३२ ॥ स  
 कृत्वा ब्राह्मणश्रेष्ठ चान्यन्यासं समाचरेत् । अन्यन्यासे  
 तथा सिद्धिरन्यथाऽरण्यरोदनम् ॥ ३३ ॥ गायत्रीन्यासमात्रेण  
 परब्रह्ममयो द्विजः । इदं कवचमज्ञात्वा ब्रह्मचर्यं करोति यः  
 ॥ ३४ ॥ ब्रह्मचर्यं भवेद्यर्थं गायत्रीकवचं विना । कवचस्य  
 प्रसादेन ब्राह्मणो ज्वलदग्निवत् ॥ ३५ ॥ कवचं परमेशानि  
 सृष्टिस्थितिलयात्मकम् । कवचं ब्राह्मण इदं प्रातरुत्थाय यः पठेत्  
 ॥ ३६ ॥ गायत्रीं स सकृत्स्मृत्वा जपलक्षफलं भवेत् । गायत्रीं  
 दशधा जप्त्वा दशलक्षफलं भवेत् ॥ ३७ ॥ एवं क्रमेण गायत्रीं  
 शतधा प्रजपेद्यदि । शतलक्षफलं प्राप्य विहरेद्देववद्भुवि ॥ ३८ ॥  
 सूर्येन्द्रोर्ग्रहणे चेदं पठित्वा कवचं द्विजः । सकृद्यदि जपेद्विद्यां गायत्रीं  
 परमाक्षराम् ॥ ३९ ॥ तत्क्षणान्तु भवेत्सिद्धो ब्रह्मसायुज्यमाप्नुयात् ।  
 इदं कवचमज्ञात्वा गायत्रीं प्रजपेत्तु यः ॥ ४० ॥ जप एव वृथा  
 तस्य निस्तेजो न च सिद्धिदः । यः पठेत्कवचं देवि सततं शिव-

सन्निधौ ॥ ४१ ॥ विष्णुदेवस्य कवचं प्रजपेच्छक्तिसन्निधौ । तेजः-  
पुञ्जमयो विप्रस्तक्ष्णज्जायते ध्रुवम् ॥ ४२ ॥ इति श्रीरुद्रयामले  
पार्वतीश्वरसंवादे गायत्रीकवचं संपूर्णम् ॥

### १४२. गायत्रीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यस्मिन्दृष्टे नैव दृश्येत विश्वं यस्मिंल्लब्धे नैव  
लब्धव्यशेषः । यस्मिन् ज्ञाते नैव वेद्यांतराशा गायत्र्यर्थं पंचवक्त्रं  
प्रपद्ये ॥ १ ॥ या गायत्री नामधेयं महार्थं सार्थं कर्तुं संप्रविष्टो-  
पनाये । मार्गे मंत्रान् सर्वतो दर्शयित्वा तारे लीना सर्ववेदार्थदीपे  
॥ २ ॥ श्रोतव्यं मे वाक्यमेतत्समस्तैर्वर्णैर्भाव्यं स्वाश्रमप्रासचिह्नैः ।  
तेभ्यस्तुप्येच्छंकरः श्रीहरिर्वा प्रष्टव्यो वः श्रीगुरुः स्वैर्विनीतैः  
॥ ३ ॥ गायत्री चेत्सम्यगाप्ता क्रमेण सा संजज्ञा कर्मशुद्ध्या द्विजेन ।  
सा विज्ञाता गोपिता संप्रदायाकिं नो दद्याद्वेदमाता मता चेत्  
॥ ४ ॥ बुद्धावीशारोहणं कर्म तस्याः सा चेत्पक्ता त्यक्त ईशो  
द्विजेन । यस्यां सर्वा देवताः संप्रविष्टाः सर्वात्मानं मंत्रराजं प्रपद्ये  
॥ ५ ॥ विष्णुः शंभुर्मात्सरो विष्णुराजो या वा का वा देवताऽस्या  
विभूतिः । सैकोपास्या वेदमार्गैकनिष्ठैः क्षीराब्धौ किं दुग्धभिक्षा-  
प्रयासः ॥ ६ ॥ नेयं लब्ध्या मानुषाणां श्रपाणां गंगाशब्दो मानुष-  
त्वैकहेतुः । यस्या लब्धौ वैदिकाग्रेसराणां बंशे वेदैः संस्कृते  
जन्महेतुः ॥ ७ ॥ मंत्रैः किं तैर्यैः प्रतीक्ष्येत देवी गायत्र्यम्बा  
संप्रवेष्टुं द्विजेषु । देवैः किं तैरग्निना पुष्टिमज्जिस्तस्मान्नसोद्भूतैः  
सा निषेव्या ॥ ८ ॥ दत्तं भस्म श्रीत्रिपादांबयैतन्न्यग्नेरग्नेः शेषरूपं  
स्वरूपम् । तस्मान्नस्य प्रोच्यते भासनाच्च भूतिर्गायत्र्यम्बयैक्या  
त्रिपुंड्रम् ॥ ९ ॥ शैवोऽन्यो वा यां विना किं द्विजः स्याच्छै-  
वोऽन्यो वा दीक्षया वेदमातुः । तस्माच्छैवो वैष्णवोऽन्येषु गणयो

गायत्र्याप्ता ब्रह्मता वेदमान्या ॥ १० ॥ भेदापोहन्यापृतिं सा  
 विभर्ति ध्यानैर्भिन्नैर्ध्याननिष्ठैकवेद्याम् । तस्मान्नामान्यत्र संयान्ति  
 सर्वाण्यस्या निष्ठा शांभवी वैष्णवी च ॥ ११ ॥ लोकस्थास्ते  
 विष्णुरुद्रादिदेवाः कैश्चित्कामैः कैश्चिदेवाधिकारैः । गायत्र्यास्ता  
 भूतयः सेवनीया गायत्र्यां ते सेविताः संभ्रमेण ॥ १२ ॥ ब्रह्मत्वं  
 चेदासुकामोऽस्युपास्त्व गायत्रीं चेलोककामोऽन्यदेवम् । कामो  
 ज्ञातः स्वीयपादप्रवृत्त्या वादः को वा तृप्तिहीने प्रवृत्तिः ॥ १३ ॥  
 बुद्धेः साक्षी बुद्धिगम्यो जपादौ गायत्र्यर्थः सोऽनघो वेदसारः ।  
 तद्ब्रह्मैव ब्रह्मतोपासकस्याप्येवं मंत्रः कोऽस्ति तंत्रे पुराणे ॥ १४ ॥  
 जात्यश्वः किं जातिमासुं सकामो गत्यभ्यासात् स्पष्टतामेति जातिः ।  
 ब्रह्मत्वात्सौ कः प्रयासो द्विजानां यद्गायत्र्या व्यज्यते चाष्टमेऽब्दे  
 ॥ १५ ॥ ब्रह्मत्वस्य ख्यापनार्थं प्रविष्टा गायत्रीयं तावताऽस्य  
 द्विजत्वम् । कर्णद्वारा ब्रह्मजन्मप्रदानादुक्तो वेदे ब्राह्मणो ब्रह्मनिष्ठः  
 ॥ १६ ॥ एषा निष्ठा दुर्लभा मर्त्यबुद्धौ तस्माल्लोके वैष्णवाः  
 शांभवाश्च । भिन्नं भिन्नं मार्गमास्थाय वेदं क्षामं कुर्वत्यास्ति-  
 कच्छन्ने मे ॥ १७ ॥ पक्षिद्वन्द्वं विद्यते स्वस्वदेहे भोक्तारं सा  
 ध्यानमाचष्ट एतत् । यावत्क्षीणा भोक्तृता स्यात्ततस्तु ज्ञात्वा  
 ब्रूयाद्ब्रह्मतां स्वस्य विद्वान् ॥ १८ ॥ गायत्र्यर्थं नो विजानाति  
 कश्चित्तस्मादन्यं देवमाह द्विजोऽपि । विज्ञातश्चेत्सर्ववादस्य शांति-  
 मुक्तिर्हस्ते गायमानस्य मंत्रम् ॥ १९ ॥ भस्मांतं चेद्विश्वमेतत्समस्तं  
 भस्मोद्धूतं भस्म संभासते च । तस्माद्ब्रह्म प्रादुराद्यैर्वचोभिर्वेदास्त-  
 स्मान्नस्य लिङ्गं द्विजानाम् ॥ २० ॥ इति श्रीशंकराचार्याभिप्रायः  
 कृष्णभिक्षुणा । वर्णितस्तेन गायत्री विमूल्या सह नन्दतु ॥ २१ ॥  
 इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजककृष्णानंदसरस्वतीप्रणीतं गायत्रीस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥



## १४३. गायत्रीकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ याज्ञवल्क्य उवाच ॥ स्वामिन्सर्वजगन्नाथ  
 संशयोऽस्ति महान्सम । चतुःषष्टिकलानां च पातकानां च तद्वद्  
 ॥ १ ॥ मुच्यते केन पुण्येन ब्रह्मरूपः कथं भवेत् । देहं च देवता-  
 रूपं संनिरूपं विशेषतः ॥ २ ॥ क्रमतः श्रोतुमिच्छामि कवचं विधि-  
 पूर्वकम् । ब्रह्मोवाच ॥ गायत्र्याः कवचस्यास्य ब्रह्मा विष्णुः शिवो  
 ऋषिः ॥ ३ ॥ ऋग्यजुःसामाथर्वाणि छंदांसि परिकीर्तिताः ।  
 परब्रह्मस्वरूपा सा गायत्री देवता स्मृता ॥ ४ ॥ रक्षाहीनं तु यत्स्थानं  
 कवचेन विना कृतम् । सर्वं सर्वत्र संरक्षेत्सर्वांगं भुवनेश्वरी ॥ ५ ॥  
 बीजं भर्गश्च युक्तिश्च धियः कीलकमेव च । पुरुषार्थविनियोगो  
 यो नश्च परिकीर्तितः ॥ ६ ॥ ऋपिं मूर्ध्नि न्यसेत्पूर्वं मुखे छंद उदी-  
 रितम् । देवतां हृदि विन्यस्य गुह्ये बीजं नियोजयेत् ॥ ७ ॥ शक्तिं  
 विन्यस्य पद्मयोर्नाभौ तु कीलकं न्यसेत् । द्वात्रिंशन्तु महाविद्याः  
 सांख्यायनसगोत्रजाः ॥ ८ ॥ द्वादशलक्षसंयुक्ता विनियोगाः  
 पृथक्पृथक् । एवं न्यासविधिं कृत्वा करांगं विधिपूर्वकम् ॥ ९ ॥  
 व्याहृतित्रयमुच्चार्य ह्यनुलोमविलोमतः । चतुरक्षरसंयुक्तं करांग-  
 न्यासमाचरेत् ॥ १० ॥ आवाहनादिमेदं च दश मुद्राः प्रदर्शयेत् ।  
 सा पातु वरदा देवी अंगप्रत्यंगसंगमे ॥ ११ ॥ ध्यानं मुद्रां  
 नमस्कारं गुरुमंत्रं तथैव च । संयोगमात्मसिद्धिं च पद्विधं किं  
 विचारयेत् ॥ १२ ॥ अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा  
 ऋषयः, ऋग्यजुःसामाथर्वाणि छंदांसि, परब्रह्मस्वरूपिणी गायत्री  
 देवता, भूर्बीजं, भुवः शक्तिः, स्वाहा कीलकं, श्रीगायत्रीप्रीत्यर्थं  
 जपे विनियोगः । वर्णाक्षां कुंडिकाहस्तां शुद्धनिर्मलज्योतिषीम् ।  
 सर्वतत्त्वमयीं वन्दे गायत्रीं वेदमातरम् ॥ १३ ॥ अथ ध्यानम् ॥

मुक्ता विद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्ष्णैर्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्न-  
मुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम् । गायत्रीं वरदाभयांकुशकशां शूलं  
कपालं गुणं शंखं चक्रमथारविंदयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥ १४ ॥  
ॐ गायत्री पूर्वतः पातु सावित्री पातु दक्षिणे । ब्रह्मविद्या च मे  
पश्चादुत्तरे मां सरस्वती ॥ १५ ॥ पावकीं मे दिशं रक्षेत् पावकोज्ज्वल-  
शालिनी । यातुधानीं दिशं रक्षेद्यातुधानगणार्दिनी ॥ १६ ॥ पाव-  
मानीं दिशं रक्षेत्पवमानविलासिनी । दिशं रौद्रीमवतु मे रुद्राणीरुद्र-  
रूपिणी ॥ १७ ॥ ऊर्ध्वं ब्रह्माणी मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा । एवं दश  
दिशो रक्षेत् सर्वतो भुवनेश्वरी ॥ १८ ॥ ब्रह्मास्त्रस्मरणादेव वाचां  
सिद्धिः प्रजायते । ब्रह्म दण्डश्च मे पातु सर्वशस्त्रास्त्रभक्षकः  
॥ १९ ॥ ब्रह्म शीर्षस्तथा पातु शत्रूणां वधकारकः । सप्त व्याहृतयः  
पातु सर्वदा विद्रुसंयुताः ॥ २० ॥ वेदमाता च मां पातु सरहस्था  
सदैवता । देवीसूक्तं सदा पातु सहस्राक्षरदेवता ॥ २१ ॥  
चतुःपष्टिकला विद्या दिव्याद्या पातु देवता । बीजशक्तिश्च मे  
पातु पातु विक्रमदेवता ॥ २२ ॥ तत्पदं पातु मे पादौ जंघे मे  
सवितुः-पदम् । वरेण्यं कटिदेशं तु नाभिं भर्गस्तथैव च ॥ २३ ॥  
देवस्य मे तु हृदयं धीमहीति गलं तथा । धियो मे पातु जिह्वायां  
यः-पदं पातु लोचने ॥ २४ ॥ ललाटे नः-पदं पातु मूर्धानं मे  
प्रचोदयात् । तद्वर्णः पातु मूर्धानं सकारः पातु भालकम् ॥ २५ ॥  
चक्षुषी मे विकारस्तु श्रोत्रं रक्षेत्तु कारकः । नासापुटे वंकारो  
मे रेकारस्तु कपोलयोः ॥ २६ ॥ णिकारस्त्वधरोष्ठे च यकारस्तूर्ध्वं  
ओष्ठके । आस्यमध्ये भकारस्तु गोकारस्तु कपोलयोः ॥ २७ ॥ देकारः  
कंठदेशे च वकारः स्कंधदेशयोः । स्यकारो दक्षिणं हस्तं धीकारो  
वामहस्तकम् ॥ २८ ॥ मकारो हृदयं रक्षेद्विकारो जठरं तथा । धिकारो

नाभिदेशं तु योकारस्तु कटिद्वयम् ॥ २९ ॥ गुह्यं रक्षतु योकार  
 ऊरु मे नः पदाक्षरम् । प्रकारो जानुनी रक्षेच्चोकारो जंघदेशयोः  
 ॥ ३० ॥ दकारो गुल्फदेशं तु यात्कारः पादयुग्मकम् । जातवेदेति  
 गायत्री ज्यंबकंति दशाक्षरा ॥ ३१ ॥ सर्वतः सर्वदा पातु आपो-  
 ज्योतीति षोडशी । इदं तु कवचं दिव्यं बाधाशतविनाशकम्  
 ॥ ३२ ॥ चतुःषष्टिकलाविद्यासकलैश्वर्यसिद्धिदम् । जपारंभे च  
 हृदयं जपांते कवचं पठेत् ॥ ३३ ॥ स्त्रीगोब्राह्मणमित्रावित्रोहाद्य-  
 खिलपातकैः । मुच्यते सर्वपापेभ्यः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥ ३४ ॥  
 पुष्पांजलिं च गायत्र्या मूर्तेर्नैव पठेत्सकृत् । शतसाहस्रवर्षाणां  
 पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥ ३५ ॥ भूर्जपत्रे लिखित्वैतत् स्वकंटे  
 धारयेद्यदि । शिखायां दक्षिणे बाहौ कंटे वा धारयेद्बुधः  
 ॥ ३६ ॥ त्रैलोक्यं क्षोभयेत्सर्वं त्रैलोक्यं दहति क्षणात् । पुत्रवान्  
 धनवान् श्रीमाञ्जानाविद्यानिधिर्भवेत् ॥ ३७ ॥ ब्रह्मास्त्रादीनि सर्वाणि  
 तदंगस्पर्शनात्ततः । भवन्ति तस्य तुच्छानि किमन्यत्कथयामि ते  
 ॥ ३८ ॥ अभिमंत्रितगायत्रीकवचं मानसं पठेत् । तज्जलं पिबतो  
 नित्यं पुरश्चर्याफलं भवेत् ॥ ३९ ॥ लघुसामान्यकं मंत्रं महामंत्रं  
 तथैव च । यो वेत्ति धारणां युञ्जन् जीवन्मुक्तः स उच्यते ॥ ४० ॥  
 सप्तव्याहृतिविप्रेन्द्र सप्तावस्थाः प्रकीर्तिताः । सप्तजीवशता नित्यं  
 व्याहृती अग्निरूपिणी ॥ ४१ ॥ प्रणवे नित्ययुक्तस्य व्याहृतीषु  
 च सप्तसु । सर्वेषामेव पापानां संकरे समुपस्थिते ॥ ४२ ॥ शतं  
 सहस्रमभ्यर्च्य गायत्री पावनं महत् । दशशतमष्टोत्तरशतं गायत्री  
 पावनं महत् ॥ ४३ ॥ भक्तियुक्ते भवेद्विप्रः संन्याकर्म समा-  
 चरेत् । काले काले प्रकृतं ध्यं सिद्धिर्भवति नान्यथा ॥ ४४ ॥  
 प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य मूर्ध्नि वः स्वस्त्यैव च । तुर्यं सहैव गायत्रीजप

एवमुदाहृतम् ॥ ४५ ॥ तुरीयपादमुत्सृज्य गायत्रीं च जपेद्विजः ।  
 स मूढो नरकं याति कालसूत्रमधोगतिः ॥ ४६ ॥ मंत्रादौ जननं  
 प्रोक्तं मंत्रान्ते स्मृतसूत्रकम् । उभयोर्दोषनिर्मुक्तं गायत्री सफला  
 भवेत् ॥ ४७ ॥ मंत्रादौ पाशबीजं च मंत्रान्ते कुशबीजकम् ।  
 मंत्रमध्ये तु या माया गायत्री सफला भवेत् ॥ ४८ ॥ वाचि-  
 कस्त्वहमेव स्यादुपांशु शतमुच्यते । सहस्रं मानसं प्रोक्तं त्रिविधं  
 जपलक्षणम् ॥ ४९ ॥ अक्षमालां च मुद्रां च गुरोरपि न दर्शयेत् ।  
 जपं चाक्षस्वरूपेणानामिकामध्यपर्वणि ॥ ५० ॥ अनामा मध्यया  
 हीना कनिष्ठादिक्रमेण तु । तर्जनीमूलपर्यन्तं गायत्रीजपलक्षणम्  
 ॥ ५१ ॥ पर्वभिस्तु जपेदेवमन्यत्र नियमः स्मृतः । गायत्री  
 वेदमूलत्वाद्भेदः पर्वसु गीयते ॥ ५२ ॥ दशभिर्जन्मजनितं  
 शतेनैव पुरा कृतम् । त्रियुगं तु सहस्राणि गायत्री हन्ति किल्बिषम्  
 ॥ ५३ ॥ प्रातःकालेषु कर्तव्यं सिद्धिं विप्रो य इच्छति । नादालये  
 समाधिश्र संध्यायां समुपासते ॥ ५४ ॥ अंगुल्यग्रेण यज्जप्तं  
 यज्जप्तं मेरुलघने । असंख्यया च यज्जप्तं तज्जप्तं निष्फलं भवेत्  
 ॥ ५५ ॥ विना वस्त्रं प्रकुर्वीत गायत्री निष्फला भवेत् । वस्त्रपुच्छं  
 न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः ॥ ५६ ॥ गायत्रीं तु परित्यज्य  
 अन्यमंत्रमुपासते । सिद्धाश्वं च परित्यज्य भिक्षामटति दुर्मतिः  
 ॥ ५७ ॥ ऋषिश्छंदो देवताख्या बीजं शक्तिश्च कीलकम् ।  
 नियोगं न च जानाति गायत्री निष्फला भवेत् ॥ ५८ ॥ वर्ण-  
 मुद्राध्यानपदमावाहनविसर्जनम् । दीपं चक्रं न जानाति गायत्री  
 निष्फला भवेत् ॥ ५९ ॥ शक्तिर्न्यासस्तथा स्थानं मंत्रसंबोधनं  
 परम् । त्रिविधं यो न जानाति गायत्री तस्य निष्फला ॥ ६० ॥  
 पंचोपचारकांश्चैव होमद्रव्यं तथैव च । पंचांगं च विना नित्यं

गायत्री निष्फला भवेत् ॥ ६१ ॥ मंत्रसिद्धिर्भवेज्जानु विश्वामित्रेण  
भाषितम् । व्यासो वाचस्पतिर्जीवस्तुता देवी तपःस्मृतौ ॥ ६२ ॥  
सहस्रजसा सा देवी ह्युपपातकनाशिनी । लक्षजाप्ये तथा तच्च  
महापातकनाशिनी । कोटिजाप्येन राजेन्द्र यदिच्छति तदामुयात्  
॥ ६३ ॥ न देयं परशिष्येभ्यो ह्यभक्तेभ्यो विशेषतः । शिष्येभ्यो  
भक्तियुक्तेभ्यो ह्यन्यथा मृत्युमाप्नुयात् ॥ ६४ ॥ इति श्रीमद्वसिष्ठ-  
संहितोक्तं गायत्रीकवचं संपूर्णम् ॥

### १४४. सावित्रीपंजरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भगवंतं देवदेवं ब्रह्माणं परमेष्ठिनम् । विधातारं  
विश्वसृजं पद्मयोनिं प्रजापतिम् ॥ १ ॥ शुद्धस्फटिकसंकाशं महेन्द्र-  
शिखरोपमम् । बद्धपिंगजटाजूटं तडितकनककुण्डलम् ॥ २ ॥ शरच्चन्द्रा-  
भवदनं स्फुरदिन्दीवरेक्षणम् । हिरण्मयं विश्वरूपमुपवीताजिनावृतम्  
॥ ३ ॥ मौक्तिकाभाक्षवलयस्तं त्रीलयसमन्वितः । कर्पूरोद्भूतलिततनुः  
खट्वाण्मयवर्धनम् ॥ ४ ॥ चिनयेनोपसंगम्य क्षिरसा प्रणिपत्य च ।  
नारदः परिपप्रच्छ देवर्षिगणमध्यगः ॥ ५ ॥ नारद उवाच ॥  
भगवन् देवदेवेश सर्वज्ञ करुणानिधे । श्रोतुमिच्छामि प्रज्ञेन भोग-  
मोक्षैकसाधनम् ॥ ६ ॥ ऐश्वर्यस्य समग्रस्य फलदं ब्रह्मवर्जितम् ।  
ब्रह्महत्यादिपापघ्नं पापाघरिभयापहम् ॥ ७ ॥ यदेकं निष्कलं  
सूक्ष्मं निरंजनमनामयम् । यत्ते प्रियतमं लोके तन्मे ब्रूहि पितरैर्मम  
॥ ८ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ शृणु नारद ब्रह्ममूर्ख सनातनम् ।  
सृष्ट्यादौ मन्मुखे क्षिप्तं देवदेवेन विष्णुना ॥ ९ ॥ प्रपञ्चबीज-  
मित्याहुरूपत्तिस्थितिहेतुकम् । पुरा मया तु कथितं कथ्यपाय  
सुधीमते ॥ १० ॥ सावित्रीपंजरं नाम रहस्यं निगमत्रये । ऋष्या-  
विकं च दिग्वर्णं सांगावरणकं क्रमात् ॥ ११ ॥ बाहनायुधमंत्राखं

मूर्तिध्यानसमन्वितम् । स्तोत्रं शृणु प्रवक्ष्यामि तव स्नेहाच्च नारद ।  
 ॥ १२ ॥ ब्रह्मनिष्ठाय देयं स्याददेयं यस्य कस्यचित् । आचम्य  
 नियतः पश्चादात्मध्यानपुरःसरम् ॥ १३ ॥ ओमित्यादौ विचिंत्याथ  
 व्योम ह्येमाब्जसंस्थितम् । धर्मकंदगतज्ञानमैश्वर्याष्टदलान्वितम् ॥ १४ ॥  
 वैराग्यकर्णिकासीनां प्रणवग्रहमध्यगाम् । ब्रह्मवेदिसमायुक्तां चैतन्य-  
 पुरमध्यगाम् ॥ १५ ॥ तत्त्वहंससमाकीर्णां शब्दपीठे सुसंस्थिताम् ।  
 नादबिंदुकलातीतां गोपुरैरुपशोभिताम् ॥ १६ ॥ विद्याविद्या-  
 मृतत्वादिप्रकारैरभिसंवृताम् । निगमार्गलसंछन्नां निर्गुणद्वार-  
 वाटिकाम् ॥ १७ ॥ चतुर्वर्गफलोपेतां महाकल्पवनैर्वृताम् ।  
 सांद्रानंदसुभासिंधुनिगमद्वारवाटिकाम् ॥ १८ ॥ ध्यानधारण-  
 योगादितृणगुल्मलतावृताम् । सदसच्चित्स्वरूपाख्यां मृगपक्षिसमा-  
 कुलाम् । विद्याविद्याविचारत्वाल्लोकाल्लोकाचलावृताम् ॥ १९ ॥  
 अविकारसमाश्लिष्टनिजध्यानगुणावृताम् । पंचीकरणपंचोत्थभूततत्त्व-  
 निवेदिताम् ॥ २० ॥ वेदोपनिषदर्थाल्ख्यदेवर्षिगणसेविताम् । इति-  
 हासग्रहगणैः सद्गुरैरभिवंदिताम् ॥ २१ ॥ गाथाप्यमरोभिर्यक्षैश्च  
 गणकिंनरसेविताम् । नारसिंहपुराणाख्यैः पुरुषैः कल्पचारणैः ॥ २२ ॥  
 कृतगानविनोदादिकथालापनतत्पराम् । तदित्यवाङ्मनोगम्यतेजोरूप-  
 धरां पराम् ॥ २३ ॥ जगतः प्रसवित्रीं तां सवितुः सृष्टिकारिणीम् ।  
 वरेण्यमित्यन्नमयीं पुरुषार्थफलप्रदाम् ॥ २४ ॥ अविद्यावर्णवज्र्यां  
 च तेजोवद्गर्भसंज्ञिकाम् । देवस्य सच्चिदानन्दपरब्रह्मरसात्मिकाम्  
 ॥ २५ ॥ धीमद्व्यहं स वै तद्वद्ब्रह्माद्वैतस्वरूपिणीम् । धियो यो नस्तु  
 सविता प्रचोदयादुपासिताम् ॥ २६ ॥ परोऽसौ सविता साक्षा-  
 देनोनिर्हरणाय च । परो रजस इत्यादि परं ब्रह्म सनातनम्  
 ॥ २७ ॥ आपो ज्योतिरिति द्वाभ्यां पांचभौतिकसंज्ञकम् । रसो-

ऽमृतं ब्रह्मपदस्तां नित्यां तपिनीं पराम् ॥ २८ ॥ भूर्भुवःसुवरित्वेतैर्नि-  
 गमत्वप्रकाशिकाम् । महर्जनस्तपःसत्यलोकोपरिसुसंस्थिताम् ॥ २९ ॥  
 तादृगस्था विराड्रूपकिरीटवरराजिताम् । व्योमकेशालकाकाशरहस्यं  
 प्रवदाम्यहम् ॥ ३० ॥ मेघभुकुटिकाक्रान्तविधिविष्णुशिवाधि-  
 ताम् । गुरुभार्गवकर्णातां सोमसूर्याग्निलोचनाम् ॥ ३१ ॥ इडा-  
 पिङ्गलसूक्ष्माभ्यां वायुनासापुटान्विताम् । संध्याद्विरोष्ठपुटितां  
 लसद्गर्भपूजिह्विकाम् ॥ ३२ ॥ संध्यासौ युग्मणोः कंठलसद्बाहु-  
 समन्विताम् । पर्जन्यहृदयासक्तवसुमुत्तनमंडलाम् ॥ ३३ ॥  
 आकाशोदरविब्रस्तनाभ्यवान्तरं दशकाम् । प्रजापत्याख्यजघनां  
 कटीन्द्राणीति संज्ञिकाम् ॥ ३४ ॥ ऊरु मलयमेरुभ्यां शोभमाना-  
 सुरद्विषम् । जानुनी जङ्घुकुशिकवैश्वदेवसदाभुजाम् ॥ ३५ ॥  
 अयनद्वयजंघाद्यसुराद्यपितृसंज्ञिकाम् । पदाग्नितखरोमाद्यभूतल-  
 द्रुमलान्विताम् ॥ ३६ ॥ ग्रहराश्यृक्षदेवर्षिभूर्ति च परसंज्ञिकाम् ।  
 तिथिमासतुर्वर्षाख्यसुकेतुनिमिषात्मिकाम् ॥ ३७ ॥ अहोरात्रार्ध-  
 मासाख्यां सूर्याचंद्रमसात्मिकाम् । मायाकल्पितवैचित्र्यसंख्या-  
 च्छादनसंवृताम् ॥ ३८ ॥ ज्वलत्कालानलप्रख्यां तडित्कोटि-  
 समप्रभाम् । कोटिसूर्यप्रतीकाशां चंद्रकोटिसुशीतलाम् ॥ ३९ ॥  
 सुधामंडलमध्यस्थां सान्द्रानंदामृतात्मिकाम् । प्रागतीतां मनो-  
 रम्यां वरदां वेदमातरम् ॥ ४० ॥ चराचरमयीं नित्यां  
 ब्रह्माक्षरसमन्विताम् । ध्यात्वा स्वात्मनि मेदेन ब्रह्मपंजरमारमेत्  
 ॥ ४१ ॥ पंजरस्य ऋषिश्चाहं छन्दो विकृतिरुच्यते । देवता च  
 परो हंसः परब्रह्माधिदेवता ॥ ४२ ॥ प्रणवो श्रीजशक्तिः स्यादो  
 कीलकमुदाहृतम् । तत्तत्त्वं धीमहि क्षेत्रं धियोऽब्धं यः परं पदम्  
 ॥ ४३ ॥ मंत्रमापो ज्योतिरिति योनिर्हंसः सर्ववक्त्रम् । विनि-

योगस्तु सिद्ध्यर्थं पुरुषार्थचतुष्टये ॥ ४४ ॥ ततस्तैरंगषट्कं  
 स्यात्तैरेव व्यापकत्रयम् । पूर्वोक्तदेवतां ध्यायेत् साकारगुणसंयुताम्  
 ॥ ४५ ॥ पंचवक्त्रां दशभुजां त्रिपंचनयनैर्युताम् । मुक्ताविद्रुम-  
 सौवर्णां सितशुभ्रसमाननाम् ॥ ४६ ॥ वाणीं परां रमां मायां  
 चामरैर्दर्पणैर्युताम् । षडंगदेवतामंत्रै रूपाद्यवयवात्मिकाम्  
 ॥ ४७ ॥ मृगेंद्रवृषपक्षींद्रमृगहंसासने स्थिताम् । अर्धेन्द्रबद्ध-  
 मुकुटकिरीटमणिकुंडलाम् ॥ ४८ ॥ रत्नतटंकमांगल्यपरप्रैवेय-  
 नूपुराम् । अंगुलीयककेयूरकंकणाद्यैरलंकृताम् ॥ ४९ ॥ दिव्य-  
 स्त्रग्वस्त्रसंछन्नरविमण्डलमध्यगाम् । वराभयाब्जयुगलां शंखचक्र-  
 गदांकुशान् ॥ ५० ॥ शुभ्रं कपालं दधतीं वहतीमक्षमालिकाम् ।  
 गायत्रीं वरदां देवीं सावित्रीं वेदमातरम् ॥ ५१ ॥ आदित्य-  
 पथगामिन्यां स्मरेद्ब्रह्मस्वरूपिणीम् । विचित्रमंत्रजननीं स्मरेद्विद्यां  
 सरस्वतीम् ॥ ५२ ॥ त्रिपदा ऋद्धायी पूर्वामुखी ब्रह्मास्त्र-  
 संज्ञिका । चतुर्विंशतितत्त्वाख्या पातु प्राचीं दिशं मम ॥ ५३ ॥  
 चतुष्पादयजुर्ब्रह्मदंडाख्या पातु दक्षिणाम् । षट्त्रिंशत्तत्त्वयुक्ता  
 सा पातु मे दक्षिणां दिशम् ॥ ५४ ॥ प्रत्यङ्मुखी पंचपदी  
 पंचाशत्तत्त्वरूपिणी । पातु प्रतीचीमनिशं सामब्रह्मशिरोकिता ।  
 ॥ ५५ ॥ सौम्या ब्रह्मस्वरूपाख्या साधर्वांगिरसात्मिका । उदीचीं  
 षट्पदा पातु चतुःषष्टिकलात्मिका ॥ ५६ ॥ पंचाशत्तत्त्वरचिता  
 भवपादा शताक्षरी । ज्योमाख्या पातु मे चोर्ध्वा दिशं वेदांग-  
 संस्थिता ॥ ५७ ॥ विद्युन्निभा ब्रह्मसंज्ञा मृगारूढा चतुर्भुजा ।  
 चापेषुचर्मासिधरा पातु मे पावकीं दिशम् ॥ ५८ ॥ ब्राह्मी  
 कुमारी गायत्री रक्तांगी हंसवाहिनी । विभ्रत्कमण्डल्वक्षस्त्रकु-  
 चान्मे पातु नैर्ऋतीम् ॥ ५९ ॥ चतुर्भुजा वेदमाता शुक्लांगी



वृषवाहिनी । वराभयकपालाक्षस्त्रिणी पातु वारुणीम् ॥ ६० ॥  
 श्यामा सरस्वती वृद्धा वैष्णवी गरुडासना । शंखाराजाभयकरा  
 पातु शैबीं दिशं मम ॥ ६१ ॥ चतुर्भुजा वेदमाता गौराङ्गी  
 सिंहबाहना । वराभयाक्षयुगलैर्भुजैः पात्वधरां दिशम् ॥ ६२ ॥  
 तत्तत्पार्श्वस्थिताः स्वस्वबाहनायुधभूषणाः । स्वस्वविभु स्थिताः  
 पातु ब्रह्मशक्त्यगदेवताः ॥ ६३ ॥ मंत्राधिदेवतारूपा मुद्राधिष्ठान-  
 देवता । व्यापकत्वेन पात्वस्मानापहृत्तलमस्तकी ॥ ६४ ॥ तत्पदं  
 मे शिरः पातु भालं मे सवितुः-पदम् । वरेण्यं मे दशौ पातु  
 श्रुतीर्भगः सदा मम ॥ ६५ ॥ घ्राणं देवस्य मे पातु पातु  
 धीमहि मे मुखम् । जिह्वां मम धियः पातु कंठं मे पातु यः-  
 पदम् ॥ ६६ ॥ नः-पदं पातु मे स्कंधौ भुजौ पातु प्रचोदयात् ।  
 करौ मे च परः पातु पादौ मे रजसेऽवतु ॥ ६७ ॥ असौ मे  
 हृदयं पातु मम मध्यं सदावतु । ॐ मे नाभिं सदा पातु कटिं  
 मे पातु मे सदा । जोमापः सक्थिनी पातु गुह्यं ज्योतिः सदा  
 मम ॥ ६८ ॥ ऊरू मम रसः पातु जानुनीं अमृतं मम । जंघे  
 ब्रह्मपदं पातु गुल्फौ मूः पातु मे सदा ॥ ६९ ॥ पादौ मम  
 सुवः पातु सुवः पात्वखिलं वपुः । रोमाणि मे महः पातु  
 रोमकं पातु मे जनः ॥ ७० ॥ प्राणांश्च धातुतत्त्वानि तदीशः  
 पातु मे तपः । सत्यं पातु ममायुषि हंसो बुद्धिं च पातु मे  
 ॥ ७१ ॥ शुचिपत्न्यं पातु मे शुक्रं वसुः पातु श्रियं मम । मतिं  
 पात्वन्तरिक्षं सद्भोता दानं च पातु मे ॥ ७२ ॥ वेदिपत्न्यं पातु  
 मे विद्यामतिथिः पातु मे गृहम् । धर्मं दुरोणसत् पातु नृपत् पातु  
 सुतान्मम ॥ ७३ ॥ वरसत् पातु मे भार्यां मृतसत् पातु मे सुतान् ।  
 व्योमसत् पातु मे बंधून् आतृनबाध पातु मे ॥ ७४ ॥ पशून्मे

पातु गोजाश्च ऋतजाः पातु मे भवम् । सर्वं मे अद्रिजाः पातु  
 यानं मे पात्वृतं सदा ॥ ७५ ॥ अनुक्तमथ यत्स्थानं शरीरे-  
 ऽन्तर्बहिश्च यत् । तत्सर्वं पातु मे नित्यं हंसः सोऽहमहर्निशम् ॥ ७६ ॥  
 इदं तु कथितं सम्यङ् मया ते ब्रह्मपंजरम् । संध्ययोः प्रत्यहं  
 भक्त्या जपकाले विशेषतः ॥ ७७ ॥ धारयेद्विजवर्यो यः  
 श्रावयेद्वा समाहितः । स विष्णुः स शिवः सोऽहं सोऽक्षरः स  
 विराट् स्वराट् ॥ ७८ ॥ इति वसिष्ठसहितायां ब्रह्मनारदसंवादे  
 सावित्रीपंजरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १४५. गायत्रीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीनारद उवाच ॥ भक्तानुकम्पिन् सर्वश-  
 हृदयं पापनाशनम् । गायत्र्याः कथितं तस्माद्गायत्र्याः स्तोत्रमीरय  
 ॥ १ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ आदिशक्ते जगन्मातर्भक्तानुग्रह-  
 कारिणि । सर्वत्रव्यापिकेऽनन्ते श्रीसन्ध्ये ते नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥  
 त्वमेव सन्ध्या गायत्री सावित्री च सरस्वती । ब्राह्मणी वैष्णवी  
 रौद्री रक्तश्रेता सितेतरा ॥ ३ ॥ प्रातर्बाला च मध्याह्ने यौवनस्था  
 भवेत्पुनः । वृद्धा सायं भगवती चिन्त्यते मुनिभिः सह ॥ ४ ॥  
 हंसस्था गरुडारूढा तथा वृषभवाहिनी । ऋग्वेदाध्यायिनी भूमौ  
 दृश्यते या तपस्विभिः ॥ ५ ॥ यजुर्वेदं पठन्ती च अन्तरिक्षे  
 विराजते । या सामगापि सर्वेषु आन्यमाणा तथा भुवि ॥ ६ ॥  
 रुद्रलोकं गता त्वं हि विष्णुलोकनिवासिनी । त्वमेव ब्राह्मणो लोके-  
 ऽमर्त्यानुग्रहकारिणी ॥ ७ ॥ सप्तर्षिप्रीतिजननी माया बहुवरप्रदा ।  
 शिवयोः करनेत्रोत्था ह्यश्वस्वेदसमुद्भवा ॥ ८ ॥ आनन्दजननी  
 दुर्गा दशधा परिपठ्यते । वरेण्या वरदा चैव वरिष्ठा वरवर्णिनी  
 ॥ ९ ॥ गरिष्ठा च वराही च वरारोहा च सप्तसी । नीलगङ्गा तथा

सन्ध्या सर्वदा भोगमोक्षदा ॥ १० ॥ भागीरथी मर्त्यलोके पाताले  
 भोगवत्यपि । त्रैलोक्यवाहिनी देवी स्थानत्रयनिवासिनी ॥ ११ ॥  
 भूर्लोकस्था त्वमेवासि भरित्री लोकधारिणी । भुवर्लोकं वायुशक्तिः  
 स्वर्लोकं तेजसां निधिः ॥ १२ ॥ महर्लोकं महासिद्धिर्जनलोकेऽज-  
 नेत्यपि । तपस्विनी तपोलोकं सत्यलोके तु सत्यवाक् ॥ १३ ॥  
 कमला विष्णुलोके च गायत्री ब्रह्मलोकगा । रुद्रलोके स्थिता गौरी  
 हरार्धाङ्गनिवासिनी ॥ १४ ॥ बहमो महतश्चैव प्रकृतिस्त्वं हि  
 गीयते । साम्यावस्थात्मिका त्वं हि शबलब्रह्मरूपिणी ॥ १५ ॥  
 ततः परा पराशक्तिः परमा त्वं हि गीयसे । इच्छाशक्तिः क्रिया  
 शक्तिर्ज्ञानशक्तिश्चिशक्तिदा ॥ १६ ॥ गङ्गा च यमुना चैव विपाशा  
 च सरस्वती । शरयू रेविका सिन्धुर्नर्मदैरावती तथा ॥ १७ ॥  
 गोदावरी शतद्रुश्च कावेरी देवलोकगा । कौशिकी चन्द्रमा चैव  
 वितस्ता च सरस्वती ॥ १८ ॥ गण्डकी तापिनी तोया गोमती  
 वेन्नवत्यपि । इडा च पिङ्गला चैव सुषुम्णा च तृतीयका ॥ १९ ॥  
 गान्धारी हस्तजिह्वा च पूषाऽपूषा तथैव च । जलम्बुषा कुहूश्चैव  
 शङ्खिनी प्राणवाहिनी ॥ २० ॥ नाडी च त्वं शरीरस्था गीयते  
 प्राक्तनैर्बुधैः । हृत्पद्मस्था प्राणशक्तिः कण्ठस्था स्वप्ननायिका  
 ॥ २१ ॥ तालुस्था त्वं सदाधारा बिन्दुस्था बिन्दुमालिनी । मूले  
 तु कुण्डलीशक्तिर्व्यापिनी केसमूलगा ॥ २२ ॥ शिखाग्रस्था सना  
 त्वं हि शिखाग्रे तु मनोन्मनी । किमन्यद्बहुनोक्तेन यत्किञ्चिज्जागती-  
 त्रये ॥ २३ ॥ तत्सर्वं त्वं महादेवि श्रिये सन्ध्ये नमोऽस्तु ते ।  
 इतीदं कीर्तितं स्तोत्रं सन्ध्यायां बहुपुण्यदम् ॥ २४ ॥ महापाप-  
 प्रक्षमनं महासिद्धिविधायकम् । य इदं कीर्तयेत्स्तोत्रं सन्ध्याकाले  
 समाहितः ॥ २५ ॥ अपुत्रः प्राप्तुयात्पुत्रं धनार्थं धनमाप्नुयात् ।

सर्वतीर्थतपोदानयज्ञयोगफलं लभेत् ॥ २६ ॥ भोगान् भुक्त्वा  
चिरं कालमन्ते मोक्षमवामुयात् । तपस्विभिः कृतं स्तोत्रं ज्ञानकाले  
तु यः पठेत् ॥ २७ ॥ यत्र कुत्र जले मग्नः सन्ध्यामज्जनजं फलम् ।  
लभते नात्र सन्देहः सत्यं सत्यं तु नारद ॥ २८ ॥ शृणुयाद्योऽपि  
तद्भक्त्या स तु पापात्प्रमुच्यते । पीयूषसदृशं वाक्यं सन्ध्योक्तं  
नारदेरितम् ॥ २९ ॥ इति भगवतोक्तं श्रीगायत्रीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १४६. गायत्रीनामाष्टाविंशतिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्मोवाच ॥ शताक्षरात्मकं देव्या नामाष्टाविंशतिः  
शतम् । शृणु वक्ष्यामि तत्सर्वमतिगुह्यं सनातनम् ॥ १ ॥  
भूतिदा भुवना वाणी वसुधा सुमना मही । हरिणी जननी नंदा  
सविसर्गा तपस्विनी ॥ २ ॥ पयस्विनी सती त्यागा चैदवी  
सत्यवीरसा । विश्वा तुर्या परा रेच्या निर्घृणी यमिनी भवा  
॥ ३ ॥ गोवेद्या च जरिष्ठा च स्कंदिनी धीर्मतिर्हिमा । भीषणा  
योगिनी पक्षी नदी प्रज्ञा च चोदिनी ॥ ४ ॥ धनिनी यामिनी  
पद्मा रोहिणी रमणी ऋषिः । सेनामुखी सामयी च बकुला  
दोषवर्जिता ॥ ५ ॥ सर्वकामदुघा सोमोद्भवाऽहंकारवर्जिता ।  
द्विपदा च चतुष्पादा त्रिपदा चैव षट्पदा ॥ ६ ॥ अष्टापदी  
नवपदी सा सहस्राक्षरात्मिका । इदं यः परमं गुह्यं सावित्रीमंत्र-  
गर्भितम् ॥ ७ ॥ नामाष्टाविंशतिशतं शृणुयाच्छ्रावयेत्पठेत् ।  
मर्त्यानाममृतत्वाय भीतानामभयाय च ॥ ८ ॥ मोक्षाय च  
सुमुख्यै श्रीकामान् प्राप्तये श्रियः । विजयाय धुयुत्सूनां व्याधि-  
तानामरोगकृत् ॥ ९ ॥ वश्याय वश्यकामानां विद्यायै वेदकामि-  
नाम् । द्रविणाय दरिद्राणां पापिनां पापशान्तये ॥ १० ॥ वादिनां  
वादविजये कवीनां कविताप्रदम् । अन्नाय क्षुधितानां च स्वर्गाय

नाकमिच्छताम् ॥ ११ ॥ पशुभ्यः पशुकामानां पुत्रेभ्यः पुत्रकांक्षि-  
णाम् । क्लेशिनां शोकशान्त्यर्थं नृणां सशुभयाय च ॥ १२ ॥  
राजवश्याय द्रष्टव्यं परमं नृपसेविनाम् । भक्त्यर्थं विष्णुभक्तानां  
विष्णौ सर्वातरात्मनि ॥ १३ ॥ नायकं विधिसृष्टानां शांतये  
भवति ध्रुवम् । निःस्पृहाणां नृणां मुक्तिः शाश्वती भवति ध्रुवम्  
॥ १४ ॥ जप्यं त्रिवर्गसंयुक्तं गृहस्थेन विशेषतः । मुनीनां ज्ञान-  
सिद्ध्यर्थं यतीनां मोक्षसिद्ध्ये ॥ १५ ॥ उद्यतं चंद्रकिरणमुपस्थाय  
कृताञ्जलिः । कानने वा स्वभवने तिष्ठन् शुद्धो जपेदिदम् ॥ १६ ॥  
सर्वाङ्कामानवाप्नोति तथैव शिवसंनिधौ । मम प्रीतिकरं दिव्यं  
विष्णुभक्तिविवर्धनम् ॥ १७ ॥ ज्वरार्तानां कुशाग्रेण मार्जयेत्कुष्ठ-  
रोगिणाम् । अङ्गमङ्गं यथालिङ्गं कवचं तु साधकः ॥ १८ ॥  
मण्डलेन विशुष्येत सर्वरोगैर्न संशयः । स्मृतप्रजा च या नारी  
जन्मवंध्या तथैव च ॥ १९ ॥ कन्यादिवंध्या या नारी तासामङ्गं  
प्रमार्जयेत् । पुत्रा नरोगिणस्तास्तु लभन्ते दीर्घजीविनः ॥ २० ॥  
तास्ताः संवत्सरादवाक् गर्भं तु दधिरे पुनः । पतिविद्वेदिणी वा  
स्त्री अङ्गं तस्याः प्रमार्जयेत् ॥ २१ ॥ तमेव भजते सा स्त्री पतिं  
कामवशं नयेत् । जन्मार्थे राजवश्याय चित्तमूले स्वरूपभाक्  
॥ २२ ॥ पालाशमूले विद्यार्थी तेजसोऽभिमुखो रवौ । कन्यार्थी  
चण्डिकागोहे जपेच्छशुभयाय च ॥ २३ ॥ श्रीकामो विष्णुगोहे  
च उद्याने श्रीवैशीभवेत् । आरोग्यार्थं स्वगोहे च मोक्षार्थी  
शैलमस्तके ॥ २४ ॥ सर्वकामो विष्णुगोहे मोक्षार्थी यत्र कुत्रचित् ।  
जपारंभे तु हृदयं जपांते कवचं पठेत् ॥ २५ ॥ किमत्र बहुनो-  
क्तेन शृणु नारद तत्त्वतः । यं यं चिंतयते नित्यं तं तं प्राप्नोति  
निश्चितम् ॥ २६ ॥ इति श्रीमद्भक्तिसिद्धसंहितायां ब्रह्मनारद-  
संवादे गायत्रीनामाष्टाविंशतिस्तोत्रं समाप्तम् ॥

## १४७. गायत्रीहृदयस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमस्कृत्य भगवान् याज्ञवल्क्यः स्वयं परि-  
 पृच्छति त्वं ब्रूहि भगवन् गायत्र्या उत्पत्तिं श्रोतुमिच्छामि ॥ १ ॥  
 ब्रह्मोवाच ॥ प्रणवेन व्याहृतयः प्रवर्तते, तमस्तु परं ज्योतिष्कः  
 पुरुषः स्वयम् । भूर्विष्णुरिति ह ताः स्वांगुल्या मथेत् ॥ २ ॥  
 मथ्यमानात्फेनो भवति, फेनाहुहुदो भवति, बुहुदादंडं भवति,  
 अंडवानात्मा भवति, आत्मन, आकाशो भवति, आकाशाद्वायुर्भवति,  
 वायोरग्निर्भवति, अग्नेरौकारो भवति, ॐकाराद्व्याहृतिर्भवति, व्याहृत्या  
 गायत्री भवति, गायत्र्याः सावित्री भवति, सावित्र्याः सरस्वती  
 भवति, सरस्वत्या वेदा भवन्ति, वेदेभ्यो ब्रह्मा भवति, ब्रह्मणो लोका  
 भवन्ति, तस्माल्लोकाः प्रवर्तते, चत्वारो वेदाः सांगाः सोपनिषदः  
 सेतिहासास्ते सर्वे गायत्र्याः प्रवर्तन्ते, यथाऽग्निर्देवानां ब्राह्मणो  
 मनुष्याणां मेरुः शिखरिणां गंगा नदीनां वसंत ऋतूनां ब्रह्मा  
 प्रजापतीनामेवासौ मुख्यो गायत्र्या गायत्री छंदो भवति ॥ ३ ॥ किं  
 भूः किं भुवः किं स्वः किं महः किं जनः किं तपः किं सत्यं किं तत्  
 किं सवितुः किं वरेण्यं किं भर्गः किं देवस्य किं धीमहि किं धियः  
 किं यः किं नः किं प्रचोदयात् ॥ ४ ॥ भूरिति भूर्लोकः भुव इत्यंत-  
 रिक्षलोकः । स्वरिति स्वर्लोको मह इति महर्लोको जन इति  
 जनो लोकस्तप इति तपोलोकः सत्यमिति सत्यलोकः । भूर्भुवः-  
 स्वरोमिति त्रैलोक्यम् ॥ ५ ॥ तदसौ तेजो यत्तेजसोऽग्निर्देवता सवितु-  
 रित्यादित्यस्य वरेण्यमित्यन्वम् । अन्नमेव प्रजापतिर्भर्ग इत्यापः ।  
 आपो वै भर्ग एतावत्सर्वा देवता देवस्येन्द्रो वै देवयद्विं तर्दिन्द्र-  
 स्मात्सर्वकृत् पुरुषो नाम विष्णुः ॥ ६ ॥ धीमहि किमध्यात्मं तत्परमं  
 पदमित्यध्यात्मं यो न इति पृथिवी वै यो नः प्रचोदयात् काम

इमंस्तोत्रान् प्रख्यापयन् यो नृशंस्योऽस्तोत्रस्तत्परमो धर्म इत्येषा  
गायत्री किंगोत्रा कल्पक्षरा कतिपदा कतिकुक्षिः कतिशीर्षा च ॥ ७ ॥  
सांख्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्विंशत्यक्षरा त्रिपदा षट्कुक्षिः  
सावित्री कशाख्यः पादा भवन्ति ॥ ८ ॥ कात्याः कुक्षिः कानि पंच  
शीर्षाणि । ऋग्वेदोऽस्याः प्रथमः पादो भवति, यजुर्वेदो द्वितीयः  
सामवेदस्तृतीयः पूर्वा द्विक् प्रथमा कुक्षिर्भवति, दक्षिणा द्वितीया,  
पश्चिमा तृतीया, उदीची चतुर्था, ऊर्ध्वा पंचमी, अधरा षष्ठी कुक्षिः ।  
व्याकरणमत्याः प्रथमं शीर्षं भवति, शिक्षा द्वितीयं कल्पस्तृतीयं  
निरुक्तं, चतुर्थं ज्योतिषामयनं पंचमम् ॥ ९ ॥ किं लक्षणं किमु चेष्टितं  
किमुदाहृतं किमक्षरं दैवत्यम् ॥ १० ॥ लक्षणं मीमांसा अथर्ववेदो  
विचेष्टितम् । ऋदोषिधिरित्युदाहृतम् ॥ ११ ॥ को वर्णः कः स्वरः  
श्वेतो वर्णः षट् स्वराणि इमान्यक्षराणि दैवतानि भवन्ति, पूर्वा भवति,  
गायत्री मध्यमा, सावित्री पश्चिमा, संध्या सरस्वती ॥ १२ ॥ प्रातः-  
संध्या रक्ता रक्तपद्मासनस्था रक्तांबरधरा रक्तवर्णा रक्तगंधानुलेपना  
चतुर्मुखा अष्टभुजा त्रिनेत्रा दंडाक्षमालाकमंडलुसुवधधारिणी  
सर्वाभरणभूषिता कौमारी ब्राह्मी हंसवाहिनी ऋग्वेदसंहिता  
ब्रह्मदैवत्या त्रिपदा गायत्री षट्कुक्षिः पंचशीर्षा अग्निमुखा  
रुद्रशिखिष्णुहृदया ब्रह्मकवचा सांख्यायनसगोत्रा भूर्लोकव्यापिनी  
अग्निस्तत्त्वम् उदात्तानुदात्तस्वरितस्वरमकार, आत्मज्ञाने विनियोगः ।  
इत्येषा गायत्री ॥ १३ ॥ मध्याह्नसंध्या श्वेता श्वेतपद्मासनस्था श्वेतांबर-  
धरा श्वेतगंधानुलेपना पंचमुखी दशभुजा त्रिनेत्रा शुलाक्षमाला  
कमंडलुकपालधारिणी सर्वाभरणभूषिता सावित्री युवती माहेश्वरी  
वृषभवाहिनी यजुर्वेदसंहिता रुद्रदैवत्या त्रिपदा सावित्री षट्कुक्षिः  
पंचशीर्षा अग्निमुखा रुद्रशिखा ब्रह्मकवचा भारद्वाजसगोत्रा

भुवर्लोकव्यापिनी वायुस्तत्त्वम्, उदात्तानुदात्तस्वरितस्वरमकारः  
 श्वेतवर्ण आत्मज्ञाने विनियोगः । इत्येषा सावित्री ॥ १४ ॥ सायंसंध्या  
 कृष्णा कृष्णपद्मासनस्था कृष्णांबरधरा कृष्णवर्णा कृष्णगंधानु-  
 लेपना कृष्णमाल्यांबरधरा एकमुखी चतुर्भुजा द्विनेत्रा शंखचक्र-  
 गदापद्मधारिणी सर्वाभरणभूषिता सरस्वती वृद्धा वैष्णवी  
 गरुडवाहिनी सामवेदसंहिता विष्णुदैवत्या त्रिपदा षट्कुक्षिः  
 पंचशीर्षा अभिमुखा विष्णुहृदया रुद्रशिखा ब्रह्मकवचा काश्यप-  
 सगोत्रा स्वर्लोकव्यापिनी सूर्यस्तत्त्वमुदात्तानुदात्तस्वरितमकारः कृष्ण-  
 वर्णा मोक्षज्ञाने विनियोगः । इत्येषा सरस्वती ॥ १५ ॥ रक्ता गायत्री  
 श्वेता सावित्री कृष्णवर्णा सरस्वती । प्रणवो नित्ययुक्तश्च व्याह-  
 तीषु च सप्तसु ॥ १६ ॥ सर्वेषामेव पापानां संकरे समुपस्थिते । दश  
 शतं समन्यर्थं गायत्री पावनी महत् ॥ १७ ॥ प्रह्लादोऽत्रिर्वसिष्ठश्च  
 शुक्रः कण्वः पराशरः । विश्वामित्रो महातेजाः कपिलः शौतको  
 महान् ॥ १८ ॥ याज्ञवल्क्यो भरद्वाजो जमदग्निस्तपो निधिः । गौतमो  
 मुद्गलः श्रेष्ठो वेदव्यासश्च लोमशः ॥ १९ ॥ अगस्त्यः कौशिको वत्सः  
 पुलस्त्यो मांडुकस्तथा । दुर्वासास्तपसा श्रेष्ठो नारदः कश्यपस्तथा ॥ २० ॥  
 उक्तात्युक्ता तथा मध्या प्रतिष्ठान्यासु पूर्विका । गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्  
 च बृहती पंक्तिरेव च ॥ २१ ॥ त्रिष्टुप् च जगती चैव तथातिजगती  
 मता । शक्नी सातिपूर्वा यादृष्ट्यल्यष्टी तथैव च । द्युतिश्चातिद्युतिश्चैव  
 प्रकृतिः कृतिराकृतिः ॥ २२ ॥ विकृतिः संकृतिश्चैव तथातिविकृति-  
 रुकृतिः । इत्येताश्छंदसां संज्ञाः क्रमशो वच्मि सांप्रतम् ॥ २३ ॥  
 भूरिति छंदो भुव इति छंदः स्वरिति छंदो भूभुवःस्वरोमिति देवी  
 गायत्री इत्येतानि छंदांसि प्रथममाप्तेयं द्वितीयं प्राजापत्यं तृतीयं  
 सौम्यं चतुर्थमैशानं पंचममादित्यं षष्ठं बार्हस्पत्यं सप्तमं पितृदैवत्यं



मष्टमं भगदैवत्यं नवममार्यमं दशमं सावित्रमेकादशं त्वाहं द्वादशं  
 पौष्णं त्रयोदशमैन्द्राग्रं चतुर्दशं वायव्यं पंचदशं वामदैवत्यं  
 षोडशं मैत्रावरुणं सप्तदशमांगिरसमष्टादशं वैश्वदेव्यमेकोनविंशं  
 वैष्णवं विंशं वासवमेकविंशं रौद्रं द्वाविंशमाग्निं त्रयोविंशं ब्राह्मं  
 चतुर्विंशं सावित्रम् ॥२४॥ दीर्घान्स्वरेण संयुक्तान् बिंदुनादसमन्विता-  
 न् । व्यापकान्विन्यसेत्पञ्चादशपंचत्यक्षराणि च । द्रुपुंस इति प्रत्यक्ष-  
 बीजानि । प्रह्लादिनी प्रभा सत्या बिम्बा भद्रा बिलासिनि । प्रभावती  
 जया कान्ता शान्ता पद्मा सरस्वती ॥२५॥ विद्रुमस्फटिकाकारं पद्मराग-  
 समप्रभम् । इन्द्रनीलमणिप्रख्यं मौक्तिकं कुंकुमप्रभम् ॥२६॥ अञ्जनां  
 च गांगेयं वैडूर्यं चंद्रसन्निभम् । हारिद्रं कृष्णद्रुग्धामं रविकांति-  
 समं भवम् ॥२७॥ शुक्रपिच्छलमाकारं क्रमेण परिकल्पयेत् । पृथिव्या-  
 पस्तथा तेजो वायुराकाश एव च ॥ २८ ॥ गंधो रसश्च रूपं च शब्दः  
 स्पर्शस्तथैव च ॥२९॥ घ्राणं जिह्वा च चक्षुश्च त्वक् श्रोत्रं च तथापरम् ।  
 उपस्थपायुपादादि पाणिर्वागपि च कर्मात् ॥३०॥ मनो बुद्धिरहंकारम-  
 व्यक्तं च यथाक्रमम् । सुमुखं संपुटं चैव वितर्तं विस्तृतं तथा ।  
 एकमुखं च द्विमुखं त्रिमुखं च चतुर्मुखम् ॥ ३१ ॥ पंचमुखं षण्मुखं  
 चाष्टमुखं चैव व्यापकम् । अजलीकं ततः प्रोक्तं मुद्रितं तु  
 त्रयोदशम् ॥३२॥ शकटं यमपाशं च ग्रथितं संमुखोन्मुखम् । प्रलंबं  
 मुष्टिकं चैव मत्स्यः कूर्मो वराहकम् ॥३३॥ सिंहाक्रांतं महाक्रांतं  
 मुद्गरं पल्लवं तथा । एता मुद्राश्चतुर्विंशश्चायम्बाः सुप्रतिष्ठिताः ॥३४॥  
 ॐ मूर्ध्नि संवाते ब्रह्मा बिष्णुर्ललाटे रुद्रो भ्रमण्ये चक्षुषोऽब्जं द्रा-  
 दित्यौ कर्णयोः शुक्रवृहस्पती नासिके वायुदैवत्यं प्रभातं दोषा जमे  
 संध्ये मुखमभिर्जिह्वा सरस्वती ग्रीवा स्वाध्यायाः स्तनयोर्वसवः  
 बाह्वोर्मस्तः हृदयं पर्जन्यमाकाशमपरं नाभिरंतरिक्षं कथिरिन्द्रियाणि

जघनं प्राजापत्यं कैलासमलयौ ऊरु विश्वेदेवा जानुभ्यां जान्वोः  
 कुशिकौ जंघयोऽर्यनद्वयं सुराः पितरः पादौ पृथिवी वनस्पतिर्गुल्फौ  
 रोमाणि मुहूर्तास्ते विग्रहाः केतुमासा ऋतवः संध्याकालत्रयमाच्छादनं  
 संवत्सरो निमिषः अहोरात्रावादित्यचंद्रमसौ सहस्रपरमां देवीं शत-  
 मभ्यां दशापराम् । सहस्रनेत्रीं देवीं गायत्रीं शरणमहं प्रपद्ये  
 ॥ ३५ ॥ तत्सवितुर्वरेण्यं नमः तत्प्रातरादित्याय नमः । सायम-  
 धीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति ॥ ३६ ॥ प्रातरधीयानो रात्रिकृतं  
 पापं नाशयति । तत्सायंप्रातः प्रयुंजानोऽपापो भवति ॥ य इदं  
 गायत्रीहृदयं ब्राह्मणः प्रयतः पठेत् चत्वारो वेदा अधीता भवन्ति ।  
 सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति सर्वैर्देवैर्ज्ञातो भवति । सर्वप्रत्यूहात्पूतो  
 भवति ॥ ३७ ॥ अपेयपानात्पूतो भवति ॥ ३८ ॥ अभक्ष्यभक्षणा-  
 त्पूतो भवति ॥ अलेह्यलेहनात्पूतो भवति ॥ अचोष्यचोषणात्पूतो  
 भवति ॥ सुरापानात्पूतो भवति ॥ ३९ ॥ सुवर्णस्तेयात्पूतो  
 भवति ॥ पंक्तिभेदनात्पूतो भवति ॥ पतितसंभाषणात्पूतो भवति ॥  
 अनृतवचनात्पूतो भवति ॥ गुरुतल्पगमनात्पूतो भवति ॥ अगम्या-  
 गमनात्पूतो भवति ॥ वृषलीगमनात्पूतो भवति ॥ ४० ॥ ब्रह्महत्यायाः  
 पूतो भवति ॥ भ्रूणहत्यायाः पूतो भवति ॥ वीरहत्यायाः पूतो  
 भवति ॥ अब्रह्मचारी सुब्रह्मचारी भवति ॥ ४१ ॥ अनेन हृदये-  
 नाधीतेन ऋतुशतेनेष्टं भवति । षष्टिसहस्रं गायत्री जप्ता भवति ॥  
 अष्टौ ब्राह्मणान्प्राहृयेदर्थसिद्धिर्भवति । य इदं गायत्रीहृदयं  
 ब्राह्मणः प्रयतः पठेत् ॥ स सर्वपापैः प्रमुच्यते ब्रह्मलोके महीयते  
 ब्रह्मलोके महीयते ॥ ४२ ॥ इति गायत्रीहृदयस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

१४८. गायत्रीस्तवराजः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीगायत्रीस्तवराजस्तोत्रमंत्रस्य  
 विश्वामित्र ऋषिः, सकलजननी चतुष्पदा गायत्री, परमात्मा देवता,

सर्वोत्कृष्टपरं धाम प्रथमपादो बीजं, द्वितीयः शक्तिः, तृतीयः  
 कीलकं, दक्षप्रणवसंयुक्ता सध्याहृतिका तुर्यपादसहिता व्यापकं,  
 मम धर्मार्थकाममोक्षार्थे जपे विनियोगः ॥ अथ न्यासान्कुर्यात् ॥  
 अथ ध्यानम् ॥ गायत्रीं वेदवात्रीं क्षतमलफलदां वेदशास्त्रैकवेद्यां  
 विच्छर्त्ति ब्रह्मविद्यां परमशिवपदां श्रीपदं वै करोति । सर्वोत्कृष्टं  
 पदं तत्सवितुरनुपदांते वरेण्यं शरण्यं भर्गो देवस्य धीमहिभि-  
 र्धधति धियो यो नः प्रचोदयादित्यौर्वतेजः ॥ १ ॥ साम्राज्यबीजं  
 प्रणवत्रिपादं सध्यापसव्यं प्रजपेत्सहस्रकम् । संपूर्णकामं प्रणवं  
 विभूतिं तथा भवेद्वाक्यविचित्रवाणी ॥ २ ॥ शुभं शिवं शोभन-  
 मस्तु मह्यं सौभाग्यभोगोत्सवमस्तु नित्यम् । प्रकाशविद्यात्रयशास्त्र-  
 सर्वं भजेन्महामन्त्रफलं प्रिये वै ॥ ३ ॥ ब्रह्मास्त्रं ब्रह्मदंडं शिरसि  
 शिखिमहद्ब्रह्मशीर्षं नमोन्ते सूक्तं पारायणोक्तं प्रणवमथ महावाक्य-  
 सिद्धांतमूलम् । तुर्यं त्रीणि द्वितीयं प्रथममनुमहावेदवेदांतसूक्तं  
 नित्यं स्मृत्यानुसारं नियमितचरितं मूलमंत्रं नमोन्तम् ॥ ४ ॥  
 अस्त्रं शस्त्रहतं त्वघोरसहितं दंडेन वाजीहतं चादित्यादिहतं  
 शिरोन्तसहितं पापक्षयार्थं परम् । तुर्यात्यादिविलोममंत्रपठनं  
 बीजं शिखांतोर्ध्वकं नित्यं कालनियम्यविप्रविदुषां किं दुष्कृतं  
 भूसुरान् ॥ ५ ॥ नित्यं मुक्तिप्रदं नियम्य पवनं निर्घोषशक्तित्रयं  
 सम्यग्ज्ञानगुरूपदेशविधिवद्देवीं शिखांतामपि । षष्ठ्यैकोत्तरसंख्य-  
 यानुमतसौषुन्नादिमार्गत्रयीं ध्यायेद्विषयसमस्तवेदजननीं देवीं  
 त्रिसंध्यामयीम् ॥ ६ ॥ गायत्रीं सकलागमार्थविदुषां सौरस्य  
 बीजेश्वरीं सर्वाज्ञायसमस्तमंत्रजननीं सर्वज्ञधामेश्वरीम् । ब्रह्मादित्रय-  
 संपुटार्थकरणीं संसारपारायणीं संध्यां सर्वसमानतंत्रपरया ब्रह्मानु-  
 संधायिनीम् ॥ ७ ॥ एकद्वित्रिषतुःसमानगणनावर्णाष्टकं पादयोः

पापादौ प्रणवादिमंत्रपठने मन्त्रत्रयीसंपुटाम् । संध्यायां द्विपदं  
 पठेत्परतरं सायं तुरीयं युतं नित्यानित्यमनंतकोटिफलदं प्राप्तं नम-  
 स्कुर्महे ॥ ८ ॥ ओजोऽसीति सहोऽस्यहो बलमसि आजोऽसि  
 तेजस्विनी वर्षस्वी सविताभिसोमममृतं रूपं परं धीमहि । देवानां  
 द्विजवर्यतां मुनिगणे मुक्त्यर्थिनां शान्तिनामोमित्येकमृचं पठति  
 यमिनो यं यं स्मरेत्प्रामुष्यात् ॥ ९ ॥ ओमित्येकमजस्वरूपममलं  
 तत्सप्तधा भाजितं तारं तंत्रसमन्वितं परतरे पादत्रयं गर्भितम् ।  
 आपोज्योतिरसोऽमृतं जनमहः सत्यं तपः स्वर्भुवर्भूयोभूय नमामि  
 भूर्भुवःस्वरोमेतैर्महामंत्रकम् ॥ १० ॥ आदौ बिंदुमनुस्मरन् परतरे  
 बाला त्रिवर्णोच्चरन् व्याहृत्यादिसर्बिंदुयुक्तत्रिपदातारत्रयं तुर्यकम् ।  
 आरोहादवरोहतः क्रमगता श्रीकुंडलीर्था स्थिता देवी मानसपंकजे  
 त्रिनयना पंचानना पातु माम् ॥ ११ ॥ सर्वे सर्ववशे समस्तसमर्थे  
 सत्यात्मिके सार्विके सावित्रीसवितात्मके शशियुते सांख्यायनी-  
 गोत्रजे । संध्यात्रीण्युपकल्प्य संग्रहविधिः संध्याभिधानात्मके  
 गायत्रीप्रणवादिमंत्रगुरुणा संप्राप्य तस्मै नमः ॥ १२ ॥ क्षेमं दिव्य-  
 मनोरथाः परतरे चेतः समाधीयतां ज्ञानं नित्यवरेण्यमेतदमलं  
 देवस्य भर्गो धियम् । मोक्षश्रीर्विजयार्थिनोऽथ सवितुः श्रेष्ठं  
 विधिस्तत्पदं प्रज्ञा मेघप्रचोदयात्प्रतिदिनं यो नः पदं पातु माम्  
 ॥ १३ ॥ सत्यं तत्सवितुर्वरेण्यविरलं विश्वादिमायात्मकं सर्वाद्यं  
 प्रतिपादपादरमया तारं तथा मन्मथम् । तुर्यान्यत्रितयं द्वितीय-  
 मपरं संयोगसव्याहृतिं सर्वान्नायमनोमयीं मनसिजां ध्यायासि  
 देवीं पराम् ॥ १४ ॥ आदौ गायत्रिमंत्रे गुरुकृतनियमं धर्मकर्मानु-  
 कूलं सर्वाद्यं सारभूतं सकलमनुमयं देवतानामगम्यम् । देवानां  
 पूर्वदेवं द्विजकुलमुनिभिः सिद्धविद्याधराद्यैः को वा वक्तुं समर्थ-

स्तवमनुमहिमाबीजराजादिमूलम् ॥ १५ ॥ गायत्रीं त्रिपदां  
 त्रिबीजसहितां द्विव्याहृतिं त्रैपदां त्रिजह्वात्रिगुणां त्रिकालनियमां  
 वेदत्रयीं तां पराम् । सांख्यादित्रयरूपिणीं त्रिनयनां मातृत्रयीं  
 तत्परां त्रैलोक्यत्रिदशत्रिकोटिसहितां संख्यां त्रयीं तां नुमः  
 ॥ १६ ॥ ओमित्येतन्निमात्रात्रिभुवनकरणं त्रिस्वरं वह्निरूपं त्रीणि  
 त्रीणि त्रिपादं त्रिगुणगुणमयं त्रैपुरातं त्रिसूक्तम् । तत्त्वानां पूर्वशक्तिं  
 त्रितयगुरुपदं पीठयंत्रात्मकं तं तस्मादेतत् त्रिपादं त्रिपदमनुसरं  
 त्राहि मां भो नमस्ते ॥ १७ ॥ स्वस्ति श्रद्धातिमेधा मधुमतिमधुरः  
 संशयः प्रज्ञांतिविद्या बुद्धिर्बलं श्रीरतनुधनपतिः सौम्यवाक्यानु-  
 वृत्तिः । मेधा प्रज्ञा प्रतिष्ठा मृदुमतिमधुरापूर्णविद्याप्रपूर्णं प्राप्तं  
 प्रत्यूषचिंत्यं प्रणवपरवशात्प्राणिनां नित्यकर्म ॥ १८ ॥ पंचाश-  
 द्दूर्णमप्ये प्रणवपरयुते मंत्रमाद्यं नमोन्तं सर्वं सव्यापसम्यं शत-  
 गुणमभितो वर्म ह्यष्टोत्तरं ते । एवं नित्यं प्रजप्तं त्रिभुवनसहितं  
 तुर्यमंतं त्रिपादं ज्ञानं विज्ञानगम्यं गगनसुसहस्रं ध्यायते यः स  
 मुक्तः ॥ १९ ॥ आदिक्षांतसर्विदुक्तसहितं मेरुं शकारात्मकं  
 व्यस्ताम्यस्तसमस्तवर्गसहितं पूर्णं शताष्टोत्तरम् । गायत्रीं जपतां  
 त्रिकालसहितां नित्यं सनैमित्तिकमेवं जाप्यफलं शिवेन कथितं  
 सन्नोऽग्यमोक्षप्रदम् ॥ २० ॥ सप्तव्याहृतिस्तत्तारविकृतिः सर्वं  
 वरेण्यं धृतिः सर्वं तत्सर्वितुश्च भीमहि महामर्गास्त्य देवं भजे । चाक्षो  
 धाम धमाधिधारणमहान्भीमत्पदं ध्यायते ॐ तत्सर्वमनुप्रपूर्णदशकं  
 पादत्रयं केवलम् ॥ २१ ॥ विज्ञाने बिलसद्विवेकवचसः प्रज्ञानु-  
 संधारिणीं श्रद्धामेधयशःशिरःसुमनसः स्वस्ति श्रियं त्वां सदा ।  
 आयुष्यं धनधान्यलक्षिममतुलां देवीं कटाक्षं परं तत्काले सकलार्थ-  
 साधनमदान्मुक्तिर्महत्त्वं पदम् ॥ २२ ॥ पृथ्वीगंधोऽर्चनायां नभसि

कुसुमता वायुधूपप्रकर्षो वह्निर्दीपप्रकाशो जलममृतमयं नित्यसंकल्प-  
पूजा । एतत्सर्वं निवेद्यं सुखवति हृदये सर्वदा दंपतीनां त्वं सर्वज्ञा  
शिवं मे कुरु तव ममता भक्तवृन्दे प्रसिद्धा ॥ २३ ॥ सौम्यं  
सौभाग्यहेतुं सकलसुखकरं सर्वसौख्यं समस्तं सत्यं सद्भोगनित्यं  
सुखजनसुहृदं सुंदरं श्रीसमस्तम् । सौमंगल्यं समग्रं सकलशुभकरं  
स्वस्तिवाचं समस्तं सर्वाद्यं सद्विवेकं त्रिपदपद्युगं प्राप्नुमध्यासम-  
स्तम् ॥ २४ ॥ गायत्रीपदपंचपंचप्रणवद्वंद्वं विधौ संपुटं सृष्ट्यादि-  
क्रममंत्रजाप्यदशकं देवीपदं क्षुब्धयम् । मंत्रातिस्थितिकेषु संपुटमिदं  
श्रीमातृकावेष्टनं वर्णात्यादिविलोममंत्रजपनं संहारसंमोहनम्  
॥ २५ ॥ भूराद्यं भूर्भुवःस्वस्तिपदपद्युतं ज्यक्षमाद्यंतयोज्यं  
सृष्टिस्थित्यंतकार्यं क्रमशिविसकलं सर्वमंत्रं प्रशस्तम् । सर्वांगं मातृ-  
काणां मनुमयवपुषं मंत्रयोगप्रयुक्तं संहारं क्षादिवर्णं वसुशतगणनं  
मन्त्रराजं नमामि ॥ २६ ॥ विश्वामित्रमुदाहृतं हितकरं सर्वार्थ-  
सिद्धिप्रदं स्तोत्राणां परमं प्रभातसमये पारायणं नित्यशः । वेदानां  
विधिवादमंत्रसफलं सिद्धिप्रदं संपदां स प्राप्नोत्यपरत्र सर्वसुखद-  
मायुष्यमारोग्यताम् ॥ २७ ॥ इति श्रीविश्वामित्रप्रणीतो गायत्री-  
स्तवराजः संपूर्णः ॥

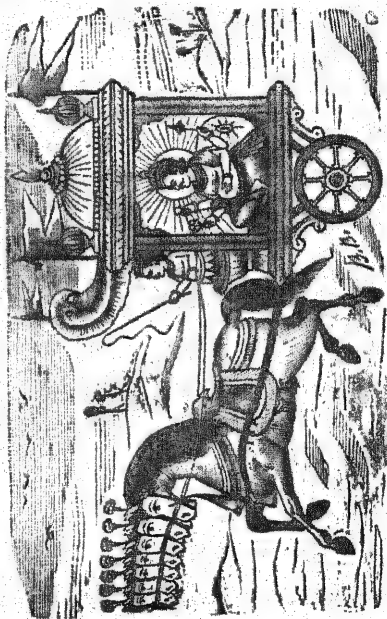
### १४९. गायत्रीतत्त्वस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ श्रीगायत्रीतत्त्वमालामंत्रस्य विश्वामित्र-  
ऋषिः, अनुष्टुप् छंदः, परमात्मा देवता, हलो बीजानि, स्वराः  
शक्तयः, अव्यक्तं कीलकम्, मम समस्तपापक्षयार्थं गायत्री-  
तत्त्वपाठे विनियोगः । चतुर्विंशतितत्त्वानां यदेकं तत्त्वमुत्त-  
मम् ॥ अनुपाधि परंब्रह्म तत्परं ज्योतिरोमिति ॥ १ ॥ यो

वेदादौ स्वरः प्रोक्तो वेदांते च प्रतिष्ठितः । तस्य प्रकृतिलीनस्य  
 तत्परं ज्योतिरोमिति ॥ २ ॥ तत्सदादिपदैर्वाच्यं परमं पदमव्ययम् ।  
 अभेदत्वं पदार्थस्य तत्परं ज्योतिरोमिति ॥ ३ ॥ यस्य मायांश-  
 भागेन जगदुत्पद्यतेऽखिलम् । तस्य सर्वोत्तमं रूपमरूपस्याभिधीमहि  
 ॥ ४ ॥ न पश्यन्ति परमं पश्यन्तो दिवौकसः । तं भूतानिलदेवं तु  
 सुपर्णमुपधावताम् ॥ ५ ॥ यदंशः प्रेरितो जंतुः कर्मपाशनिबन्धितः ।  
 आजन्मकृतपापानामपहंतुं दिवौकसः ॥ ६ ॥ इदं महामुनिप्रोक्तं  
 गायत्रीतत्त्वमुत्तमम् । यः पठेत्परया भक्त्या स याति परमां  
 गतिम् ॥ ७ ॥ सर्ववेदपुराणेषु सांगोपांगेषु यत्फलम् । सकृदस्य  
 जपादेव तत्फलं प्राप्नुयाद्भरः ॥ ८ ॥ अभक्ष्यभक्षणात्पूतो भवति ।  
 अगम्यागमनात्पूतो भवति । सर्वपापेभ्यः पूतो भवति । प्रातरधीयानो  
 रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति ।  
 मध्यंदिनमुपयुजानोऽसत्यतिग्रहादिना मुक्तो भवति ॥ ९ ॥ अनुष्ठुवं  
 पुरुषाः पुरुषमभिवदन्ति यं यं काममभिध्यायति तं तमेवाप्नोति  
 पुत्रपौत्रान् कीर्तिसौभाग्यानि चोपलभते । सर्वभूतात्ममित्रं वेदांते  
 तद्विशिष्टो गायत्रीपरमं पदमाप्नोति ॥ १० ॥ इति श्रीवेदसारे  
 गायत्रीतत्त्वस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



चक्रं वा वारिजं वेत्यमरयुवतिमिर्यद्वलिद्वेषिदेहे ।



ऊर्ध्वं मौलीं ललाटे श्रवसि हृदि करे नाभिनेत्रे च दृष्टं

किं छत्रं किं नु रत्नं तिलकमुत तथा कुण्डलं कौस्तुभो वा

पायाचक्षोऽर्कविषं स च दनुवतिपुर्ववर्मानः क्रमेण ॥



## सूर्यस्तोत्राणि ।

१५०. त्रैलोक्यमंगलं सूर्यकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीसूर्य उवाच ॥ सांब सांब महाबाहो शृणु  
मे कवचं शुभम् । त्रैलोक्यमंगलं नाम कवचं परमाद्भुतम् ॥ १ ॥  
यज्जान्वा मंत्रवित्सम्यक् फलं प्राप्नोति निश्चितम् । यद्वत्वा च  
महादेवो गणानामधिपोऽभवत् ॥ २ ॥ पठनाद्वारणाद्विष्णुः सर्वेषां  
पालकः सदा । एवमिन्द्रादयः सर्वे सर्वैश्वर्यमवाप्नुयुः ॥ ३ ॥ कवचस्य  
ऋषिर्ब्रह्मा छंदोऽनुष्टुप्दाहृतः । श्रीसूर्यो देवता चात्र सर्वदेवनम-  
स्कृतः ॥ ४ ॥ यशभारोग्यमोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः । प्रणवो  
मे शिरः पातु घृणिर्मे पातु भालकम् ॥ ५ ॥ सूर्योऽध्याजयनद्रंद्र-  
मादित्यः कर्णयुग्मकम् । अष्टाक्षरो महामंत्रः सर्वाभीष्टफलप्रदः  
॥ ६ ॥ ह्रीं बीजं मे मुखं पातु हृदयं भुवनेश्वरी । चंद्रर्षिर्बिंश-  
दाद्यं पातु मे गुह्यदेशकम् ॥ ७ ॥ अक्षरोऽसौ महामंत्रः सर्वतंत्रेषु  
गोपितः । शिषो वह्निसमायुक्तो वामाक्षीर्बिंदुभूषितः । एकाक्षरो  
महामंत्रः श्रीसूर्यस्य प्रकीर्तितः ॥ ८ ॥ गुह्याद्ब्रह्मतरो मंत्रो बाष्प्या-  
क्षितामणिः स्मृतः । शीर्षादिपादपर्यंतं सदा पातु मनुत्तमः ॥ ९ ॥  
इति ते कथितं दिव्यं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् । श्रीप्रदं कान्तिदं निर्लं-  
घनारोग्यविवर्धनम् ॥ १० ॥ कुष्ठादिरोगक्षमनं महाव्याधिबिनाश-  
नम् । त्रिसंध्यं यः पठेन्नित्यमरोगी बलवान्भवेत् ॥ ११ ॥ बहुना  
किमिहोक्तेन यद्यन्मनसि वर्तते । तत्तत्सर्वं भवेत्तस्य कवचस्य च  
धारणात् ॥ १२ ॥ भूतप्रेतपिशाचाश्च यक्षगंधर्वाक्षसाः । ब्रह्म-  
राक्षसवेताला न द्रष्टुमपि ते क्षमाः ॥ १३ ॥ दूरादेव पलायते  
तस्य संकीर्तनादपि ॥ १४ ॥ भूर्जपत्रे समालिख्य रोचनागुरुकुङ्कुमैः ।

रविवारे च संक्रांत्यां सप्तम्यां च विशेषतः । धारयेत्साधकश्रेष्ठः  
 स परो मे प्रियो भवेत् ॥ १५ ॥ त्रिलोहमध्यगं कृत्वा धारये-  
 दक्षिणे करे । शिखायामथवा कंठे सोऽपि सूर्यो न संशयः ॥ १६ ॥  
 इति ते कथितं सांब त्रैलोक्यमंगलाभिधम् । कवचं दुर्लभं लोके  
 तव स्नेहात्प्रकाशितम् ॥ १७ ॥ अज्ञात्वा कवचं दिव्यं यो जपेत्सूर्य-  
 मुत्तमम् । सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ॥ १८ ॥ इति  
 श्रीब्रह्मयामले त्रैलोक्यमंगलं नाम सूर्यकवचं संपूर्णम् ॥

### १५१. आदित्यहृदयम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शतानीक उवाच ॥ कथमादित्यमुद्यंतमुपतिष्ठे-  
 द्विजोत्तम । एतन्मे ब्रूहि विप्रेन्द्र प्रपद्ये शरणं तव ॥ १ ॥ सुमंतु-  
 र्वाच ॥ इदमेव पुरा पृष्टः शंखचक्रगदाधरः । प्रणम्य शिरसा  
 देवमर्जुनेन महात्मना ॥ २ ॥ कुरुक्षेत्रे महाराज प्रवृत्ते भारते रणे ।  
 कृष्णनार्यं समासाद्य प्रार्थयित्वाऽब्रवीदिदम् ॥ ३ ॥ अर्जुन उवाच ॥  
 ज्ञानं च धर्मशास्त्राणां गुह्याद्गुह्यतरं तथा । मया कृष्ण परिज्ञातं  
 वाङ्मयं सचराचरम् ॥ ४ ॥ सूर्यस्तुतिमयं न्यासं वक्तुमर्हसि  
 माधव । भक्त्या पृच्छामि देवेश कथयस्व प्रसादतः ॥ ५ ॥ सूर्य-  
 भक्तिं करिष्यामि कथं सूर्यं प्रपूजयेत् । तदहं श्रोतुमिच्छामि  
 त्वत्प्रसादेन यादव ॥ ६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ रुद्रादिदैवतैः सर्वैः  
 पृष्टेन कथितं मया । वक्ष्येऽहं सूर्यविन्यासं शृणु पांडव यत्नतः  
 ॥ ७ ॥ अस्माकं यत्त्वया पृष्टमेकचित्तो भवार्जुन । तदहं संप्र-  
 वक्ष्यामि आदिमध्यावसानकम् ॥ ८ ॥ अर्जुन उवाच ॥ नारायण  
 सुरश्रेष्ठ पृच्छामि त्वां महायशाः । कथमादित्यमुद्यंतमुपतिष्ठेत् सना-  
 तनम् ॥ ९ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ साधु पार्थ महाबाहो बुद्धि-  
 मानसि पांडव । यन्मां पृच्छस्युपस्थानं तत्पवित्रं विभावसोः ॥ १० ॥

सर्वमंगलमांगल्यं सर्वपापप्रणाशनम् । सर्वरोगप्रक्षामनमायुर्वर्धन-  
 सुत्तमम् ॥ ११ ॥ अमित्रदमनं पार्यं संप्राप्ते जयवर्धनम् । वर्धनं  
 धनपुत्राणामादित्यहृदयं शृणु ॥ १२ ॥ यच्छ्रुत्वा सर्वपापेभ्यो  
 मुच्यते नात्र संशयः । त्रिषु लोकेषु विख्यातं निःश्रेयसकरं परम्  
 ॥ १३ ॥ देवदेवं नमस्कृत्य प्रातरुत्थाय चार्जुन । विघ्नान्यनेक-  
 रूपाणि नश्यन्ति स्मरणादपि ॥ १४ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सूर्यभावाह-  
 येत्सदा । आदित्यहृदयं नित्यं जाप्यं तच्छृणु पांडव ॥ १५ ॥  
 यजमानमुच्यते जंतुर्दारिद्र्यादाशु दुस्तरात् । लभते च महासिद्धिं  
 कुष्ठव्याधिबिनाशिनीम् ॥ १६ ॥ अग्निमंत्रे ऋषिश्छंदो देवता  
 शक्तिरेव च । सर्वमेव महाबाहो कथयामि तवाग्रतः ॥ १७ ॥ मया  
 ते गोपितं न्यासं सर्वशास्त्रप्रबोधितम् । अथ ते कथयिष्यामि उत्तमं  
 मंत्रमेव च ॥ १८ ॥ ॐ अस्य श्रीआदित्यहृदयस्तोत्रमंत्रस्य श्रीकृष्ण-  
 ऋषिः, श्रीसूर्यात्मा त्रिभुवनेश्वरो देवता, अनुष्टुप् छंदः, हरित-  
 हयरथं दिवाकरं घृणिरिति बीजम्, ॐ नमो भगवते जितवैश्वानर-  
 जातवेदस इति शक्तिः, ॐ नमो भगवते आदित्याय नम इति कील-  
 कम्, ॐ अग्निर्भदेवता इति मंत्रः, ॐ नमो भगवते तुभ्यमा-  
 दित्याय नमो नमः । श्रीसूर्यनारायणप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः । अथ  
 न्यासः ॥ ॐ हां अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ  
 हूं मध्यमाभ्यां नमः । ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः । ॐ ह्रौं कनिष्ठि-  
 काभ्यां नमः । ॐ हः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । ॐ हां हृदयाय  
 नमः । ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा । ॐ हूं शिखायै वषट् । ॐ ह्रैं कवचाय  
 हुम् । ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ हः अस्त्राय फट् । ॐ हां ह्रीं ह्रूं-  
 ह्रैं ह्रौं ह्रः इति दिग्बंधः ॥ अथ ध्यानम् ॥ भास्वद्रक्षाद्यमौलिः स्फुरद-  
 धरुचा रंजितश्चाहकेशो भास्वान् यो दिष्यतेजाः करकमलयुतः

स्वर्णवर्णः प्रभाभिः । विश्वाकाशावकाशग्रहपतिशिखरे भाति यश्चोद-  
 याद्रौ सर्वानन्दप्रदाता हरिहरनमितः पातु मां विश्वचक्षुः ॥ १ ॥  
 पूर्वमष्टदलं पद्मं प्रणवादिप्रतिष्ठितम् । मायाबीजं दलाष्टाग्रे यन्त्र-  
 मुद्धारयेदिति ॥ २ ॥ आदित्यं भास्करं भानुं रविं सूर्यं दिवाकरम् ।  
 मार्तण्डं तपनं चेति दलेष्वष्टसु योजयेत् ॥ ३ ॥ दीप्ता सूक्ष्मा जया  
 भद्रा विभूतिर्विमला तथा । अमोघा विद्युता चेति मध्ये श्रीः  
 सर्वतोमुखी ॥ ४ ॥ सर्वज्ञः सर्वगश्चैव सर्वकारणदेवता । सर्वेशं  
 सर्वहृदयं नमामि सर्वसाक्षिणम् ॥ ५ ॥ सर्वात्मा सर्वकर्ता च  
 सृष्टिजीवनपालकः । हितः स्वर्गापवर्गस्य भास्करेश नमोऽस्तु ते  
 ॥ ६ ॥ इति प्रार्थना ॥ नमो नमस्तेऽस्तु सदा विभावसो सर्वात्मने  
 सप्तहयाय भानवे । अनंतशक्तिर्मणिभूषणेन ददस्व भुक्तिं मम  
 मुक्तिमव्ययाम् ॥ ७ ॥ अर्कं तु मूर्ध्नि विन्यस्य ललाटे च रविं न्यसेत् ।  
 विन्यसेन्नेत्रयोः सूर्यं कर्णयोश्च दिवाकरम् ॥ ८ ॥ नासिकायां  
 न्यसेद्भानुं मुखे वै भास्करं न्यसेत् । पर्जन्यमोष्ठयोश्चैव तीक्ष्णं  
 जिह्वांतरे न्यसेत् ॥ ९ ॥ सुवर्णरेतसं कंठे स्कंधयोस्तिग्मतेजसम् ।  
 बाह्वोस्तु पूषणं चैव मित्रं वै पृष्ठतो न्यसेत् ॥ १० ॥ वरुणं दक्षिणे  
 हस्ते त्वष्टारं वामतः करे । हस्तावुष्णकरः पातु हृदयं पातु भानु-  
 मान् ॥ ११ ॥ उदरे तु यमं विद्यादादित्यं नाभिर्मण्डले । कर्ष्णं तु  
 विन्यसेद्धंसं रुद्रमूर्ध्वोस्तु विन्यसेत् ॥ १२ ॥ जान्वोस्तु गोपतिं  
 न्यस्य सवितारं तु जंघयोः । पादयोश्च विवस्वतं गुल्फयोश्च दिवा-  
 करम् ॥ १३ ॥ बाह्यतस्तु तमोर्ध्वसं भयमभ्यंतरे न्यसेत् । सर्वा-  
 गेषु सहस्रांशुं दिग्विदिक्षु भगं न्यसेत् ॥ १४ ॥ इति दिग्बन्धः ॥  
 एष आदित्यविन्यासो देवानामपि दुर्लभः । इमं भक्त्या न्यसेत्पार्थ  
 स याति परमां गतिम् ॥ १५ ॥ कामक्रोधकृतात्पापान्मुच्यते नात्र

संशयः । सर्पादपि भयं नैव संग्रामेषु पथिष्वपि ॥ १६ ॥ रिपुसंघ-  
 कालेषु तथा चोरसमागमे । त्रिसंध्यं जपतो न्यासं महापातक-  
 नाशनम् ॥ १७ ॥ विस्फोटकसमुत्पन्नं तीव्रज्वरसमुद्भवम् । शिरोरोमं  
 नेत्ररोमं सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ १८ ॥ कुष्ठव्याधिस्तथा दद्रुरोगाश्च  
 विविधाश्च ये । जपमानस्य नश्यन्ति शृणु भक्त्या तद्भुजे ॥ १९ ॥  
 आदित्यो मंत्रसंयुक्त आदित्यो भुवनेश्वरः । आदित्यान्नापरो देवो  
 ह्यादित्यः परमेश्वरः ॥ २० ॥ आदित्यमर्चयेद्ब्रह्मा शिव आदित्य-  
 मर्चयेत् । यदादित्यमयं तेजो मम तेजस्तद्भुजे ॥ २१ ॥ आदित्यं  
 मंत्रसंयुक्तमादित्यं भुवनेश्वरम् । आदित्यं ये प्रपश्यन्ति मां पश्यन्ति  
 न संशयः ॥ २२ ॥ त्रिसंध्यमर्चयेत्सूर्यं स्मरेद्भक्त्या तु यो नरः ।  
 न स पश्यति दारिद्र्यं जन्मजन्मनि चार्जुन ॥ २३ ॥ एतत्ते कथितं  
 पार्थ आदित्यहृदयं मया । शृण्वन्मुक्तश्च पापेभ्यः सूर्यलोके  
 महीयते ॥ २४ ॥ नमो भगवते तुभ्यमादित्याय नमो नमः ।  
 आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान् ॥ २५ ॥ सुवर्णः  
 स्फटिको भानुः स्फुरितो विश्वतापनः । रविर्विश्वो महातेजाः  
 सुवर्णः सुप्रबोधकः ॥ २६ ॥ हिरण्यगर्भश्चिशिरास्तपनो भास्करो  
 रविः । मार्तण्डो गोपतिः श्रीमान् कृतज्ञश्च प्रतापवान् ॥ २७ ॥  
 तमिन्नहा भगो हंसो नासत्यश्च तमोनुदः । शुद्धो विरोचनः केशी  
 सहस्रांशुर्महाप्रभुः ॥ २८ ॥ विवस्वान् पूषणो मृत्युर्मिहिरो जाम-  
 दग्न्यजित् । धर्मरश्मिः पतंगश्च क्षरण्योऽभिन्नहा तपः ॥ २९ ॥  
 दुर्विज्ञेयगतिः शूरस्तेजोराशिर्महायशः । शंभुश्चित्रांगदः सौम्यो  
 हव्यकव्यप्रदायकः ॥ ३० ॥ अंशुमानुत्तमो देव ऋग्वज्रः साम  
 एव च । हरिदश्वस्तमोदारः सप्तसप्तिर्मरीचिमान् ॥ ३१ ॥ अग्नि-  
 गर्भोऽदितेः पुत्रः शंभुस्तिमिरनाशनः । पूषा विश्वंभरो मित्रः

सुवर्णः सुप्रतापवान् ॥ ३२ ॥ आतपी मंडली भास्वास्तपनः  
 सर्वतापनः । कृतविश्वो महातेजाः सर्वरत्नमयोद्भवः ॥ ३३ ॥  
 अक्षरश्च क्षरश्चैव प्रभाकरविभाकरौ । चंद्रचंद्रांगदः सौम्यो हव्य-  
 कव्यप्रदायकः ॥ ३४ ॥ अंगारकी गदोऽगस्ती रक्तांगश्चांगवर्धनः ।  
 बुधो बुद्धासनो बुद्धिर्बुद्धात्मा बुद्धिवर्धनः ॥ ३५ ॥ बृहद्भानुर्बृह-  
 द्भासी बृहद्भामा बृहस्पतिः । शुक्रस्त्वं शुक्ररेतास्त्वं शुक्रांगः  
 शुक्रभूषणः ॥ ३६ ॥ शनिमान् शनिरूपस्त्वं शनैर्गच्छसि सर्वदा ।  
 अनादिरादिरादित्यस्तेजोराशिर्महातपाः ॥ ३७ ॥ अनादिरादिरूप-  
 स्त्वमादित्यो दिक्पतिर्यमः । भानुमान् भानुरूपस्त्वं स्वर्भानु-  
 र्भानुर्दीप्तिमान् ॥ ३८ ॥ धूमकेतुर्महाकेतुः सर्वकेतुरनुत्तमः ।  
 तिमिरावरणः शंभुः क्षष्टा मार्तण्ड एव च ॥ ३९ ॥ नमः पूर्वाय  
 गिरये पश्चिमाय नमो नमः । नमोत्तराय गिरये दक्षिणाय नमो  
 नमः ॥ ४० ॥ नमो नमः सहस्रांशो ब्यादित्याय नमो नमः ।  
 नमः पद्मप्रबोधाय नमस्ते द्वादशात्मने ॥ ४१ ॥ नमो विश्व-  
 प्रबोधाय नमो आजिष्णुजिष्णवे । ज्योतिषे च नमस्तुभ्यं ज्ञानार्काय  
 नमो नमः ॥ ४२ ॥ प्रदीप्ताय प्रगल्भाय युगांताय नमो नमः ।  
 नमस्ते होतृपतये पृथिवीपतये नमः ॥ ४३ ॥ नमोऽकार वषट्कार  
 सर्वयज्ञ नमोऽस्तु ते । ऋग्वेदाय यजुर्वेद सामवेद नमोऽस्तु ते  
 ॥ ४४ ॥ नमो हाटकवर्णाय भास्कराय नमो नमः । जयाय जय-  
 भद्राय हरिदन्त्राय ते नमः ॥ ४५ ॥ दिव्याय दिव्यरूपाय ग्रहाणां  
 पतये नमः । नमस्ते शुचये नित्यं नमः कुरुकुलात्मने ॥ ४६ ॥  
 नमश्चैलोक्यनाथाय भूतानां पतये नमः । नमः कैवल्यनाथाय  
 नमस्ते दिव्यचक्षुषे ॥ ४७ ॥ त्वं ज्योतिस्त्वं द्युतिर्ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं  
 प्रजापतिः । त्वमेव रुद्रो रुद्रात्मा वायुरग्निस्त्वमेव च ॥ ४८ ॥

योजनानां सहस्रे द्वे शते द्वे द्वे च योजने । एकेन निमिषार्धेन क्रम-  
 माण नमोऽस्तु ते ॥ ४९ ॥ नवयोजनलक्षाणि सहस्रद्विशतानि च ।  
 यावद्वटीप्रमाणेन क्रममाण नमोऽस्तु ते ॥ ५० ॥ अग्रतश्च नमस्तुभ्यं  
 पृष्ठतश्च सदा नमः । पार्श्वतश्च नमस्तुभ्यं नमस्ते चास्तु सर्वदा  
 ॥ ५१ ॥ नमः सुरारिहन्त्रे च सोमसूर्याग्निचक्षुषे । नमो दिव्याय  
 ज्योमाय सर्वतंत्रमयाय च ॥ ५२ ॥ नमो वेदांतवेद्याय सर्वकर्मादि-  
 साक्षिणे । नमो हरितवर्णाय सुवर्णाय नमो नमः ॥ ५३ ॥ अरुणो  
 माघमासे तु सूर्यो वै फाल्गुने तथा । चैत्रमासे तु वेदांगो भानु-  
 वैशाखतापनः ॥ ५४ ॥ ज्येष्ठमासे तपेर्दिद्र आषाढे तपते रविः ।  
 श्रमन्तिः श्रावणे मासि यमो भाद्रपदे तथा ॥ ५५ ॥ इषे सुवर्ण-  
 रेताश्च कार्तिके च दिवाकरः । मार्गशीर्षे तपेन्मित्रः पौषे विष्णुः  
 सनातनः ॥ ५६ ॥ पुरुषस्त्वधिकं मासि मासाधिक्ये तु कल्पयेत् ।  
 इत्येते द्वादशादित्याः काश्यपेयाः प्रकीर्तिताः ॥ ५७ ॥ उग्ररूपा  
 महात्मानस्तपते विश्वरूपिणः । धर्मार्थकाममोक्षार्णानां प्रस्फुटा हेतवो  
 नृप ॥ ५८ ॥ सर्वपापहरं चैवमादित्यं संप्रपूजयेत् । एकदा दशधा  
 चैव शतधा च सहस्रधा ॥ ५९ ॥ तपते विश्वरूपेण सृजति संहरति  
 च । एष विष्णुः शिवश्चैव ब्रह्मा चैव प्रजापतिः ॥ ६० ॥ महेंद्र-  
 श्चैव कालश्च यमो वरुण एव च । नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्व-  
 तापनः ॥ ६१ ॥ वायुरग्निर्धनोऽप्यक्षो भूतकर्ता स्वर्ग प्रभुः । एष  
 देवो हि देवानां सर्वमाप्यायते जगत् ॥ ६२ ॥ एष कर्ता हि भूतानां  
 संहर्ता रक्षकस्तथा । एष लोकानुलोकाश्च सप्तद्वीपाश्च सागराः  
 ॥ ६३ ॥ एष पातालसप्तस्था दैत्यदानवराक्षसाः । एष घाता  
 विधाता च बीजं क्षेत्रं प्रजापतिः ॥ ६४ ॥ एक एव प्रजा नित्यं  
 संवर्धयति रश्मिभिः । एष अग्निः स्वधा स्वाहा ह्रीः श्रीश्च पुरुषो-

त्तमः ॥ ६५ ॥ एष भूतात्मको देवः सूक्ष्मोऽन्यक्तः सनातनः ।  
 ईश्वरः सर्वभूतानां परमेष्ठी प्रजापतिः ॥ ६६ ॥ कालात्मा  
 सर्वभूतात्मा वेदात्मा विश्वतोमुखः । जन्ममृत्युजराव्याधिसंसार-  
 भयनाशनः ॥ ६७ ॥ दारिद्र्यव्यसनध्वंसी श्रीमान्देवो दिवाकरः ।  
 कीर्तनीयो त्रिविक्वांश्च मार्तण्डो भास्करो रविः ॥ ६८ ॥  
 लोकप्रकाशकः श्रीमल्लोकचक्षुर्ग्रहेश्वरः । लोकसाक्षी त्रिलोकेशः  
 कर्ता हर्ता तमिस्रहा ॥ ६९ ॥ तपनस्तापनश्चैव शुचिः  
 सप्ताश्ववाहनः । गभस्तिहस्तो ब्रह्मण्यः सर्वदेवनमस्कृतः ॥ ७० ॥  
 आयुरारोग्यमैश्वर्यं नरा नार्यश्च मंदिरे । यस्य प्रसादात्संतुष्टि-  
 रादित्यहृदयं जपेत् ॥ ७१ ॥ इत्येतैर्नामभिः पार्थ आदित्यं  
 स्तौति नित्यशः । प्रातरुत्थाय कौतिय तस्य रोगभयं नहि ॥ ७२ ॥  
 पातकान्मुच्यते पार्थ व्याधिभ्यश्च न संशयः । एकसंध्यं द्विसंध्यं  
 वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ७३ ॥ त्रिसंध्यं जपमानस्तु पश्येच्च  
 परमं पदम् । यद्ब्रह्मात्कुरुते पापं तद्ब्रह्मात्प्रतिमुच्यते ॥ ७४ ॥  
 यद्वाय्वात्कुरुते पापं तद्वाय्वात्प्रतिमुच्यते । दद्रुस्फोटककुष्ठानि  
 मंडलानि विषूचिका ॥ ७५ ॥ सर्वव्याधिमहारोगभूतबाधास्तथैव  
 च । डाकिनी शाकिनी चैव महारोगभयं कुतः ॥ ७६ ॥ ये चान्ये  
 दुष्टरोगाश्च ज्वरातीसारकादयः । जपमानस्य नश्यन्ति जीवेच्च शरदां  
 शतम् ॥ ७७ ॥ अशीर्षा पश्यति च्छायामहोरात्रं धनंजय ।  
 संवत्सरेण मरणं तदा तस्य ध्रुवं भवेत् । तथापि पठनादस्य  
 मृतिमीर्न हि जायते ॥ ७८ ॥ यस्त्विदं पठते भक्त्या भानोर्वारे  
 महात्मनः । प्रातःस्नाने कृते पार्थ एकाग्रकृतमानसः ॥ ७९ ॥  
 सुवर्णचक्षुर्भवति न चांधस्तु प्रजायते । पुत्रवान् धनसंपन्नो जायते  
 चारुजः सुखी ॥ ८० ॥ सर्वसिद्धिमवाप्नोति सर्वत्र विजयी भवेत् ।



आदित्यहृदयं पुण्यं सूर्यनामविभूषितम् ॥ ८१ ॥ श्रुत्वा च  
 निखिलं पार्थ सर्वपापैः प्रमुच्यते । अतः परतरं नास्ति सिद्धि-  
 कामस्य पांडव ॥ ८२ ॥ एतज्जपस्य कौतिय येन श्रेयो ह्यवाप्स्यसि ।  
 आदित्यहृदयं नित्यं यः पठेत्सुसमाहितः ॥ ८३ ॥ भ्रूणहा मुच्यते  
 पापात्कृतघ्नो ब्रह्मघातकः । गोघ्नः सुरापो दुर्भोजी दुष्पतिप्रहकारकः  
 ॥ ८४ ॥ पातकानि च सर्वाणि दहत्येव न संशयः । य इदं  
 शृणुयान्नित्यं जपेद्वापि समाहितः ॥ ८५ ॥ सर्वपापविशुद्धात्मा  
 सूर्यलोकं महीयते । अपुत्रो लभते पुत्राच्चिर्धनो धनमाप्नुयात्  
 ॥ ८६ ॥ कुरोगी मुच्यते रोगाद्भक्त्या यः पठते सदा । यस्त्वा-  
 दित्यदिने पार्थ नाभिमात्रजले स्थितः ॥ ८७ ॥ उदयाच्छलमारुढं  
 भास्करं प्रणतः स्थितः । जपते मानवो भक्त्या शृणुयाद्वापि  
 भक्तितः ॥ ८८ ॥ स याति परमं स्थानं यत्र देवो दिवाकरः ।  
 अमित्रद्रमनं पार्थ यदा कर्तुं समारभेत् ॥ ८९ ॥ तदा प्रतिकृतिं  
 कृत्वा शत्रोश्चरणपांसुभिः । आक्रम्य वामपादेन ह्यादित्यहृदयं  
 जपेत् ॥ ९० ॥ एतन्मंत्रं समाहूय सर्वसिद्धिकरं परम् । ॐ ह्रीं  
 हिमालीढं स्वाहा । ॐ ह्रीं निलीढं स्वाहा । ॐ ह्रीमालीढं  
 स्वाहा । इति मंत्रः ॥ त्रिभिश्च रोगी भवति ज्वरी भवति  
 पंचभिः । जपेत्सु सप्तभिः पार्थ राक्षसीं एतुमाविशेत्  
 ॥ ९१ ॥ राक्षसेनाभिभूतस्य विकारान् शृणु पांडव । गीयते  
 नृत्यते नम्र आस्फोटयति धावति ॥ ९२ ॥ शिबारुतं च  
 कुरुते हसते क्रंदते पुनः । एवं संपीडयते पार्थ यद्यपि स्यान्महे-  
 श्वरः ॥ ९३ ॥ किं पुनर्मानुषः कश्चिच्छौचाचारविवर्जितः ।  
 पीडितस्य न संदेहो ज्वरो भवति दारुणः ॥ ९४ ॥ यदा चानु-  
 ग्रहं तस्य कर्तुमिच्छेच्छुभंकरम् । तदा सलिलमादाय जपेन्मंत्रमिमं

बुधः ॥ ९५ ॥ नमो भगवते तुभ्यमादित्याय नमो नमः । जयाय  
 जयभद्राय हरिदश्याय ते नमः ॥ ९६ ॥ स्नापयेत्तेन मंत्रेण  
 शुभं भवति नान्यथा । अन्यथा च भवेद्दोषो नश्यते नात्र संशयः  
 ॥ ९७ ॥ अतस्ते निखिलः प्रोक्तः पूजां चैव निबोध मे । उपलिप्ते  
 शुचौ देशे नियतो वाग्यतः शुचिः ॥ ९८ ॥ वृत्तं वा चतुरस्रं  
 वा लिप्तभूमौ लिखेच्छुचि । त्रिधा तत्र लिखेत्पद्ममष्टपत्रं सकर्णि-  
 कम् ॥ ९९ ॥ अष्टपत्रं लिखेत्पद्मं लिप्तगोमयमंडले । पूर्वपत्रे  
 लिखेत् सूर्यमाग्नेय्यां तु रविं न्यसेत् ॥ १०० ॥ याम्यायां च  
 विवस्वंतं नैऋत्यां तु भगं न्यसेत् । प्रतीच्यां वरुणं विद्याद्वायव्यां  
 मित्रमेव च ॥ १ ॥ आदित्यमुत्तरे पत्रे ईशान्यां मित्रमेव च ।  
 मध्ये तु भास्करं विद्यात्क्रमेणैवं समर्चयेत् ॥ २ ॥ अतः परतरं  
 नास्ति सिद्धिकामस्य पांडव । महातेजः समुद्यंतं प्रणमेत्स  
 कृतांजलिः ॥ ३ ॥ सकेसराणि पद्मानि करवीराणि चार्जुन ।  
 तिलतंडुलयुक्तानि कुशगंधोदकानि च ॥ ४ ॥ रक्तचंदनमिश्राणि  
 कृत्वा वै ताम्रभाजने । धृत्वा शिरसि तत्पात्रं जानुभ्यां धरणीं  
 स्पृशेत् ॥ ५ ॥ मंत्रपूतं गुडाकेश चार्घ्यं दद्याद्भक्तये । सायुधं  
 सरथं चैव सूर्यमावाहयाम्यहम् ॥ ६ ॥ स्वागतो भव । सुप्रति-  
 ष्ठितो भव । संनिधो भव । संनिहितो भव । संमुखो भव ।  
 इति पंचमुद्राः ॥ स्फुटयित्वाऽर्हयेत्सूर्यं भुक्तिं मुक्तिं लभेन्नरः  
 ॥ ७ ॥ ॐ श्रीं विद्याकिलिकिलिकटकेष्टसर्वार्थसाधनाय स्वाहा ।  
 ॐ श्रीं ह्रीं हूं हंसः सूर्याय नमः स्वाहा । ॐ श्रीं हां ह्रीं हूं हः  
 सूर्यमूर्तये स्वाहा ॐ श्रीं ह्रीं खं खः लोकाय सर्वमूर्तये  
 स्वाहा । ॐ हूं मार्तंडाय स्वाहा । नमोऽस्तु सूर्याय सहस्रभानवे  
 नमोऽस्तु वैश्वानरजातवेदसे । त्वमेव चार्घ्यं प्रतिगृह्ण देव देवाधि-

देवाय नमो नमस्ते ॥ ८ ॥ नमो भगवते तुभ्यं नमस्ते जातवेदसे ।  
 दत्तमर्घ्यं मया भानो त्वं गृहाण नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥ एहि सूर्य सह-  
 स्वांशो तेजोराशे जगत्पते । अनुकंपय मां देव गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु  
 ते ॥ ११० ॥ नमो भगवते तुभ्यं नमस्ते जातवेदसे । ममेदमर्घ्यं  
 गृह्ण त्वं देवदेव नमोऽस्तु ते ॥ १११ ॥ सर्वदेवाधिदेवाय आधि-  
 व्याधिविनाशिने । इदं गृहाण मे देव सर्वव्याधिर्विनश्यतु ॥ ११२ ॥  
 नमः सूर्याय शांताय सर्वरोगविनाशिने । ममेप्सितं फलं दत्त्वा  
 प्रसीद परमेश्वर ॥ ११३ ॥ ॐ नमो भगवते सूर्याय स्वाहा ।  
 ॐ शिवाय स्वाहा । ॐ सर्वात्मने सूर्याय नमः स्वाहा । ॐ अक्षय्य-  
 तेजसे नमः स्वाहा । सर्वसंकटदारिद्र्यं शत्रुं नाशय नाशय । सर्व-  
 लोकेषु विश्वात्मन्सर्वात्मन् सर्वदर्शक ॥ ११४ ॥ नमो भगवते सूर्य  
 कुष्ठरोगान्विखंडय । आयुरारोग्यमैश्वर्यं देहि देव नमोऽस्तु ते  
 ॥ ११५ ॥ नमो भगवते तुभ्यमादित्याय नमो नमः । ॐ अक्षय्य-  
 तेजसे नमः । ॐ सूर्याय नमः । ॐ विश्वमूर्तये नमः । आदित्यं च  
 शिवं विद्याच्छिवमादित्यरूपिणम् । उभयोरंतरं नास्ति आदित्यस्य  
 शिवस्य च ॥ ११६ ॥ एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं पुरुषो वै दिवाकरः ।  
 उदये ब्रह्मणो रूपं मध्याह्ने तु महेश्वरः ॥ ११७ ॥ अस्तमाने स्वयं  
 विष्णुस्त्रिमूर्तिश्च दिवाकरः । नमो भगवते तुभ्यं विष्णवे प्रभविष्णवे  
 ॥ ११८ ॥ ममेदमर्घ्यं प्रतिगृह्ण देव देवाधिदेवाय नमो नमस्ते ।  
 श्रीसूर्यनारायणाय सांगाय सपरिवाराय इदमर्घ्यं समर्पयामि ॥ ११९ ॥  
 हिमघ्नाय तमोघ्नाय रक्षोघ्नाय च ते नमः । कृताघघ्नाय सत्याय तस्मै  
 सूर्यात्मने नमः ॥ १२० ॥ जयोऽजयश्च विजयो जितप्राणो जित-  
 श्रमः । मनोजवो जितक्रोधो वाजिनः सप्त कीर्तिताः ॥ १२१ ॥ हरित-  
 हयरथं दिवाकरं कनकमयांबुजरेणुर्पिंजरम् । प्रतिदिनमुदये नवं

नवं शरणमुपैमि हिरण्यरेतसम् ॥ २२ ॥ न तं व्यालाः प्रबाधन्ते न  
 व्याधिभ्यो भयं भवेत् । न नागेभ्यो भयं चैव न च भूतभयं  
 क्वचित् ॥ २३ ॥ अग्निशत्रुभयं नास्ति पार्थिवेभ्यस्तथैव च । दुर्गतिं  
 तरते घोरां प्रजां च लभते पशून् ॥ २४ ॥ सिद्धिकामो लभेत्सिद्धिं  
 कन्याकामस्तु कन्यकाम् । एतत्पठेत्स कौंतेय भक्तियुक्तेन चेतसा  
 ॥ २५ ॥ अश्वमेधसहस्रस्य वाजपेयशतस्य च । कन्याकोटिसहस्रस्य  
 दत्तस्य फलमाप्नुयात् ॥ २६ ॥ इदमादित्यहृदयं योऽधीते सततं  
 नरः । सर्वपापविशुद्धात्मा सूर्यलोके महीयते ॥ २७ ॥ नास्त्या-  
 दित्यसमो देवो नास्त्यादित्यसमा गतिः । प्रत्यक्षो भगवान्विष्णुर्येन  
 विश्वं प्रतिष्ठितम् ॥ २८ ॥ नवतिर्योजनं लक्षं सहस्राणि शतानि च ।  
 यावद्भट्टीप्रमाणेन तावच्चरति भास्करः ॥ २९ ॥ गवां शतसहस्रस्य  
 सम्यग्दत्तस्य यत्फलम् । तत्फलं लभते विद्वान् शांतात्मा स्तौति यो  
 रविम् ॥ १३० ॥ योऽधीते सूर्यहृदयं सकलं सफलं भवेत् ।  
 अष्टानां ब्राह्मणानां च लेखयित्वा समर्पयेत् ॥ ३१ ॥ ब्रह्मलोके  
 ऋषीणां च जायते मानुषोऽपि वा । जातिस्मरत्वमामोति शुद्धात्मा  
 नात्र संशयः ॥ ३२ ॥ अजाय लोकत्रयपावनाय भूतात्मने गोप-  
 तये वृषाय । सूर्याय सर्वप्रलयांतकाय नमो महाकारुणिकोत्तमाय  
 ॥ ३३ ॥ विवस्वते ज्ञानभृदंतरात्मने जगत्प्रदीपाय जगद्धितैषिणे ।  
 स्वयंभुवे दीप्तसहस्रचक्षुषे सुरोत्तमायामिततेजसे नमः ॥ ३४ ॥  
 सुरैरनेकैः परिसेविताय हिरण्यगर्भाय हिरण्मयाय । महात्मने  
 मोक्षप्रदाय नित्यं नमोऽस्तु ते वासरकारणाय ॥ ३५ ॥ आदित्य-  
 श्रार्चितो देव आदित्यः परमं पदम् । आदित्यो मातृको भूत्वा  
 आदित्यो वाङ्मयं जगत् ॥ ३६ ॥ आदित्यं पश्यते भक्त्या मां  
 पश्यति ध्रुवं नरः । आदित्यं पश्यते भक्त्या न स पश्यति मां नरः

॥ ३७ ॥ त्रिगुणं च त्रितत्त्वं च त्रयो देवास्त्रयोऽग्नयः । त्रयाणां च त्रिमूर्तिस्त्वं तुरीयस्त्वं नमोऽस्तु ते ॥ ३८ ॥ नमः सवित्रे जगदेकचक्षुषे जगत्प्रसूतिस्थितिनाशहेतवे । त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे विरिञ्चिनारायणशंकरात्मने ॥ ३९ ॥ यस्योदयेनेह जगत्प्रबुध्यते प्रवर्तते चाखिलकर्मसिद्धये । ब्रह्मेन्द्रनारायणरुद्रवन्दितः स नः सदा यच्छतु मंगलं रविः ॥ १४० ॥ नमोऽस्तु सूर्याय सहस्ररश्मये सहस्रशाखान्वितसंभवात्मने । सहस्रयागोज्ज्वलभावभागिने सहस्रसंख्यायुगधारिणे नमः ॥ ४१ ॥ यन्मंडलं दीप्तिकरं विशालं रत्नप्रभं तीव्रमनादिरूपम् । दारिद्र्यदुःखक्षयकारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ४२ ॥ यन्मंडलं देवगणैः सुपूजितं विप्रैः स्तुतं भावनमुक्तिकोविदम् । तं देवदेवं प्रणमामि सूर्य पुनातु मां त० ॥ ४३ ॥ यन्मंडलं ज्ञानघनं त्वगम्यं त्रैलोक्यपूज्यं त्रिगुणात्मरूपम् । समस्ततेजोमयदिव्यरूपं पुनातु मां तत्सवि० ॥ ४४ ॥ यन्मंडलं गूढमतिप्रबोधं धर्मस्य वृद्धिं कुरुते जनानाम् । यत्सर्वपापक्षयकारणं च पुनातु मां त० ॥ ४५ ॥ यन्मंडलं व्याधिविनाशदक्षं यदृग्यजुःसामसु संप्रगीतम् । प्रकाशितं येन च भूर्भुवःस्वः पुनातु मां त० ॥ ४६ ॥ यन्मंडलं वेदविदो वदन्ति गायन्ति यच्चारणसिद्धसंघाः । यद्योगिनो योगजुषां च संघाः पुनातु मां त० ॥ ४७ ॥ यन्मंडलं सर्वजनेषु पूजितं ज्योतिश्च कुर्यादिह मर्त्यलोके । यत्कालकालादिमनादिरूपं पुनातु मां त० ॥ ४८ ॥ यन्मंडलं विष्णुचतुर्मुखाख्यं यदक्षरं पापहरं जनानाम् । यत्कालकल्पक्षयकारणं च पुनातु मां त० ॥ ४९ ॥ यन्मंडलं विश्वसृजां प्रासिद्धमुत्पत्तिरक्षाप्रलयप्रगल्भम् । यस्मिञ्जगत्संहरतेऽखिलं च पुनातु मां त० ॥ १५० ॥ यन्मंडलं सर्वगतस्य विष्णोरात्मा परं धाम विशुद्ध-

तत्त्वम् । सूक्ष्मांतरैर्योगपथानुगम्यं पुनातु मां त० ॥ ५१ ॥ यन्मंडलं ब्रह्मविदो वदन्ति गायन्ति यच्चारणसिद्धसंघाः । यन्मंडलं वेदविदः स्मरन्ति पुनातु मां त० ॥ ५२ ॥ यन्मंडलं वेदविदोपगीतं यद्योगिनां योगपथानुगम्यम् । तत्सर्ववेदं प्रणमामि सूर्य पुनातु मां त० ॥ ५३ ॥ मंडलाष्टमिदं पुण्यं यः पठेत्सततं नरः । सर्वपापविशुद्धात्मा सूर्यलोके महीयते ॥ ५४ ॥ ध्येयः सदा सवितृमंडलमध्यवर्ती नारायणः सरसिजासनसंनिविष्टः । केयूरवान्मकरकुंडलवान् किरीटी हारी हिरण्मयवपुर्धृतशंखचक्रः ॥ ५५ ॥ सशंखचक्रं रविमंडले स्थितं कुशेशयाक्रांतमनंतमच्युतम् । भजामि बुद्ध्या तपनीयमूर्तिं सुरोत्तमं चित्रविभूषणोज्ज्वलम् ॥ ५६ ॥ एवं ब्रह्मादयो देवा ऋषयश्च तपोधनाः । कीर्तयन्ति सुरश्रेष्ठं देवं नारायणं विभुम् ॥ ५७ ॥ वेदवेदांगशारीरं दिव्यदीप्तिकरं परम् । रक्षोघ्नं रक्तवर्णं च सृष्टिसंहारकारकम् ॥ ५८ ॥ एकचक्रो रथो यस्य दिव्यः कनकभूषितः । स मे भवतु सुप्रीतः पद्महस्तो दिवाकरः ॥ ५९ ॥ आदित्यः प्रथमं नाम द्वितीयं तु दिवाकरः । तृतीयं भास्करः प्रोक्तं चतुर्थं तु प्रभाकरः ॥ १६० ॥ पंचमं तु सहस्रांशुः षष्ठं चैव त्रिलोचनः । सप्तमं हरिदश्वश्च अष्टमं तु विभावसुः ॥ ६१ ॥ नवमं दिनकृत्योक्तं दशमं द्वादशात्मकम् । एकादशं त्रयीमूर्तिर्द्वादशं सूर्य एव च ॥ ६२ ॥ द्वादशादित्यनामानि प्रातःकाले पठेन्नरः । दुःखप्रणाशनं चैव सर्वदुःखं च नश्यति ॥ ६३ ॥ द्रुक्कुष्ठहरं चैव दारिद्र्यं हरते ध्रुवम् । सर्वतीर्थप्रदं चैव सर्वकामप्रवर्धनम् ॥ ६४ ॥ यः पठेत्प्रातरुत्थाय भक्त्या नित्यमिदं नरः । सौख्यमायुस्तथाऽऽरोग्यं लभते मोक्षमेव च ॥ ६५ ॥ अग्निमीले नमस्तुभ्यमिषेत्वोर्जेस्वरूपिणे । अन्न

आयाहि वीतस्त्वं नमस्ते ज्योतिषां पते ॥ ६६ ॥ शं नो देवी  
नमस्तुभ्यं जगच्चक्षुर्नमोऽस्तु ते । पंचमायोपवेदाय नमस्तुभ्यं  
नमो नमः ॥ ६७ ॥ पद्मासनः पद्मकरः पद्मगर्भसमद्युतिः ।  
सप्ताश्वरथसंयुक्तो द्विभुजः स्यात्सदा रविः ॥ ६८ ॥ आदित्यस्य  
नमस्कारं ये कुर्वन्ति दिने दिने । जन्मांतरसहस्रेषु दारिद्र्यं नोप-  
जायते ॥ ६९ ॥ उदयगिरिमुपेतं भास्करं पद्महस्तं निखिलभुवननेत्रं  
रत्नरत्नोपमेयम् । तिमिरकरिमृगेंद्रं बोधकं पद्मिनीनां सुरवरमभि-  
वंदे सुंदरं विश्ववन्द्यम् ॥ १७० ॥ इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे  
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे आदित्यहृदयस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १५२. सूर्यकवचस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ याज्ञवल्क्य उवाच ॥ शृणुष्व मुनिशार्दूल  
सूर्यस्य कवचं शुभम् । शरीरारोग्यदं दिव्यं सर्वसौभाग्यदायकम्  
॥ १ ॥ देदीप्यमानमुकुटं स्फुरन्मकरकुण्डलम् । ध्यात्वा सहस्र-  
किरणं स्तोत्रमेतदुदीरयेत् ॥ २ ॥ शिरो मे भास्करः पातु ललाटं  
मेऽमितद्युतिः । नेत्रे दिनमणिः पातु श्रवणे वासरेश्वरः ॥ ३ ॥ घ्राणं  
घर्मघृणिः पातु वदनं वेदवाहनः । जिह्वां मे मानदः पातु कंठं मे  
सुरवंदितः ॥ ४ ॥ स्कंधौ प्रभाकरः पातु वक्षः पातु जनप्रियः ।  
पातु पादौ द्वादशात्मा सर्वाङ्गं सकलेश्वरः ॥ ५ ॥ सूर्यरक्षात्मकं  
स्तोत्रं लिखित्वा भूर्जपत्रके । दधाति यः करे तस्य वशगाः सर्व-  
सिद्धयः ॥ ६ ॥ सुस्नातो यो जपेत्सम्यग्योऽधीते स्वस्थमानसः । स  
रोगमुक्तो दीर्घायुः सुखं पुष्टिं च विंदति ॥ ७ ॥ इति श्रीमद्याज्ञ-  
वल्क्यमुनिविरचितं सूर्यकवचस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## १५३. अगस्त्योक्तं आदित्यहृदयम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ततो युद्धपरिश्रान्तं समरे चिंतया स्थितम् ।  
 रावणं चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम् ॥ १ ॥ दैवतैश्च समा-  
 गम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम् । उपगम्याब्रवीद्राममगस्त्यो भगवांस्तदा  
 ॥ २ ॥ राम राम महाबाहो शृणु गुह्यं सनातनम् । येन सर्वानरी-  
 न्वत्स समरे विजयिष्यसे ॥ ३ ॥ आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशत्रु-  
 विनाशनम् । जयावहं जपेन्नित्यमक्षयं परमं शिवम् ॥ ४ ॥ सर्व-  
 मंगलमांगल्यं सर्वपापप्रणाशनम् । चिंताशोकप्रशमनमायुर्वर्धन-  
 मुत्तमम् ॥ ५ ॥ रश्मिमंतं समुद्यंतं देवासुरनमस्कृतम् । पूजयस्व  
 विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम् ॥ ६ ॥ सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वी  
 रश्मिभावनः । एष देवः सुरगणाल्लोकान् पातु गभस्तिभिः ॥ ७ ॥  
 एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कंदः प्रजापतिः । महेंद्रो धनदः  
 कालो यमः सोमो ह्यपांपतिः ॥ ८ ॥ पितरो वसवः साध्या अश्विनौ  
 मरुतो मनुः । वायुर्वह्निः प्रजा प्राणा ऋतुकर्ता प्रभाकरः ॥ ९ ॥  
 आदित्यः सविता सूर्य खगः पूषा गभस्तिमान् । सुवर्णस्तपनो भानुः  
 स्वर्णरेता दिवाकरः ॥ १० ॥ हरिदश्वः सहस्रार्चिः सप्तसप्तिर्मेरीचि-  
 मान् । तिमिरोन्मथनः शंभुस्त्वष्टा मार्तण्डकोऽशुमान् ॥ ११ ॥  
 हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनो भास्करो रविः । अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः  
 शङ्खः शिशिरनाशनः ॥ १२ ॥ व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुःसाम-  
 पारगः । धनुर्वृष्टिरपां मित्रो विन्ध्यवीथीप्लवङ्गमः ॥ १३ ॥ आतपी  
 मंडली मृत्युः पिङ्गलः सर्वतापनः । कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्व-  
 भवोद्भवः ॥ १४ ॥ नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्वभावनः । तेजसा-  
 मपि तेजस्वी द्वादशात्मन्नमोऽस्तु ते ॥ १५ ॥ नमः पूर्वाय  
 गिरये पश्चिमायाद्रये नमः । ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः



॥ १६ ॥ जयाय जयभद्राय हर्यश्वाय नमो नमः । नमो नमः  
 सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः ॥ १७ ॥ नम उग्राय वीराय  
 सारंगाय नमो नमः । नमः पद्मप्रबोधाय प्रचंडाय नमोऽस्तु ते  
 ॥ १८ ॥ ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूरयादित्यवर्चसे । भास्वते सर्व-  
 भक्षाय रौद्राय वपुषे नमः ॥ १९ ॥ तमोग्नाय हिमघ्नाय शत्रुघ्नाया-  
 मितात्मने । कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः ॥ २० ॥  
 तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे । नमस्तमोऽभिनिघ्नाय रुचये  
 लोकसाक्षिणे ॥ २१ ॥ नाशयत्येष वै भूतं तदेव सृजति प्रभुः ।  
 पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभिः ॥ २२ ॥ एष सुप्तेषु जागर्ति  
 भूतेषु परिनिष्ठितः । एष चैवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम्  
 ॥ २३ ॥ देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतूनां फलमेव च । यानि कृत्यानि  
 लोकेषु सर्वेषु परमप्रभुः ॥ २४ ॥ एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कांतारेषु  
 भयेषु च । कीर्तयन्पुरुषः कश्चिन्नावसीदति राघव ॥ २५ ॥ पूजय-  
 स्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम् । एतन्निगुणितं जप्त्वा युद्धेषु  
 विजयिष्यसि ॥ २६ ॥ अस्मिन्क्षणे महाबाहो रावणं त्वं जयिष्यसि ।  
 एवमुक्त्वा ततोऽगस्त्यो जगाम स यथागतम् ॥ २७ ॥ एतच्छ्रुत्वा  
 महातेजा नष्टशोकोऽभवत्तदा । धारयामास सुप्रीतो राघवः प्रयता-  
 त्मवान् ॥ २८ ॥ आदित्यं प्रेक्ष्य जप्त्वेदं परं हर्षमवाप्तवान् । त्रिराचम्य  
 शुचिर्भूत्वा धनुरादाय वीर्यवान् ॥ २९ ॥ रावणं प्रेक्ष्य हृष्टात्मा  
 युद्धार्थं समुपागमत् । सर्वयत्नेन महता वधे तस्य धृतोऽभवत्  
 ॥ ३० ॥ अथ रविरवदन्निरीक्ष्य रामं मुदितमनाः परमं प्रहृष्यमाणः ।  
 निशिचरपतिसंक्षयं विदित्वा सुरगणमध्यगतो वचस्त्वरेति ॥ ३१ ॥  
 इति वाल्मीकीयरामायणेऽगस्त्यप्रोक्तमादित्यहृदयस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## १५४. सूर्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ सप्ताश्वं समारुह्यारुणसारथिमुत्तमम् ।  
 श्वेतपद्मधरं देवं त्वां सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥ १ ॥ बन्धूकपुष्पसंकाशं  
 हारकुण्डलभूषणम् । एकचक्रधरं देवं त्वां सूर्यं ॥ २ ॥ लोहित-  
 स्वर्णसंकाशं सर्वलोकपितामहम् । सर्वव्याधिहरं देवं त्वां सूर्यं  
 ॥ ३ ॥ त्वं देव ईश्वरः शक्रब्रह्मविष्णुमहेशराट् । परं धर्मं परं  
 ज्ञानं त्वां सूर्यं ॥ ४ ॥ त्वं देवलोककर्ता च कीर्त्यात्मा करणां-  
 शकम् । तेजो रुद्रधरं देवं त्वां सूर्यं ॥ ५ ॥ पृथिव्यप्तेजो  
 वायुश्चात्माप्याकाशमेव च । सर्वज्ञं श्रीजगन्नाथं त्वां सूर्यं ॥ ६ ॥  
 अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् । गगनलिङ्गमारुध्यं  
 त्वां सूर्यं ॥ ७ ॥ निर्मलं निर्विकल्पं च निर्विकारं निरामयम् ।  
 जगत्कर्ता जगद्धर्तृस्त्वां सूर्यं ॥ ८ ॥ सूर्यस्तोत्रं जपेन्नित्यं ग्रहपीडा-  
 विनाशनम् । धनं धान्यं मनोवाञ्छां श्रियः प्राप्नोति नित्यशः  
 ॥ ९ ॥ शिवरात्रिसहस्रेषु कृत्वा जागरणं भवेत् । यत्फलं लभते  
 सर्वं तद्वै सूर्यस्य दर्शनात् ॥ १० ॥ एकादशीसहस्राणि संक्रान्त्य-  
 युतमेव च । सप्तकोटिसु दर्शेषु तत्फलं सूर्यदर्शनात् ॥ ११ ॥  
 अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च । कोटिकन्याप्रदानानि  
 तत्फलं सूर्यदर्शनात् ॥ १२ ॥ गयापिण्डः परं दाने पितृणां च  
 समुद्धरम् । दृष्ट्वा ह्यग्न्येश्वरं देवं तत्फलं समवाप्नुयात् ॥ १३ ॥  
 अग्न्येश्वरसमोपेतो सोमनाथस्तथैव च । कैदारमुदकं पीत्वा  
 पुनर्जन्म न विद्यते ॥ १४ ॥ सूर्यस्तोत्रं पठेन्नित्यमेकचित्तः  
 समाहितः । दुःखदारिद्र्यनिर्मुक्तः सूर्यलोकं स गच्छति ॥ १५ ॥  
 इति सूर्यस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १५५. सूर्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वैशंपायन उवाच ॥ शृणुष्वावहितो राजन् शुचि-  
 भूत्वा समाहितः । क्षणं च कुरु राजेंद्र गुह्यं वक्ष्यामि ते हितम्  
 ॥ १ ॥ धौम्येन तु यथा प्रोक्तं पार्थाय सुमहात्मने । नाम्नामष्टोत्तरं  
 पुण्यं शतं तच्छृणु भूपते ॥ २ ॥ सूर्योऽर्यमा भगस्त्वष्टा पूषाकः  
 सविता रविः । गभस्तिमानजः कालो मृत्युर्धाता प्रभाकरः ॥ ३ ॥  
 पृथिव्यापश्च तेजश्च खं वायुश्च परायणम् । सोमो बृहस्पतिः शुक्रो  
 बुधोऽङ्गारक एव च ॥ ४ ॥ इंद्रो विवस्वान् दीप्तांशुः शुचिः शौरिः  
 शनैश्चरः । ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च स्कंदो वैश्रवणो यमः ॥ ५ ॥  
 वैद्युतो जाठरश्चाग्निरैधनस्तेजसांपतिः । धर्मध्वजो वेदकर्ता वेदाङ्गो  
 वेदवाहनः ॥ ६ ॥ कृतं त्रेता द्वापरश्च कलिः सर्वांमराश्रयः । कला  
 काष्ठा सुहूर्तश्च क्षपा यामस्तथा क्षणः ॥ ७ ॥ संवत्सरकरोऽश्वत्थः  
 कालचक्रो विभावसुः । पुरुषः शाश्वतो योगी व्यक्ताव्यक्तः सना-  
 तनः ॥ ८ ॥ कालाध्यक्षः प्रजाध्यक्षो विश्वकर्मा तमोनुदः । वरुणः  
 सागरोऽशश्च जीमूतो जीवनोऽरिहा ॥ ९ ॥ भूताश्रयो भूतपतिः  
 सर्वलोकनमस्कृतः । स्रष्टा संवर्तको वह्निः सर्वस्यादिरलोलुपः  
 ॥ १० ॥ अनंतः कपिलो भानुः कामदः सर्वतोमुखः । शयो विशालो  
 वरदः सर्वधातुनिषेचिता ॥ ११ ॥ मनः सुपर्णो भूतादिः शीघ्रगः  
 प्राणधारकः । धन्वंतरिर्धूमकेतुरादिदेवोऽदितेः सुतः ॥ १२ ॥  
 द्वादशास्मारविन्दाक्षः पिता माता पितामहः । स्वर्गद्वारं प्रजाद्वारं  
 मोक्षद्वारं त्रिविष्टपम् ॥ १३ ॥ देहकर्ता प्रशांतात्मा विश्वात्मा  
 विश्वतोमुखः । चराचरात्मा सूक्ष्मात्मा मैत्रेण वपुषान्वितः ॥ १४ ॥  
 एतद्वै कीर्तनीयस्य सूर्यस्यामिततेजसः । नाम्नामष्टशतं पुण्यं प्रोक्त-  
 मेतत्स्वयंभुवा ॥ १५ ॥ सुरगणपितृयक्षसेवितं ह्यसुरनिशाचरसिद्ध-

वंदितम् । वरकनकहुताशनप्रभं प्रणिपतितोऽस्मि हिताय भास्करम् ॥ १६ ॥ सूर्योदये यः सुसमाहितः पठेत्स पुत्रदारान् धनरत्नसंचयान् । लभेत जातिस्मरतां नरः सदा धृतिं च मेधां च स विंदते पुमान् ॥ १७ ॥ इमं स्तवं देववरस्य यो नरः प्रकीर्तयेच्छुचिसुमनाः समाहितः । विमुच्यते शोकदवाग्निसागराल्लभेत कामान्मनसा यथेप्सितान् ॥ १८ ॥ इति महाभारते सूर्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १५६. युधिष्ठिरकृतं सूर्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ त्वं भानो जगतश्चक्षुस्त्वमात्मा सर्वदेहिनाम् । त्वं योनिः सर्वभूतानां त्वमाचारः क्रियावताम् ॥ १ ॥ त्वं गतिः सर्वसांख्यानां योगिनां त्वं परायणम् । अनावृतार्गलद्वारं त्वं गतिस्त्वं मुमुक्षताम् ॥ २ ॥ त्वया संधार्यते लोकस्त्वया लोकः प्रकाश्यते । त्वया पवित्रीक्रियते निर्व्याजं पाल्यते त्वया ॥ ३ ॥ त्वामुपस्थाय काले तु ब्राह्मणा वेदपारगाः । स्वशाखाविहितैर्मन्त्रैर्चयन्त्युषिगणार्चित ॥ ४ ॥ तव दिव्यं रथं यांतमनुयांति वरार्थिनः । सिद्धचारणगंधर्वा यक्षगुह्यकपन्नगाः ॥ ५ ॥ त्रयस्त्रिंशच्च वै देवास्तथा वैमानिका गणाः । सोपेन्द्राः समहेन्द्राश्च त्वामिष्ट्वा सिद्धिमागताः ॥ ६ ॥ उपयांत्यर्चयित्वा तु त्वां वै प्राप्तमनोरथाः । दिव्यमंदारमालाभिस्तूर्णं विद्याधरोत्तमाः ॥ ७ ॥ गुह्याः पितृगणाः सप्त ये दिव्या ये च मानुषाः । ते पूजयित्वा त्वामेव गच्छंत्याशु प्रधानताम् ॥ ८ ॥ वसवो मरुतो रुद्रा ये च साध्या मरीचिपाः । वालखिल्यादयः सिद्धाः श्रेष्ठत्वं प्राणिनां गताः ॥ ९ ॥ सब्रह्मकेषु लोकेषु सप्तस्वप्यखिलेषु च । न तद्भूतमहं मन्ये यदर्कादतिरिच्यते ॥ १० ॥ संति चान्यानि सत्त्वानि धीर्यवंति महान्ति च । न तु तेषां तथा दीप्तिः प्रभवो वा यथा तव ॥ ११ ॥ ज्योतीषि

त्वयि सर्वाणि त्वं सर्वज्योतिषां पतिः । त्वयि सत्यं च सत्त्वं च  
सर्वे भावाश्च सात्त्विकाः ॥ १२ ॥ त्वत्तेजसा कृतं चक्रं सुनाभं  
विश्वकर्मणा । देवारीणां मदो येन नाशितः शार्ङ्गधन्वना ॥ १३ ॥  
त्वमादायांशुभिस्तेजो निदाधे सर्वदेहिनाम् । सर्वौषधिरसानां  
च पुनर्वर्षासु मुंचसि ॥ १४ ॥ तपंत्यन्ये दहंत्यन्ये गर्जंत्यन्ये  
यथा घनाः । विद्योतन्ते प्रवर्षति तव प्रावृषि रश्मयः ॥ १५ ॥  
न तथा सुखयत्यग्निर्न प्रावारा न कम्बलाः । शीतवातादितं  
लोकं यथा तव मरीचयः ॥ १६ ॥ त्रयोदशद्वीपवतीं गोभि-  
र्भांसयसे महीम् । त्रयाणामपि लोकानां हितायैकः प्रवर्तसे ॥ १७ ॥  
तव यद्युदयो न स्यादंधं जगदिदं भवेत् । न च धर्मार्थकामेषु  
प्रवर्तेरन्मनीषिणः ॥ १८ ॥ आधानपशुबंधेष्टिमंत्रयज्ञतपःक्रियाः ।  
त्वत्प्रसादादवाप्यन्ते ब्रह्मक्षत्रविशां गणैः ॥ १९ ॥ यदहर्ब्रह्मणः  
प्रोक्तं सहस्रयुगसंमितम् । तस्य त्वनादिरंतश्च कालज्ञैः परि-  
कीर्तितः ॥ २० ॥ मनूनां मनुपुत्राणां जगतोऽमानवस्य च ।  
मन्वंतराणां सर्वेषामीश्वराणां त्वमीश्वरः ॥ २१ ॥ संहारकाले  
संप्राप्ते तव क्रोधविनिःसृतः । संवर्तकाम्निस्त्रैलोक्यं भस्मीकृत्या-  
वतिष्ठते ॥ २२ ॥ त्वद्दीधितिसमुत्पन्ना नानावर्णा महाधनाः ।  
सैरावताः साशनयः कुर्वन्त्याभूतसंप्लवम् ॥ २३ ॥ कृत्वा द्वादशधा-  
ह्मानं द्वादशादित्यतां गतः । संहृत्यैकार्णवं सर्वं त्वं शोषयसि  
रश्मिभिः ॥ २४ ॥ त्वामिंद्रमाहुस्त्वं रुद्रस्त्वं विष्णुस्त्वं प्रजा-  
पतिः । त्वमग्निस्त्वं मनः सूक्ष्मं प्रभुस्त्वं ब्रह्म शाश्वतम् ॥ २५ ॥  
त्वं हंसः सविता भानुरंशुमाली वृषाकपिः । विवस्वान्मिहिरः  
पूषा मित्रो धर्मस्तथैव च ॥ २६ ॥ सहस्ररश्मिरादित्यस्तपनस्त्वं  
गवां पतिः । मार्तण्डोऽर्को रविः सूर्यः शरण्यो दिनकृत्तथा ॥ २७ ॥

दिवाकरः सप्तसप्तिर्धामकेशी विरोचनः । आशुगामी तमोघ्नश्च  
 हरिताश्चश्च कीर्त्यसे ॥ २८ ॥ सप्तम्यामथवा षष्ठ्यां भक्त्या  
 पूजां करोति यः । अनिर्विण्णोऽनहंकारी तं लक्ष्मीर्भजते  
 नरम् ॥ २९ ॥ न तेषामापदः संति नाधयो व्याधयस्तथा ।  
 ये तवानन्यमनसा कुर्वत्यर्चनवन्दनम् ॥ ३० ॥ सर्वरोगैर्विरहिताः  
 सर्वपापविवर्जिताः । त्वद्भावभक्ताः सुखिनो भवन्ति चिरजीविनः  
 ॥ ३१ ॥ त्वं ममापन्नकामस्य सर्वातिथ्यं चिकीर्षतः । अन्नमन्नपते  
 दातुममितः श्रद्धयार्हसि ॥ ३२ ॥ ये च तेऽनुचराः सर्वे पादो-  
 पांतं समाश्रिताः । माठरारुणदण्डाद्यास्तांस्तान्वंदेऽशनिक्षुभान्  
 ॥ ३३ ॥ क्षुभया सहितो मैत्री याश्चान्या भूतमातरः । ताश्च  
 सर्वा नमस्यामि पांतु मां शरणागतम् ॥ ३४ ॥ एवं स्तुतो  
 महाराज भास्करो लोकभावनः । ततो दिवाकरः प्रीतो दर्शयामास  
 पाण्डवम् ॥ ३५ ॥ दीप्यमानः स्ववपुषा ज्वलन्निव हुताशनः ।  
 विवस्वानुवाच ॥ यत्तेऽभिलषितं किञ्चित्त्वं सर्वमवाप्स्यसि  
 ॥ ३६ ॥ अहमन्नं प्रदास्यामि सप्त पंच च ते समाः । गृह्णीष्व  
 पिठं ताम्रं मया दत्तं नराधिप ॥ ३७ ॥ यावद्वृत्स्यति पांचाली  
 पात्रेणानेन सुव्रत । फलमूलामिषं शाकं संस्कृतं यन्महानसे  
 ॥ ३८ ॥ चतुर्विधं तदन्नाद्यमश्नय्य ते भविष्यति । इतश्चतुर्दशे  
 वर्षे भूयो राज्यमवाप्स्यसि ॥ ३९ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ एव-  
 मुक्त्वा तु भगवांस्तत्रैवांतरधीयत । इमं स्तवं प्रयतमनाः समा-  
 धिना पठेदिहान्योऽपि वरं समर्थयन् ॥ ४० ॥ तत्तस्य दद्याच्च  
 रविर्मनीषितं तदामुयाद्यद्यपि तत्सुदुर्लभम् । यश्चेदं धारयेन्नित्यं  
 शृणुयाद्वाप्यभीक्ष्णशः ॥ ४१ ॥ पुत्रार्थी लभते पुत्रं धनार्थी लभते  
 धनम् । विद्यार्थी लभते विद्यां पुरुषोऽप्यथवा स्त्रियः ॥ ४२ ॥

उभे संध्ये जपेन्नित्यं नारी वा पुरुषो यदि । आपदं प्राप्य  
मुच्येत बद्धो मुच्येत बंधनात् ॥ ४३ ॥ इति श्रीमहाभारतोक्तं  
युधिष्ठिरविरचितं सूर्यस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १५७. सूर्यशतकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जम्भारातीभकुम्भोद्भवमिव दधतः सान्द्र-  
सिन्दूरेणुं रक्ताः सिक्ता इवौवैरुदयगिरितटीधातुधाराद्रवस्य ।  
आयान्त्या तुल्यकालं कमलवनरुचेवारुणा वो विभूल्यै भूया-  
सुर्भासयन्तो भुवनमभिनवा भानवो भानवीयाः ॥ १ ॥ भक्ति-  
प्रह्लाय दातुं मुकुलपुटकुटीकोटरकोडलीनां लक्ष्मीमाकृष्टुकामा इव  
कमलवनोद्घाटनं कुर्वते ये । कालाकारान्धकाराननपतितजग-  
त्साध्वसध्वंसकल्याः कल्याणं वः क्रियासुः किसलयरुचयस्ते करा  
भास्करस्य ॥ २ ॥ गर्भेष्वम्भोरुहाणां शिखरिषु च शिताग्रेषु  
तुल्यं पतन्तः प्रारम्भे वासरस्य व्युपरतिसमये चैकरूपास्तथैव ।  
निष्पर्यायं प्रवृत्तास्त्रिभुवनभवनप्राङ्गणे पान्तु युष्मानूष्माणं संत-  
ताध्वश्रमजमिव भृशं विभ्रतो ब्रह्मपादाः ॥ ३ ॥ प्रअश्यत्यु-  
त्तरीयत्विति तमसि समुद्रीक्ष्य वीतावृतीन्प्रागजन्तुंस्तन्तू-  
न्यथा यानतनु वितनुते तिग्मरोचिर्मरीचीन् । ते सान्द्रीभूय  
सद्यः क्रमविशददशाशादशालीविशालं शश्वत्संपादयन्तोऽम्बरम-  
मलमलं मङ्गलं वो दिशन्तु ॥ ४ ॥ न्यकुर्वन्नोषधीशे मुषितरुचि  
शुचेवौषधीः प्रोषिताभा भास्वद्भावोद्भूतेन प्रथममिव कृताभ्युद्गतिः  
पावकेन । पक्षच्छेदव्रणासृक्स्त्रुत इव दृषदो दर्शयन्प्रातरद्रेराताम्र-  
स्तीव्रभानोरनभिमतनुदे स्ताद्भमस्त्युद्गमो वः ॥ ५ ॥ शीर्णघ्राणा-

द्विपाणीन्त्रणिभिरपवनैर्धर्धराव्यक्तघोषान्दीर्घाव्रातानधौघैः पुनरपि  
 घटयत्येक उल्लाघयन्त्यः । घर्मांशोस्तस्य वोऽन्तर्द्विगुणधनघृणानिघ्न-  
 निर्विघ्नवृत्तेर्दत्तार्धाः सिद्धसंवैर्विदधतु घृणयः शीघ्रमंहोविघातम्  
 ॥ ६ ॥ बिभ्राणा वामनत्वं प्रथममथ तथैवांशवः प्रांशवो वः क्रान्ता-  
 काशान्तरालास्तदनु दश दिशः पूरयन्तस्ततोऽपि । ध्वान्तादाच्छिद्य  
 देवद्विष इव बलितो विश्वमाश्वभुवानाः कृच्छ्राण्युच्छ्रायहेलोपहसित-  
 हरयो हारिदश्वा हरन्तु ॥ ७ ॥ उद्गाढेनारुणिष्ठा विदधति बहुलं  
 येऽरुणस्यारुणत्वं मूर्धोद्धूतौ खलीनक्षतरुधिररुचो ये रथाश्चाननेषु ।  
 शैलानां शेखरत्वं श्रितशिखरिशिखास्तन्वते ये दिशन्तु प्रेङ्खन्तः खे-  
 खरांशोः खचितदिनमुखास्ते मयूखाः सुखं वः ॥ ८ ॥ दत्तानन्दाः  
 प्रजानां समुचितसमयाकृष्टसृष्टैः पयोभिः पूर्वाह्णे विप्रकीर्णां दिशि  
 दिशि विरमत्यह्नि संहारभाजः । दीप्तांशोर्दीर्घदुःखप्रभवभवमयोदन्व-  
 दुत्तारनावो गावो वः पावनानां परमपरिमितां प्रीतिमुत्पादयन्तु  
 ॥ ९ ॥ बन्धध्वंसैकहेतुं शिरसि नतिरसाबद्धसंध्याञ्जलीनां लोकानां  
 ये प्रबोधं विदधति विपुलाम्भोजखण्डाशयेव । युष्माकं ते स्वचित्त-  
 प्रथितपृथुतरप्रार्थनाकल्पवृक्षाः कल्पन्तां निर्विकल्पं दिनकरकिरणाः  
 केतवः कल्मषस्य ॥ १० ॥ धारा रायो धनायापदि सपदि करालम्ब-  
 भूताः प्रपाते तत्त्वालोकेकदीपास्त्रिदशपतिपुरप्रस्थितौ वीथ्य एव ।  
 निर्वाणोद्योगियोगिप्रगमनिजतनुद्वारि वेत्रायमाणास्त्रायन्तां तीव्र-  
 भानोर्दिवसमुखसुखा रश्मयः कल्मषाद्गः ॥ ११ ॥ प्राचि प्रागा-  
 चरन्त्योऽनतिचिरमचले चारुचूडामणित्वं मुञ्चन्त्यो रोचनाम्भः प्रचुर-  
 मिव दिशामुच्चकैश्चर्यनाय । चादूत्कैश्चक्रनाशां चतुरमविचलैर्लोच-  
 नैरर्च्यमानाश्चेष्टन्तां चिन्तितानामुचितमचरमाश्चण्डरोचीरुचो वः  
 ॥ १२ ॥ एकं ज्योतिर्दशौ द्वे त्रिजगति गदितान्यब्जजास्यैश्चतुर्भि-



भूतानां पञ्चमं यान्यलमृतुषु तथा षट्सु नानाविधानि । युष्माकं  
 तानि सप्तत्रिंशसु निनुतान्यष्टदिग्भाजि भानोर्यान्ति प्राह्णे नवत्वं  
 दश दधतु शिवं दीधित्तीनां शतानि ॥ १३ ॥ आवृत्तिभ्रान्त-  
 विश्वाः श्रममिव दधतः शोषिणः स्वोष्मणेव ग्रीष्मे दावाग्निता  
 इव रसमसकृद्ये धरिण्या धयन्ति । ते प्रावृष्यात्तपानातिशयरुज  
 इवोद्धान्ततोया हिमतौ मार्तण्डस्याप्रचण्डाश्चिरमशुभभिदेऽभीशवो  
 वो भवन्तु ॥ १४ ॥ तन्वाना दिग्वधूनां समधिकमधुरालोक-  
 रम्यामवस्थामारुढप्रौढिलेशोत्कलितकपिलमालंकृतिः केवलैव ।  
 उज्जृम्भाम्भोजनेत्रद्युतिनि दिनमुखे किञ्चिदुद्भिद्यमाना श्मश्रुश्रेणीव  
 भासां दिशतु दशशती शर्म धर्मत्विषो वः ॥ १५ ॥ मौलीन्दो-  
 मैष मोषीद्व्युतिमिति वृषभाङ्गेन यः शङ्किनेव प्रत्यग्रोद्घाटिताम्भो-  
 रुहकुहरगुहासुस्थितेनेव धात्रा । कृष्णेन ध्वान्तकृष्णस्वतनुपरि-  
 भवत्रस्तुनेव स्तुतोऽलं त्राणाय स्तात्तनीयानपि तिमिररिपोः स  
 त्विषामुद्गमो वः ॥ १६ ॥ विस्तीर्णं व्योम दीर्घाः सपदि दश  
 दिशो व्यस्तवेलाग्भसोऽब्धीन्कुर्वन्निर्दृश्यनानानगनगरनगाभोगपृथ्वीं  
 च पृथ्वीम् । पद्मिन्युच्छ्रास्यते यैरुषसि जगदपि ध्वंसयित्वा  
 तमिस्रामुक्ता विखंसयन्तु द्रुतमनभिमतं ते सहस्रत्विषो वः  
 ॥ १७ ॥ अस्तव्यस्तत्वशून्यो निजरुचिरनिशानश्वरः कर्तुमीशो  
 विश्वं वेदमेव दीपः प्रतिहततिमिरं यः प्रदेशस्थितोऽपि । दिक्का-  
 लापेक्षयासौ त्रिभुवनमटतस्तिग्मभानोर्नवाख्यां यातः शातक्रतव्यां  
 दिशि दिशतु शिवं सोऽर्चिषामुद्गमो वः ॥ १८ ॥ मा गान्मल्लानि  
 मृणालीमृदुरिति दययेवाप्रविष्टोऽहिलोकं लोकालोकस्य पार्श्वं  
 प्रतपति न परं यस्तदाख्यार्थमेव । ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डखण्डस्फुटनभय-  
 परित्यक्तदैर्घ्यो द्युसीन्नि स्वेच्छावश्यावकाशावधिरवतु स वस्तापनो

रोचिरोद्यः ॥ १९ ॥ अश्यामः काल एको न भवति भुवनान्तोऽपि वीतेऽन्धकारे सद्यः प्रालेयपादो न विलयमचलश्चन्द्रमा अप्युपैति । बन्धः सिद्धाञ्जलीनां न हि कुमुदवनस्यापि यत्रोजिहाने तत्प्रातः प्रेक्षणीयं दिशतु दिनपतेर्धाम कामाधिकं वः ॥ २० ॥ यत्कान्तिं पङ्कजानां न हरति कुरुते प्रत्युताधिक्यरम्यां नो धत्ते तारकाभां तिरयति नितरामाशु यन्नित्यमेव । कर्तुं नालं निमेषं दिवसमपि परं यत्तदेकं त्रिलोक्याश्चक्षुः सामान्यचक्षुर्विसदृशमधभिन्नास्वतस्तान्महो वः ॥ २१ ॥ क्षमां क्षेपीयः क्षपाम्भः शिशिरतरजलस्पर्शतर्षादतेव द्रागाशा नेतुमाशाद्विरदकरसरःपुष्कराणीव बोधम् । प्रातः प्रोलङ्घ्य त्रिष्णोः पदमपि घृणयेवातिवेगादवीयस्युदामं द्योतमाना दहतु दिनपतेर्दुर्निमित्तं द्युतिर्वः ॥ २२ ॥ नो कल्पापायवायोरदयरयदलक्ष्माधरस्यापि गम्या गाढोद्गीर्णोज्ज्वलश्रीरहनि न रहिता नो तमःकज्जलेन । प्राप्नोत्यपत्तिः पतङ्गाश्च पुनरुपगता मोषमुष्णत्विवो वो वर्तिः सैवान्यरूपा सुखयतु निखिलद्वीपदीपस्य दीप्तिः ॥ २३ ॥ निःशेषाशावपूरप्रवणगुरुगुणश्लाघनीयस्वरूपा पर्याप्तं नोदयादौ दिनगमसमयोपप्लवेऽप्युन्नतैव । अत्यन्तं यानभिज्ञा क्षणमपि तमसा साकमेकत्र वस्तुं ब्रह्मस्येद्धा रुचिर्वो रुचिरिव रुचितस्यास्ये वस्तुनोऽस्तु ॥ २४ ॥ बिभ्राणः शक्तिमाशु प्रशमितबलवत्तारकौर्जित्यगुर्वी कुर्वाणो लीलयाधः शिखिनमपि लसच्चन्द्रकान्तावभासम् । आदध्यादन्धकारे रतिमतिशयिनीमावहन्वीक्षणानां बालो लक्ष्मीमपारामपर इव गुहोऽहर्पतेरातपो वः ॥ २५ ॥ ज्योत्स्नांशाकर्षपाण्डुद्युति तिमिरमवीशेषकलमाषमीषजृम्भोज्जृतेन पिङ्गं सरसिज-रजसा संध्यया शोणशोचिः । प्रातः प्रारम्भकाले सकलमपि जग-

चित्रमुन्मीलयन्ती कान्तिस्तीक्ष्णत्विषोऽक्ष्णां मुदमुपनयतात्तुलि-  
 केवातुलां वः ॥ २६ ॥ आयान्ती किं सुमेरोः सरणिररुणिता पाद्म-  
 रागैः परागैराहोस्त्रित्स्त्रस्य माहारजनविरचिता वैजयन्ती रथस्य ।  
 माञ्जिष्ठी प्रष्टवाहावलिबिधुतशिरश्चामराली तु लोकैराशङ्कयालो-  
 कितैवं सवितुरघनुदे स्तात्प्रभातप्रभावः ॥ २७ ॥ ध्वान्तध्वंसं  
 विधत्ते न तपति रुचिमन्नातिरूपं व्यनक्ति न्यक्तं नीत्वापि नक्तं  
 न वितरतितरां तावदहस्त्विषं यः । स प्रातर्मा विरंसीदसकल-  
 पदिमा पूरयन्पुष्पदाशामाशाकाशावकाशावतरणतरुणप्रक्रमोऽर्क-  
 प्रकाशः ॥ २८ ॥ तीव्रं निर्वाणहेतुर्यदपि च विपुलं यत्प्रकर्षेण चाणु  
 प्रत्यक्षं यत्परोक्षं यदिह यदपरं नश्वरं शाश्वतं च । यत्सर्वस्य प्रसिद्धं  
 जगति कतिपये योगिनो यद्विदन्ति ज्योतिस्तद्विप्रकारं सवितुरवतु  
 वो बाह्यमाभ्यन्तरं च ॥ २९ ॥ रत्नानां मण्डनाय प्रभवति नियतोद्दे-  
 शलब्धावकाशं वह्नेर्दावादि दग्धं निजजडिमतया कर्तुमानन्दमिन्द्रोः ।  
 यच्च त्रैलोक्यभूषाविधिरघदहनं ह्लादि वृष्ट्याशु तद्वो बाहुल्योत्पा-  
 द्यकार्याधिकतरमवतादेकमेवार्कतेजः ॥ ३० ॥ मीलच्चक्षुर्विजिह्वा-  
 श्रुति जडरसनं निद्रितघ्राणवृत्ति स्वव्यापाराक्षमत्वक्परिमुषितमनः  
 श्वासमात्रावशेषम् । विस्त्रस्ताङ्गं पतित्वा स्वपदपहरतादश्रियं वोऽर्क-  
 जन्मा कालव्यालावलीढं जगदगद हवोत्थापयन्प्राक्प्रतापः ॥ ३१ ॥  
 निःशेषं नैशमम्भः प्रसभमपनुदन्नश्रुलेशानुकारि स्तोकस्तोकापनीता-  
 रुणरुचिरचिरादस्तदोषानुषङ्गः । दाता दृष्टिं प्रसन्नां त्रिभुवन-  
 नयनस्याशु युष्मद्विरुद्धं वध्याद्भ्रष्टस्य सिद्धाञ्जनविधिरपरः प्राक्त-  
 नोऽर्चिःप्रचारः ॥ ३२ ॥ भूत्वा जम्भस्य भेतुः ककुभि परिभवा-  
 रम्भभूः शुभ्रभानोर्विभ्राणा बभ्रुभावं प्रसभमभिनवाम्भोजजृम्भा-  
 प्रगल्भा । भूषा भूयिष्ठशोभा त्रिभुवनभवनस्यास्य वैभाकरी

प्राग्विभ्रान्ति आजमाना विभवतु विभवोद्भूतये सा विभा वः  
 ॥ ३३ ॥ संसक्तं सिक्तमूलादभिनवभुवनोद्यानकौतूहलिन्या  
 यामिन्या कन्ययेवामृतकरकलशावर्जितेनामृतेन । अर्कालोकः  
 क्रियाद्वो मुदमुदयशिरश्चक्रवालालवालादुद्यन् बालप्रवालप्रतिमरु-  
 चिरहः पादपप्राक्प्ररोहः ॥ ३४ ॥ भिन्नं भासारुणस्य  
 कचिदभिनवया विदुमाणां त्विवेव त्वङ्गन्नक्षत्ररत्नद्युतिनि-  
 करकरालान्तरालं कचिच्च । नान्तर्निःशेषकृष्णश्रियमुदधिमिव  
 ध्वान्तराशिं पिबन्स्तादौर्वः पूर्वोऽप्यपूर्वोऽग्निरिव भवदघल्लुष्टयेऽर्का-  
 वभासः ॥ ३५ ॥ गन्धर्वैर्गद्यपद्यव्यतिकरितवचोहृद्यमातोद्यवाद्यै-  
 राद्यैर्यो नारदाद्यैर्मुनिभिरभिनुतो वेदवेद्यैर्विभिद्य । आसाद्यापद्यते  
 यं पुनरपि च जगद्यौवनं सद्य उद्यन्नुद्योतो द्योतितद्यौर्धनु दिवस-  
 कृतोऽसावद्यानि वोऽद्य ॥ ३६ ॥ आवानैश्चन्द्रकान्तैश्च्युततिमि-  
 रतया तानवात्तारकाणामेणाङ्गालोकलोपादुपहतमहसामोषधीनां  
 लथेन । आरादुत्प्रेक्ष्यमाणा क्षणमुदयतटान्तर्हितस्याहिमांशोराभा  
 प्राभातिकी वोऽवतु न तु नितरां तावदाविर्भवन्ती ॥ ३७ ॥ सानौ  
 सा नौदये नारुणितदलपुनर्यौवनानां वनानामालीमालीढपूर्वा  
 परिहृतकुहरोपान्तनिष्ठा तनिष्ठा । भा वोऽभावोपशान्तिं दिशतु  
 दिनपतेर्भासमाना समाना राजी राजीवरेणोः समसमयमुदेतीव  
 यस्या वयस्या ॥ ३८ ॥ उज्जृम्भाभोरुहाणां प्रभवति पयसां या  
 श्रिये नोष्णतायै पुष्पात्यालोकमात्रं न तु दिशति दशां दृश्यमाना  
 विघातम् । पूर्वाद्विरेव पूर्वं दिवमनु च पुनः पावनी दिङ्मुखाना-  
 मेनास्थैनी विभासौ नुदतु नुतिपदैकास्पदं प्राक्तनी वः ॥ ३९ ॥  
 वाचां वाचस्पतेरप्यचलभिदुचिताचार्यकाणां प्रपञ्चैर्वैरञ्जानां तथो-  
 च्चारितचतुरक्रचां चाननानां चतुर्णाम् । उच्येतार्चासु वाच्यच्युति-

शुचि चरितं तस्य नोच्चैर्विविच्य प्राच्यं वर्चश्चकासच्चिरमुपचिनु-  
 तात्तस्य चण्डार्चिषो वः ॥ ४० ॥ मूर्ध्यद्रेर्धातुरागस्तरुषु किसलयो  
 विद्रुमौघः समुद्रे दिङ्मातङ्गोत्तमाङ्गे ध्वभिनवविहितः सान्द्र-  
 सिन्दूररेणुः । सीन्नि व्योम्नश्च हेम्नः सुरशिखरिभुवो जायते यः  
 प्रकाशः शोणिम्नासौ खरांशोरुषसि दिशतु वः शर्म शोभैकदेशः  
 ॥ ४१ ॥ अस्ताद्रीशोत्तमाङ्गे श्रितशशिनि तमःकालकूटे निपीते  
 याति व्यक्तिं पुरस्तादरुणकिसलये प्रत्युषःपारिजाते । उद्यन्त्यारक्त-  
 पीताम्बरविशदतरोद्वीक्षिता तीक्ष्णभानोर्लक्ष्मीर्लक्ष्मीरिवास्तु स्फुट-  
 कमलपुटापाश्रया श्रेयसे वः ॥ ४२ ॥ नोदन्वाञ्जन्मभूमिर्न तदु-  
 दरभुवो बान्धवाः कौस्तुभाद्या यस्याः पद्मं न पाणौ न च नरक-  
 रिपूःस्थली वासवेश्म । तेजोरूपापरैव त्रिषु भुवनतलेष्वावधाना  
 व्यवस्थां सा श्रीः श्रेयांसि दिश्यादशिशिरमहसो मण्डलाग्नोद्गता  
 वः ॥ ४३ ॥ रक्षन्त्वक्षुण्णहेमोपलपटलमलं लाघवादुत्पतन्तः  
 पातङ्गाः पङ्गववज्राजितपवनजवा वाजिनस्ते जगन्ति । येषां  
 व्रीटान्यन्विहोन्नयमपि वहतां मार्गमाख्याति मेरावुद्यन्नुद्दामदीप्ति-  
 र्द्युमणिमणिशिलावेदिकाजातवेदाः ॥ ४४ ॥ छुष्टाः पृष्ठेऽशुपातै-  
 रतिनिकटतया दत्तदाहातिरेकैरेकाहाक्रान्तकृत्स्नत्रिदिवपथपृथुश्वास-  
 शोषाः श्रमेण । तीव्रोदन्यास्त्वरन्तामहितविहतये सप्तयः सप्त-  
 सप्तेरभ्याशाकाशगङ्गाजलसरलगलावाङ्गताग्रानना वः ॥ ४५ ॥  
 मत्वान्यान्पार्श्वतोऽश्वान्सफटिकतटदृष्टदृष्टदेहा द्रवन्ती व्यस्तेऽहन्यस्त-  
 संध्येयमिति मृदुपदा पद्मरागोपलेषु । सादृश्यादृश्यमूर्तिर्मरकत-  
 कटके क्लिष्टसूता सुमेरोर्मूर्धन्यावृत्तिलब्धध्रुवगतिरवतु ब्रह्मवाहा-  
 चलिर्वः ॥ ४६ ॥ हेलालोलं वहन्ती विषधरदमनस्याग्रजेनावकृष्टा  
 स्वर्वाहिन्याः सुदूरं जनितजवजया स्यन्दनस्य स्यदेन । निर्व्याजं

तायमाने हरितिमनि निजे स्फीतफेनाहितश्रीरश्रेयांस्यश्वपङ्क्तिः  
 शमयतु यमुनेवापरा तापनी वः ॥ ४७ ॥ मार्गोपान्ते सुमेरोर्बुवति  
 कृतनतौ नाकघाघ्नां निकाये वीक्ष्य व्रीडानतानां प्रतिकुहरमुखं  
 किंनरीणां मुखानि । सूतेऽसूयत्यपीषज्जडगति वहतां कंधराधैर्वल-  
 झिर्वाहानां व्यस्यताद्गः सममसमहरेर्हैषितं कल्मषाणि ॥ ४८ ॥  
 ध्रुवन्तो नीरदालीर्निजरुचिहरिताः पार्श्वयोः पक्षतुल्यास्ताल्-  
 त्तानैः खलीनैः खचितमुखरुचश्चयोतता लोहितेन । उड्डीयेव  
 व्रजन्तो वियति गतिवशादर्कवाहाः क्रियासुः क्षेमं हेमाद्रिहृद्य-  
 द्रुमशिखरशिरःश्रेणिशाखाशुका वः ॥ ४९ ॥ प्रातःशैलाग्रङ्गे  
 रजनिजवनिकापायसंलक्ष्यलक्ष्मीर्विक्षिप्यापूर्वपुष्पाञ्जलिमुडुनिकरं  
 सूत्रधारायमाणः । यामेष्वङ्केष्विवाहः कृतरुचिषु चतुर्व्वेव जात-  
 प्रतिष्ठामव्याप्यस्तावयन्वो जगदटनमहानाटिकां सूर्यसूतः ॥ ५० ॥  
 आक्रान्त्या बाह्यमानं पशुमिव हरिणा बाहकोऽग्रयो हरीणां  
 भ्राम्यन्तं पक्षपाताज्जगति समरुचिः सर्वकर्मैकसाक्षी । शत्रुं  
 नेत्रश्रुतीनामवजयति वयोज्येष्ठभावे समेऽपि स्थाघ्नां धाघ्नां निधिर्यः  
 स भवदधनुदे नूतनः स्तादनूरुः ॥ ५१ ॥ दत्ताधैर्दूरनम्रैर्वियति  
 विनयतो वीक्षितः सिद्धसायैः सानाथ्यं सारथिर्वः स दशशतरुचेः  
 सातिरेकं करोतु । आपीय प्रातरेव प्रततहिमपयःस्यन्दिनीरिन्दुभासो  
 यः काष्ठादीपनोऽग्रे जडित इव भृशं सेवते पृष्ठतोऽर्कम् ॥ ५२ ॥  
 मुञ्चन्रश्मीन्दिनादौ दिनगमसमये संहरंश्च स्वतन्त्रस्तोत्रप्रख्यातवीर्यो-  
 ऽविरतहरिपदाक्रान्तिबद्धाभियोगः । कालोत्कर्षाल्लघुत्वं प्रसभमधि-  
 पतौ योजयन्वो द्विजानां सेवाप्रीतेन पूष्णात्मसम इव कृतस्त्रायतां  
 सोऽरुणो वः ॥ ५३ ॥ शातः श्यामालतायाः परशुरिव तमोऽरण्य-  
 वह्नेरिवार्चिः प्राच्येवाग्रे प्रहीतुं ग्रहकुमुदवनं प्रागुदस्तोऽग्रहस्तः ।

ऐक्यं भिन्दन्द्युभूयोरवधिरिव विधातेव विश्वप्रबोधं वाहानां वो  
 विनेता व्यपनयतु विपन्नाम धामाधिपस्य ॥ ५४ ॥ पौरस्त्यस्तोयदत्तोः  
 पवन इव पतत्पावकस्येव धूमो विश्वस्येवादिसर्गः प्रणव इव परं  
 पावनो वेदराशेः । संध्यानुत्योत्सवेच्छोरिव मदनरिपोर्नन्दिनान्दी-  
 निनादः सौरस्याग्रे सुखं वो वितरतु विनतानन्दनः स्यन्दनस्य ॥ ५५ ॥  
 पर्याप्तं तप्तचामीकरकटकतटे श्लिष्टशीतेतरांशावासीदत्स्यन्दना-  
 श्वानुकृतिमरकते पद्मरागायमाणः । यः सोत्कर्षां विभूषां कुरुत  
 इव कुलक्ष्माभृदीशस्य मेरोरेनां स्यह्नाय दूरं गमयतु स गुरुः काद्रवेय-  
 द्विषो वः ॥ ५६ ॥ नीत्वाश्वान्सप्त कक्षा इव नियमवशं वेत्रक-  
 ल्पप्रतोदस्तूर्णं ध्वान्तस्य राशावितरजन इवोत्सारिते दूरभाजि ।  
 पूर्वं प्रष्टो रथस्य क्षितिभृदधिपतीन्दर्शयन्स्त्रायतां वस्त्रैलोक्यास्थान-  
 दानोद्यतदिवसपतेः प्राक्प्रतीहारपालः ॥ ५७ ॥ वज्रिभ्रातं विकासी-  
 क्षणकमलवनं भासि नाभासि बह्वे तातं नत्वाश्वपार्श्वान्नय यम  
 महिषं राक्षसा वीक्षिताः स्थ । सप्तीन्सिद्धं प्रचेतः पवन भज जवं  
 चित्तपावेदितस्त्वं वन्दे शर्वेति जल्पन्प्रतिदिशमधिपान्पातु पूष्णोऽ-  
 ग्रणीर्वः ॥ ५८ ॥ पाशानाशान्तपालादरुण वरुणतो मा ग्रहीः  
 प्रग्रहार्थं नृणां कृष्णस्य चक्रे जहिहि नहि रथो याति मे नैकचक्रः ।  
 योक्तुं युग्यं किमुच्चैःश्रवसमभिलषस्यष्टमं वृत्रशत्रोस्त्यक्तान्यापेक्ष-  
 विश्वोपकृतिरिति रविः शास्ति यं सोऽवताद्वः ॥ ५९ ॥ नो मूर्च्छाछि-  
 न्नवान्छः श्रमविवशवपुनैव नाप्यास्यशोषी पान्थः पथ्येतराणि  
 क्षपयतु भवतां भास्वतोऽग्रेसरः सः । यः संश्रित्य त्रिलोकीमटति  
 पटुतरैस्ताप्यमानो मयूखैरारादारामलेखामिव हरितमणिश्यामलाम-  
 श्वपङ्क्तिम् ॥ ६० ॥ सीदन्तोऽन्तर्निमज्जज्जडखुरमुसलाः सैकते  
 नाकनद्याः स्कन्दन्तः कंदरालीः कनकशिखरिणो मेखलासु

स्वलन्तः । दूरं दूर्वास्थिलोक्ता मरकतदृषदि स्थास्त्रवो यन्न याताः  
 पूष्णोऽश्वाः पूरयंतैस्तदवतु जवनैर्दुर्कृतेनाग्रगो वः ॥ ६१ ॥  
 पीनोरः प्रेरिता भ्रैश्चरमखुरपुटाग्रस्थितैः प्रातरद्वावादीर्घाङ्गैरुदस्तो हरि-  
 भिरपगतासङ्गनिःशब्दचक्रः । उत्तानानूरुमूर्धावनतिहठभवद्विप्रतीप-  
 प्रणामः प्राह्णे श्रेयो विधत्तां सवितुरवतरन्व्योमवीथीं रथो वः  
 ॥ ६२ ॥ ध्वान्तौघध्वंसदीक्षाविधिपटु वहता प्राक्सहस्रं कराणा-  
 मर्यम्णा यो गरिष्णः पदमतुलमुपानीयताध्यासनेन । स श्रान्तानां  
 नितान्तं भरमिव मरुतामक्षमाणां विसोढुं स्कन्धात्स्कन्धं व्रजन्वो  
 वृजिनविजितये भास्वतः स्यन्दनोऽस्तु ॥ ६३ ॥ योक्त्रीभूतान्युगस्य  
 ग्रसितुमिव पुरो दन्दशूकान्दधानो द्वेधाव्यस्ताम्बुवाहावलिबिहित-  
 बृहत्पक्षविक्षेपशोभः । सावित्रः स्यन्दनोऽसौ निरतिशयरयप्रीणिता-  
 नूरुरेनःक्षेपीयो वो गरुत्मानिव हरतु हरीच्छाविधेयप्रचारः ॥ ६४ ॥  
 एकाहेनैव दीर्घा त्रिभुवनपदवीं लङ्घयन् यो लघिष्ठः पृष्ठे मेरोर्गरी-  
 यान्दलितमणिदृषत्त्रिंषि पिंषन् शिरांसि । सर्वस्यैवोपरिष्ठादथ च  
 पुनरधस्तादिवास्ताद्रिमूर्ध्नि ब्रह्मस्याव्यात्स एवं दुरधिगमपरिस्पन्दनः  
 स्यन्दनो वः ॥ ६५ ॥ धूर्ध्वस्ताग्रग्रहाणि ध्वजपटपवनान्दोलि-  
 तेन्दूनि दूरं राहौ ग्रासाभिलाषादनुसरति पुनर्दत्तचक्रव्यथानि ।  
 श्रान्ताश्चश्वासहेलाधुतविबुधधुनीनिर्झराम्भांसि भद्रं देयासुर्वो दवीयो  
 दिवि दिवसपतेः स्यन्दनप्रस्थितानि ॥ ६६ ॥ अक्षे रक्षां निबध्य  
 प्रतिसरवलयैर्योजयन्त्यो युगाग्रं धूःस्तम्भे दग्धधूपाः प्रहितसुमनसो  
 गोचरे कूबरस्य । चर्चाश्चक्रे चरन्त्यो मलयजपयसा सिद्धवध्व-  
 स्त्रिसंध्यं वन्दन्ते यं द्युमार्गे स नुदतु दुरितान्यंशुमत्स्यन्दनो वः  
 ॥ ६७ ॥ उत्कीर्णस्वर्णरेणुद्रुतखुरदलिता पार्श्वयोः शश्वदश्चैरश्रान्त-  
 श्रान्तचक्रक्रमनिखिलमिलन्नेमिनिम्ना भरेण । मेरोर्मूर्धन्यधं वो



विघटयतु रवेरेकवीथी रथस्य स्वोष्मोदक्ताम्बुरिक्तप्रकटितपुलिनो-  
 द्भूसरा स्वर्धुनीव ॥ ६८ ॥ नन्तुं नाकालयानामनिशमनुयतां पद्धतिः  
 पङ्क्तिरेव क्षोदो नक्षत्रराशेरदयरयमिलच्चक्रपिष्टस्य धूलिः । हेषाहादो  
 हरीणां सुरशिखरिदरीः पूरयन्नेमिनादो यस्याव्यात्तीव्रभानोः स दिवि  
 भुवि यथा व्यक्तचिह्नोरथो वः ॥ ६९ ॥ निःस्पन्दानां विमानावलि-  
 विततदिवां देववृन्दारकाणां वृन्दैरानन्दसान्द्रोद्यममपि वहतां  
 विन्दतां वन्दितुं नो । मन्दाकिन्याममन्दः पुलिनभृति मृदुर्मन्दरे  
 मन्दिराभे मन्दारैर्मण्डितारं दधदरि दिनकृत्यन्दनः स्तान्मुदे वः  
 ॥ ७० ॥ चक्री चक्रारपङ्क्तिं हरिरपि च हरीन्धूर्जटिर्धूर्ध्वजान्तानक्षं  
 नक्षत्रनाथोऽरुणमपि वरुणः कूबराग्रं कुबेरः । रंहः संघः सुराणां  
 जगदुपकृतये नित्ययुक्तस्य यस्य स्तौति प्रीतिप्रसन्नोऽन्वहमहिमरुचेः  
 सोऽवतात्स्यन्दनो वः ॥ ७१ ॥ नेत्राहीनेन मूले विहितपरिकरः  
 सिद्धसाध्यैर्मरुद्भिः पादोपान्ते स्तुतोऽलं बलिहरिरभसा कर्षणा-  
 बद्धवेगः । आम्यन्वोमाम्बुराशावशिशिरकिरणस्यन्दनः संततं वो  
 दिश्यालक्ष्मीमपारामतुलितमहिमेवापरो मन्दराद्रिः ॥ ७२ ॥  
 यज्ज्यायो बीजमहामपहततिमिरं चक्षुषामञ्जनं यद्वारं यन्मुक्तिभाजां  
 यदखिलभुवनज्योतिषामेकमोकः । यद्वृष्ट्यम्भोनिधानं धरणिरससुधा-  
 पानपानं महद्यदिश्यादीशस्य भासां तदविकलमलं मङ्गलं मण्डलं  
 वः ॥ ७३ ॥ वेलावर्धिष्णु सिन्धोः पय इव खमिवाधोऽद्रताग्र्य-  
 ग्रहोडु स्तोकोद्भिन्नस्य चिह्नप्रसवमिव मधोरास्यमस्यन्मनांसि । प्रातः  
 पूष्णोऽशुभानि प्रशमयतु शिरःशेखरीभूतमद्रेः पौरस्त्यस्योद्भूतमस्ति-  
 स्तिमिततमतमःखण्डनं मण्डलं वः ॥ ७४ ॥ प्रत्युत्तस्तप्तहोमोज्ज्वल-  
 रुचिरचलः पद्मरागेण येन ज्यायः किंजल्कपुञ्जो यदलिकुल-  
 शितेरम्बरेन्दीवरस्य । कालव्यालस्य चिह्नं महिततममहोमूर्ध्नि

रत्नं महद्यदीसांशोः प्रातरन्यात्तदविकलजगन्मण्डनं मण्डलं वः  
 ॥ ७५ ॥ कस्मात्ता तारकाणां पतति तनुरवश्यायविन्दुर्यथेन्दु-  
 विद्राणा इक्स्मरारेरुरसि मुररिपोः कौस्तुभो नोद्गमस्तिः ।  
 वह्नेः सापह्ववेव द्युतिरुदयगते यत्र तन्मण्डलं वो मार्तण्डीयं  
 पुनीतादिवि भुवि च तमांसीव मुष्णन्महांसि ॥ ७६ ॥  
 यत्प्राच्यां प्राक्चकास्ति प्रभवति च यतः प्राच्यसावुजिहानादिद्वं  
 मध्ये यदहो भवति ततरुचा येन चोत्पाद्यतेऽहः । यत्पर्यायेण  
 लोकानवति च जगतां जीवितं यच्च तद्वो विश्वानुग्राहि विश्वं  
 सृजदपि च रवेर्मण्डलं मुक्तयेऽस्तु ॥ ७७ ॥ शुष्यन्त्यूढानुकारा  
 मकरवसतयो मारवीणां स्थलीनां येनोत्तप्ताः स्फुटन्तस्तडिति  
 तिलतुलां यान्त्यगेन्द्रा युगान्ते । तच्चण्डांशोरकाण्डत्रिभुवनदहना-  
 शङ्कया धाम कृच्छ्रात्संहत्यालोकमात्रं प्रलघु विदधतः स्तान्मुदे  
 मण्डलं वः ॥ ७८ ॥ उद्यद्ब्रूयानवाप्यां बहुलतमतमःपङ्कपूरं  
 विदार्य प्रोद्भिन्नं पत्रपार्श्वेष्वविरलमरुणच्छायया विस्फुरन्त्या ।  
 कल्याणानि क्रियाद्वः कमलमिव महन्मण्डलं चण्डभानोरन्वीतं  
 तृप्तिहेतोरसकृदलिकुलाकारिणा राहुणा यत् ॥ ७९ ॥ चक्षुर्दक्ष-  
 द्विषो यन्न तु दहति पुरः पूरयत्येव कामं नास्तं जुष्टं मरुद्भिर्यदिह  
 नियमिनां यानपात्रं भवाब्धौ । यद्वीतश्रान्ति शश्वद्भ्रमदपि जगतां  
 भ्रान्तिमभ्रान्ति हन्ति ब्रह्मस्याव्याद्विरुद्धक्रियमथ च हिताधायि  
 तन्मण्डलं वः ॥ ८० ॥ सिद्धैः सिद्धान्तमिश्रं श्रितविधि विबुधै-  
 श्चरणैश्चादुर्गमं गीत्या गन्धर्वमुख्यैर्मुहुरहिपतिभिर्यातुधानैर्यतात्म ।  
 सार्वं साध्यैर्मुनीन्द्रैर्मुदिततममनो मोक्षिभिः पक्षपातात्प्रातः  
 प्रारभ्यमाणस्तुतिरवतु रविर्विश्ववन्द्योदयो वः ॥ ८१ ॥ भासा-  
 मासन्नभावादधिकतरपदोश्चक्रवालस्य तापाच्छेदादच्छिन्नगच्छतुरग-

खुरपुटन्यासनिःशङ्कटङ्कैः । निःसङ्गस्यन्दनाङ्गभ्रमणनिकषणात्पातु  
 वस्त्रिप्रकारं तसांशुस्तत्परीक्षापर इव परितः पर्यटन्हाटकद्रिम्  
 ॥ ८२ ॥ नो शुष्कं नाकनद्या विकसितकनकाम्भोजया भ्राजितं  
 तु दुष्टा नैवोपभोग्या भवति भृशतरं नन्दनोद्यानलक्ष्मीः । नो  
 शृङ्गाणि द्रुतानि द्रुतममरगिरेः कालधौतानि धौतानीद्वं धाम  
 द्युमार्गे अदयति दयया यत्र सोऽर्कोऽवताद्वः ॥ ८३ ॥ ध्वान्त-  
 स्यैवान्तहेतुर्न भवति मलिनैकात्मनः पाप्मनोऽपि प्राक्पा-  
 दोपान्तभाजां जनयति न परं पङ्कजानां प्रबोधम् । कर्ता निःश्रेय-  
 सानामपि न तु खलु यः केवलं वासराणां सोऽव्यादेकोद्यमेच्छा-  
 विहितबहुबृहद्विश्वकार्योऽर्थमा वः ॥ ८४ ॥ लोटल्लोष्टाविचेष्टः  
 श्रितशयनतलो निःसहीभूतदेहः संदेही प्राणितव्ये सपदि दश  
 दिशः प्रेक्षमाणोऽन्धकाराः । निःश्वासायासनिष्ठः परमपरवशो  
 जायते जीवलोकः शोकेनेवान्यलोकानुदयकृति गते यत्र  
 सोऽर्कोऽवताद्वः ॥ ८५ ॥ क्रामल्लोलोऽपि लोकास्तदुप-  
 कृतिकृतावाश्रितः स्थैर्यकोटिं नृणां दृष्टिं विजिह्वां विदधदपि करो-  
 त्यन्तरत्यन्तभद्राम् । यस्तापस्यापि हेतुर्भवति नियमिनामेकनिर्वाण-  
 दायी भूयात्स प्रागवस्थाधिकतरपरिणामोदयोऽर्कः श्रिये  
 वः ॥ ८६ ॥ व्यापन्नर्तुर्न कालो व्यभिचरति फलं नौषधीवृष्टिरिष्टा  
 नेष्टैस्तृप्यन्ति देवा नहिं बहति मरुन्निर्मलाभानि भानि । आशाः  
 शान्ता न भिन्दत्यवधिसुदधयो बिभ्रति क्षमाभृतः क्षमां यस्मिन्मै-  
 लोक्यमेवं न चलति तपति स्तात्स सूर्यः श्रिये वः ॥ ८७ ॥  
 कैलासे कृत्तिवासा विहरति विरहत्रासदेहोढकान्तः श्रान्तः शेते  
 महाहावधिजलधि विना छन्नना पन्ननामः । योगोद्योगैकतानो  
 गमयति सकलं वासरं स्वं स्वयंभूर्भूरित्रैलोक्यचिन्ताभृति भुवनविभौ

यत्र भास्वान्स वोऽव्यात् ॥ ८८ ॥ एतद्यन्मण्डलं खे तपति  
 दिनकृतस्ता ऋचोऽर्चाणि यानि द्योतन्ते तानि सामान्ययमपि  
 पुरुषो मण्डलेऽणुर्यजुषि । एवं यं वेद वेदत्रितयमयमयं वेदवेदी  
 समग्रो वर्गः स्वर्गापवर्गप्रकृतिरधिकृतिः सोऽस्तु सूर्यः श्रिये वः  
 ॥ ८९ ॥ नाकौकः प्रत्यनीकक्षतिपटुमहसां वासवाग्नेसराणां सर्वेषां  
 साधु पातां जगदिदमदितेरात्मजत्वे समेऽपि । येनादित्याभिधानं  
 निरतिशयगुणैरात्मनि न्यस्तमस्तु स्तुत्यस्त्रैलोक्यवन्द्यैस्त्रिदशमुनिगणैः  
 सोऽंशुमान् श्रेयसे वः ॥ ९० ॥ भूमिं धाम्नोऽभिवृष्ट्या जगति  
 जलमयीं पावनीं संस्मृतावप्याग्नेयीं दाहशक्त्या मुहुरपि यजमानां  
 यथाप्रार्थितायैः । लीनामाकाश एवामृतकरघटितां ध्वान्तपक्षस्य  
 पर्वण्येवं सूर्योऽष्टभेदां भव इव भवतः पातु बिभ्रत्स्वमूर्तिम्  
 ॥ ९१ ॥ प्राक्कालोन्निद्रपद्माकरपरिमलनाविर्भवत्पादशोभो भक्त्या  
 त्यक्तोरुखेदोद्गति दिवि विनतासूनुना नीयमानः । सप्ताश्वासापरा-  
 न्तान्यधिकमधरयन् यो जगन्ति स्तुतोऽलं देवैर्देवः स पायादपर  
 इव मुरारातिरह्नांपतिर्वः ॥ ९२ ॥ यः स्रष्टाऽपां पुरस्तादचलवरस-  
 मभ्युन्नतेर्हेतुरेको लोकानां यस्त्रयाणां स्थित उपरि परं दुर्विलङ्घ्येन  
 धाम्ना । सद्यःसिद्धौ प्रसन्नद्युतिशुभचतुराशामुखः स्ताद्विभक्तो  
 द्वेधा वेधा इवाविष्कृतकमलरुचिः सोऽर्चिषामाकरो वः ॥ ९३ ॥  
 साद्रिधूर्वीनदीशा दिशति दश दिशो दर्शयन्प्राग्दशो यः सादृश्यं  
 दृश्यते नो सदशशतदृशि त्रैदशे यस्य देशे । दीप्तांशुर्वः स दिश्याद-  
 शिवयुगदशादर्शितद्वादशात्मा शंशास्त्यश्वांश्च यस्याशयविदतिशया-  
 हन्दशूकाशनाद्यः ॥ ९४ ॥ तीर्थानि व्यर्थकानि हृदनदसरसीनिर्झ-  
 राम्भोजिनीनां नोदन्वन्तो नुदन्ति प्रतिभयमशुभं श्वभ्रपाता-  
 नुबन्धि । आपो नाकापगाया अपि कलुषमुषो मज्जतां नैव यत्र

त्रातुं यातेऽन्यलोकान्स दिशतु दिवसस्यैकहेतुर्हितं वः ॥ ९५ ॥ एत-  
 त्पातालपङ्कडुतमिव तमसैवैकमुद्राढमासीदप्रज्ञाताप्रतर्क्यं निरवगति  
 तथाऽलक्षणं सुप्तमन्तः । याद्वक्सृष्टेः पुरस्तान्निशि निशि सकलं  
 जायते तादृगेव त्रैलोक्यं यद्वियोगादवतु रविरसौ सर्गतुल्योदयो  
 वः ॥ ९६ ॥ द्वीपे योऽस्ताचलोऽस्मिन्भवति खलु स एवापरत्रोद-  
 याद्रिर्या यामिन्युज्ज्वलेन्दुद्युतिरिह दिवसोऽन्यत्र तीव्रातपः सः ।  
 यद्वश्यौ देशकालाविति नियमयतो नो तु यं देशकाला-  
 वन्यात्स स्वप्रभुत्वाहितभुवनहितो हेतुरह्णामिनो वा ॥ ९७ ॥  
 व्यग्रैरग्र्यग्रहेन्दुग्रसनगुरु भरैर्नो समग्रैरुदग्रैः प्रत्यग्रैरीषदुग्रैरुदय-  
 गिरिगतो गोगणैर्गौरयन्गाम् । उद्गाढार्चिर्विलीनामरनगरनगप्राव-  
 गर्भांमिवाह्वामग्रे श्रेयो विधत्ते ग्लपयतु गहनं स ग्रहग्रामणीर्वः  
 ॥ ९८ ॥ योनिः सान्नां विधाता मधुरिपुरजितो धूर्जटिः शंकरोऽसौ  
 मृत्युः कालोऽलकायाः पतिरपि धनदः पावको जातवेदाः । इत्थं  
 संज्ञा डवित्यादिवदमृतभुजां या यदृच्छाप्रवृत्तास्तासामेकोऽभि-  
 धेयस्तदनुगुणगुणैर्यः स सूर्योऽवताद्वः ॥ ९९ ॥ देवः किं बान्धवः  
 स्यात्प्रियसुहृदथवाचार्य आहोस्विदर्यो रक्षा चक्षुर्तु दीपो गुरुस्त  
 जनको जीवितं बीजमोजः । एवं निर्णीयते यः क इव न जगतां  
 सर्वथा सर्वदाऽसौ सर्वाकारोपकारी दिशतु दशशताभीषुरभ्यर्थितं  
 वः ॥ १०० ॥ श्लोका लोकस्य भूत्यै शतमिति रचिताः श्रीमयूरेण  
 भक्त्या युक्तश्चैतान् पठेद्यः सकृदपि पुरुषः सर्वपापैर्विमुक्तः । आरोग्यं  
 सत्कवित्वं मतिमतुलबलं कान्तिमायुःप्रकर्षं विद्यामैश्वर्यमर्थं सुतमपि  
 लभते सोऽत्र सूर्यप्रसादात् ॥ १०१ ॥ इति मयूरविरचितं सूर्य-  
 शतकं संपूर्णम् ॥

## १५८. सूर्यार्यास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शुक्रतुंडच्छवि सवितुश्चंद्ररुचेः पुंडरीकवन-  
 बन्धोः । मंडलमुदितं वंदे कुंडलमाखंडलाशयाः ॥ १ ॥ यस्योद-  
 यास्तसमये सुरमुकुटनिघृष्टचरणकमलोऽपि । कुरुतेऽञ्जलिं त्रिनेत्रः  
 स जयति धाम्नां निधिः सूर्यः ॥ २ ॥ उदयाचलतिलकाय  
 प्रणतोऽस्मि विवस्वते ग्रहेशाय । अंबरचूडामणये दिग्बनिताकर्ण-  
 पूराय ॥ ३ ॥ जयति जनानंदकरः करनिकरनिरस्ततिमिरसंधातः ।  
 लोकालोकालोकः कमलारुणमंडलः सूर्यः ॥ ४ ॥ प्रतिबोधित-  
 कमलवनः कृतघटनश्चक्रवाकमिथुनानाम् । दर्शितसमस्तभुवनः पर-  
 हितनिरतो रविः सदा जयति ॥ ५ ॥ अपनयतु सकलकलिकृत-  
 मलपटलं सुप्रतप्तकनकाभः । अरविंदवृंदविघटनपटुतरकिरणोत्करः  
 सविता ॥ ६ ॥ उदयाद्रिचारुचामरहरितहयखुरपरिहितरेणुराग ।  
 हरितहय हरितपरिकर गगनांगनदीपक नमस्ते ॥ ७ ॥ उदितवति  
 त्वयि विकसति मुकुलीयति समस्तमस्तमितर्बिबे । न ह्यन्यस्मिन्दिनकर  
 सकलं कमलायते भुवनम् ॥ ८ ॥ जयति रविरुदयसमये बालातपः  
 कनकसंनिभो यस्य । कुसुमांजलिरिव जलधौ तरंति रथसप्तयः सप्त  
 ॥ ९ ॥ आर्याः सांबपुरे सप्त आकाशात्पतिता भुवि । यस्य कंठे  
 गृहे वापि न स लक्ष्म्या वियुज्यते ॥ १० ॥ आर्याः सप्त सदा  
 यस्तु सप्तम्यां सप्तधा जपेत् । तस्य गेहं च देहं च पद्मा सत्यं न  
 मुंचति ॥ ११ ॥ निधिरेष दरिद्राणां रोगिणां परमौषधम् ।  
 सिद्धिः सकलकार्याणां गाथेयं संस्मृता रवेः ॥ १२ ॥ इति  
 श्रीयाज्ञवल्क्यविरचितं सूर्यार्यास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## १५९. सूर्याष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ साम्ब उवाच ॥ आदिदेव नमस्तुभ्यं प्रसीद  
मम भास्कर । दिवाकर नमस्तुभ्यं प्रभाकर नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥  
सप्ताश्वरथमारूढं प्रचण्डं कश्यपात्मजम् । श्वेतपद्मधरं देवं तं सूर्यं  
प्रणमाम्यहम् ॥ २ ॥ लोहितं रथमारूढं सर्वलोकपितामहम् ।  
महापापहरं देवं तं सूर्यं ॥ ३ ॥ त्रैगुण्यं च महाशूरं ब्रह्मविष्णु-  
महेश्वरम् । महापापहरं देवं तं सूर्यं ॥ ४ ॥ बृंहितं तेजःपुंजं च  
वायुमाकाशमेव च । प्रभुं च सर्वलोकानां तं सूर्यं ॥ ५ ॥ बंधूक-  
पुष्पसंकाशं हारकुंडलभूषितम् । एकचक्रधरं देवं तं सूर्यं ॥ ६ ॥  
तं सूर्यं जगत्कर्तारं महातेजःप्रदीपनम् । महापापहरं देवं तं सूर्यं  
॥ ७ ॥ तं सूर्यं जगतां नाथं ज्ञानविज्ञानमोक्षदम् । महापापहरं देवं तं  
सूर्यं ॥ ८ ॥ सूर्याष्टकं पठेन्नित्यं ग्रहपीडाप्रणाशनम् । अपुत्रो  
लभते पुत्रं दरिद्रो धनवान्भवेत् ॥ ९ ॥ आमिषं मधुपानं च  
यः करोति रवेर्दिने । सप्तजन्म भवेद्दोगी प्रतिजन्म दरिद्रता  
॥ १० ॥ स्त्रीतैलमधुमांसानि यस्यजेत्तु रवेर्दिने । न व्याधिः  
शोकदारिद्र्यं सूर्यलोकं स गच्छति ॥ ११ ॥ इति श्रीसूर्याष्टक-  
स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## १६०. साम्बपञ्चाशिका ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शब्दार्थत्वविवर्तमानपरमज्योतीरुचो गोपते-  
रुद्गीथोऽभ्युदितः पुरोऽरुणतया यस्य त्रयीमण्डलम् । भाव्यद्वर्ण-  
पदक्रमेरिततमः सप्तस्वराश्चैर्वियद्विद्यास्यन्दनमुन्नयन्निव नमस्तस्मै  
परब्रह्मणे ॥ १ ॥ ओमित्यन्तर्नदति नियतं यः प्रतिप्राणि शब्दो  
वाणी यस्मात्प्रसरति परशब्दतन्मात्रगर्भा । प्राणापानौ वहति

च समौ यो मिथो ग्राससक्तौ देहस्थं तं सपदि परमादित्यमाद्यं  
 प्रपद्ये ॥ २ ॥ यस्त्वक्चक्षुःश्रवणरसनाघ्राणपाण्यङ्घ्रिवाणीपायूपस्थ-  
 स्थितिरपि मनोबुद्ध्यहंकारमूर्तिः । तिष्ठत्यन्तर्बहिरपि जगद्भास-  
 यन्द्वादशात्मा मार्तण्डं तं सकलकरणाधारमेकं प्रपद्ये ॥ ३ ॥ या  
 सा मित्रावरुणसदनादुच्चरन्ती त्रिषष्टिं वर्णानत्र प्रकटकरणैः प्राण-  
 सङ्गात्प्रसूतान् । तां पश्यन्तीं प्रथममुदितां मध्यमां बुद्धिसंस्थां  
 वाचं वक्त्रे करणविशदां वैखरीं च प्रपद्ये ॥ ४ ॥ ऊर्ध्वाधःस्थान्यत-  
 नुभुवनान्यन्तरा संनिविष्टा नानानाडिप्रसवगाहना सर्वभूतान्तरस्था ।  
 प्राणापानग्रसननिरतैः प्राप्यते ब्रह्मनाडी सा नः श्वेता भवतु  
 परमादित्यमूर्तिः प्रसन्ना ॥ ५ ॥ न ब्रह्माण्डव्यवहितपथा नाति-  
 शीतोष्णरूपा नो वा नक्तंदिवगममिताऽतापनीयापराहुः । वैकु-  
 ण्ठीया तनुरिव रवे राजते मण्डलस्था सा नः श्वेता भवतु परमा-  
 दित्यमूर्तिः प्रसन्ना ॥ ६ ॥ यत्रारूढं त्रिगुणवपुषि ब्रह्म तद्विन्दुरूपं  
 योगीन्द्राणां यदपि परमं भाति निर्वाणमार्गः । त्रय्याधारः प्रणव  
 इति यन्मण्डलं चण्डरश्मेरन्तःसूक्ष्मं बहिरपि बृहन्मुक्तयेऽहं प्रपन्नः  
 ॥ ७ ॥ यस्मिन्तोमः सुरपितृनरैरन्वहं पीयमानः क्षीणः क्षीणः  
 प्रविशति यतो वर्धते चापि भूयः । यस्मिन्वेदा मधुनि सरघाकार-  
 वद्भ्रान्ति चाग्रे तच्चण्डांशोरमितममृतं मण्डलस्थं प्रपद्ये ॥ ८ ॥  
 ऐन्द्रीमाशां पृथुकवपुषा पूरयित्वा क्रमेण क्रान्ताः सप्त प्रकटहरिणा  
 येन पादेन लोकाः । कृत्वा ध्वान्तं विगलितबलिव्यक्ति पाताललीनं  
 विश्वा लोकः स जयति रविः सत्त्वमेवोर्ध्वरश्मिः ॥ ९ ॥ ध्यात्वा  
 ब्रह्म प्रथममतनु प्राणमूले नदन्तं दृष्ट्वा चान्तः प्रणवमुखरं व्याहृतीः  
 सम्यगुक्त्वा । यत्तद्वेदे तदिति सवितुर्ब्रह्मणोक्तं वरेण्यं तद्भर्गाख्यं  
 किमपि परमं धामगर्भं प्रपद्ये ॥ १० ॥ त्वां स्तोष्यामि स्तुतिभि-



रिति मे यस्तु भेदग्रहोऽयं सैवाविद्या तदपि सुतरां तद्विनाशाय  
युक्तः । स्तौम्येवाहं त्रिविधमुदितं स्थूलसूक्ष्मं परं वा विद्योपायः  
पर इति बुधैर्गीयते खल्वविद्या ॥ ११ ॥ योऽनाद्यन्तोऽप्यतनुरगुणो-  
ऽणोरणीयान्महीयान्विश्वाकारः सगुण इति वा कल्पनाकल्पि-  
ताङ्गः । नानाभूतप्रकृतिविकृतीर्दर्शयन् भाति यो वा तस्मै तस्मै  
भवतु परमादित्य नित्यं नमस्ते ॥ १२ ॥ तत्त्वाख्याने त्वयि मुनि-  
जना नेति नेति ब्रुवन्तः श्रान्ताः सम्यक्त्वमिति न च तैरीदृशो  
वेति चोक्तः । तस्मात्तुभ्यं नम इति वचोमात्रमेवास्मि वच्मि प्रायो  
यस्मात्प्रसरतितरां भारती ज्ञानगर्भा ॥ १३ ॥ सर्वाङ्गीणः सकल-  
वपुषामन्तरे योऽन्तरात्मा तिष्ठन्काष्ठे दहन इव नो दृश्यसे युक्ति-  
शून्यैः । यश्च प्राणारणिषु नियतैर्मथ्यमानासु सद्भिर्दृश्यं ज्योति-  
र्भवसि परमादित्य तस्मै नमस्ते ॥ १४ ॥ स्तोता स्तुत्यः स्तुतिरिति  
भवान्कर्तृकर्मक्रियात्मा क्रीडत्येकस्तव नुतिविधावस्वतन्त्रस्ततोऽहम् ।  
यद्वा वच्मि प्रणयसुभगं गोपते तच्च तथ्यं त्वत्तो ह्यन्यत्किमिव  
जगतां विद्यते तन्मृषा स्यात् ॥ १५ ॥ ज्ञानं नान्तःकरणरहितं  
विद्यतेऽस्माद्विधानां त्वं चात्यन्तं सकलकरणागोचरत्वादचिन्त्यः ।  
ध्यानातीतस्त्वमिति न विना भक्तियोगेन लभ्यस्तस्माद्भक्तिं शरण-  
ममृतप्राप्तयेऽहं प्रपन्नः ॥ १६ ॥ हार्दं हन्ति प्रथममुदिता या तमःसं-  
श्रितानां सत्त्वोद्रेकात्तदनु च रजः कर्मयोगक्रमेण । स्वभ्यस्ता च  
प्रथयतितरां सत्त्वमेव प्रपन्ना निर्वाणाय व्रजति शमिनां तेऽर्कं भक्ति-  
स्त्रयीव ॥ १७ ॥ तामासाद्य श्रियमिव गृहे कामधेनुं प्रवासे  
ध्वान्ते भाति धृतिमिव वने योजने ब्रह्मनाडिम् । नावं चास्मिन्  
विषमविषयग्राहसंसारसिन्धौ गच्छेयं ते परमममृतं यन्न शीतं न  
चोष्णम् ॥ १८ ॥ अग्नीषोमावखिलजगतः कारणं तौ मयूखैः

सर्गादाने सृजसि भगवन्हासवृद्धिक्रमेण । तावेवान्तर्विषुवति समौ  
 जुह्वतामात्मवह्नौ द्वावप्यस्तं नयसि युगपन्मुक्तये भक्तिभाजाम्  
 ॥ १९ ॥ स्थूलत्वं ते प्रकृतिगहनं नैव लक्ष्यं ह्यनन्तं सूक्ष्मत्वं वा  
 तदपि सदसद्व्यक्त्यभावादविन्यम् । ध्यायामीत्थं कथमविदितं  
 त्वामनाद्यन्तमन्तस्तस्मादर्कं प्रणयिनि मयि स्वात्मनैव प्रसीद  
 ॥ २० ॥ यत्तद्वेद्यं किमपि परमं शब्दतत्त्वं त्वमन्तस्तत्सद्व्यक्तिं  
 जिगमिषु शनैर्लाति मात्राकलाः खे । अव्यक्तेन प्रणववपुषा बिन्दु-  
 नादोदितं सच्छब्दब्रह्मोच्चरति करणव्यञ्जितं वाचकं ते ॥ २१ ॥  
 प्रातःसंध्यारुणकिरणभागृज्जायं राजसं यन्मध्ये चापि ज्वलदिव  
 यजुः शुक्लभाः सात्त्विकं वा । सायं सामास्तमितकिरणं यत्तमोह्ला-  
 सिरूपं साह्वः सर्गस्थितिलयविधावाकृतित्से त्रयीव ॥ २२ ॥ ये  
 पातालोदधिमुनिनगद्वीपलोकाधिबीजच्छन्दोभूतस्वरमुखनदत्सप्त-  
 सप्तिं प्रपन्नाः । ये चैकाग्रं निरवयववाग्भावमात्राधिरूढं ते त्वामेव  
 स्वरगुणकलावर्जितं यान्त्यनश्वम् ॥ २३ ॥ दिव्यं ज्योतिः सलिल-  
 पवनैः पूरयित्वा त्रिलोकीमेकीभूतं पुनरपि च तत्सारमादाय  
 गोभिः । अन्तर्लीनो विशसि वसुधां तद्रतः सूयसेऽन्नं तच्च  
 प्राणांस्त्वमिति जगतां प्राणभृत्सूर्य आत्मा ॥ २४ ॥ अग्नीषोमौ  
 प्रकृतिपुरुषौ बिन्दुनादौ च नित्यौ प्राणापानावपि दिननिशे ये च  
 सत्यानृते द्वे । धर्माधर्मौ सदसदुभयं योऽन्तरावेश्य योगी  
 वर्तेतात्मन्युपरतमतिनिर्गुणं त्वां विशेत्सः ॥ २५ ॥ गर्भाधान-  
 प्रसवविधये सुप्तयोरिन्दुभासा सापह्वयेनाभिमुखमिव खे कान्त-  
 योर्मध्यसंस्थः । द्यावापृथ्व्योर्वदनकमले गोमुखैर्बोधयित्वा पर्या-  
 येणापिबसि भगवन् षड्रसास्वादलोलः ॥ २६ ॥ सोमं पूर्णामृत-  
 मिव चरुं तेजसा साधयित्वा कृत्वा तेनानलमुखजगत्तर्पणं वैश्व-

देवम् । आमावस्यं विघसमिव खे तत्कलाशेषमभ्यन्ब्रह्माण्डान्तर्गृह-  
 पतिरिव स्वात्मयागं करोषि ॥ २७ ॥ कृत्वा नक्तंदिनमिव जग-  
 द्बीजमाव्यक्तिकं यत्तत्रैवान्तर्दिनकर तथा ब्राह्ममन्यत्ततोऽल्पम् ।  
 दैवं पित्र्यं क्रमपरिगतं मानुषं चाल्पमल्पं कुर्वन्कुर्वन्कलयसि  
 जगत्पञ्चधावर्तनाभिः ॥ २८ ॥ तत्त्वालोके तपनं सुदिने ये परं  
 संप्रबुद्धा ये वा चित्तोपशमरजनीयोगनिद्रामुपेताः । तेऽहोरात्रोपर-  
 मपरमानन्दसंध्यासु सौरं भित्त्वा ज्योतिःपरमपरमं यान्ति  
 निर्वाणसंज्ञम् ॥ २९ ॥ आ ब्रह्मेदं नवमिव जगज्जङ्गमस्थावरान्तं  
 सर्गं सर्गे विसृजसि रवे गोभिरुद्रिक्तसोमैः । दीप्तैः प्रत्याहरसि च  
 लये तद्यथायोनि भूयः सर्गान्तादौ प्रकटविभवां दर्शयन् रश्मि-  
 लीलाम् ॥ ३० ॥ श्रित्वा नित्योपचितमुचितं ब्रह्मतेजःप्रकाशं  
 रूपं सर्गस्थितिलयमुवा सर्वभूतेषु मध्ये । अन्तेवासिष्विव सुगुरुणा  
 यः परोक्षः प्रकृत्या प्रत्यक्षोऽसौ जगति भवता दर्शितः स्वात्मनात्मा  
 ॥ ३१ ॥ लोकाः सर्वे वपुषि नियतं ते स्थितिस्त्वं च तेषामेकै-  
 कस्मिन्युगपदगुणो विश्वहेतोर्गुणीव । इत्थंभूते भवति भगवन्न  
 त्वदन्योऽस्मि सत्यं किं तु ज्ञस्त्वं परमपुरुषोऽहं प्रकृत्यैव चाज्ञः  
 ॥ ३२ ॥ संकल्पेच्छाद्यखिलकरणप्राणवाण्यो वरेण्याः संपन्ना मे  
 त्वदभिनवनाज्जन्म चेदं शरण्यम् । मन्ये चास्तं जिगमिषु शनैः  
 पुण्यपापद्वयं तद्भक्तिश्रद्धे तव चरणयोरन्यथा नो भवेताम् ॥ ३३ ॥  
 सत्यं भूयो जननमरणे त्वत्प्रपन्नेषु न स्तस्तत्राप्येकं तव नुतिफलं  
 जन्म याचे तदित्थम् । त्रैलोक्येशः शम इव परः पुण्यक्रायो-  
 ऽप्ययोनिः संसाराब्धौ म्रुव इव जगत्तारणाय स्थिरः स्याम् ॥ ३४ ॥  
 सौषुम्णेन त्वममृतपथेनैत्य शीतांशुभावं पुष्णास्यग्रे सुरनरपितृन्  
 शान्तभाभिः कलाभिः । पश्चादम्भो विशसि विविधाश्रौषधीस्तद्रतोऽपि

प्रीणास्येवं त्रिभुवनमतस्ते जगन्मित्रतार्क ॥ ३५ ॥ मन्दाक्रान्ते तमसि  
 भवता नाथ दोषावसाने नान्तर्लीना मम मतिरियं गाढनिद्रां  
 जहाति । तस्मादस्तंगमिततमसा पद्मिनीवात्मभासा सौरीत्येषा  
 दिनकर परं नीयतामाशु बोधम् ॥ ३६ ॥ येन ग्रासीकृतमिव  
 जगत्सर्वमासीत्तदस्तं ध्वान्तं नीत्वा पुनरपि विभो तद्व्याघ्रातचित्तः ।  
 धत्से नक्तंदिनमपि गती शुक्लकृष्णे विभज्य त्राता तस्मान्नव  
 परिभवे दुष्कृते मेऽपि भानो ॥ ३७ ॥ आसंसारोपचितसदसत्कर्म-  
 बन्धाश्रितानामाधिग्याधिप्रजनमरणक्षुत्पिपासार्दितानाम् । मिथ्या-  
 ज्ञानप्रबलतमसा नाथ चान्ध्रीकृतानां त्वं नस्त्राता भव करुणया  
 यत्रतत्रस्थितानाम् ॥ ३८ ॥ सत्यासत्यस्खलितवचसां शौचलज्जो-  
 जिज्ञितानामज्ञानानामफलसफलप्रार्थनाकातराणाम् । सर्वावस्थास्व-  
 खिलविषयाभ्यस्तकौतूहलानां त्वं नस्त्राता भव पितृतया भोग-  
 लोलाभकाणाम् ॥ ३९ ॥ यावद्देहं जरयति जरा नान्तकादेत्य दूती  
 नो वा भीमस्त्रिफणभुजगाकारदुर्वारपाशः । गाढं कण्ठे लगति  
 सहसा जीवितं लेलिहानस्तावद्भक्ताभयद सदयं श्रेयसे नः प्रसीद  
 ॥ ४० ॥ विश्वप्राणग्रसनरसनाटोपकोपप्रगल्भं मृत्योर्वक्त्रं दहननय-  
 नोद्दामदंष्ट्राकरालम् । यावद्दृष्ट्वा व्रजति न भिया पञ्चतामेष काय-  
 स्तावन्नित्यामृतमय रवे पाहि नः कांदिशीकान् ॥ ४१ ॥ शब्दाकारं  
 वियदिव वपुस्ते यजुःसामघान्नः ससच्छन्दांस्यपि च तुरगा ऋज्जयं  
 मण्डलं च । एवं सर्वश्रुतिमयतया मदयानुग्रहाद्वा क्षिप्रं मत्तः  
 कृपणकरुणाक्रन्दमाकर्णयेमम् ॥ ४२ ॥ नाशं नास्मच्चरणशरणा  
 यान्त्यपि ग्रस्यमाना देवैरित्थं सितमिव यशो दर्शयन्स्वं त्रिलो-  
 क्याम् । मन्ये सोमं क्षततनुममागर्भवृद्ध्या विवस्वन् शुक्लां छायां  
 नयसि शनकैः स्वां सुषुम्णांशुभासा ॥ ४३ ॥ आस्तां जन्मप्रभृति

भवतः सेवनं तद्धि लोके वाच्यं केनापरिमितफलं भुक्तिमुक्ति-  
 प्रकारम् । ज्योतिर्मात्रं स्मृतिपथमितो जीवितान्तेऽपि भास्वक्षि-  
 र्वाणाय प्रभवसि सतां तेन ते कः समोऽन्यः ॥ ४४ ॥ अप्रत्यक्ष-  
 त्रिदशभजनाद्यत्परोक्षं फलं तत्पुंसां युक्तं भवति हि समं कारणेनैव  
 कार्यम् । प्रत्यक्षस्त्वं सकलजगतां यत्समक्षं फलं मे युष्मद्भक्तेः  
 समुचितमतस्तत्तु याचे यथा त्वाम् ॥ ४५ ॥ ये चारोग्यं दिशति  
 भगवान्सेवितोऽप्येवमाहुस्ते तत्त्वज्ञा जगति सुभगा भोगयोग-  
 प्रधानाः । भुक्तेर्भुक्तेरपि च जगतां यच्च पूर्णं सुखानां तस्यान्योऽर्का-  
 दमृतवपुषः को हि नामास्तु दाता ॥ ४६ ॥ हित्वा हित्वा गुरु-  
 चपलतामप्यनेकाक्षिजार्थान्यैरेकार्थीकृतमिव भवत्सेवनं मत्प्रियार्थम् ।  
 तेषामिच्छान्युपकृतिमहं स्वेन्द्रियाणां प्रियाणामादौ तस्मान्मम  
 दिनपते देहि तेभ्यः प्रसादम् ॥ ४७ ॥ किं तन्नामोच्चरति वचनं  
 यस्य नोच्चारकस्त्वं किं तद्वाच्यं सकलवचसां विश्वमूर्ते न यत्त्वम् ।  
 तस्मादुक्तं यदपि तदपि त्वन्नृतौ भक्तियोगादस्माभिस्तद्भवतु भगवं-  
 स्त्वत्प्रसादेन धन्यम् ॥ ४८ ॥ या पन्थानं दिशति शिशिराद्युत्तरं  
 देवयानं या वा कृष्णं पितृपथमथो दक्षिणं प्रावृडाद्यम् । ताभ्या-  
 मन्या विषुवदभिजिन्मध्यमा कृत्यशून्या धन्या काचित्प्रकृतिपुरु-  
 षावन्तरा मेऽस्तु वृत्तिः ॥ ४९ ॥ स्थित्वा किञ्चिन्मन इव  
 पिबन्सेतुबन्धस्य मध्ये प्राप्योपेयं ध्रुवपदमथो व्यक्तमुद्दाल्य  
 तालु । सत्यादूर्ध्वं किमपि परमं व्योम सोमाग्निशून्यं गच्छेयं त्वां  
 सुरपितृगती चान्तरा ब्रह्मभूतः ॥ ५० ॥ सर्वात्मत्वं सवितुरिति  
 यो वाङ्मनःकायबुद्ध्या रागद्वेषोपशमसमतायोगमेवारुरुक्षुः । धर्मा-  
 धर्मप्रसनरशानामुक्तये युक्तियुक्तां स श्रीसाम्बः स्तुतिमिति रवेः  
 स्वप्रशान्तां चकार ॥ ५१ ॥ भक्तिश्रद्धाद्यखिलतरुणीवल्लभेनेदमुक्तं

श्रीसाम्बेन प्रकटगहनं स्तोत्रमध्यात्मगर्भम् । यः सावित्रं पठति  
नियतं स्वात्मवत्सर्वलोकान्पश्यन्सोऽन्ते व्रजति शुक्वन्मण्डलं चण्ड-  
रश्मेः ॥ ५२ ॥ इति परमरहस्यश्लोकपञ्चाशदेषा तपनवनपुण्या  
सागमब्रह्मचर्चा । हरतु दुरितमस्मद्वर्णिताकर्णिता वो दिशतु च  
शुभसिद्धिं मातृवद्भक्तिभाजाम् ॥ ५३ ॥ इति साम्बप्रणीता  
साम्बपञ्चाशिका संपूर्णा ॥

### १६१. सूर्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ नमो भगवते आदित्यायाखिलजगतामात्मस्व-  
रूपेण कालस्वरूपेण चतुर्विधभूतनिकायानां ब्रह्मादिस्तंबपर्यंतानामंत-  
र्हृदयेषु बहिरपि चाकाश इवोपाधिनाऽव्यवधीयमानो भगवानेक एक  
क्षणलवनिमेषावयवोपचितसंवत्सरगणेनापामादानविसर्गाभ्यामिमां  
लोकयात्रामनुवहति ॥ १ ॥ यदुह वाव विबुधर्षभ सवितरदस्तपत्य-  
नुसवनमहरहरास्त्रायविधिनोपतिष्ठमानानामखिलदुरितवृजिनबीजा-  
वभर्जनभगवतः समभिधीमहि तपनमंडलम् ॥ २ ॥ य इह वाव  
स्थिरचरनिकराणां निजकेतनानां मनहंद्रियासुगणानात्मनः स्वयमा-  
त्मांतर्यामी प्रचोदयति ॥ ३ ॥ य एवेमं लोकमतिकरालवदनांध-  
कारसंज्ञाजगरग्रहगिलितं संमृतकमिव विचेतनमवलोक्यानुकंपया  
परमकारुणिकवीक्ष्यैवोत्थाप्याऽहरहरनुसवनं श्रेयसि स्वधर्माख्या-  
त्मावस्थाने प्रवर्तयत्यवनिपतिरिवासाधूनां भयमुदीरयन्नटति ॥ ४ ॥  
परित आशापालैस्तत्र तत्र कमलकोशांजलिभिरुपहृताह्रणः ॥ ५ ॥  
अथ ह भगवंस्तव चरणनलिनयुगलं त्रिभुवनगुरुभिर्वदितमहमया-  
तयामयजुःकाम उपसरामीति ॥ ६ ॥ इति श्रीमद्भागवते द्वादश-  
स्कंधे याज्ञवल्क्यकृतं सूर्यस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## १६२. सूर्याथर्वशीर्षम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीसूर्याथर्वशीर्षस्य ब्रह्मा ऋषिः,  
 आदित्यो देवता, गायत्री छंदः, हंसाद्यन्निनारायणयुक्तं बीजं,  
 हृल्लेखा शक्तिः, द्विपदादिसर्गसंयुक्तं कीलकं, धर्मार्थकाममोक्षार्थं  
 जपे विनियोगः ॥ षट्स्वरारूढबीजेन षडंगं रक्तांबुजसंस्थितं  
 सप्ताश्वरथिनं हिरण्यवर्णं चतुर्भुजं पद्मद्वयाभयवरदहस्तं कालचक्र-  
 प्रणेतारं च श्रीसूर्यनारायणं य एवं वेद स वै ब्राह्मणः ॥ ॐ भूः  
 ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यं  
 ॐ तत्सवितु० । परो रजसेसावदोम् । ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं  
 ब्रह्म भूर्भुवःसुवरोम् । सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च । सूर्याद्वै  
 खल्विमानि भूतानि जायंते । सूर्याद्यज्ञाः पर्जन्योऽन्नमात्मा ।  
 नमस्ते आदित्याय । त्वमेव केवलं कर्तासि । त्वमेव प्रत्यक्षं विष्णु-  
 रसि । त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वमेव प्रत्यक्षं रुद्रोऽसि । त्वमेव  
 प्रत्यक्षमृगासि । त्वमेव प्रत्यक्षं यजुरसि । त्वमेव प्रत्यक्षं सामासि ।  
 त्वमेव प्रत्यक्षमथर्वासि । त्वमेव सर्वं छंदोऽसि । आदित्याद्वायु-  
 र्जायते । आदित्याद्भूमिर्जायते । आदित्यादापो जायंते । आदित्या-  
 ञ्ज्योतिर्जायते । आदित्याद्व्योम दिशो जायंते । आदित्याद्वेदा  
 जायंते । आदित्याद्देवा जायंते । आदित्यो वा एष एतन्मंडलं  
 तपति । असावादित्यो ब्रह्म । आदित्योऽतःकरणमनोबुद्धिचित्ता-  
 हंकाराः । आदित्यो वै न्यानसमानोदानापानप्राणाः । आदित्यो वै  
 श्रोत्रत्वक्चक्षूरसनानासाः । आदित्यो वै वाक्पाणिपादोपस्थपा-  
 यूनि । आदित्यो वै शब्दस्पर्शरूपरसगंधाः । आदित्यो वै वचना-  
 दानगमनानंदविसर्गाः । आनंदमयो ज्ञानमयो विज्ञानमय  
 आदित्यः । नमो मित्राय भानवे मृत्योर्मा पाहि आजिष्णवे विश्व-

हेतवे नमः । सूर्यो नो दिवस्पातु वातो अंतरिक्षात् । अग्निर्नः  
 पार्थिवेभ्यः । सूर्याद्भवन्ति भूतानि । सूर्येण पालितानि तु । सूर्ये  
 लयं प्राप्नुवन्ति । यः सूर्यः सोऽहमेव च । चक्षुर्नो देवः सविता ।  
 चक्षुर्न उत पर्वतः । चक्षुर्धाता दधातु नः । आदित्याय विद्महे  
 सहस्रकराय धीमहि । तन्नः सूर्यः प्रचोदयात् । सविता पश्चात्तात् ।  
 सविता पुरस्तात् । सवितोत्तरात्तात् । सविताधरात्तात् । सविता नः  
 सुवतु सर्वतातिम् । सविता नो रासतां दीर्घमायुः । ओमित्येकाक्षरं  
 ब्रह्म । ऋणिरिति द्वे अक्षरे । सूर्य इत्यक्षरद्वयम् । आदित्य इति  
 त्रीण्यक्षराणि । एतद्वै सूर्यस्याष्टाक्षरं मनुं यः सदाऽहरहर्जपति सो  
 ब्रह्मण्यो ब्राह्मणो भवति । सूर्याभिमुखं जप्त्वा महाव्याधिभया-  
 त्प्रमुच्यते । अलक्ष्मीर्नश्यति । अभक्ष्यभक्षणात्पूतो भवति ।  
 अपेयपानात्पूतो भवति । अगम्यागमनात्पूतो भवति । द्राव्यसंभा-  
 षणात्पूतो भवति । मध्याह्ने सूर्याभिमुखः पठेत् । सद्यः पंचमहा-  
 पापात्प्रमुच्यते । सैषा सावित्री विद्या न कस्यचित्प्रशंसेत् ।  
 य एतन्महाभागः प्रातः पठति स भाग्यवान् जायते । पशून्विदति  
 वेदार्थं लभते । त्रिकालं जप्त्वा ऋतुशतफलं प्राप्नोति । हस्तादित्ये  
 जपति स महामृत्युं तरति । य एवं वेद । इत्युपनिषत् ॥ इति  
 सूर्याथर्वशीर्षं संपूर्णम् ॥





## कार्तिकेयस्तोत्राणि ।

शक्तिहस्तं विरूपाक्षं शिखिवाहं षडाननम् ।

दारुणं रिपुरोगघ्नं भावये कुक्कुटध्वजम् ॥

१६३. सुब्रह्मण्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शरणागतमातुरमाधिजितं करुणाकर कामद  
कामहतम् । शरकाननसंभवचारुहृत्वे परिपालय तारक मारक  
माम् ॥ १ ॥ हरसारसमुद्भव हैमवतीकरपल्लवलालित कन्न-  
तनो । सुरवैरिविरिंचिमुदम्बुनिधे परिपालय ० ॥ २ ॥ गिरिजासुत  
सायकभिन्नगिरे सुरसिन्धुतनूज सुवर्णरुचे । शिशिजाशिखानल  
वाहन हे ॥ परिपालय ० ॥ ३ ॥ जय विप्रजनप्रिय वीर नमो जय  
भक्तजनप्रिय भद्र नमः । जय देव विशाखकुमार नमः  
परिपालय ० ॥ ४ ॥ पुरतो भव मे परितो भव मे पथि मे भगवन्  
भव रक्ष गतम् । वितराजिषु मे विजयं भगवन् ॥ परिपालय ॥ ५ ॥  
शरदिंदुसमानषडाननया सरसीरुहचारुविलोचनया । निरुपाधिकया  
निजबालजया परिपालय ० ॥ ६ ॥ इति कुक्कुटकेतुमनुस्मरतः  
पठतामपि षण्मुखषड्भुजमिदम् । नमतामपि नन्दनमिन्दुभृतो न  
भयं कचिदस्ति शरीरभृताम् ॥ ७ ॥ इति सुब्रह्मण्यस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

१६४. सुब्रह्मण्यभुजङ्गप्रयातम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भजेऽहं कुमारं भवानीकुमारं गलोल्लासिहारं  
नमस्कृद्विहारम् । रिपुस्तोमसारं नृसिंहावतारं सदा निर्विकारं गुहं  
निर्विचारम् ॥ १ ॥ नमामीशपुत्रं जपाशोणगात्रं सुरारातिशत्रुं  
रवीन्द्रशिनेत्रम् । महाबर्हिपत्रं शिवास्याब्जमित्रं प्रभासत्कलत्रं पुराणं  
पवित्रम् ॥ २ ॥ अनेकार्ककोटिप्रभावज्वलंतं मनोहारिमाणिक्य-  
भूषोब्जवलंतम् । श्रितानामभीष्टं सुशांतं नितांतं भजे षण्मुखं तं

शरच्चंद्रकांतम् ॥ ३ ॥ कृपावारिकलोलभास्वत्कटाक्षं विराजन्मनोहा-  
 रिशोणाम्बुजाक्षम् । प्रयोगप्रदानप्रवाहैकदक्षं भजे कांतिकांताम्बर-  
 स्तोमरक्षम् ॥ ४ ॥ सुकस्तूरिकाबिंदुभास्वललाटं दयापूर्णचित्तं महा-  
 देवपुत्रम् । रवींदूलसद्गतराजत्किरीटं भजे श्रीडिताकाशगङ्गासुकूटम्  
 ॥ ५ ॥ मुकुंदप्रसूनावलीशोभितांतं शरत्पूर्णचंद्रस्य षट्कांतिकांतम् ।  
 शिरीषप्रसूनाभिरामं भवंतं भजे देवसेनापतिं वल्लभं तम् ॥ ६ ॥  
 सुलावण्यसत्सूर्यकोटिप्रकाशं प्रभुं तारकारिं द्विषड्बाहुमीशम् ।  
 निजार्कप्रभादीप्यमानाखिलाशं भजे पार्वतीप्राणपुत्रं सुकेशम्  
 ॥ ७ ॥ अजं सर्वलोकप्रियं लोकनाथं गुहं शूरपद्मादिदम्भोलिधारम् ।  
 सुबाहुं सुनासापुटं सच्चरित्रं भजे कार्तिकेयं सदा बाहुलेयम् ॥ ८ ॥  
 शरारण्यसम्भूतमिन्द्रादिवंशं द्विषड्बाहुसङ्ख्यायुधश्रेणिर्मयम् ।  
 मरुत्सारथिं कुक्कुटेशं सुकेतुं भजे योगिहृत्पद्मव्यासाधिवासम् ॥ ९ ॥  
 विरिंचींद्र वल्लीशचीदेवेशमुख्य प्रशस्तामरस्तोमसंस्तूयमान । दिश  
 त्वं दयालो श्रियं निश्चलां मे विना त्वां गतिः का प्रभो मे प्रसीद  
 ॥ १० ॥ पदांभोजसेवासमायातवृंदारकश्रेणिकोटीरभास्वललाटम् ।  
 कलत्रोल्लसत्पार्श्वयुग्मं वरेण्यं भजे देवमाद्यं त्वहीनप्रभावम्  
 ॥ ११ ॥ भवांभोधिमध्ये तरङ्गे पतंतं प्रभो मां सदा पूर्णदृष्ट्या  
 समीक्ष्य । भवद्भक्तिनावोद्धर त्वं दयालो सुगत्यंतरं नास्ति देव  
 प्रसीद ॥ १२ ॥ गले रत्नभूषं तनौ मञ्जुवेषं करे ज्ञानशक्तिं  
 दरस्मेरमास्ये । कटिन्यस्तपाणिं शिखिस्थं कुमारं भजेऽहं गुहादन्यदैवं  
 न मन्ये ॥ १३ ॥ दयाहीनचित्तं परद्रोहपात्रं सदा पापशीलं गुरोर्भक्ति-  
 हीनम् । अनन्यावलम्बं भवन्नेत्रपात्रं कृपाशील मां भो पवित्रं कुरु  
 त्वम् ॥ १४ ॥ महासेन गाङ्गेय वल्लीसहाय प्रभो तारकारे षडास्या-  
 मरेश । सदा पायसान्नप्रदातुर्गृहेति स्मरिष्यामि भक्त्या सदाऽहं विभो

त्वाम् ॥ १५ ॥ प्रतापस्य बाहो नमद्वीरबाहो प्रभो कार्तिकेयेष्टकाम-  
प्रदेति । यदा ये पठन्ते भवंतं तदैव प्रसन्नस्तु तेषां बहुश्रीं ददासि  
॥ १६ ॥ अपारेऽतिदारिद्र्यपाथोधिमध्ये भ्रमन्तं जनिग्राहपूर्णं नितां-  
तम् । महासेन मामुद्धर त्वं कटाक्षावलोकेन किञ्चित्प्रसीद प्रसीद  
॥ १७ ॥ स्थिरां देहि भक्तिं भवत्पादपद्मे श्रियं निश्चलां देहि महां  
कुमार । गुहं चंद्रतारं स्ववंशाभिवृद्धिं कुरु त्वं प्रभो मे मनःकल्प-  
साल ॥ १८ ॥ नमस्ते नमस्ते महाशक्तिपाणे नमस्ते नमस्ते लसद्ब्र-  
पाणे । नमस्ते नमस्ते कटिन्यस्तपाणे नमस्ते नमस्ते सदाभीष्टपाणे ॥ १९ ॥  
नमस्ते नमस्ते महाशक्तिधारिन् नमस्ते सुराणां महासौख्यदायिन् ।  
नमस्ते सदा कुक्कुटेशाख्यक त्वं समस्तापराधं विभो मे क्षमस्व  
॥ २० ॥ य एको मुनीनां हृदब्जाधिवासः शिवाङ्कं समारुह्य सत्पीठ-  
कल्पम् । विरिञ्चाय मंत्रोपदेशं चकार प्रमोदेन सोऽयं तनोतु श्रियं मे  
॥ २१ ॥ यमाहुः परं वेद शूरेषु मुख्यं सदा यस्यशक्त्या जगद्गीत-  
भीतम् । यमालोक्य देवाः स्थिरं स्वर्गपालाः सदोद्धाररूपं चिदानन्द-  
मीडे ॥ २२ ॥ गुहस्तोत्रमेतत्कृतांतारिसूनोः भुजङ्गप्रयातेन पद्मेन  
कांतम् । जना ये पठन्ते सदा ते, महांतो मनोवाञ्छितं  
सर्वकामान् लभन्ते ॥ २३ ॥ इति सुब्रह्मण्यभुजङ्गप्रयातं संपूर्णम् ॥

### १६५. कार्तिकेयस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ स्कंद उवाच ॥ योगीश्वरो महासेनः कार्ति-  
केयोऽभिनन्दनः । स्कंदः कुमारः सेनानीः स्वामी शंकरसंभवः  
॥ १ ॥ गांगेयस्ताम्रचूडश्च ब्रह्मचारी शिखिध्वजः । तारकारिस्मा-  
पुत्रः क्रौंचारिश्च षडाननः ॥ २ ॥ शब्दब्रह्मसमुद्रश्च सिद्धः  
सारस्वतो गुहः । सनत्कुमारो भगवान् भोगमोक्षफलप्रदः ॥ ३ ॥  
शरजन्मा गणाधीश पूर्वजो मुक्तिमार्गकृत् । सर्वागमप्रणेता च

चांछितार्थप्रदर्शनः ॥ ४ ॥ अष्टाविंशतिनामानि मदीयानीति यः  
पठेत् । प्रत्यूषं श्रद्धया युक्तो मूको वाचस्पतिर्भवेत् ॥ ५ ॥ महा-  
मंत्रमयानीति मम नामानुकीर्तनम् । महाप्रज्ञामवाप्नोति नात्र  
कार्या विचारणा ॥ ६ ॥ इति श्रीरुद्रयामले प्रज्ञाविवर्धनाख्यं  
श्रीमत्कार्तिकेयस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १६६. सुब्रह्मण्याष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ हे स्वामिनाथ करुणाकर दीनबंधो श्रीपार्वतीश-  
मुखपंकजपद्मबंधो । श्रीशादिदेवगणपूजितपादपद्म वल्लीसनाथ  
मम देहि करावलंबम् ॥ १ ॥ देवाधिदेवसुत देवगणाधिनाथ  
देवेंद्रबंध मृदुपङ्कजमंजुपाद । देवर्षिनारदमुनींद्रसुगीतकीर्ते वल्लीस-  
नाथ मम देहि करावलंबम् ॥ २ ॥ नित्यान्नदाननिरताखिलरोग-  
हारिन् भाग्यप्रदानपरिपूरितभक्तकाम । श्रुत्यागमप्रणववाच्यनिज-  
स्वरूप वल्लीसनाथ मम देहि करावलंबम् ॥ ३ ॥ क्रौञ्चासुरेन्द्र  
परिवंदन शक्तिशूलचापादिशस्त्रपरिमंडितदिव्यपाणे । श्रीकुंडलीश-  
धरतुण्डशिखींद्रवाह वल्लीसनाथ मम देहि करावलंबम् ॥ ४ ॥  
देवाधिदेवरथमंडलमध्यवेद्य देवेंद्रपीठनकरं दृढचापहस्तम् । शूरं  
निहत्य सुरकोटिभिरीड्यमान वल्लीसनाथ मम देहि करावलंबम्  
॥ ५ ॥ हारादिरत्नमणियुक्तकिरीटहारकेयूरकुंडललसत्कवचाभि-  
रामम् । हे वीर तारकजयामरवृंदबंध वल्लीसनाथ मम देहि  
करावलंबम् ॥ ६ ॥ पञ्चाक्षरादिमनुमंत्रितगाङ्गतोयैः पञ्चाभृतैः  
प्रमुदितेन्द्रमुखैर्मुनीन्द्रैः । पट्टाभिषिक्तहरियुक्त परासनाथ मम देहि  
करावलंबम् ॥ ७ ॥ श्रीकार्तिकेय करुणामृतपूर्णदृष्ट्या कामादिरोग-  
कलुषीकृतदुष्टचित्तम् । सित्तवा तु मामव कलाधरकांतिकांत्या  
वल्लीसनाथ मम देहि करावलंबम् ॥ ८ ॥ सुब्रह्मण्याष्टकं पुण्यं ये  
पठन्ति द्विजोत्तमाः । ते सर्वे मुक्तिमायांति सुब्रह्मण्यप्रसादतः

॥ ९ ॥ सुब्रह्मण्याष्टकमिदं प्रातरुत्थाय यः पठेत् । कोटिजन्मकृतं  
पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥ १० ॥ इति सुब्रह्मण्याष्टकं संपूर्णम् ॥

१६७. सुब्रह्मण्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ स्कंदो गुहः षण्मुखश्च फालनेत्रसुतः प्रभुः ।  
पिङ्गलः कृत्तिकासूनुः शिखिबाहो द्विषड्भुजः ॥ १ ॥ द्विषड्नेत्रः  
शक्तिधरः पिशिताशप्रभञ्जनः । तारकासुरसंहारी रक्षोबलविमर्दनः  
॥ २ ॥ मत्तः प्रमत्त उन्मत्तः सुरसैन्यसुरक्षकः । देवसेनापतिः प्राज्ञः  
कृपालुर्भक्तवत्सलः ॥ ३ ॥ उमासुतः शक्तिधरः कुमारः क्रौञ्च-  
दारणः । सेनानीरभिजन्मा च विशाखः शङ्करात्मजः ॥ ४ ॥ शिवस्वामी  
गणस्वामी सर्वस्वामी सनातनः । अनंतशक्तिरक्षोभ्यः पार्वतीप्रियनन्दनः  
॥ ५ ॥ गङ्गासुतः शरोद्भूत आहूतः पावकात्मजः । जृम्भः प्रजृम्भ  
उज्जृम्भः कमलासनसंस्तुतः ॥ ६ ॥ एकवर्णो द्विवर्णश्च त्रिवर्णः  
सुमनोहरः । चतुर्वर्णः पञ्चवर्णः प्रजापतिरहर्षतिः ॥ ७ ॥ अग्निगर्भः  
शमीगर्भो विश्वरेताः सुरारिहा । हरिद्वर्णः शुभकरो बटुश्च पटुवेष-  
भृत् ॥ ८ ॥ पूषा गभस्तिर्गहनश्चंद्रवर्णः कलाधरः । मायाधरो  
महामायी कैवल्यः शङ्करात्मजः ॥ ९ ॥ विश्वयोनिरमेयात्मा तेजो-  
निधिरनामयः । परमेष्ठी परब्रह्मा वेदगर्भो विराट्सुतः ॥ १० ॥  
पुलिंदकन्याभर्ता च महासारस्वतावृतः । आश्रिताखिलदाता च  
रोगघ्नो रोगनाशनः ॥ ११ ॥ अनंतमूर्तिरानंदः शिखंडिकृत-  
केतनः । डम्भः परमडम्भश्च महाडम्भो वृषाकपिः ॥ १२ ॥ कारणो-  
त्पत्तिदेहश्च कारणानीतविग्रहः । अनीश्वरोऽमृतः प्राणः प्राणायाम-  
परायणः ॥ १३ ॥ विरुद्धहंता वीरघ्नो रक्तश्यामगलोऽपि च । सुब्रह्मण्यो  
गृहः प्रीतो ब्राह्मण्यो ब्राह्मणप्रियः ॥ वंशवृद्धिकरो वेदवेद्योऽक्षय-  
फलप्रदः ॥ १४ ॥ इति सुब्रह्मण्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## देवीस्तोत्राणि ।



सिंदूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुर-  
त्तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम् ॥  
पाणिभ्यामलिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं  
सौम्यां रत्नघटस्थरक्तचरणां ध्यायेत् परामंबिकाम् ॥

## देवीस्तोत्राणि ।

१६८. देव्यथर्वशीर्षम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं  
महादेवीति साऽब्रवीदहं ब्रह्मस्वरूपिणी । मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं  
जगत् । शून्यं चाशून्यं च । अहमानंदानानंदौ । अहं विज्ञानाविज्ञाने ।  
अहं ब्रह्माब्रह्मणी । द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये । इति चाथर्वणी श्रुतिः ।  
अहं पंचभूतानि । अहं पंचतन्मात्राणि । अहमखिलं जगत् ।  
वेदोऽहमवेदोऽहम् । विद्याहमविद्याहम् । अजाहमनजाहम् । अध-  
श्चोर्ध्वं च तिर्यक्चाहम् । अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि । अहमादित्यैस्त  
विश्वदेवैः । अहमित्रावरुणावुभौ बिभर्मि । अहमिन्द्राग्नी अहमश्विना  
उभौ । अहं सोमं त्वष्टारं पूषणं भगं दधामि । अहं विष्णुमुत्क्रमम् ।  
ब्रह्माणमुत् प्रजापतिं दधामि । अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये  
यजमानाय सुव्रते । अहं राज्ञी संगमनी वसूनां चिकितुषी  
प्रथमा यज्ञियानाम् । अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वतः  
समुद्रे । य एवं वेद स दैवी संपदमाप्नोति । ते देवा अब्रुवन् ।  
नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै  
नियताः प्रणताः स्म ताम् । तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं  
कर्मफलेषु जुष्टाम् । दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्यामहेऽसुराक्षाशयिष्यै ते  
नमः । देवीं वाचमजनयंत देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति । सा  
नो मंद्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुपसुष्टुतैतु ॥ कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतां  
वैष्णवीं स्कंदमातरम् । सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनां  
शिवाम् । महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि । तन्नो देवी  
प्रचोदयात् । अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव । तां देवां

अन्वजायंत भद्रा अमृतबंधवः ॥ कामे योनिः कमला वज्रपाणि-  
 गुहा हंसा मातलिश्चाभ्रमिंद्रः । पुनर्गुहा सकला मायया चापृथक्  
 क्लेशा विश्वमातादिविद्याः ॥ एषात्मशक्तिः । एषा विश्वमोहिनी  
 पाशांकुशधनुर्बाणधरा । एषा श्री महाविद्या । य एवं वेद स शोकं  
 तरति । नमस्ते भगवति मातरस्मान्पाहि सर्वतः । सैषा वैष्णव्यष्टौ  
 वसवः सैवैकादश रुद्राः सैषा द्वादशादित्याः सैषा विश्वेदेवाः सोमपा  
 असोमपाश्च सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाचयक्षसिद्धाः ।  
 सैषा सत्त्वरजस्तमांसि सैषा ब्रह्मविष्णुरुद्ररूपिणी सैषा प्रजापतींद्र-  
 मनवः सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतिःकलाकाष्ठादिविश्वरूपिणी तामहं  
 प्रणौमि नित्यम् । पापापहारिणी देवी भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी ।  
 अनंतां विजयां शुद्धां शरण्यां सर्वदां शिवाम् । वियदाकारसंयुक्तं  
 वीतिहोत्रसमन्वितम् । अर्धदुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम् ।  
 एवमेकाक्षरं मंत्रं यतयः शुद्धचेतसः । ध्यायन्ति परमानन्दमया  
 ज्ञानांबुराशयः । वाङ्मया ब्रह्मभूस्तस्मात्पञ्चवक्त्रसमन्वितम् । सूर्यो  
 वामश्रोत्रबिंदुसंयुक्ताष्टतृतीयकम् । नारायणेन संमिश्रो वायुश्चा-  
 धारयुक्ततः । विच्चेनवार्णकोणस्य महानानन्ददायकः । हृत्पुंडरीक-  
 मध्यस्थां प्रातःसूर्यसमप्रभाम् । पाशांकुशधरां सौम्यां वरदाभय-  
 हस्तकाम् । त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुहं भजे । भजामि त्वां  
 महादेवि महाभयविनाशिनि । महादारिद्र्यशमनि महाकारुण्य-  
 रूपिणि । यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया ।  
 यस्या अंतो न लभ्यते तस्मादुच्यते अनंता । यस्या लक्षं  
 नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्षा । यस्या जननं नोपलक्ष्यते  
 तस्मादुच्यते अजा । एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते एका ।  
 एकैव विश्वरूपिणी तस्मादुच्यतेऽनेका । अत एवोच्यतेऽज्ञे-



याऽनंतलक्ष्याऽजैकानेका । मंत्राणां मातृका देवी शब्दानां  
ज्ञानरूपिणी । ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यानां शून्यसाक्षिणी ॥  
यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता । तां दुर्गां दुर्गमां  
देवीं दुराचारविघातिनीम् । नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णव-  
तारिणीम् । इदमथर्वशीर्षं योऽधीते । स पंचाथर्वशीर्षफलमा-  
प्नोति । इदमथर्वशीर्षं ज्ञात्वा योऽर्चां स्थापयति । शतलक्षं  
प्रजप्तापि नार्चाशुद्धिं च विंदति । शतमष्टोत्तरं चास्य पुरश्चर्याविधिः  
स्मृतः । दशवारं पठेद्यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते । महादुर्गाणि  
तरति महादेव्याः प्रसादतः । सायमधीयानो दिवसकृतं पापं  
नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायंप्रातः  
प्रयुज्जानोऽपापो भवति । निशीथे तुरीयसंध्यायां जप्त्वा  
वाक्सिद्धिर्भवति । नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा देवतासांनिध्यं  
भवति । भौमाश्विन्यां महादेवीसंनिधौ जप्त्वा महामृत्युं तरति  
स महामृत्युं तरति । य एवं वेद । इत्युपनिषत् ॥ इति  
देव्यथर्वशीर्षं संपूर्णम् ॥

### १६९. देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ न मंत्रं नो यंत्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो  
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः । न जाने मुद्रास्ते  
तदपि च न जाने विलपनं परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम्  
॥ १ ॥ विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया विधेयाशक्यत्वात्तव  
चरणयोर्या च्युतिरभूत् । तदेतत्क्षंतव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे  
कुपुत्रो जायेत कचिदपि कुमाता न भवति ॥ २ ॥ पृथिव्यां  
पुत्रास्ते जननि बहवः संति सरलाः परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽयं  
तव सुतः । मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे कुपुत्रो

जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥ ३ ॥ जगन्मातर्मातस्तव  
 चरणसेवा न रचिता न वा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया ।  
 तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि  
 कुमाता न भवति ॥ ४ ॥ परित्यक्त्वा देवान्विविधविधसेवाकुल-  
 तया मया पंचाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि । इदानीं चेन्मातस्तव  
 यदि कृपा नापि भविता निरालंबो लंबोदरजननि कं यामि  
 शरणम् ॥ ५ ॥ श्वपाको जलपाको भवति मधुपाकोपमगिरा  
 निरातंको रंको विहरति चिरं कोटिकनकैः । तवापणै कर्णे विशति  
 मनुवर्णे फलमिदं जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ  
 ॥ ६ ॥ चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो जटाधारी कंठे  
 भुजगपतिहारी पशुपतिः । कपाली भूतेशो भजति जगदीशैक-  
 पदवीं भवानि त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम् ॥ ७ ॥ न  
 मोक्षस्याकांक्षा न च विभववांछापि च न मे न विज्ञानापेक्षा  
 शशिमुखि सुखेच्छापि न पुनः । अतस्त्वां संयाचे जननि जननं  
 यातु मम वै मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः  
 ॥ ८ ॥ नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः किं रूक्षचित्तनपरैर्न  
 कृतं वचोभिः । श्यामे त्वमेव यदि किंचन मय्यनाथे धत्से कृपा-  
 मुचितमंब परं तवैव ॥ ९ ॥ आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं करोमि  
 दुर्गे करुणार्णवे शिवे । नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः क्षुधातृषार्ता  
 जननीं स्मरन्ति ॥ १० ॥ जगदंब विचित्रमत्र किं परिपूर्णा  
 करुणाऽस्ति चेन्मयि । अपराधपरंपरावृतं न हि माता समुपेक्षते  
 सुतम् ॥ ११ ॥ मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि ।  
 एवं ज्ञात्वा महादेवि यथा योग्यं तथा कुरु ॥ १२ ॥ इति  
 श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं देव्यपराध-  
 क्षमापनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

१७०. आनंदलहरी ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भवानि स्तोतुं त्वां प्रभवति चतुर्भिर्न वदनैः  
 प्रजानामीशानस्त्रिपुरमथनः पंचभिरपि । न षड्भिः सेनानीर्दश-  
 शतमुखैरप्यहिपतिस्तदाऽन्येषां केषां कथय कथमस्मिन्नवसरः  
 ॥ १ ॥ घृतक्षीरद्राक्षामधुमधुरिमा कैरपि पदैर्विशिष्यानाख्येयो  
 भवति रसनामात्रविषयः । तथा ते सौंदर्यं परमशिवदृष्ट्यात्रविषयः  
 कथंकारं ब्रूमः सकलनिगमाऽगोचरगुणे ॥ २ ॥ मुखे ते तांबूलं  
 नयनयुगले कज्जलकला ललाटे काश्मीरं विलसति गले मौक्तिक-  
 लता । स्फुरत्कांची शाटी पृथुकटितटे हाटकमयी भजामस्त्वां  
 गौरीं नगपतिकिशोरीमविरतम् ॥ ३ ॥ विराजन्मन्दारद्रुमकुसुम-  
 हारस्तनतटी नदद्वीणानादश्रवणविलसत्कुण्डलगुणा । नतांगी मातंगी  
 रुचिरगतिभंगी भगवती सती शंभोरंभोरुहचटुलचक्षुर्विजयते  
 ॥ ४ ॥ नवीनार्कभ्राजन्मणिकनकभूषापरिकरैर्वृतांगी सारंगी  
 रुचिरनयनांगीकृतशिवा । तडित्पीता पीतांबरललितमंजीरसुभगा  
 ममाऽपर्णा पूर्णा निरवधिसुखैरस्तु सुमुखी ॥ ५ ॥ हिमाद्रेः  
 संभूता सुललितकरैः पलवयुता सुपुष्पा मुक्ताभिर्भ्रमरकलिता  
 चालकभरैः । कृतस्थाणुस्थाना कुचफलनता सूक्तिसरसा रुजां  
 हंत्री गंत्री विलसति चिदानंदलतिका ॥ ६ ॥ सपर्णामाकीर्णा कति-  
 पयगुणैः सादरमिह श्रयंत्यन्ये वल्लीं मम तु मतिरेवं विलसति ।  
 अपर्णैका सेव्या जगति सकलैर्यत्परिवृतः पुराणोऽपि स्थाणुः  
 फलति किल कैवल्यपदवीम् ॥ ७ ॥ विधात्री धर्माणां त्वमसि  
 सकलान्नायजननी त्वमर्थानां मूलं धनदनमनीयाङ्गिकमले ।  
 त्वमादिः कामानां जननि कृतकंदर्पविजये सतां भक्तेर्बीजं त्वमसि  
 परमब्रह्ममहिषी ॥ ८ ॥ प्रभूता भक्तिसे यदपि न ममालोलमनस-

स्त्वया तु श्रीमत्या सद्यमवलोक्योऽहमधुना । पयोदः पानीयं  
दिशति मधुरं चातकमुखे भृशं शंके कैर्वा विधिभिरनुनीता मम  
मतिः ॥ ९ ॥ कृपापांगालोकं वितर तरसा साधुचरिते न ते  
युक्तोपेक्षा मयि शरणदीक्षामुपगते । न चेदिष्टं दद्यादनुपदमहो  
कल्पलतिका विशेषः सामान्यैः कथमितरवल्लीपरिकरैः ॥ १० ॥  
महांतं विश्वासं तव चरणपंकेरुहयुगे निधायान्यब्रैवाश्रितमिह मया  
दैवतमुमे । तथापि त्वच्चेतो यदि मयि न जायेत सद्यं निरालंबो  
लंबोदरजननि कं यामि शरणम् ॥ ११ ॥ अयःस्पर्शं लग्नं सपदि  
लभते हेमपदवीं यथा रथ्यापाथः शुचि भवति गंगौघमिलितम् ।  
तथा तत्तत्पापैरतिमलिनमंतर्मम यदि त्वयि प्रेम्णासक्तं कथमिव  
न जायेत विमलम् ॥ १२ ॥ त्वदन्यस्मादिच्छाविषयफललाभेन  
नियमस्त्वमर्थानामिच्छाधिकमपि समर्था वितरणे । इति प्राहुः  
प्राञ्चः कमलभवनाद्यास्त्वयि मनस्त्वदासक्तं नक्तं दिवमुचितमीशानि  
कुरु तत् ॥ १३ ॥ स्फुरन्नानारत्नस्फटिकमयभित्तिप्रतिफलं त्वदाकारं  
चंचच्छशधरविलासौवशिखरम् । मुकुंदब्रह्मोदग्रभृतिपरिवारं विज-  
यते तवागारं रम्यं त्रिभुवनमहाराजगृहिणि ॥ १४ ॥ निवासः  
कैलासे विधिशतमखाद्याः स्तुतिकराः कुटुंबं त्रैलोक्यं कृतकरपुटः  
सिद्धिनिकरः । महेशः प्राणेशस्तद्वनिधराशीशतनये न ते  
सौभाग्यस्य कचिदपि मनागस्ति तुलना ॥ १५ ॥ वृषो वृद्धो  
यानं विषमशनमाशा निवसनं श्मशानं क्रीडाभूर्भुजगनिवहो  
भूषणनिधिः । समग्रा सामग्री जगति विदितैव स्मररिपोर्यदेतस्यै-  
श्वर्यं तव जननि सौभाग्यमहिमा ॥ १६ ॥ अशेषब्रह्मांडप्रलयविधि-  
नैसर्गिकमतिः श्मशानेष्वासीनः कृतभसितलेपः पशुपतिः । दधौ  
कंठे हालाहलमखिलभूगोलकृपया भवत्याः संगत्याः फलमिति च

कल्याणि कलये ॥ १७ ॥ त्वदीयं सौंदर्यं निरतिशयमालोक्य  
परया भियैवासीद्वंगा जलमयतनुः शैलतनये । तदेतस्यास्ताम्य-  
द्वदनकमलं वीक्ष्य कृपया प्रतिष्ठामातेने निजशिरसि वासेन  
गिरिशः ॥ १८ ॥ विशालश्रीखंडद्रवमृगमदाकीर्णघुसृणः प्रसून-  
व्यामिश्रं भगवति तवाभ्यंगसलिलम् । समादाय खट्वा चलितपद-  
पांसून्निजकरैः समाधत्ते सृष्टिं विबुधपुरपंकेरुहदशाम् ॥ १९ ॥  
वसंते सानंदे कुसुमितलताभिः परिवृते स्फुरन्नानापद्मे सरसि  
कलहंसारिसुभगे । सखीभिः खेलंतीं मलयपवनांदोलितजलैः स्मरे-  
द्यस्त्वां तस्य ज्वरजनितपीडाऽपसरति ॥ २० ॥ इति श्रीमत्परम-  
हंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितानंदलहरी संपूर्णा ॥

### १७१. त्रिपुरसुंदरीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कदंबवनचारिणीं मुनिकदंबकादंबिनीं नितंब-  
जितभूधरां सुरनितंबिनीसेविताम् । नवांबुरुहलोचनामभिनवांबुद-  
श्यामलां त्रिलोचनकुटुंबिनीं त्रिपुरसुंदरीमाश्रये ॥ १ ॥ कदंब-  
वनवासिनीं कनकवल्लकीधारिणीं महार्हमणिहारिणीं मुखसमुलस-  
द्धारुणीम् । दयाविभवकारिणीं विशदलोचनीं चारिणीं त्रिलोचन-  
कुटुंबिनीं त्रिपुरसुंदरीमाश्रये ॥ २ ॥ कदंबवनशालया कुचभरोल-  
सन्मालया कुचोपमितशैलया गुरुकृपालसद्वेलया । मदारुण-  
कपोलया मधुरगीतवाचालया कयापि घननीलया कवचिता वयं  
लीलया ॥ ३ ॥ कदंबवनमध्यगां कनकमंडलोपस्थितां षडंबुरुह-  
वासिनीं सततसिद्धसौदामिनीम् । विडंबितजपारुचिं विकचचंद्र-  
चूडामणिं त्रिलोचनकुटुंबिनीं त्रिपुरसुंदरीमाश्रये ॥ ४ ॥ कुचांचित-  
विपंचिकां कुटिलकुंतलालंकृतां कुशेशयनिवासिनीं कुटिलचित्त-  
विद्वेषिणीम् । मदारुणविलोचनां मनसिजारिसंमोहिनीं मतंगमुनि-

कन्यकां मधुरभाषिणीमाश्रये ॥ ५ ॥ स्मरेत्प्रथमपुष्पिणीं रुधिर-  
 बिंदुनीलांबरां गृहीतमधुपात्रिकां मधुविघूर्णनेत्रांचलाम् । घनस्तन-  
 भरोन्नतां गलितचूलिकां श्यामलां त्रिलोचनकुटुंबिनीं त्रिपुरसुंदरी-  
 माश्रये ॥ ६ ॥ सकुंकुमविलेपनामलकचुंबिकस्तूरिकां समंद-  
 हसितेक्षणां सशरचापपाशांकुशाम् । अशेषजनमोहिनीमरुणमाल्य-  
 भूषांबरां जपाकुसुमभासुरां जपविधौ स्मराम्यंबिकाम् ॥ ७ ॥  
 पुरंदरपुरंध्रिकाचिकुरबंधसैरंध्रिकां पितामहपतिव्रतां पटुपटीरचर्चा-  
 रताम् । मुकुंदरमणीं मणीलसदलंक्रियाकारिणीं भजामि भुव-  
 नांबिकां सुरवधूटिकाचेटिकाम् ॥ ८ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्रा-  
 जकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं त्रिपुरसुंदरीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १७२. शीतलाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीशीतलास्तोत्रस्य महादेव ऋषिः,  
 अनुष्टुप् छंदः, शीतला देवता, लक्ष्मीबीजम्, भवानी शक्तिः,  
 सर्वविस्फोटकनिवृत्तये जपे विनियोगः । ईश्वर उवाच ॥ वंदेऽहं  
 शीतलां देवीं रासभस्थां दिगंबराम् । मार्जनीकलशोपेतां शूर्पा-  
 लंकृतमस्तकाम् ॥ १ ॥ वंदेऽहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम् ।  
 यामासाद्य निवर्तेत विस्फोटकभयं महत् ॥ २ ॥ शीतले शीतले  
 चेति यो ब्रूयाद्वाहपीडितः । विस्फोटकभयं घोरं क्षिप्रं तस्य  
 प्रणश्यति ॥ ३ ॥ यस्त्वामुदकमध्ये तु धृत्वा पूजयते नरः ।  
 विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते ॥ ४ ॥ शीतले  
 ज्वरदग्धस्य पूतिगंधयुतस्य च । प्रनष्टचक्षुषः पुंसस्त्वा-  
 माहुर्जीवनौषधम् ॥ ५ ॥ शीतले तनुजान् रोगावृणां हरसि  
 दुस्त्यजान् । विस्फोटकविदीर्णानां त्वमेकामृतवर्षिणी ॥ ६ ॥ गल-  
 गंडग्रहा रोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम् । त्वदनुध्यानमात्रेण

शीतले यांति संक्षयम् ॥ ७ ॥ न मंत्रो नौषधं तस्य पापरोगस्य  
विद्यते । त्वामेकां शीतले धात्रीं नान्यां पश्यामि देवताम् ॥ ८ ॥  
मृणालतंतुसदृशीं नाभिहन्मध्यसंस्थिताम् । यस्त्वां संचितयेद्देवि  
तस्य मृत्युर्न जायते ॥ ९ ॥ अष्टकं शीतलादेव्या यो नरः  
प्रपठेत्सदा । विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते ॥ १० ॥  
श्रोतव्यं पठितव्यं च श्रद्धाभक्तिसमन्वितैः । उपसर्गविनाशाय  
परं स्वस्त्ययनं महत् ॥ ११ ॥ शीतले त्वं जगन्माता शीतले  
त्वं जगत्पिता । शीतले त्वं जगद्धात्री शीतलायै नमो नमः  
॥ १२ ॥ रासभो गर्दभश्चैव खरो वैशाखनंदनः । शीतलावाहन-  
श्चैव दूर्वाकंदनिकुंतनः ॥ १३ ॥ एतानि खरनामानि शीतलाग्रे तु  
यः पठेत् । तस्य गेहे शिशूनां च शीतलारुद्धं न जायते ॥ १४ ॥  
शीतलाष्टकमेवेदं न देयं यस्यकस्यचित् । दातव्यं च सदा तस्मै श्रद्धा-  
भक्तियुताय वै ॥ १५ ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे शीतलाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १७३. वाराहीनिग्रहाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देवि क्रोडमुखि त्वदंग्रिकमलद्वंद्वानुरक्तात्मने  
मह्यं द्रुह्यति यो महेशि मनसा कायेन वाचा नरः । तस्याशु त्वद-  
योग्रनिष्ठुरहलाघातप्रभूतव्यथापर्यस्यन्मनसो भवंतु वपुषः प्राणाः  
प्रयाणोन्मुखाः ॥ १ ॥ देवि त्वत्पदपद्मभक्तिविभवप्रक्षीणदुष्कर्मणि  
प्रादुर्भूतनृशंसभावमलिनां वृत्तिं विधत्ते मयि । यो देही भुवने  
तदीयहृदयाग्निगर्वरैर्लोहितैः सद्यः पूरयसे कराब्जचषकं वांछाफलै-  
र्ममपि ॥ २ ॥ चंडोत्तुंडविदीर्णदंष्ट्रहृदयप्रोद्भिन्नरक्तच्छटाहालापान-  
मदाद्वाहसनिनदाटोपप्रतापोत्कटम् । मातर्मत्परिपंथिनामपहृतैः  
प्राणैस्त्वदंग्रिद्वयं ध्यानोद्दामरवैभवोदयवशात्संतर्पयामि क्षणात्  
॥ ३ ॥ श्यामां तामरसाननांग्रिनयनां सोमार्धचूडां जगन्नागव्यग्र-  
हलायुधाग्रमुसलां संत्रासमुद्रावतीम् । ये त्वां रक्तकपालिनीं हर-

चरारोहे वराहाननां भावैः संदधते कथं क्षणमपि प्राणंति तेषां द्विषः  
 ॥ ४ ॥ विश्वाधीश्वरवल्लभे विजयसे या त्वं निर्यन्त्यात्मिका भूतांता  
 पुरुषायुषावधिकरी पाकप्रदा कर्मणाम् । त्वां याचे भवतीं किमप्य-  
 वितथं यो मद्विरोधी जनस्तस्यायुर्मम वांछितावधि भवेन्मातस्तवे-  
 वाज्ञया ॥ ५ ॥ मातः सम्यगुपासितुं जडमतिस्त्वां नैव शक्नोम्यहं  
 यद्यप्यन्वितदैशिकाङ्गिकमलानुक्रोशपात्रस्य मे । जंतुः कश्चन  
 चिंतयत्यकुशलं यस्तस्य तद्वैशसं भूयादेवि विरोधिनो मम च ते  
 श्रेयःपदासंगिनः ॥ ६ ॥ वाराहि व्यथमानमानसगलत्सौख्यं तदा-  
 शाबलिं सीदंतं यमपाकृताध्यवसितं प्राप्ताखिलोत्पादितम् । क्रंद-  
 द्बंधुजनैः कलंकितकुलं कंठव्रणोद्यत्कृमिं पश्यामि प्रतिपक्षमाशु पतितं  
 भ्रातं लुठंतं मुहुः ॥ ७ ॥ वाराहि त्वमशेषजंतुषु पुनः प्राणात्मिका  
 स्पंदसे शक्तिव्याप्तचराचरा खलु यतस्त्वामेतदभ्यर्थये । त्वत्पादां-  
 बुजसंगिनो मम सकृत्पापं चिकीर्षति ये तेषां मा कुरु शंकरप्रियतमे  
 देहांतरावस्थितिम् ॥ ८ ॥ इति श्रीवाराहीनिग्रहाष्टकं संपूर्णम् ॥

### १७४. वाराहनुग्रहाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ईश्वर उवाच ॥ मातर्जगद्रचननाटकसूत्रधार-  
 स्त्वद्रूपमाकलयितुं परमार्थतोऽयम् । ईशोऽप्यनीश्वरपदं समुपैति  
 तादृक्कोऽन्यः स्तवं किमिव तावकमादधातु ॥ १ ॥ नामानि किंतु  
 गृणतस्तव लोकतुंडे नाडंबरं स्पृशति दंडधरस्य दंडः । यल्लेशलंबित-  
 भवांबुनिधिर्यतो यत्त्वन्नामसंसृतिरियं ननु नः स्तुतिस्ते ॥ २ ॥  
 त्वच्चिंतनादरसमुल्लसदप्रमेयानंदोदयात्समुदितः स्फुटरोमहर्षः ।  
 मातर्नमामि सुदिनानि सदैव्यमुं त्वामभ्यर्थयेऽर्थमिति पूरयताद्वयालो  
 ॥ ३ ॥ इंद्रेंदुमौलिविधिकेशवमौलिरत्नरोचिश्रयोज्ज्वलितपादसरोज-  
 युग्मे । चेतो मतौ मम सदा प्रतिबिंबिता त्वं भूया भवानि विदधातु



सदोरुहारे ॥ ४ ॥ लीलोद्धृतक्षितितलस्य वराहमूर्तेर्वाराहमूर्तिरखि-  
लार्थकरी त्वमेव । प्रालेयरश्मिसुकलोल्लसितावतंसा त्वं देवि वाम-  
तनुभागहरा हरस्य ॥ ५ ॥ त्वामंब तप्तकनकोज्ज्वलकांतिमंतये  
चित्तयंति युवतीतनुमागलांताम् । चक्रायुधत्रिनयनांबरपोतृवक्त्रां  
तेषां पदांबुजयुगं प्रणमंति देवाः ॥ ६ ॥ त्वत्सेवनस्खलितपापचयस्य  
मातर्मोक्षोऽपि यत्र न सतां गणनामुपैति । देवासुरोरगनृपालनमस्य-  
पादस्तत्र श्रियः पटुगिरः कियदेवमस्तु ॥ ७ ॥ किं दुष्करं त्वयि  
मनोविषयं गतायां किं दुर्लभं त्वयि विधानवदर्चितायाम् । किं  
दुष्करं त्वयि सकृत्स्मृतिमागतायां किं दुर्जयं त्वयि कृतस्तुतिवाद-  
पुंसाम् ॥ ८ ॥ इति श्रीवाराहानुग्रहाष्टकं संपूर्णम् ॥

### १७५. चण्डीकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीचण्डीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप्-  
छंदः, चामुण्डा देवता, अंगन्यासोक्तमातरो बीजम्, दिग्बंधदेवता-  
स्तत्त्वम्, श्रीजगदंबाप्रित्यर्थे जपे विनियोगः । ॐ नमश्चण्डिकायै ।  
मार्कण्डेय उवाच ॥ ॐ यद्गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम् ।  
यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ॥ १ ॥ ब्रह्मोवाच ॥  
अस्ति गुह्यतमं विप्र सर्वभूतोपकारकम् । देव्यास्तु कवचं पुण्यं  
तच्छृणुष्व महामुने ॥ २ ॥ प्रथमं शैलपुत्रीति द्वितीयं ब्रह्मचारिणी ।  
तृतीयं चन्द्रवण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥ ३ ॥ पंचमं स्कन्द-  
मातेति षष्ठं कात्यायनीति च । सप्तमं कालरात्रिश्च महागौरीति  
चाष्टमम् ॥ ४ ॥ नवमं सिद्धिदात्री च नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः ।  
उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना ॥ ५ ॥ अग्निना  
दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे । विषमे दुर्गमे चैव भयार्ताः शरणं  
गताः ॥ ६ ॥ न तेषां जायते किञ्चिदशुभं रणसंकटे । नापदं तस्य  
वृ० २२

पश्यामि शोकदुःखभयं नहि ॥ ७ ॥ यैस्तु भक्त्या स्मृता नूनं  
 तेषां सिद्धिः प्रजायते । प्रेतसंस्था तु चामुण्डा वाराही महिषासना  
 ॥ ८ ॥ ऐन्द्री गजसमारूढा वैष्णवी गरुडासना । माहेश्वरी वृषा-  
 रूढा कौमारी शिखिवाहना ॥ ९ ॥ ब्राह्मी हंससमारूढा सर्वाभरण-  
 भूषिता । नानाभरणशोभाढ्या नानारत्नोपशोभिता ॥ १० ॥  
 दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः । शंखं चक्रं गदां शक्तिं  
 हलं च मुसलायुधम् ॥ ११ ॥ खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव  
 च । कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमायुधमुत्तमम् ॥ १२ ॥ दैत्यानां  
 देहनाशाय भक्तानामभयाय च । धारयन्त्यायुधानीत्यं देवानां च  
 हिताय वै ॥ १३ ॥ महाबले महोत्साहे महाभयविनाशिनि ।  
 त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्धिनि ॥ १४ ॥ प्राच्यां  
 रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता । दक्षिणेऽवतु वाराही नैर्ऋत्यां  
 खड्गधारिणी ॥ १५ ॥ प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद्वायव्यां मृगवाहिनी ।  
 उदीच्यां रक्ष कौबेरि ईशान्यां शूलधारिणि ॥ १६ ॥ ऊर्ध्वं ब्रह्माणी  
 मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा । एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शव-  
 वाहना ॥ १७ ॥ जया मे अग्रतः स्थातु विजया स्थातु पृष्ठतः ।  
 अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता ॥ १८ ॥ शिखां मे  
 द्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता । मालाधरी ललाटे च भ्रुवौ  
 रक्षेद्यशस्विनी ॥ १९ ॥ त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये यमघण्टा च  
 नासिके । शंखिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वारवासिनी ॥ २० ॥  
 कपोलौ कालिका रक्षेत्कर्णमूले तु शांकरी । नासिकायां सुगन्धा  
 च उत्तरोष्ठे च चर्चिका ॥ २१ ॥ अधरे चामृतकला जिह्वायां च  
 सरस्वती । दन्तान् रक्षतु कौमारी कण्ठमध्ये तु चण्डिका ॥ २२ ॥  
 घण्टिकां चित्रघण्टा च महामाया च तालुके । कामाक्षी चिबुकं

रक्षेद्वाचं मे सर्वमंगला ॥ २३ ॥ ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे  
 धनुर्धरी । नीलग्रीवा बहिः कण्ठे नलिकां नलकूबरी ॥ २४ ॥  
 खड्गधारिण्युभौ स्कंधौ बाहू मे वज्रधारिणी । हस्तयोर्दण्डिनी  
 रक्षेदम्बिका चांगुलीस्तथा ॥ २५ ॥ नखान्छूलेश्वरी रक्षेत् कुक्षौ  
 रक्षेन्नलेश्वरी । स्तनौ रक्षेन्महालक्ष्मीर्मनःशोकविनाशिनी ॥ २६ ॥  
 हृदये ललितादेवी उदरे शूलधारिणी । नाभौ च कामिनी रक्षेद्गुह्यं  
 गुह्येश्वरी तथा ॥ २७ ॥ कक्षां भगवती रक्षेज्जानुनी विन्ध्य-  
 वासिनी । भूतनाथा च मेढं मे ऊरू महिषवाहिनी ॥ २८ ॥ जंघे  
 महाबला प्रोक्ता सर्वकामप्रदायिनी । गुल्फयोर्नारसिंही च पादौ  
 चामिततेजसी ॥ २९ ॥ पादांगुलीः श्रीर्मे रक्षेत्पादाधस्तल-  
 वासिनी । नखान्द्रंष्ट्राकराली च केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी ॥ ३० ॥  
 रोमकूपेषु कौबेरी त्वचं वागीश्वरी तथा । रक्तमज्जावसामांसान्य-  
 स्थिमेदांसि पार्वती ॥ ३१ ॥ अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं च  
 मुकुटेश्वरी । पद्मावती पद्मकोशे कफे चूडामणिस्तथा ॥ ३२ ॥  
 ज्वालामुखी नखज्वाला अभेद्या सर्वसंधिषु । शुक्रं ब्रह्माणी मे  
 रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा ॥ ३३ ॥ अहंकारं मनो बुद्धिं रक्ष मे  
 धर्मेचारिणि । प्राणापानौ तथा व्यानं समानोदानमेव च ॥ ३४ ॥  
 यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च सदा रक्षतु वैष्णवी । गोत्रमिन्द्राणी  
 मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चण्डिके ॥ ३५ ॥ पुत्रान् रक्षेन्महालक्ष्मी-  
 र्भायां रक्षतु भैरवी । मार्गं क्षेमकरी रक्षेद्विजया सर्वतःस्थिता  
 ॥ ३६ ॥ रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु । तत्सर्वं रक्ष  
 मे देवि जयन्ती पापनाशिनी ॥ ३७ ॥ पदमेकं न गच्छेत्तु  
 यदीच्छेच्छुभमात्मनः । कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्राधिगच्छति  
 ॥ ३८ ॥ तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सार्वकामिकः । यं यं कामयते

कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ॥ ३९ ॥ परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते  
 भूतले पुमान् । निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः ॥ ४० ॥  
 त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनावृतः पुमान् । इदं तु देव्याः  
 कवचं देवानामपि दुर्लभम् ॥ ४१ ॥ यः पठेत्प्रयतो नित्यं  
 त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः । दैवी कला भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः  
 ॥ ४२ ॥ जीवेद्वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः । नश्यन्ति व्याधयः  
 सर्वे लूताविस्फोटकादयः ॥ ४३ ॥ स्थावरं जंगमं वापि कृत्रिमं  
 चापि यद्विषम् । आभिचाराणि सर्वाणि मन्त्रयन्त्राणि भूतले ॥ ४४ ॥  
 भूचराः खेचराश्चैव जलजाश्चोपदेशिकाः । सहजाः कुलजा मालाः  
 शाकिनी डाकिनी तथा ॥ ४५ ॥ अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च  
 महाबलाः । ग्रहभूतपिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः ॥ ४६ ॥ ब्रह्म-  
 राक्षसवेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः । नश्यन्ति दर्शनात्तस्य  
 कवचे हृदि संस्थिते ॥ ४७ ॥ मानोन्नतिर्भवेद्वाज्ञस्तेजोवृद्धिकरं  
 परम् । यशसा वर्धते सोऽपि कीर्तिमण्डितभूतले ॥ ४८ ॥  
 जपेत्सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा । यावद्भूमण्डलं धत्ते  
 सशैलवनकाननम् ॥ ४९ ॥ तावत्तिष्ठति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्र-  
 पौत्रिकी । देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम् ॥ ५० ॥  
 प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामायाप्रसादतः ॥ ५० ॥ इति श्रीवाराह-  
 पुराणे हरिहरब्रह्माविरचितं देव्याः कवचम् ॥

### १७६. अर्गलास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीअर्गलास्तोत्रमंत्रस्य विष्णुर्ऋषिः,  
 अनुष्टुप्छंदः, श्रीमहालक्ष्मीदेवता, श्रीजगदंबाप्रीतये जपे विनि-  
 योगः । ॐ नमश्चण्डिकायै । जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली  
 कपालिनी । दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते

॥ १ ॥ मधुकैटभविद्रावि विधातृवरदे नमः । रूपं देहि जयं देहि  
यशो देहि द्विषो जहि ॥ २ ॥ महिषासुरनिर्नाशविधात्रि वरदे  
नमः । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ३ ॥ वन्दि-  
तांघ्रियुगे देवि सर्वसौभाग्यदायिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो  
देहि द्विषो जहि ॥ ४ ॥ रक्तबीजवधे देवि चंडमुंडविनाशिनि ।  
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ५ ॥ अचिन्त्यरूप-  
चरिते सर्वशत्रुविनाशिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो  
जहि ॥ ६ ॥ नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे । रूपं  
देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ७ ॥ स्तुवन्त्यो भक्तिपूर्व  
त्वां चण्डिके व्याधिनाशिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि  
द्विषो जहि ॥ ८ ॥ चण्डिके सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः ।  
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ९ ॥ देहि सौभाग्य-  
मारोग्यं देहि देवि परं सुखम् । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि  
द्विषो जहि ॥ १० ॥ विधेहि द्विषतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः ।  
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ११ ॥ विधेहि देवि  
कल्याणं विधेहि परमां श्रियम् । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि  
द्विषो जहि ॥ १२ ॥ विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु ।  
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १३ ॥ प्रचण्डदैत्य-  
दर्पघ्ने चण्डिके प्रणताय मे । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो  
जहि ॥ १४ ॥ चतुर्भुजे चतुर्वक्त्रसंस्तुते परमेश्वरि । रूपं देहि जयं  
देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १५ ॥ कृष्णेन संस्तुते देवि शश्व-  
द्भक्त्या त्वमम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि  
॥ १६ ॥ हिमाचलसुतानाथसंस्तुते परमेश्वरि । रूपं देहि जयं देहि  
यशो देहि द्विषो जहि ॥ १७ ॥ सुरासुरशिरोरत्ननिघृष्टचरणे-

ऽम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १८ ॥  
 इन्द्राणीपतिसद्भावपूजिते परमेश्वरि । रूपं देहि जयं देहि यशो  
 देहि द्विषो जहि ॥ १९ ॥ देवि भक्तजनोद्दामदत्तानन्दोदये-  
 ऽम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ २० ॥  
 पुत्रान्देहि धनं देहि सर्वकामांश्च देहि मे । रूपं देहि जयं देहि  
 यशो देहि द्विषो जहि ॥ २१ ॥ पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानु-  
 सारिणीम् । तारिणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम् ॥ २२ ॥ इदं  
 स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः । स तु सप्तशतीसंख्यावरमा-  
 प्रोति सम्पदाम् ॥ २३ ॥ इति मार्कण्डेयपुराणे अर्गलास्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

### १७७. भगवत्याः कीलकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीकीलकमंत्रस्य शिवऋषिः, अनुष्टुप्-  
 छन्दः, श्रीमहासरस्वतीदेवता, श्रीजगदंबाप्रतीत्यर्थं जपे विनियोगः ।  
 ॐ नमश्चण्डिकायै । मार्कण्डेय उवाच ॥ विशुद्धज्ञानदेहाय त्रिवेदी-  
 दिव्यचक्षुषे । श्रेयःप्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्धधारिणे ॥ १ ॥  
 सर्वमेतद्विना यस्तु मन्त्राणामपि कीलकम् । सोऽपि क्षेममवाप्नोति  
 सततं जाप्यतत्परः ॥ २ ॥ सिद्ध्यन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकला-  
 न्यपि । एतेन स्तुवतां नित्यं स्तोत्रमात्रेण सिद्ध्यति ॥ ३ ॥ न  
 मन्त्रो नौषधं तत्र न किञ्चिदपि विद्यते । विना जाप्येन सिद्ध्येत  
 सर्वमुच्चाटनादिकम् ॥ ४ ॥ समग्राण्यपि सिद्ध्यन्ति लोकशंकाभिमां  
 हरः । कृत्वा निमंत्रयामास सर्वमेवमिदं शुभम् ॥ ५ ॥ स्तोत्रं वै  
 चण्डिकायास्तु तच्च गुह्यं चकार सः । समासिर्न च पुण्यस्य तां  
 यथावन्नियन्त्रणाम् ॥ ६ ॥ सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेव न  
 संशयः । कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः ॥ ७ ॥

ददाति प्रतिगृह्णाति नान्यथैषा प्रसीदति । इत्थं रूपेण कीलेन  
महादेवेन कीलितम् ॥ ८ ॥ यो निष्कीलां विधायैनां नित्यं जपति  
सुस्फुटम् । ससिद्धः सगणः सोऽपि गन्धर्वो जायते वने ॥ ९ ॥  
न चैवाप्यटतस्तस्य भयं कापि हि जायते । नाऽपमृत्युवशं याति  
मृतो मोक्षमवामुयात् ॥ १० ॥ ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत ह्यकुर्वाणो  
विनश्यति । ततो ज्ञात्वैव सम्पन्नमिदं प्रारभ्यते बुधैः ॥ ११ ॥  
सौभाग्यादि च यत्किञ्चिद्दृश्यते ललनाजने । तत्सर्वं तत्प्रसादेन  
तेन जाप्यमिदं शुभम् ॥ १२ ॥ शनैस्तु जप्यमानेऽस्मिन्स्तोत्रे  
सम्पत्तिरुच्चकैः । भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत्  
॥ १३ ॥ ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्यसम्पदः । शत्रुहानिः  
परो मोक्षः स्तूयते सा न किं जनैः ॥ १४ ॥ इति भगवत्याः  
कीलकस्तोत्रं समाप्तम् ॥

### १७८. पुराणोक्तं रात्रिसूक्तम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ।  
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥ १ ॥ ब्रह्मोवाच ॥  
त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका । सुधा  
त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥ २ ॥ अर्ध-  
मात्रा स्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः । त्वमेव संध्या  
सावित्री त्वं देवि जननी परा ॥ ३ ॥ त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयै-  
तत्सृज्यते जगत् । त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमल्यते च सर्वदा  
॥ ४ ॥ विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने । तथा  
संहतिरूपांते जगतोऽस्य जगन्मये ॥ ५ ॥ महाविद्या महा-  
माया महामेधा महास्मृतिः । महामोहा च भवती महा-  
देवी महेश्वरी ॥ ६ ॥ प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभा-

विनी । कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा ॥ ७ ॥ त्वं  
 श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिबोधलक्षणा । लज्जा पुष्टिस्तथा  
 तुष्टिस्त्वं शान्तिः शान्तिरेव च ॥ ८ ॥ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी  
 चक्रिणी तथा । शंखिनी चापिनी बाणभुशुंडीपरिधायुधा ॥ ९ ॥  
 सौम्यासौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुंदरी । परा पराणां परमा  
 त्वमेव परमेश्वरी ॥ १० ॥ यच्च किञ्चित्कचिद्वस्तु सदसद्राऽखिला-  
 त्मिके । तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे मया ॥ ११ ॥ यया  
 त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पालयति यो जगत् । सोऽपि निद्रावशं नीतः  
 कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥ १२ ॥ विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव  
 च । कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान्भवेत् ॥ १३ ॥  
 सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता । मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ  
 मधुकैटभौ ॥ १४ ॥ प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ।  
 बोधश्च क्रियतामस्य हंतुमेतौ महासुरौ ॥ १५ ॥ इति पुराणोक्तं  
 रात्रिसूक्तं संपूर्णम् ॥

### १७९. शक्रादिकृता देवीस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः । ऋषिस्वाच ॥ १ ॥ शक्रादयः सुरगणा निहते-  
 ऽतिवीर्यै तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या । तां तुष्टुवुः प्रणति-  
 नम्रशिरोधरांसा वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः ॥ २ ॥ देव्या  
 यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या निःशेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या ।  
 तामंबिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि  
 सा नः ॥ ३ ॥ यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननंतो ब्रह्मा हरश्च नहि  
 वक्तुमलं बलं च । सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय नाशाय  
 चाशुभभयस्य मर्तिं करोतु ॥ ४ ॥ या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भव-  
 नेष्वलक्ष्मीः पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः । श्रद्धा सतां



कुलजनप्रभवस्य लज्जा तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्  
 ॥ ५ ॥ किं वर्णयाम तव रूपमर्चित्यमेतत्किं चातिवीर्यमसुरक्षय-  
 कारि भूरि । किं चाहवेषु चरितानि तवाति यानि सर्वेषु देव्यसुर-  
 देवगणादिकेषु ॥ ६ ॥ हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषैर्न ज्ञायसे  
 हरिहरादिभिरप्यपारा । सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूतमन्याकृता  
 हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥ ७ ॥ यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन  
 तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि । स्वाहासि वै पितृगणस्य च  
 तृप्तिहेतुरुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च ॥ ८ ॥ या मुक्ति-  
 हेतुरविचिंत्यमहाव्रता त्वमभ्यस्यसे सुनियतेंद्रियतत्त्वसारैः । मोक्षा-  
 र्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषैर्विद्याऽसि सा भगवती परमा हि देवी  
 ॥ ९ ॥ शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधानमुद्गीथरम्यपदपाठवतां  
 च सास्त्राम् । देवि त्रयी भगवती भव भावनाय वार्तासि सर्वजगतां  
 परमार्तिहन्त्री ॥ १० ॥ मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा दुर्गाऽसि  
 दुर्गभवसागरनौरसंगा । श्रीः कैटभारिहृदयैककृताधिवासा गौरि  
 त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥ ११ ॥ ईषत्सहासममलं परिपूर्ण-  
 चंद्रबिम्बाजुकारि कनकोत्तमकांति कांतम् । अत्यद्भुतं प्रहृतमात्त-  
 रूपा तथापि वक्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥ १२ ॥  
 दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटीकरालमुद्यच्छशांकसदृशच्छवि यज्ञ  
 सद्यः । प्राणान्मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं कैर्जीन्यते हि कुपि-  
 तांतकदर्शनेन ॥ १३ ॥ देवि प्रसीद परमाभवती भवाय सद्यो  
 विनाशयति कोपवती कुलानि । विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेतन्नीतं  
 बलं सुविपुलं महिषासुरस्य ॥ १४ ॥ ते संमता जनपदेषु धनानि  
 तेषां तेषां यशांसि न च सीदति बंधुवर्गः । धन्यास्त एव निभृ-  
 तात्मजभृत्यदारा येषां सदान्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥ १५ ॥

धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादतः प्रतिदिनं सुकृती  
 करोति । स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसादाल्लोकत्रयेऽपि फलदा  
 ननु देवि तेन ॥ १६ ॥ दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः  
 स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि । दारिद्र्यदुःखभयहारिणि  
 का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदाद्रवित्ता ॥ १७ ॥ एभिर्हृतै-  
 र्जगदुपैति सुखं तथैते कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम् ।  
 संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयांतु मत्वेति नूनमहितान्विनिहंसि  
 देवि ॥ १८ ॥ इद्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म सर्वासुरानरिषु  
 यत्प्रहिणोषि शस्त्रम् । लोकान्प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता  
 इत्थं मतिर्भवति तेष्वहितेषु साध्वी ॥ १९ ॥ खड्गप्रभानिकर-  
 विस्फुरणैस्तथोग्रैः शूलाग्रकांतिनिवहेन दशोऽसुराणाम् । यन्नागता  
 विलयमंशुमर्दिदुःखंडयोग्याननं तव विलोकयतां तदेतत् ॥ २० ॥  
 दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि शीलं रूपं तथैतदविचिंत्यमतुल्यमन्यैः ।  
 वीर्यं च हंतुं हतदेवपराक्रमाणां वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वये-  
 त्यम् ॥ २१ ॥ केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य रूपं च शत्रु-  
 भयकार्यतिहारि कुत्र । चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा त्वय्येव  
 देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि ॥ २२ ॥ त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन  
 त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा । नीता दिवं रिपुगणा  
 भयमप्यपास्तमस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते ॥ २३ ॥ शूलेन  
 पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके । घण्टास्त्रनेन नः पाहि  
 चापज्यानिःस्त्रनेन च ॥ २४ ॥ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च  
 चण्डिके रक्ष दक्षिणे । आमणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथे-  
 श्वरि ॥ २५ ॥ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति  
 ते । यानि चाल्यंतवोराणि तै रक्षासांस्तथा भुवम् ॥ २६ ॥

खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके । करपल्लव-  
 संगीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥ २७ ॥ ऋषिरुवाच ॥ २८ ॥  
 एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नदनोद्भवैः । अर्चिता जगतां  
 धात्री तथा गंधानुलेपनैः ॥ २९ ॥ भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यै-  
 र्धूपैः सुधूपिता । प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान्प्रणता-  
 न्सुरान् ॥ ३० ॥ देव्युवाच ॥ ३१ ॥ त्रियतां त्रिदशाः  
 सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् ॥ ३२ ॥ देवा ऊचुः ॥ ३३ ॥ भग-  
 वत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते । यदयं निहतः शत्रुरस्माकं  
 महिषासुरः ॥ ३४ ॥ यदि चापि वरो देयस्त्वयाऽस्माकं महेश्वरि ।  
 संस्मृताऽसंस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः ॥ ३५ ॥ यश्च मर्त्यः  
 स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने । तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धनदारादि-  
 संपदाम् ॥ ३६ ॥ वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके  
 ॥ ३७ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ३८ ॥ इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे  
 तथात्मनः । तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवांतर्हिता नृप ॥ ३९ ॥  
 इत्येतत्कथितं भूय संभूता सा यथा पुरा । देवी देवशरीरेभ्यो  
 जगन्नयहितैषिणी ॥ ४० ॥ पुनश्च गौरीदेहात्सा समुद्भूता यथाऽ-  
 भवत् । वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुंभनिशुंभयोः ॥ ४१ ॥ रक्षणाय  
 च लोकानां देवानामुपकारिणी । तच्छृणुष्व मयाख्यातं यथावत्क-  
 थयामि ते । ॥ ४२ ॥ श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वंतरे  
 देवीमाहात्म्ये शक्रादिस्तुतिर्नामैकाशीतितमोऽध्यायः ॥ इति  
 श्रीशक्रादिकृता देवीस्तुतिः संपूर्णा ॥

### १८०. नारायणीस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे  
 सेंद्राः सुरा वह्निपुरोगमास्ताम् । कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्टलाभाद्विका-

शिवक्राब्जविकासिताशाः ॥ २ ॥ देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद प्रसीद  
 मातर्जगतोऽखिलस्य । प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं त्वमीश्वरी देवि  
 चराचरस्य ॥ ३ ॥ आधारभूता जगतस्त्वमेका महीस्वरूपेण यतः  
 स्थितासि । अपांस्वरूपस्थितया त्वयैतदाप्यायते कृत्स्नमलंघ्यवीर्यं  
 ॥ ४ ॥ त्वं वैष्णवी शक्तिरनंतवीर्या विश्वस्य बीजं परमासि माया ।  
 संमोहितं देवि समस्तामेतत्त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः ॥ ५ ॥  
 विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु ।  
 त्वयैकया पूरितमंबयैतत् का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः ॥ ६ ॥  
 सर्वभूता यदा देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी । त्वं स्तुता स्तुतये का  
 वा भवन्तु परमोक्तयः ॥ ७ ॥ सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि  
 संस्थिते । स्वर्गापवर्गादे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥ कला-  
 काष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनि । विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि  
 नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥ सर्वमंगलमांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।  
 शरण्ये त्र्यंबके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥ सृष्टिस्थिति-  
 विनाशानां शक्तिभूते सनातनि । गुणाश्रये गुणमये नारायणि  
 नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥ शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।  
 सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥ हंसयुक्त-  
 विमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि । कौशांभःक्षरिके देवि नारायणि  
 नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥ त्रिशूलचंद्राहिधरे महावृषभवाहिनि ।  
 माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥ मयूरकुक्कुट-  
 वृते महाशक्तिधरेऽनघे । कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि नमो-  
 ऽस्तु ते ॥ १५ ॥ शंखचक्रगदाशार्ङ्गगृहीतपरमायुधे । प्रसीद  
 वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १६ ॥ गृहीतोऽग्रमहाचक्रे  
 दंष्ट्रोद्धृतवसुंधरे । वराहरूपिणि शिवे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १७ ॥

नृसिंहरूपेणोत्रेण हंतुं दैत्यान्कृतोद्यमे । त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि  
 नमोऽस्तु ते ॥ १८ ॥ किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्ज्वले ।  
 वृत्रप्राणहरे चैद्भि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १९ ॥ शिवदूतीस्वरूपेण  
 हतदैत्यमहाबले । घोररूपे महारावे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ २० ॥  
 दंष्ट्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे । चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि  
 नमोऽस्तु ते ॥ २१ ॥ लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टि स्वधे ध्रुवे ।  
 महारात्रि महामाये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ २२ ॥ मेघे सरस्वति  
 वरे भूति बाभ्रवि तामसि । नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तु  
 ते ॥ २३ ॥ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते । भयेभ्यस्त्राहि  
 नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥ २४ ॥ एतत्ते वदनं सौम्यं  
 लोचनत्रयभूषितम् । पातु नः सर्वभूतेभ्यः काल्यायनि नमोऽस्तु ते  
 ॥ २५ ॥ ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम् । त्रिशूलं पातु नो  
 भीतिर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते ॥ २६ ॥ हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वेनेना-  
 पूर्य या जगत् । सा घंटा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव  
 ॥ २७ ॥ असुरासृग्वसापंकचर्चितस्ते करोज्ज्वलः । शुभाय खड्गो भवतु  
 चंडिके त्वां नता वयम् ॥ २८ ॥ रोगानशेषानपहंसि तुष्टा, रुष्टा तु  
 कामान्सकलानभीष्टान् । त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां, त्वामाश्रिता  
 ह्याश्रयतां प्रयांति ॥ २९ ॥ एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाऽद्य धर्मद्विषां  
 देवि महासुराणाम् । रूपैरनेकैर्बहुधात्ममूर्तिं कृत्वाऽम्बिके तत्  
 प्रकरोति काऽन्या ॥ ३० ॥ विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपेष्वद्येषु  
 वाक्येषु च का त्वदन्या । ममत्वगर्तेऽतिमहांधकारे विभ्रामयत्येत-  
 दतीव विश्वम् ॥ ३१ ॥ रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा यत्रारयो  
 दस्युबलानि यत्र । दावानलो यत्र तथाग्निमध्ये तत्र स्थिता त्वं  
 परिपासि विश्वम् ॥ ३२ ॥ विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं

विश्वात्मिका धारयसीह विश्वम् । विश्वेशवंद्या भवती भवंति  
 विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः ॥ ३३ ॥ देवि प्रसीद परिपालय  
 नोऽरिभीतेर्नित्यं यथाऽसुरवधाद्युनैव सद्यः । पापानि सर्वजगतां  
 प्रशमं नयाशु उत्पातपाकजनितांश्च महोपसर्गान् ॥ ३४ ॥  
 प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि । त्रैलोक्यवासि-  
 नामीड्ये लोकानां वरदा भव ॥ ३५ ॥ देव्युवाच ॥ ३६ ॥  
 वरदाहं सुरगणा वरं यं मनसेच्छथ । तं वृणुध्वं प्रयच्छामि  
 जगतामुपकारकम् ॥ ३७ ॥ देवा ऊचुः ॥ ३८ ॥ सर्वावाधा-  
 प्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि । एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरि-  
 विनाशनम् ॥ ३९ ॥ देव्युवाच ॥ ४० ॥ वैवस्वतंऽतरे प्राप्ते  
 अष्टाविंशतिमे युगे । शुंभो निशुंभश्चैवान्याबुत्पत्येते महासुरौ  
 ॥ ४१ ॥ नंदगोपगृहे जाता यशोदागर्भसंभवा । ततस्तौ नाश-  
 यिष्यामि विंध्याचलनिवासिनी ॥ ४२ ॥ पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण  
 पृथिवीतले । अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांश्च दानवान् ॥ ४३ ॥  
 भक्षयंत्याश्च तानुग्रान् वैप्रचित्तान्महासुरान् । रक्ता दंता भवि-  
 ष्यन्ति दाडिमीकुसुमोपमाः ॥ ४४ ॥ ततो मां देवताः स्वर्गे  
 मर्त्यलोके च मानवाः । स्तुवंतो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्तदंतिकाम्  
 ॥ ४५ ॥ भूयश्च शतवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनंभसि । मुनिभिः  
 संस्मृता भूमौ संभविष्याम्ययोनिजा ॥ ४६ ॥ ततः शतेन नेत्राणां  
 निरीक्षिष्याम्यहं मुनीन् । कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षीमिति मां  
 ततः ॥ ४७ ॥ ततोऽहमखिलं लोकमात्मदेहसमुद्भवैः । भरिष्यामि  
 सुराः शाकैरावृष्टेः प्राणधारकैः ॥ ४८ ॥ शाकंभरीति विख्यातिं  
 तदा यास्याम्यहं भुवि ॥ ४९ ॥ तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्यं  
 महासुरम् । दुर्गादेवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ॥ ५० ॥

पुनश्चाहं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले । रक्षांसि भक्षयिष्यामि  
मुनीनां त्राणकारणात् ॥ ५१ ॥ तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यं-  
त्यानम्रमूर्तयः । भीमादेवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति  
॥ ५२ ॥ यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधां करिष्यति । तदाहं  
आमरं रूपं कृत्वाऽसंख्येयषट्पदम् ॥ ५३ ॥ त्रैलोक्यस्य हिता-  
र्थाय वधिष्यामि महासुरम् । आमरीति च मां लोकास्तदा  
स्तोष्यन्ति सर्वतः ॥ ५४ ॥ इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था  
भविष्यति । तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंक्षयम् ॥ ५५ ॥  
इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये नारा-  
यणीस्तुतिः संपूर्णा ॥

### १८१. ललितासहस्रनाम ।

(उपोद्धाताख्या प्रथमा कला ।) त्रिपुरां कुलनिधिमीडेऽरुणश्रियं  
कामराजविद्धाङ्गीम् । त्रिगुणैर्देवैर्निनुतामेकान्तां बिन्दुगां महा-  
रम्भाम् ॥ १ ॥ ललितानामसहस्रे छलार्णसूत्रानुयायिन्यः ।  
परिभाषा भाष्यन्ते संक्षेपात्कौलिकप्रमोदाय ॥ २ ॥ पञ्चाश-  
देक आदौ नामसु सार्धद्व्यशीतिशतम् । षडशीतिः सार्धान्ते  
सर्वे विंशतिशतत्रयं श्लोकाः ॥ ३ ॥ दशभूः सार्धनृपाला  
अध्युष्टं सार्धनवषडध्युष्टम् । मुनिसूतहयाम्बाश्वाम्बाश्वोक्ति-  
ध्यानमेकेन ॥ ४ ॥ अगस्त्य उवाच ॥ अश्वानन महाबुद्धे सर्व-  
शास्त्रविशारद । कथितं ललितादेव्याश्चरितं परमाद्भुतम् ॥ १ ॥  
पूर्वं प्रादुर्भवो मातुस्ततः पट्टाभिषेचनम् । भण्डासुरवधश्चैव विस्त-  
रेण त्वयोदितः ॥ २ ॥ वर्णितं श्रीपुरं चापि महाविभवविस्तरम् ।  
श्रीमत्पञ्चदशाक्षर्या महिमा वर्णितस्तथा ॥ ३ ॥ षोढा न्यासादयो  
न्यासा न्यासखण्डे समीरिताः ॥ ४ ॥ अन्तर्यामिन्क्रमश्चैव बहिर्यामि-

कमस्तथा । महायागक्रमश्चैव पूजाखण्डे प्रकीर्तितः ॥ ५ ॥ पुर-  
 श्ररणखण्डे तु जपलक्षणमीरितम् । होमखण्डे त्वया प्रोक्तो होम-  
 द्रव्यविधिक्रमः ॥ ६ ॥ चक्रराजस्य विद्यायाः श्रीदेव्या देशिका-  
 त्मनोः । रहस्यखण्डे तादात्म्यं परस्परमुदीरितम् । स्तोत्रखण्डे  
 बहुविधाः स्तुतयः परिकीर्तिताः ॥ ७ ॥ मन्त्रिणीदण्डिनीदेव्योः  
 प्रोक्ते नामसहस्रके । नतु श्रीललितादेव्याः प्रोक्तं नामसहस्रकम्  
 ॥ ८ ॥ तत्र मे संशयो जातो ह्यग्रीव दयानिधे । किंवा त्वया  
 विस्मृतं तज्ज्ञात्वा वा समुपेक्षितम् ॥ ९ ॥ मम वा योग्यता नास्ति  
 श्रोतुं नामसहस्रकम् । किमर्थं भवता नोक्तं तत्र मे कारणं वद  
 ॥ १० ॥ सूत उवाच ॥ इति पृष्टो ह्यग्रीवो मुनिना कुम्भजन्मना ।  
 ग्रहष्टो वचनं प्राह तापसं कुम्भसंभवम् ॥ ११ ॥ लोपामुद्रा-  
 पतेऽगस्त्य सावधानमनाः शृणु । नाम्नां सहस्रं यन्नोक्तं कारणं  
 तद्वदामि ते ॥ १२ ॥ रहस्यमिति मत्वाहं नोक्तवांस्ते न चान्यथा ।  
 पुनश्च पृच्छसे भक्त्या तस्मात्तत्ते वदाम्यहम् ॥ १३ ॥  
 ब्रूयाच्छिष्याय भक्ताय रहस्यमपि देशिकः । भवता न प्रदेयं  
 स्यादभक्ताय कदाचन ॥ १४ ॥ न शठाय न दुष्टाय नाविश्वासाय  
 कर्हिचित् । श्रीमातृभक्तियुक्ताय श्रीविद्याराजवेदिने ॥ १५ ॥  
 उपासकाय शुद्धाय देयं नामसहस्रकम् । यानि नामसहस्राणि  
 सद्यःसिद्धिप्रदानि वै ॥ १६ ॥ तन्त्रेषु ललितादेव्यास्तेषु मुख्यमिदं  
 मुने । श्रीविद्यैव तु मन्त्राणां तत्र कादिर्यथा परा ॥ १७ ॥ पुराणां  
 श्रीपुरमिव शक्तीनां ललिता यथा । श्रीविद्योपासकानां च यथा  
 देवो वरः शिवः ॥ १८ ॥ तथा नामसहस्रेषु वरमेतत्प्रकीर्तितम्  
 ॥ १९ ॥ यथास्य पठनाद्देवी प्रीयते ललिताम्बिका । अन्यनाम-  
 सहस्रस्य पाठान्न प्रीयते तथा । श्रीमातुः प्रीतये तस्मादनिशं कीर्तये-



दिदम् ॥ २० ॥ बिल्वपत्रैश्चक्रराजे योऽर्चयेल्ललिताम्बिकाम् ।  
 पद्मैर्वा तुलसीपत्रैरेभिर्नामसहस्रकैः ॥ २१ ॥ सद्यः प्रसादं कुरुते  
 तत्र सिंहासनेश्वरी । चक्राधिराजमभ्यर्च्य जप्त्वा पञ्चदशाक्षरीम्  
 ॥ २२ ॥ जपान्ते कीर्तयेन्नित्यमिदं नामसहस्रकम् । जपपूजाद्य-  
 शक्तोऽपि पठेन्नामसहस्रकम् ॥ २३ ॥ साङ्गार्चने साङ्गजपे  
 यत्फलं तदवामुयात् । उपासने स्तुतीरन्याः पठेदभ्युदयो  
 हि सः ॥ २४ ॥ इदं नामसहस्रं तु कीर्तयेन्नित्यकर्मवत् ।  
 चक्रराजार्चनं देव्या जपो नाम्नां च कीर्तनम् ॥ २५ ॥  
 भक्तस्य कृत्यमेतावदन्यदभ्युदयं विदुः । भक्तस्यावश्यकमिदं  
 नामसाहस्रकीर्तनम् ॥ २६ ॥ तत्र हेतुं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं  
 कुम्भसंभव । पुरा श्रीललितादेवी भक्तानां हितकाम्यया ॥ २७ ॥  
 वाग्देवीर्वशिनीमुख्याः समाहूयेदमब्रवीत् । वाग्देवता वशिन्याद्याः  
 शृणुध्वं वचनं मम ॥ २८ ॥ भवत्यो मत्प्रसादेन प्रोल्लसद्वाग्वि-  
 भूतयः । मङ्गक्तानां वाग्विभूतिप्रदाने विनियोजिताः ॥ २९ ॥  
 मच्चक्रस्य रहस्यज्ञा मम नामपरायणाः । मम स्तोत्रविधानाय  
 तस्मादाज्ञापयामि वः ॥ ३० ॥ कुरुध्वमङ्कितं स्तोत्रं मम नाम-  
 सहस्रकैः । येन भक्तैः स्तुताया मे सद्यः प्रीतिः परा भवेत्  
 ॥ ३१ ॥ हयग्रीव उवाच ॥ इत्याज्ञप्ता वचोदेव्यः श्रीदेव्या ललि-  
 ताम्बया । रहस्यैर्नामभिर्दिव्यैश्चक्रुः स्तोत्रमनुत्तमम् ॥ ३२ ॥  
 रहस्यनामसाहस्रमिति तद्विश्रुतं परम् । ततः कदाचित्सदसि  
 स्थित्वा सिंहासनेऽम्बिका ॥ ३३ ॥ स्वसेवावसरं प्रादात्सर्वेषां  
 कुम्भसंभव । सेवार्थमागतास्तत्र ब्रह्माणीब्रह्मकोटयः ॥ ३४ ॥  
 लक्ष्मीनारायणानां च कोटयः समुपागताः । गौरीकोटिसमेतानां  
 रुद्राणामपि कोटयः ॥ ३५ ॥ मन्त्रिणीदण्डिनीमुख्याः सेवार्थं याः

समागताः । शक्तयो विविधाकारास्तासां संख्या न विद्यते ॥ ३६ ॥  
 दिव्यौघा मानवौघाश्च सिद्धौघाश्च समागताः । तत्र श्रीललितादेवी  
 सर्वेषां दर्शनं ददौ ॥ ३७ ॥ तेषु दृष्टोपविष्टेषु स्वे स्वे स्थाने  
 यथाक्रमम् । तत्र श्रीललितादेवीकटाक्षाक्षेपचोदिताः ॥ ३८ ॥  
 उत्थाय वशिनीमुख्या बद्धाञ्जलिपुटास्तदा । अस्तुवन्नामसाहस्रैः  
 स्वकृतैर्ललिताम्बिकाम् ॥ ३९ ॥ श्रुत्वा स्तवं प्रसन्नाऽभूल्ललिता  
 परमेश्वरी । सर्वे ते विस्मयं जग्मुर्ये तत्र सदसि स्थिताः ॥ ४० ॥  
 ततः प्रोवाच ललिता सदस्यान्देवतागणान् । ममाज्ञयैय वाग्देव्य-  
 श्वकुः स्तोत्रमनुत्तमम् ॥ ४१ ॥ अङ्कितं नामभिर्दिव्यैर्मम प्रीति-  
 विधायकैः ॥ ४२ ॥ तत्पठध्वं सदा यूयं स्तोत्रं मत्प्रीतिवृद्धये ।  
 प्रवर्तयध्वं भक्तेषु मम नामसहस्रकम् ॥ ४३ ॥ इदं नामसहस्रं मे  
 यो भक्तः पठते सकृत् । स मे प्रियतमो ज्ञेयस्तस्मै कामान्ददाम्यहम्  
 ॥ ४४ ॥ श्रीचक्रे मां समभ्यर्च्य जप्तवा पञ्चदशाक्षरीम् । पश्चान्नाम-  
 सहस्रं मे कीर्तयेन्मम तुष्टये ॥ ४५ ॥ ममाचर्यतु वा मा वा  
 विद्यां जपतु वा न वा । कीर्तयेन्नामसाहस्रमिदं मत्प्रीतये सदा  
 ॥ ४६ ॥ मत्प्रीत्या सकलान्कामाँल्लभते नात्र संशयः । तस्मान्नाम-  
 सहस्रं मे कीर्तयध्वं सदादरात् ॥ ४७ ॥ हयग्रीव उवाच ॥ इति  
 श्रीललितेशानी शास्ति देवान्सहानुगान् ॥ ४८ ॥ तदाज्ञया  
 तदारभ्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः । शक्तयो मन्त्रिणीमुख्या इदं नाम-  
 सहस्रकम् ॥ ४९ ॥ पठन्ति भक्त्या सततं ललितापरितुष्टये ।  
 तस्मादवश्यं भक्तेन कीर्तनीयमिदं मुने ॥ ५० ॥ आवश्यकत्वे हेतुस्ते  
 मया प्रोक्तो मुनीश्वर । इदानीं नामसाहस्रं वक्ष्यामि श्रद्धया  
 शृणु ॥ ५१ ॥ इति ललितासहस्रनाम्न्युपोद्धातप्रकरणं समाप्तम् ॥  
 अस्य श्रीललितासहस्रनामस्तोत्रमहामन्त्रस्य वशिण्यादयो वाग्देवता  
 ऋषयः, अनुष्टुप् छन्दः, ललितापरमेश्वरी देवता, श्रीमद्वाग्भव-

कूटेति बीजम्, मध्यकूटेति शक्तिः, शक्तिकूटेति कीलकम्,  
मूलप्रकृतिरिति स्वरूपम्, श्रीललितात्रिपुरसुन्दरीप्रसादसिद्धिद्वारा  
चिन्तितफलावाप्त्यर्थं जपे विनियोगः ॥ अथ ध्यानम् ॥ सिन्दूरा-  
रुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्तारानायकशेखरां स्मित-  
मुखीमापीनवक्षोरुहाम् । पाणिभ्यामलिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं  
बिभ्रतीं सौम्यां रत्नघटस्थरक्तचरणां ध्यायेत्परामम्बिकाम् ॥ ५२ ॥

( द्वितीया तापिनी कला । ) श्रीमाता श्रीमहाराज्ञी श्रीमल्लिहा-  
सनेश्वरी । चिदग्निकुण्डसंभूता देवकार्यसमुद्यता ॥ ५२ ॥ उद्य-  
द्मानुसहस्राभा चतुर्बाहुसमन्विता । रागस्वरूपपाशाढ्या क्रोधा-  
काराङ्कुशोज्ज्वला ॥ ५३ ॥ मनोरूपेश्चक्रोदण्डा पञ्चतन्मात्र-  
सायका । निजारुणप्रभापूरमज्जद्ब्रह्माण्डमण्डला ॥ ५४ ॥ चम्प-  
काशोकपुन्नागसौगन्धिकलसत्कचा । कुरुविन्दमणिश्रेणीकनक्तो-  
टीरमण्डिता ॥ ५५ ॥ अष्टमीचन्द्रविभ्राजदलिकस्थलशोभिता ।  
मुखचन्द्रकलङ्काभमृगनाभिविशेषका ॥ ५६ ॥ वदनस्सरमाङ्गल्य-  
गृहतोरणचिल्लिका । वक्रलक्ष्मीपरीवाहचलन्मीनाभलोचना ॥ ५७ ॥  
नवचम्पकपुष्पाभनासादण्डविराजिता । ताराकान्तितिरस्कारिना-  
साभरणभासुरा ॥ ५८ ॥ कदम्बमञ्जरीकूसकर्णापूरमनोहरा ।  
ताटङ्कयुगलीभूततपनोडुपमण्डला ॥ ५९ ॥ पद्मरागशिलादर्श-  
परिभाषिकपोलभूः । नवविद्रुमबिम्बश्रीन्यक्कारिरदनच्छदा ॥ ६० ॥  
शुद्धविद्याङ्कुराकारद्विजपङ्क्तिद्वयोज्ज्वला । कर्पूरवीटिकामोदसमा-  
कर्षिदिगन्तरा ॥ ६१ ॥ निजसंलापमाधुर्यविनिर्भर्त्सितकच्छपी ।  
मन्दस्मितप्रभापूरमज्जत्कामेशमानसा ॥ ६२ ॥ अनाकलितसादृश्य-  
चिबुकश्रीविराजिता । कामेशबद्धमाङ्गल्यसूत्रशोभितकन्धरा ॥ ६३ ॥  
कनकाङ्गदकेयूरकमनीयभुजान्विता । रत्नप्रैवेयचिन्ताकलोलमुक्ता-  
फलान्विता ॥ ६४ ॥ कामेश्वरप्रेमरत्नमणिप्रतिपणस्तनी ।

नाभ्यालवांलरोमालिलताफलकुचद्वयी ॥ ६५ ॥ लक्ष्यरोमलता-  
 धारतासमुन्नेयमध्यमा । स्तनभारदलन्मध्यपट्टबन्धवलित्रया ॥ ६६ ॥ अरुणारुणकौसुम्भवस्त्रभास्वत्कटीतटी । रत्नकिङ्किणिका-  
 रम्यरशनादामभूषिता ॥ ६७ ॥ कामेशज्ञानसौभाग्यमार्दवोरु-  
 द्वयान्विता । माणिक्यमुकुटाकारजानुद्वयविराजिता ॥ ६८ ॥  
 इन्द्रगोपपरिक्षिप्तस्मरतूणाभजङ्घिका । गूढगुल्फा कूर्मपृष्ठजयिष्णु-  
 प्रपदान्विता ॥ ६९ ॥ नखदीधितिसंछन्नमज्जनतमोगुणा ।  
 पदद्वयप्रभाजालपराकृतसरोरुहा ॥ ७० ॥ सिञ्जानमणिमञ्जी-  
 रमण्डितश्रीपदाम्बुजा । मरालीमन्दगमना महालावण्यशेवधिः ॥ ७१ ॥  
 सर्वारुणाऽनवद्याङ्गी सर्वाभरणभूषिता । शिवकामेश्वरा-  
 ङ्कस्था शिवा स्वाधीनवल्लभा ॥ ७२ ॥ सुमेरुशृङ्गमध्यस्था  
 श्रीमन्नगरनायिका । चिन्तामणिगृहान्तस्था पञ्चब्रह्मासनस्थिता ॥ ७३ ॥  
 महापद्माटवीसंस्था कदम्बवनवासिनी । सुधासाग-  
 रमध्यस्था कामाक्षी कामदायिनी ॥ ७४ ॥ देवर्षिगणसंघातस्तूय-  
 मानात्मवैभवा । भण्डासुरवधोद्युक्तशक्तिसेनासमन्विता ॥ ७५ ॥  
 संपत्करी समारूढसिंधुरव्रजसेविता । अश्वारूढाधिष्ठिताश्वकोटि-  
 कोटिभिरावृता ॥ ७६ ॥ चक्रराजथारूढसर्वायुधपरिष्कृता ।  
 गेयचक्रथारूढमन्त्रिणीपरिसेविता ॥ ७७ ॥ किरिचक्रथारूढ-  
 दण्डनाथपुरस्कृता । ज्वालामालिनिकाक्षिसवह्निप्राकारमध्यगा ॥ ७८ ॥  
 भण्डसैन्यवधोद्युक्तशक्तिविक्रमहर्षिता । नित्यापराक्र-  
 माटोपनिरीक्षणसमुत्सुका ॥ ७९ ॥ भण्डपुत्रवधोद्युक्तबालावि-  
 क्रमनन्दिता । मन्त्रिण्यम्बाविरचितविषङ्गवधतोषिता ॥ ८० ॥  
 विशुक्रप्राणहरणवाराहीवीर्यनन्दिता । कामेश्वरमुखालोककल्पित-  
 श्रीगणेश्वरा ॥ ८१ ॥ महागणेशनिर्भिन्नविघ्नयन्त्रप्रहर्षिता । भण्डा-  
 सुरेन्द्रनिर्मुक्तशस्त्रप्रत्यस्त्रवर्षिणी ॥ ८२ ॥ कराङ्गुलिनखोत्पन्ननारा-

यणदशाकृतिः । महापाशुपतास्त्राग्निनिर्दग्धासुरसैनिका ॥ ८३ ॥  
 कामेश्वरास्त्रनिर्दग्धसभण्डासुरशून्यका । ब्रह्मोपेन्द्रमहेन्द्रादिदेवसं-  
 स्तुतवैभवा ॥ ८४ ॥ हरनेत्राग्निसंदग्धकामसंजीवनौषधिः । श्रीम-  
 द्वाग्भवकूटैकस्वरूपमुखपङ्कजा ॥ ८५ ॥ कण्ठाधःकटिपर्यन्तमध्य-  
 कूटस्वरूपिणी । शक्तिकूटैकतापन्नकव्यधोभागधारिणी ॥ ८६ ॥  
 मूलमन्त्रात्मिका मूलकूटत्रयकलेवरा । कुलामृतैकरसिका कुलसंकेत-  
 पालिनी ॥ ८७ ॥ कुलाङ्गना कुलान्तस्था कौलिनी कुलयोगिनी ।  
 अकुला समयान्तस्था समयाचारतत्परा ॥ ८८ ॥ मूलाधारैकनिलया  
 ब्रह्मग्रन्थिविभेदिनी । मणिपूरान्तरुदिता विष्णुग्रन्थिविभेदिनी  
 ॥ ८९ ॥ इति ललितासहस्रनाम्नि प्रथमशतकं समाप्तम् ॥

( तृतीया धूम्रिका कला । ) आज्ञाचक्रान्तरालस्था रुद्रग्रन्थि-  
 विभेदिनी । सहस्राराम्बुजारूढा सुधासाराभिवर्षिणी ॥ ९० ॥ तडि-  
 ल्लतासमरुचिः षट्चक्रोपरिसंस्थिता । महासक्तिः कुण्डलिनी विस-  
 तन्तुतनीयसी ॥ ९१ ॥ भवानी भावनागम्या भवारण्यकुठारिका ।  
 भद्रप्रिया भद्रमूर्तिर्भक्तसौभाग्यदायिनी ॥ ९२ ॥ भक्तिप्रिया  
 भक्तिगम्या भक्तिवश्या भयापहा । शांभवी शारदाराध्या शर्वाणी  
 शर्मदायिनी ॥ ९३ ॥ शांकरी श्रीकरी साध्वी शरच्चन्द्रनिभानना ।  
 शान्तोदरी शान्तिमती निराधारा निरञ्जना ॥ ९४ ॥ निर्लेपा  
 निर्मला नित्या निराकारा निराकुला । निर्गुणा निष्कला शान्ता  
 निष्कामा निरुपप्लवा ॥ ९५ ॥ नित्यमुक्ता निर्विकारा निष्प्रपञ्चा  
 निराश्रया । नित्यशुद्धा नित्यबुद्धा निरवद्या निरन्तरा ॥ ९६ ॥  
 निष्कारणा निष्कलङ्का निरुपाधिर्निरीश्वरा । नीरागा रागमथनी  
 निर्मदा मदनाशिनी ॥ ९७ ॥ निश्चिन्ता निरहंकारा निर्मोहा मोह-  
 नाशिनी । निर्ममा ममताह्वी निष्पापा पापनाशिनी ॥ ९८ ॥

निष्क्रोधा क्रोधशमनी निर्लोभा लोभनाशिनी । निःसंशया संशयघ्नी  
 निर्भवा भवनाशिनी ॥ ९९ ॥ निर्विकल्पा निराबाधा निर्भेदा  
 भेदनाशिनी । निर्नाशा मृत्युमथनी निष्क्रिया निष्परिग्रहा  
 ॥ १०० ॥ निस्तुला नीलचिकुरा निरपाया निरस्यया । दुर्लभा  
 दुर्गमा दुर्गा दुःखहन्त्री सुखप्रदा ॥ १०१ ॥ दुष्टदूरा दुराचारशमनी  
 दोषवर्जिता । सर्वज्ञा सान्द्रकरुणा समानाधिकवर्जिता ॥ १०२ ॥  
 इति ललितासहस्रनाम्नि द्वितीयशतकं समाप्तम् ॥

(चतुर्थी मरीच्याख्या कला ।) सर्वशक्तिमयी सर्वमङ्गला  
 सद्गतिप्रदा । सर्वेश्वरी सर्वमयी सर्वमन्त्रस्वरूपिणी ॥ १०३ ॥  
 सर्वयन्त्रात्मिका सर्वतन्त्ररूपा मनोन्मनी । माहेश्वरी महादेवी  
 महालक्ष्मीमृण्डप्रिया ॥ १०४ ॥ महारूपा महापूज्या महापातक-  
 नाशिनी । महामाया महासत्त्वा महाशक्तिर्महारतिः ॥ १०५ ॥  
 महाभोगा महैश्वर्या महावीर्या महाबला । महाबुद्धिर्महासिद्धि-  
 र्मेहायोगेश्वरेश्वरी ॥ १०६ ॥ महातन्त्रा महामन्त्रा महायन्त्रा महा-  
 सना । महायागक्रमाराध्या महाभैरवपूजिता ॥ १०७ ॥ महेश्वर-  
 महाकल्पमहाताण्डवसाक्षिणी । महाकामेशमहिषी महान्निपुरसुन्दरी  
 ॥ १०८ ॥ चतुःषष्ट्युपचाराढ्या चतुःषष्टिकलामयी । महाचतुः-  
 षष्टिकोटियोगिनीगणसेविता ॥ १०९ ॥ मनुविद्या चन्द्रविद्या चन्द्र-  
 मण्डलमध्यगा । चारुरूपा चारुहासा चारुचन्द्रकलाधरा ॥ ११० ॥  
 चराचरजगन्नाथा चक्रराजनिकेतना । पार्वती पद्मनयना पद्मराग-  
 समप्रभा ॥ १११ ॥ पञ्चप्रेतासनासीना पञ्चब्रह्मस्वरूपिणी ।  
 चिन्मयी परमानन्दा विज्ञानघनरूपिणी ॥ ११२ ॥ ध्यानध्यातृ-  
 ध्येयरूपा धर्माधर्मविवर्जिता । विश्वरूपा जागरिणी स्वपन्ती तैज-  
 सात्मिका ॥ ११३ ॥ सुप्ता प्राज्ञात्मिका तुर्या सर्वावस्थाविवर्जिता ।

सृष्टिकर्त्री ब्रह्मरूपा गोप्त्री गोविन्दरूपिणी ॥ ११४ ॥ संहारिणी  
 रुद्ररूपा तिरोधानकरीश्वरी । सदाशिवाऽनुग्रहदा पञ्चकृत्यपरायणा  
 ॥ ११५ ॥ भानुमण्डलमध्यस्था भैरवी भगमालिनी । पद्मासना  
 भगवती पद्मनाभसहोदरी ॥ ११६ ॥ उन्मेषनिमिषोत्पन्नविपन्न-  
 भुवनावली । सहस्रशीर्षवदना सहस्राक्षी सहस्रपात् ॥ ११७ ॥  
 आब्रह्मकीटजननी वर्णाश्रमविधायिनी । निजाज्ञारूपनिगमा पुण्या-  
 पुण्यफलप्रदा ॥ ११८ ॥ श्रुतिसीमन्तसिन्दूरीकृतपादाब्जधूलिका ।  
 सकलागमसंदोहशुक्तिसंपुटमौक्तिका ॥ ११९ ॥ पुरुषार्थप्रदा पूर्णा  
 भोगिनी भुवनेश्वरी । अम्बिकाऽनादिनिधना हरिब्रह्मेन्द्रसेविता  
 ॥ १२० ॥ इति ललितासहस्रनाम्नि तृतीयशतकं समाप्तम् ॥

( पञ्चमी ज्वालिनी कला । ) नारायणी नादरूपा नामरूप-  
 विवर्जिता । ह्रींकारी ह्रीमती हृद्या हेयोपादेयवर्जिता ॥ १२१ ॥  
 राजराजार्चिता राज्ञी रम्या राजीवलोचना । रञ्जनी रमणी रस्या  
 रणत्किङ्किणिमेखला ॥ १२२ ॥ रमा राकेन्दुवदना रतिरूपा रति-  
 प्रिया । रक्षाकरी राक्षसघ्नी रामा रमणलम्पटा ॥ १२३ ॥ काम्या  
 कामकलारूपा कदम्बकुसुमप्रिया । कल्याणी जगतीकन्दा करुणा-  
 रससागरा ॥ १२४ ॥ कलावती कलालापा कान्ता कादम्बरीप्रिया ।  
 वरदा वामनयना वारुणीमदविह्वला ॥ १२५ ॥ विश्वाधिका वेद-  
 विद्या विन्ध्याचलनिवासिनी । विधात्री वेदजननी विष्णुमाया  
 विलासिनी ॥ १२६ ॥ क्षेत्रस्वरूपा क्षेत्रेशी क्षेत्रक्षेत्रज्ञपालिनी ।  
 क्षयवृद्धिविनिर्मुक्ता क्षेत्रपालसमर्चिता ॥ १२७ ॥ विजया विमला  
 वन्द्या वन्दारुजनवत्सला । वाग्वादिनी वामकेशी वह्निमण्डलवा-  
 सिनी ॥ १२८ ॥ भक्तिमत्कल्पलतिका पशुपाशविमोचिनी । संहता-  
 शेषपाखण्डा सदाचारप्रवर्तिका ॥ १२९ ॥ तापत्रयाद्विसंतप्तसमा-

ह्लादनचन्द्रिका । तरुणी तापसाराध्या तनुमध्या तमोपहा ॥ १३० ॥  
चित्तिस्तत्पदलक्ष्यार्था चिदेकरसरूपिणी । स्वात्मानन्दलवीभूत-  
ब्रह्माद्यानन्दसंततिः ॥ १३१ ॥ परा प्रत्यक्चितीरूपा पश्यन्ती पर-  
देवता । मध्यमा वैखरीरूपा भक्तमानसहंसिका ॥ १३२ ॥ कामे-  
श्वरप्राणनाडी कृतज्ञा कामपूजिता । शृङ्गाररससंपूर्णा जया जाल-  
न्धरस्थिता ॥ १३३ ॥ ओड्याणपीठनिलया बिन्दुमण्डलवासिनी ।  
रहोयागक्रमाराध्या रहस्तर्पणतर्पिता ॥ १३४ ॥ सद्यःप्रसादिनी विश्व-  
साक्षिणी साक्षिवर्जिता । षडङ्गदेवतायुक्ता षाड्गुण्यपरिपूरिता  
॥ १३५ ॥ नित्यक्लिन्ना निरुपमा निर्वाणसुखदायिनी । नित्याषोड-  
शिकारूपा श्रीकण्ठार्धशरीरिणी ॥ १३६ ॥ प्रभावती प्रभारूपा  
प्रसिद्धा परमेश्वरी । मूलप्रकृतिरव्यक्ता व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिणी  
॥ १३७ ॥ इति ललितासहस्रनाम्नि चतुर्थशतकं समाप्तम् ॥

( षष्ठी रुच्याख्या कला । ) व्यापिनी विविधाकारा विद्याविद्या-  
स्वरूपिणी । महाकामेशनयनकुमुदाह्लादकौमुदी ॥ १३८ ॥ भक्त-  
हार्दतमोभेदभानुमद्भानुसंततिः । शिवदूती शिवाराध्या शिवमूर्तिः  
शिवंकरी ॥ १३९ ॥ शिवप्रिया शिवपरा शिष्टेष्टा शिष्टपूजिता ।  
अप्रमेया स्वप्रकाशाऽमनोवाचामगोचरा ॥ १४० ॥ चिच्छक्तिश्चेत-  
नारूपा जडशक्तिर्जडात्मिका । गायत्री व्याहृतिः संध्या द्विजवृन्द-  
निषेविता ॥ १४१ ॥ तत्त्वासना तत्त्वमयी पञ्चकोशान्तरस्थिता ।  
निःसीममहिमा नित्ययौवना मदशालिनी ॥ १४२ ॥ मदाधूर्णित-  
रक्ताक्षी पदपाटलगण्डभूः । चन्दनद्रवदिग्धाङ्गा चाम्पेयकुसुमप्रिया  
॥ १४३ ॥ कुशला कोमलाकारा कुरुकुला कुलेश्वरी । कुलकुण्डा-  
लया कौलमार्गतत्परसेविता ॥ १४४ ॥ कुमारगणनाथाम्बा तुष्टिः  
पुष्टिर्मतिर्धृतिः । शान्तिः स्वस्तिमती कान्तिर्नन्दिनी विघ्नना-



शिनी ॥ १४५ ॥ तेजोवती त्रिनयना लोलाक्षी कामरूपिणी । मालिनी  
 हंसिनी माता मलयाचलवासिनी ॥ १४६ ॥ सुमुखा नलिनी सुभ्रूः  
 शोभना सुरनायिका । कालकंठी कान्तिमती क्षोभिणी सूक्ष्मरूपिणी  
 ॥ १४७ ॥ वज्रेश्वरी वामदेवी वयोवस्थाविवर्जिता । सिद्धेश्वरी  
 सिद्धविद्या सिद्धमाता यशस्विनी ॥ १४८ ॥ विशुद्धिचक्रनिलया-  
 ऽऽरक्तवर्णा त्रिलोचना । खट्वाङ्गादिप्रहरणा वदनैकसमन्विता  
 ॥ १४९ ॥ पायसान्नप्रिया त्वक्स्था पशुलोकभयंकरी । अमृतादि-  
 महाशक्तिसंवृता डाकिनीश्वरी, ॥ १५० ॥ अनाहताब्जनिलया  
 श्यामाभा वदनद्वया । दंष्ट्रोज्ज्वलाक्षमालादिधरा रुधिरसंस्थिता  
 ॥ १५१ ॥ कालरात्र्यादिशक्त्यौघवृता स्निग्धौदनप्रिया । महावीरे-  
 न्द्रवरदा राकिण्यम्बास्वरूपिणी ॥ १५२ ॥ मणिपूराब्जनिलया  
 वदनत्रयसंयुता । वज्रादिकायुधोपेता डामर्यादिभिरावृता ॥ १५३ ॥  
 इति ललितासहस्रनाम्नि पञ्चमशतकं समाप्तम् ॥

(सप्तमी सुषुम्णा कला ।) रक्तवर्णा मांसनिष्ठा गुडान्नप्रीत-  
 मानसा । समस्तभक्तसुखदा लाकिन्यम्बास्वरूपिणी ॥ १५४ ॥  
 स्वाधिष्ठानाम्बुजगता चतुर्वक्त्रमनोहरा । शूलाद्यायुधसंपन्ना पीत-  
 वर्णाऽतिगर्विता ॥ १५५ ॥ मेदोनिष्ठा मधुप्रीता बन्धिन्यादि-  
 समन्विता । दध्यन्नासक्तहृदया काकिनीरूपधारिणी ॥ १५६ ॥  
 मूलाधाराम्बुजारूढा पञ्चवक्त्राऽस्थिसंस्थिता । अङ्कुशादिप्रहरणा  
 वरदादिनिषेविता ॥ १५७ ॥ मुद्रौदनासक्तचित्ता साकिन्यम्बा-  
 स्वरूपिणी । आज्ञाचक्राब्जनिलया शुक्लवर्णा षडानना ॥ १५८ ॥  
 मज्जासंस्था हंसवती मुख्यशक्तिसमन्विता । हरिद्रावैकरसिका  
 हाकिनीरूपधारिणी ॥ १५९ ॥ सहस्रदलपद्मस्था सर्ववर्णोपशो-  
 भिता । सर्वायुधधरा शुक्लसंस्थिता सर्वतोमुखी ॥ १६० ॥ सर्वौ-

दनप्रीतचित्ता याकिन्यम्बास्वरूपिणी । स्वाहा स्वधा मतिर्मैधा  
 श्रुतिस्मृतिरनुत्तमा ॥ १६१ ॥ पुण्यकीर्तिः पुण्यलभ्या पुण्य-  
 श्रवणकीर्तना । पुलोमजार्चिता बन्धमोचनी बन्धुरालका ॥ १६२ ॥  
 त्रिमशूरूपिणी विद्या वियदादिजगत्प्रसूः । सर्वव्याधिप्रशमनी  
 सर्वमृत्युनिवारिणी ॥ १६३ ॥ अग्रगण्याऽचिन्त्यरूपा कलिकल्मष-  
 नाशिनी । कात्यायनी कालहन्त्री कमलाक्षनिषेविता ॥ १६४ ॥  
 ताम्बूलपूरितमुखी दाडिमीकुसुमप्रभा । मृगाक्षी मोहिनी मुख्या  
 मृडानी मित्ररूपिणी ॥ १६५ ॥ नित्यतृप्ता भक्तनिधिर्नियत्री निखि-  
 लेश्वरी । मैत्र्यादिवासनालभ्या महाप्रलयसाक्षिणी ॥ १६६ ॥ परा-  
 शक्तिः परानिष्ठा प्रज्ञानघनरूपिणी । माध्वीपानालसा मत्ता मातृ-  
 कावर्णरूपिणी ॥ १६७ ॥ महाकैलासनिलया मृणालमृदुदोर्लता ।  
 महनीया दयामूर्तिर्महासाम्राज्यशालिनी ॥ १६८ ॥ आत्मविद्या  
 महाविद्या श्रीविद्या कामसेविता । श्रीषोडशाक्षरीविद्या त्रिकूटा  
 कामकोटिका ॥ १६९ ॥ कटाक्षर्किकरीभूतकमलाकोटिसेविता ।  
 शिरःस्थिता चन्द्रनिभा भालस्थेन्द्रधनुःप्रभा ॥ १७० ॥ हृदयस्था  
 रविप्रख्या त्रिकोणान्तरदीपिका । दाक्षायणी दैत्यहन्त्री दक्षयज्ञ-  
 विनाशिनी ॥ १७१ ॥ इति ललितासहस्रनाम्नि षष्ठशतकं समाप्तम् ॥  
 ( अष्टमी भोगदा कला । ) दरान्दोलितदीर्घाक्षी दरहासोज्ज्वल-  
 न्मुखी । गुरुमूर्तिर्गुणनिधिर्गोमाता गुहजन्मभूः ॥ १७२ ॥ देवेशी  
 दण्डनीतिस्था दहराकाशरूपिणी । प्रतिपन्मुख्यराकान्ततिथि-  
 मण्डलपूजिता ॥ १७३ ॥ कलात्मिका कलानाथा काव्यालाप-  
 विमोदिनी । सचामररमोवाणीसव्यदक्षिणसेविता ॥ १७४ ॥ आदि-  
 शक्तिरमेयात्मा परमा पावनाकृतिः । अनेककोटिब्रह्माण्डजननी  
 दिव्यविग्रहा ॥ १७५ ॥ क्लींकारी केवला गुह्या कैवल्यपददा-

यिनी । त्रिपुरा त्रिजगद्वन्द्या त्रिमूर्तिस्त्रिदशेश्वरी ॥ १७६ ॥ त्र्यक्षरी  
 दिव्यगन्धाढ्या सिन्दूरतिलकाञ्चिता । उमा शैलेन्द्रतनया गौरी-  
 गन्धर्वसेविता ॥ १७७ ॥ विश्वगर्भा स्वर्णगर्भाऽवरदा वागधीश्वरी ।  
 ध्यानगम्याऽपरिच्छेद्या ज्ञानदा ज्ञानविग्रहा ॥ १७८ ॥ सर्ववेदान्त-  
 संवेद्या सत्यानन्दस्वरूपिणी । लोपामुद्रार्चिता लीलाङ्गुस्रब्रह्माण्ड-  
 मण्डला ॥ १७९ ॥ अदृश्या दृश्यरहिता विज्ञात्री वेद्यवर्जिता ।  
 योगिनी योगदा योग्या योगानन्दयुगंधरा ॥ १८० ॥ इच्छाशक्ति-  
 ज्ञानशक्तिक्रियाशक्तिस्वरूपिणी । सर्वाधारा सुप्रतिष्ठा सदसद्रूप-  
 धारिणी ॥ १८१ ॥ अष्टमूर्तिरजा जैत्री लोकयात्राविधायिनी ।  
 एकाकिनी भूमरूपा निर्वृता द्वैतवर्जिता ॥ १८२ ॥ अन्नदा वसुदा  
 वृद्धा ब्रह्मात्मैक्यस्वरूपिणी । बृहती ब्राह्मणी ब्राह्मी ब्रह्मानन्दा  
 बलिप्रिया ॥ १८३ ॥ भाषारूपा बृहत्सेना भावाभावविवर्जिता ।  
 सुखाराध्या शुभकरी शोभना सुलभागतिः ॥ १८४ ॥ राजराजेश्वरी  
 राज्यदायिनी राज्यवल्लभा । राजकृपा राजपीठनिवेशितनिजाश्रिता  
 ॥ १८५ ॥ राज्यलक्ष्मीः कोशनाथा चतुरङ्गबलेश्वरी । साम्राज्य-  
 दायिनी सत्यसंधा सागरमेखला ॥ १८६ ॥ दीक्षिता दैत्यशमनी  
 सर्वलोकवशंकरी । सर्वार्थदात्री सावित्री सच्चिदानन्दरूपिणी  
 ॥ १८७ ॥ इति ललितासहस्रनाम्नि सप्तमशतकं समाप्तम् ॥

( नवमी विश्वा कला । ) देशकालापरिच्छिन्ना सर्वगा सर्वमोहिनी ।  
 सरस्वती शास्त्रमयी गुहाम्बा गुह्यरूपिणी ॥ १८८ ॥ सर्वोपाधि-  
 विनिर्मुक्ता सदाशिवपतिव्रता । संप्रदायेश्वरी साध्वी गुरुमण्डल-  
 रूपिणी ॥ १८९ ॥ कुलोत्तीर्णा भगाराध्या माया मधुमती  
 मही । गणाम्बा गुह्यकाराध्या कोमलाङ्गी गुरुप्रिया ॥ १९० ॥  
 स्वतन्त्रा सर्वतन्त्रेशी दक्षिणामूर्तिरूपिणी । सनकादिसमाराध्या

शिवज्ञानप्रदायिनी ॥ १९१ ॥ चित्कलानन्दकलिका प्रेमरूपा  
 प्रियंकरी । नामपारायणप्रीता नन्दिविद्या नटेश्वरी ॥ १९२ ॥  
 मिथ्याजगदधिष्ठाना मुक्तिदा मुक्तिरूपिणी । लास्यप्रिया लयकरी  
 लज्जा रम्भादिवन्दिता ॥ १९३ ॥ भवदावसुधावृष्टिः पापारण्य-  
 दवानला । दौर्भाग्यतूलवातूला जराध्वान्तरविप्रभा ॥ १९४ ॥  
 भाग्याब्धिचन्द्रिका भक्तचित्तकेकिधनावना । रोगपर्वतदम्भो-  
 लिर्मृत्युदारुकुठारिका ॥ १९५ ॥ महेश्वरी महाकाली  
 महाप्रासा महाशना । अपर्णा चण्डिका चण्डमुण्डासुरनिषूदनी  
 ॥ १९६ ॥ क्षराक्षरात्मिका सर्वलोकेशी विश्वधारिणी । त्रिवर्गदात्री  
 सुभगा त्र्यम्बका त्रिगुणात्मिका ॥ १९७ ॥ स्वर्गपवर्गदा शुद्धा  
 जपापुष्पनिभाकृतिः । ओजोवती द्युतिधरा यज्ञरूपा प्रियव्रता  
 ॥ १९८ ॥ दुराराध्या दुराधर्षा पाटलीकुसुमप्रिया । महती मेरु-  
 निलया मन्दारकुसुमप्रिया ॥ १९९ ॥ वीराराध्या विराड् रूपा विरजा  
 विश्वतोमुखी । प्रत्यग्रूपा पराकाशा प्राणदा प्राणरूपिणी ॥ २०० ॥  
 मार्तण्डभैरवाराध्या मन्त्रिणीन्यस्तराज्यधूः । त्रिपुरेशी जयत्सेना  
 निस्त्रैगुण्या परापरा ॥ २०१ ॥ सत्यज्ञानानन्दरूपा सामरस्यपरायणा ।  
 कपर्दिनी कलामाला कामधुक्कामरूपिणी ॥ २०२ ॥ इति ललिता-  
 सहस्रनाम्नि अष्टमशतकं समाप्तम् ॥

( दशमी बोधिनी कला । ) कलानिधिः कान्यकला रसज्ञा रस-  
 शेवधिः । पुष्टा पुरातना पूज्या पुष्करा पुष्करेक्षणा ॥ २०३ ॥  
 परंज्योतिः परंधाम परमाणुः परात्परा । पाशहस्ता पाशहन्त्री पर-  
 मन्नविभेदिनी ॥ २०४ ॥ मूर्तामूर्ता नित्यवृत्ता मुनिमानसहंसिका ।  
 सत्यव्रता सत्यरूपा सर्वान्तर्यामिणी सती ॥ २०५ ॥ ब्रह्माणी  
 ब्रह्मजननी बहुरूपा बुधार्चिता । प्रसवित्री प्रचण्डाऽऽज्ञा प्रतिष्ठा  
 प्रकटाकृतिः ॥ २०६ ॥ प्राणेश्वरी प्राणदात्री पञ्चाशत्पीठरूपिणी ।

विश्वङ्कुला विविक्तस्था वीरमाता वियत्प्रसूः ॥ २०७ ॥ मुकुन्दा  
मुक्तिनिलया मूलविग्रहरूपिणी । भावज्ञा भवरोगघ्नी भवचक्र-  
प्रवर्तिनी ॥ २०८ ॥ छन्दःसारा शास्त्रसारा मन्त्रसारा तलोदरी ।  
उदारकीर्तिरुद्दामवैभवा वर्णरूपिणी ॥ २०९ ॥ जन्ममृत्युजरा-  
तप्तजनविश्रान्तिदायिनी । सर्वोपनिषदुद्घुष्टा शान्त्यतीता कला-  
त्मिका ॥ २१० ॥ गम्भीरा गगनान्तःस्था गर्विता गानलोलुपा ।  
कल्पनारहिता काष्ठाऽकान्ताकान्तार्धविग्रहा ॥ २११ ॥ कार्यकारण-  
निर्मुक्ता कामकेलितरङ्गिता । कनकनकताटङ्का लीलाविग्रह-  
धारिणी ॥ २१२ ॥ अजा क्षयविनिर्मुक्ता मुग्धा क्षिप्रप्रसादिनी ।  
अन्तर्मुखसमाराध्या बहिर्मुखसुदुर्लभा ॥ २१३ ॥ त्रयी त्रिवर्ग-  
निलया त्रिस्था त्रिपुरमालिनी । निरामया निरालम्बा स्वात्मारामा  
सुधास्रुतिः ॥ २१४ ॥ संसारपङ्कनिर्मग्नसमुद्धरणपण्डिता । यज्ञ-  
प्रिया यज्ञकर्त्री यजमानस्वरूपिणी ॥ २१५ ॥ धर्माधारा धना-  
ध्यक्षा धनधान्यविवर्धिनी । विप्रप्रिया विप्ररूपा विश्वभ्रमणकारिणी  
॥ २१६ ॥ विश्वप्रासा विद्रुमाभा वैष्णवी विष्णुरूपिणी । अयो-  
निर्योनिनिलया कूटस्था कुलरूपिणी ॥ २१७ ॥ इति ललिता-  
सहस्रनाम्नि नवमशतकं समाप्तम् ॥

(एकादशी धारिणी कला ।) वीरगोष्ठीप्रिया वीरा नैष्कर्म्या  
नादरूपिणी । विज्ञानकल्पा कल्या विदग्धा बैन्दवासनी ॥ २१८ ॥  
तत्त्वाधिका तत्त्वमयी तत्त्वमर्धस्वरूपिणी । सामगानप्रिया सौम्या  
सदाशिवकुटुम्बिनी ॥ २१९ ॥ सव्यापसव्यमार्गस्था सर्वापदि-  
निवारिणी । स्वस्था स्वभावमधुरा धीरा धीरसमर्चिता ॥ २२० ॥  
चैतन्यार्घ्यसमाराध्या चैतन्यकुसुमप्रिया । सदोदिता सदातुष्टा  
तरुणादित्यपाटला ॥ २२१ ॥ दक्षिणादक्षिणाराध्या दरस्मेरमुखा-

म्बुजा । कौलिनीकेवलाऽनर्घ्यकैवल्यफलदायिनी ॥ २२२ ॥  
 स्तोत्रप्रिया स्तुतिमती श्रुतिसंस्तुतवैभवा । मनस्विनी मानवती  
 महेशी मङ्गलाकृतिः ॥ २२३ ॥ विश्वमाता जगद्धात्री विशालाक्षी  
 विरागिणी । प्रगल्भा परमोदारा परमोदा मनोमयी ॥ २२४ ॥  
 व्योमकेशी विमानस्था वज्रिणी वामकेश्वरी । पञ्चयज्ञप्रिया पञ्च-  
 प्रेतमञ्चाधिशायिनी ॥ २२५ ॥ पञ्चमी पञ्चभूतेशी पञ्चसंख्यो-  
 पचारिणी । शाश्वती शाश्वतैश्वर्या शर्मदा शंभुमोहिनी ॥ २२६ ॥  
 धरा धरसुता धन्या धर्मिणी धर्मवर्धिनी । लोकातीता गुणातीता  
 सर्वातीता शमाश्रिता ॥ २२७ ॥ बन्धूककुसुमप्रख्या बाला लीला-  
 विनोदिनी । सुमङ्गली सुखकरी सुवेषाढ्या सुवासिनी ॥ २२८ ॥  
 सुवासिन्यर्चनप्रीताऽऽशोभना शुद्धमानसा । विन्दुतर्पणसंतुष्टा  
 पूर्वजा त्रिपुराम्बिका ॥ २२९ ॥ दशमुद्रासमाराध्या त्रिपुराश्रीव-  
 शंकरी । ज्ञानमुद्रा ज्ञानगम्या ज्ञानज्ञेयस्वरूपिणी ॥ २३० ॥  
 योनिमुद्रा त्रिखण्डेशी त्रिगुणाम्बा त्रिकोणगा । अनघाऽद्भुतचारित्रा  
 वाञ्छितार्थप्रदायिनी ॥ २३१ ॥ अभ्यासातिशयज्ञाता षडध्वातीत-  
 रूपिणी । अव्याजकरुणामूर्तिरज्ञानध्वान्तदीपिका ॥ २३२ ॥  
 आबालगोपविदिता सर्वानुलङ्घ्यशासना । श्रीचक्रराजनिलया  
 श्रीमत्रिपुरसुन्दरी ॥ २३३ ॥ श्रीशिवाशिवशक्त्यैक्यरूपिणी  
 ललिताम्बिका । श्रीमणिसद्भिर्विविधगुडदरान्देशैश्च पुष्टनादा-  
 भ्याम् । नामसु शतकारम्भा न स्तोभो नापि शब्दपुनरुक्तिः  
 ॥ ३३ ॥ मतिवरदाकान्तादावकारयोगेन रक्तवर्णादौ । आकारस्य  
 कचन तु पदयोर्योगेन भेदयेन्नाम ॥ ३४ ॥ साध्वी तत्त्वमयीति  
 द्वेधा त्रेधा बुधो भिद्यात् । हंसवती चानर्घ्यैत्यर्धान्तादेकनामैव  
 ॥ ३५ ॥ शक्तिर्निष्ठाधामज्योतिःपरपूर्वकं द्विपदम् । शोभनसुलभा

सुगतिस्त्रिपदैकपदानि शेषाणि ॥ ३६ ॥ निधिरात्मा दम्भोलिः  
शेवधिरिति नाम पुंलिङ्गम् । तद्ब्रह्मधाम साधुज्योतिः क्लीबेऽव्ययं  
स्वधा स्वाहा ॥ ३७ ॥ इति ललितासहस्रनाम्नि दशमशतकं  
समाप्तम् ॥

( क्षमाख्या द्वादशी कला । ) आर्विंशतितः सार्धान्नानाफलसाध-  
नत्वोक्तिः । तस्य क्रमशो विवृतिः षट्चत्वारिंशता श्लोकैः ॥ ३८ ॥  
इत्येवं नामसाहस्रं कथितं ते घटोद्भव ॥ २३४ ॥ रहस्यानां रहस्यं  
च ललिताप्रीतिदायकम् । अनेन सदृशं स्तोत्रं न भूतं न भविष्यति  
॥ २३५ ॥ सर्वरोगप्रशमनं सर्वसंपत्प्रवर्धनम् । सर्वापमृत्युशमनं  
कालमृत्युनिवारणम् ॥ २३६ ॥ सर्वज्वरार्तिशमनं दीर्घायुष्यप्रदा-  
यकम् । पुत्रप्रदमपुत्राणां पुरुषार्थप्रदायकम् ॥ २३७ ॥ इदं विशेष-  
षाच्छ्रीदेव्याः स्तोत्रं प्रीतिविधायकम् । जपेन्नित्यं प्रयत्नेन ललितो-  
पास्तितत्परः ॥ २३८ ॥ प्रातः स्नात्वा विधानेन संध्याकर्म समाप्य  
च । पूजागृहं ततो गत्वा चक्रराजं समर्पयेत् ॥ २३९ ॥ विद्यां  
जपेत्सहस्रं वा त्रिंशतं शतमेव वा । रहस्यनामसाहस्रमिदं पश्चात्  
पठेन्नरः ॥ २४० ॥ जन्ममध्ये सकृच्चापि य एवं पठते सुधीः । तस्य  
पुण्यफलं वक्ष्ये शृणु त्वं कुम्भसंभव ॥ २४१ ॥ गङ्गादिसर्वतीर्थेषु  
यः स्नायात्कोटिजन्मसु । कोटिलिङ्गप्रतिष्ठां तु यः कुर्यादविमुक्तके  
॥ २४२ ॥ कुरुक्षेत्रे तु यो दद्यात्कोटिवारं रविग्रहे । कोटिं सौवर्ण-  
भाराणां श्रोत्रियेषु द्विजन्मसु ॥ २४३ ॥ यः कोटिं हयमेधानामा-  
हरेद्वाङ्मरोधसि । आचरेत्कूपकोटीर्यो निर्जले मरुभूतले ॥ २४४ ॥  
दुर्भिक्षे यः प्रतिदिनं कोटिब्राह्मणभोजनम् । श्रद्धया परया कुर्यात्स-  
हस्रपरिवत्सरान् ॥ २४५ ॥ तत्पुण्यं कोटिगुणितं लभेत्पुण्यमनु-  
त्तमम् । रहस्यनामसाहस्रे नाश्रोऽप्येकस्य कीर्तनात् ॥ २४६ ॥

रहस्यनामसाहस्रे नामैकमपि यः पठेत् । तस्य पापानि नश्यन्ति  
 महान्त्यपि न संशयः ॥ २४७ ॥ नित्यकर्माननुष्ठानाग्निषिद्धकरणा-  
 दपि । यत्पापं जायते पुंसां तत्सर्वं नश्यति द्रुतम् ॥ २४८ ॥  
 बहुनात्र किमुक्तेन शृणु त्वं कलशीसुत । अत्रैकनाम्नो या शक्तिः  
 पातकानां निवर्तने । तन्निवर्त्यमघं कर्तुं नालं लोकाश्चतुर्दश  
 ॥ २४९ ॥ यस्यक्त्वा नामसाहस्रं पापहानिमभीप्सति । स हि  
 शीतनिवृत्त्यर्थं हिमशैलं निषेवते ॥ २५० ॥ भक्तो यः कीर्तयन्नि-  
 त्यमिदं नामसहस्रकम् । तस्मै श्रीललितादेवी प्रीताऽभीष्टं  
 प्रयच्छति ॥ २५१ ॥ अकीर्तयन्निदं स्तोत्रं कथं भक्तो  
 भविष्यति ॥ २५२ ॥ नित्यं संकीर्तनाशक्तः कीर्तयेत्पुण्यवासरे ।  
 संक्रान्तौ विषुवे चैव स्वजन्मत्रितयेऽयने ॥ २५३ ॥ नवम्यां  
 वा चतुर्दश्यां सितायां शुक्रवासरे । कीर्तयेन्नामसाहस्रं पौर्णमास्यां  
 विशेषतः ॥ २५४ ॥ पौर्णमास्यां चन्द्रबिम्बे ध्यात्वा श्रीललिता-  
 म्बिकाम् । पञ्चोपचारैः संपूज्य पठेन्नामसहस्रकम् ॥ २५५ ॥ सर्वे  
 रोगाः प्रणश्यन्ति दीर्घमायुश्च विन्दति । अयमायुष्करो नाम प्रयोगः  
 कल्पनोदितः ॥ २५६ ॥ ज्वरार्तं शिरसि स्पृष्ट्वा पठेन्नामसहस्रकम् ।  
 तत्क्षणात्प्रशमं याति शिरस्तोदो ज्वरोऽपि च ॥ २५७ ॥ सर्वव्याधि-  
 निवृत्त्यर्थं स्पृष्ट्वा भस्म जपेदिदम् । तद्भस्मधारणादेव नश्यन्ति  
 व्याधयः क्षणात् ॥ २५८ ॥ जलं संमज्ज्य कुम्भस्थं नामसाहस्रतो  
 मुने । अभिषिञ्चेद्बृहस्पतान्ग्रहा नश्यन्ति तत्क्षणात् ॥ २५९ ॥  
 सुधासागरमध्यस्थां ध्यात्वा श्रीललिताम्बिकाम् । यः पठेन्नाम-  
 साहस्रं विषं तस्य विनश्यति ॥ २६० ॥ वन्ध्यानां पुत्रलाभाय  
 नामसाहस्रमन्त्रितम् । नवनीतं प्रदद्यात् पुत्रलाभो भवेद्द्रुवम्  
 ॥ २६१ ॥ देव्याः पाशेन संबद्धामाकूटामङ्कुशेन च । ध्यात्वाऽभीष्टां



द्वियं रात्रौ पठेन्नामसहस्रकम् ॥ २६२ ॥ आयाति स्वसमीपं सा  
 यद्यप्यन्तःपुरं गता । राजाकर्षणकामश्चेद्राजावसथदिबुधः ॥ २६३ ॥  
 त्रिरात्रं यः पठेदेतच्छ्रीदेवीध्यानतत्परः । स राजा पारवश्येन तुरङ्गं  
 वा मतङ्गजम् ॥ २६४ ॥ आरुह्य याति निकटं दासवत्प्रणिपत्य च ।  
 तस्मै राज्यं च कोशं च दद्यादेव वशंगतः ॥ २६५ ॥ रहस्यनाम-  
 साहस्रं यः कीर्तयति नित्यशः । तन्मुखालोकमात्रेण मुह्येन्नोक्तत्रयं  
 मुने ॥ २६६ ॥ यस्त्विदं नामसाहस्रं सकृत्पठति भक्तिमान् । तस्य  
 ये शत्रवस्तेषां निहन्ता शरभेश्वरः ॥ २६७ ॥ यो वाभिचारं कुरुते  
 नामसाहस्रपाठके । निवर्त्य तत्क्रियां हन्यात्तं वै प्रत्यङ्गिराः स्वयम्  
 ॥ २६८ ॥ ये क्रूरदृष्ट्या वीक्षन्ते नामसाहस्रपाठकम् । तानन्धा-  
 न्कुरुते क्षिप्रं स्वयं मार्तण्डभैरवः ॥ २६९ ॥ धनं यो हरते चोरैर्नाम-  
 साहस्रजापिनः । यत्र कुत्र स्थितं वापि क्षेत्रपालो निहन्ति तम्  
 ॥ २७० ॥ विद्यासु कुरुते वादं यो विद्वान्नामजापिनः । तस्य  
 वाक्स्तम्भनं सद्यः करोति नकुलीश्वरी ॥ २७१ ॥ यो राजा कुरुते  
 वैरं नामसाहस्रजापिनः । चतुरङ्गबलं तस्य दण्डिनी संहरेत्स्वयम्  
 ॥ २७२ ॥ यः पठेन्नामसाहस्रं षण्मासं भक्तिसंयुतः । लक्ष्मी-  
 श्चाञ्चल्यरहिता सदा तिष्ठति तद्गृहे ॥ २७३ ॥ मासमेकं प्रतिदिनं  
 त्रिवारं यः पठेन्नरः । भारती तस्य जिह्वाग्रे रङ्गे नृत्यति नित्यशः  
 ॥ २७४ ॥ यस्त्वेकवारं पठति पक्षमेकमतन्द्रितः । मुह्यन्ति कामवशगा  
 मृगाक्ष्यस्तस्य वीक्षणात् ॥ २७५ ॥ यः पठेन्नामसाहस्रं जन्ममध्ये  
 सकृन्नरः । तद्दृष्टिगोचराः सर्वे मुच्यन्ते सर्वकिटिबधैः ॥ २७६ ॥ यो  
 वेत्ति नामसाहस्रं तस्मै देयं द्विजन्मने । अन्नं वस्त्रं धनं धान्यं नान्ये-  
 भ्यस्तु कदाचन ॥ २७७ ॥ श्रीमन्नराजं यो वेत्ति श्रीचक्रं यः समर्चति ।

यः कीर्तयति नामानि तं सत्पात्रं विदुर्बुधाः ॥ २७८ ॥ तस्मै देयं  
 प्रयत्नेन श्रीदेवीप्रीतिमिच्छता । यः कीर्तयति नामानि मन्त्रराजं  
 न वेत्ति यः ॥ २७९ ॥ पशुतुल्यः स विज्ञेयस्तस्मै दत्तं निरर्थकम् ।  
 परीक्ष्य विद्याविदुषस्तेभ्यो दद्याद्विचक्षणः ॥ २८० ॥ श्रीमन्मन्त्रराज-  
 सदृशो यथा मन्त्रो न विद्यते । देवता ललितातुल्या यथा नास्ति  
 घटोद्भव ॥ २८१ ॥ रहस्यनामसाहस्रतुल्या नास्ति तथा स्तुतिः ।  
 लिखित्वा पुस्तके यस्तु नामसाहस्रमुत्तमम् ॥ २८२ ॥ समर्चयेत्सदा  
 भक्त्या तस्य तुष्यति सुन्दरी । बहुनात्र किमुक्तेन शृणु त्वं कुम्भ-  
 संभव ॥ २८३ ॥ नानेन सदृशं स्तोत्रं सर्वतन्त्रेषु विद्यते । तस्मादु-  
 पासको नित्यं कीर्तयेदिदमादरात् ॥ २८४ ॥ एभिर्नामसहस्रैस्तु  
 श्रीचक्रं योऽर्चयेत्सकृत् । पद्मैर्वा तुलसीपुष्पैः कङ्कारैर्वा कदम्बकैः  
 ॥ २८५ ॥ चम्पकैर्जातिकुसुमैर्मल्लिकाकरवीरकैः । उत्पलैर्विल्वपत्रैर्वा  
 कुन्दकेसरपाटलैः ॥ २८६ ॥ अन्यैः सुगन्धिकुसुमैः केतकीमाधवी-  
 मुखैः । तस्य पुण्यफलं वक्तुं न शक्नोति महेश्वरः ॥ २८७ ॥ सा  
 वेत्ति ललितादेवी स्वचक्रार्चनजं फलम् । अन्ये कथं विजानीयु-  
 र्ब्रह्माद्याः स्वल्पमेधसः ॥ २८८ ॥ प्रतिमासं पौर्णमास्यामेभिर्नाम-  
 सहस्रकैः । रात्रौ यश्चक्रराजस्थामर्चयेत्परदेवताम् ॥ २८९ ॥ स एव  
 ललितारूपस्तद्रूपा ललिता स्वयम् । न तयोर्विद्यते भेदो भेदकृत्पाप-  
 कृद्भवेत् ॥ २९० ॥ महानवम्यां यो भक्तः श्रीदेवीं चक्रमध्यगाम् ।  
 अर्चयेन्नामसाहस्रैस्तस्य मुक्तिः करे स्थिता ॥ २९१ ॥ यस्तु नाम-  
 सहस्रेण शुक्रवारे समर्चयेत् । चक्रराजे महादेवीं तस्य पुण्यफलं  
 शृणु ॥ २९२ ॥ सर्वान्कामानवाप्स्येह सर्वसौभाग्यसंयुतः । पुत्र-  
 पौत्रादिसंयुक्तो भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान् ॥ २९३ ॥ अन्ते  
 श्रीललितादेव्याः सायुज्यमतिदुर्लभम् । प्रार्थनीयं शिवाद्यैश्च

प्राप्नोत्येव न संशयः ॥ २९४ ॥ यः सहस्रं ब्राह्मणानामभिर्नाम-  
 सहस्रकैः । समर्च्य भोजयेद्भक्त्या पायसापूपषड्रसैः ॥ २९५ ॥  
 तस्मै प्रीणाति ललिता स्वसाम्राज्यं प्रयच्छति । न तस्य दुर्लभं  
 वस्तु त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥ २९६ ॥ निष्कामः कीर्तयेद्यस्तु  
 नामसाहस्रमुत्तमम् । ब्रह्मज्ञानमवाप्नोति येन मुच्येत बन्धनात्  
 ॥ २९७ ॥ धनार्थी धनमाप्नोति यशोर्थी प्राप्नुयाद्यशः । विद्यार्थी  
 चाप्नुयाद्विद्यां नामसाहस्रकीर्तनात् ॥ २९८ ॥ नानेन सदृशं  
 स्तोत्रं भोगमोक्षप्रदं मुने । कीर्तनीयमिदं तस्माद्भोगमोक्षार्थि-  
 भिर्नरैः ॥ २९९ ॥ चतुराश्रमनिष्ठैश्च कीर्तनीयमिदं सदा ।  
 स्वधर्मसमनुष्ठानवैकल्यपरिपूर्तये ॥ ३०० ॥ कलौ पापैकबहुले  
 धर्मानुष्ठानवर्जिते । नामानुकीर्तनं मुक्त्वा नृणां नान्यत्परायणम्  
 ॥ ३०१ ॥ लौकिकाद्वचनान्मुख्यं विष्णुनामानुकीर्तनम् । विष्णु-  
 नामसहस्राच्च शिवनामैकमुत्तमम् ॥ ३०२ ॥ शिवनामसहस्राच्च  
 देव्या नामैकमुत्तमम् । देवीनामसहस्राणि कोटिशः सन्ति कुम्भज  
 ॥ ३०३ ॥ तेषु मुख्यं दशविधं नामसाहस्रमुच्यते । रहस्यनाम-  
 साहस्रमिदं शस्तं दशस्वपि ॥ ३०४ ॥ तस्मात्संकीर्तयेन्नित्यं कलि-  
 दोषनिवृत्तये । मुख्यं श्रीमातृनामेति न जानन्ति विमोहिताः  
 ॥ ३०५ ॥ विष्णुनामपराः केचिच्छिवनामपराः परे । न कश्चिदपि  
 लोकेषु ललितानामतत्परः ॥ ३०६ ॥ येनान्यदेवतानाम कीर्तितं  
 जन्मकोटिषु । तस्यैव भवति श्रद्धा श्रीदेवीनामकीर्तने ॥ ३०७ ॥  
 चरमे जन्मनि यथा श्रीविद्योपासको भवेत् । नामसाहस्रपाठश्च  
 तथा चरमजन्मनि ॥ ३०८ ॥ यथैव विरला लोके श्रीविद्याचार-  
 वेदिनः । तथैव विरलो गुह्यनामसाहस्रपाठकः ॥ ३०९ ॥ मन्त्रराज-  
 जपश्चैव चक्रराजार्चनं तथा । रहस्यनामपाठश्च नाल्पस्य तपसः

फलम् ॥ ३१० ॥ अपठन्नामसाहस्रं प्रीणयेद्यो महेश्वरीम् । स  
 चक्षुषा विना रूपं पश्येदेव विमूढधीः ॥ ३११ ॥ रहस्यनाम-  
 साहस्रं त्यक्त्वा यः सिद्धिकामुकः । स भोजनं विना नूनं क्षुन्नि-  
 वृत्तिमभीप्सति ॥ ३१२ ॥ यो भक्तो ललितादेव्याः स नित्यं  
 कीर्तयेदिदम् । नान्यथा प्रीयते देवी कल्पकोटिशतैरपि ॥ ३१३ ॥  
 तस्माद्रहस्यनामानि श्रीमातुः प्रयतः पठेत् । इति ते कथितं स्तोत्रं  
 रहस्यं कुम्भसंभव ॥ ३१४ ॥ नाविद्यावेदिने ब्रूयान्नाभक्ताय  
 कदाचन । यथैव गोप्या श्रीविद्या तथा गोप्यमिदं मुने ॥ ३१५ ॥  
 पशुतुल्येषु न ब्रूयाज्जनेषु स्तोत्रमुत्तमम् । यो ददाति विमूढात्मा  
 श्रीविद्यारहिताय तु ॥ ३१६ ॥ तस्मै कुप्यन्ति योगिन्यः  
 सोऽनर्थः सुमहान्स्मृतः । रहस्यनामसाहस्रं तस्मात्संगोपयेदिदम्  
 ॥ ३१७ ॥ स्वतन्त्रेण मया नोक्तं तवापि कलशीभव । ललिता-  
 प्रेरणादेव मयोक्तं स्तोत्रमुत्तमम् ॥ ३१८ ॥ कीर्तनीयमिदं भक्त्या  
 कुम्भयोने निरन्तरम् । तेन तुष्टा महादेवी तवाभीष्टं प्रदास्यति  
 ॥ ३१९ ॥ सूत उवाच ॥ इत्युक्त्वा श्रीहयग्रीवो ध्यात्वा  
 श्रीललिताम्बिकाम् । आनन्दमग्नहृदयः सद्यः पुलकितोऽभवत्  
 ॥ ३२० ॥ इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे ललितोपाख्याने हयग्रीवा-  
 गस्त्यसंवादे ललितासहस्रनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १८२. भगवत्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमोऽस्तु ते सरस्वति त्रिशूलचक्रधारिणि  
 सितांबरधृते शुभे मृगेंद्रपीठसंस्थिते । सुवर्णबधुराधरे सुझलरी-  
 शिरोरुहे सुवर्णपद्मभूषिते नमोऽस्तु ते महेश्वरि ॥ १ ॥ पिता-  
 महादिभिर्नुते स्वकांतिलुप्तचंद्रमे सरलमालया वृते भवाब्धिकष्ट-  
 हारिणि । तमालहस्तमंडिते तमालमालशोभिते गिरामगोचरे इले

नमोऽस्तु० ॥ २ ॥ स्वभक्तवत्सलेऽनघे सदापवर्गभोगदे दरिद्र-  
दुःखहारिणि त्रिलोकशंकरीश्वरि । भवानि भीमश्रुषिके प्रचंडतेज-  
उल्लवले भुजाकलापमंडिते नमोऽस्तु० ॥ ३ ॥ प्रपन्नभीतिनाशिके  
प्रसूनमाल्यकंधरे धियस्तमोनिवारिके विशुद्धबुद्धिकारिके । सुरा-  
र्चितांघ्रिपंकजे प्रचंडविक्रमेऽक्षरे विशालपद्मलोचने नमोऽस्तु०  
॥ ४ ॥ हतस्त्वया स दैत्यधूत्रलोचनो यदा रणे तदा प्रसून-  
वृष्टयस्त्रिविष्टपे सुरैः कृताः । निरीक्ष्य तत्र ते प्रभामलज्जत प्रभा-  
करस्त्वये दयाकरे ध्रुवे नमोऽस्तु० ॥ ५ ॥ ननाद केसरी यदा  
चचाल मेदिनी तदा जगाम दैत्यनायकः स्वसेनया द्रुतं भिया ।  
सकोपकंपदच्छदे सचंडमुंडघातिके मृगेंद्रनादनादिते नमोऽस्तु०  
॥ ६ ॥ कुचंदनार्चितालके सितोष्णवारणाधरे सर्वैरानने वरे  
निशुंभशुंभमर्दिके । प्रसीद चंडिके अजे समस्तदोषघातिके शुभा-  
मतिप्रदेऽचले नमोऽस्तु० ॥ ७ ॥ त्वमेव विश्वधारिणी त्वमेव  
विश्वकारिणी त्वमेव सर्वहारिणी न गम्यसेऽजितात्मभिः ।  
दिवौकसां हिते रता करोषि दैत्यनाशनं शताक्षि रक्तदंतिके  
नमोऽस्तु० ॥ ८ ॥ पठन्ति ये समाहिता इमं स्तवं सदा नरा  
अनन्यभक्तिसंयुता अहर्मुखेऽनुवासरम् । भवन्ति ते तु पंडिताः  
सुपुत्रधान्यसंयुताः कलत्रभूतिसंयुता व्रजन्ति चामृतं सुखम् ॥ ९ ॥  
इति श्रीमद्रामदासपूज्यपादशिष्यश्रीमद्वंसदासशिष्येणामरदासा-  
ख्यकविना विरचितं भगवत्पष्टकं समाप्तम् ॥

### १८३. संकष्टनाशनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ नारद उवाच ॥ जैगीषव्य मुनिश्रेष्ठ सर्वज्ञ  
सुखदायक । आख्यातानि सुपुण्यानि श्रुतानि त्वत्प्रसादतः ॥ १ ॥  
न तृप्तिमधिगच्छामि तव वागमृतेन च । वदस्वैकं महाभाग

संकटाख्यानमुत्तमम् ॥ २ ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा जैगीषव्यो-  
 ऽब्रवीत्ततः । संकष्टनाशनं स्तोत्रं शृणु देवर्षिसत्तम ॥ ३ ॥ द्वापरे  
 तु पुरा वृत्ते भ्रष्टराज्यो युधिष्ठिरः । आतृभिः सहितो राज्यनिर्वेदं  
 परमं गतः ॥ ४ ॥ तदानीं तु ततः काशीं पुरीं यातो महामुनिः ।  
 मार्कण्डेय इति ख्यातः सह शिष्यैर्महायशाः ॥ ५ ॥ तं दृष्ट्वा स  
 समुत्थाय प्रणिपत्य सुपूजितः । किमर्थं म्लानवदन एतत्त्वं  
 मां निवेदय ॥ ६ ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ संकष्टं मे महत्प्राप्तमेता-  
 द्भवदनं ततः । एतन्निवारणोपायं किञ्चिद्ब्रूहि मुने मम ॥ ७ ॥  
 मार्कण्डेय उवाच ॥ आनन्दकानने देवी संकटा नाम विश्रुता ।  
 वीरेश्वरोत्तरे भागे पूर्वं चन्द्रेश्वरस्य च ॥ ८ ॥ शृणु नामाष्टकं तस्याः  
 सर्वसिद्धिकरं नृणाम् । संकटा प्रथमं नाम द्वितीयं त्रिजया तथा  
 ॥ ९ ॥ तृतीयं कामदा प्रोक्तं चतुर्थं दुःखहारिणी । शर्वाणी पंचमं  
 नाम षष्ठं काल्यायनी तथा ॥ १० ॥ सप्तमं भीमनयना सर्वरोग-  
 हराष्टमम् । नामाष्टकमिदं पुण्यं त्रिसंध्यं श्रद्धयान्वितः ॥ ११ ॥  
 यः पठेत्पाठयेद्वापि नरो मुच्येत संकटात् । इत्युक्त्वा तु द्विजश्रेष्ठ-  
 मृषिर्वाराणसीं ययौ ॥ १२ ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा नारदो  
 हर्षनिर्भरः । ततः संपूजितां देवीं वीरेश्वरसमन्विताम् ॥ १३ ॥  
 भुजैस्तु दशभिर्युक्तां लोचनत्रयभूषिताम् । मालाकमंडलुयुतां  
 पद्मशंखगदायुताम् ॥ १४ ॥ त्रिशूलडमरुधरां खड्गचर्मविभूषि-  
 ताम् । वरदाभयहस्तां तां प्रणम्य विधिनंदनः ॥ १५ ॥ वारत्रयं  
 गृहीत्वा तु ततो विष्णुपुरं ययौ । एतत्स्तोत्रस्य पठनं पुत्रपौत्र-  
 विवर्धनम् ॥ १६ ॥ संकष्टनाशनं चैव त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ।  
 गोपनीयं प्रयत्नेन महाबन्ध्याप्रसूतिकृत् ॥ १७ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे  
 संकष्टनाशनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## १८४. श्रीकुञ्जिकास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीकुञ्जिकास्तोत्रमंत्रस्य सदाशिव ऋषिः, अनुष्टुप्छंदः, श्रीत्रिगुणात्मिका देवता, ॐ ऐं बीजम्, ॐ ह्रीं शक्तिः, ॐ क्लीं कीलकम्, मम सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ॥ शिव उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कुञ्जिकास्तोत्र-मुत्तमम् । येन मंत्रप्रभावेण चण्डीजापः शुभो भवेत् ॥ १ ॥ न कवचं नार्गलास्तोत्रं कीलकं न रहस्यकम् । न सूक्तं नापि वा ध्यानं न न्यासो न वार्चनम् ॥ २ ॥ कुञ्जिकापाठमात्रेण दुर्गा-पाठफलं लभेत् । अतिगुह्यतरं देवि देवानामपि दुर्लभम् ॥ ३ ॥ गोपनीयं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव पार्वति । मारणं मोहनं वश्यं स्तम्भ-नोच्चाटनादिकम् ॥ ४ ॥ पाठमात्रेण संसिद्ध्येत् कुञ्जिकास्तोत्रमुत्त-मम् । ॐ श्रूं श्रूं श्रूं शं फट् ऐं ह्रीं क्लीं ज्वल उज्ज्वल प्रज्वल ह्रीं ह्रीं क्लीं स्वावय स्वावय शापं नाशय नाशय श्रीं श्रीं श्रीं जूं सः स्वावय आदय स्वाहा ॥ ५ ॥ ॐ श्रीं हूं क्लीं ग्लां जूं सः ज्वल उज्ज्वल मंत्रं प्रज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा ॥ ६ ॥ नमस्ते रुद्ररूपायै नमस्ते मधुमर्दिनि ॥ नमस्ते कैटभनाशिन्यै नमस्ते महिषार्दिनि ॥ नमस्ते शुम्भहृत्र्यै च निशुम्भासुरसूदिनि ॥ ७ ॥ नमस्ते जाग्रते देवि जपे सिद्धिं कुरुष्व मे ॥ ऐंकारी सृष्टिरूपिण्यै ह्रींकारी प्रतिपालिका ॥ ८ ॥ क्लीं काली काल-रूपिण्यै बीजरूपे नमोऽस्तु ते ॥ चासुण्डा चण्डरूपा च यैङ्कारी वरदायिनी ॥ ९ ॥ विच्चे त्वभयदा नित्यं नमस्ते मन्त्ररूपिणि ॥ धां धीं धूं धूर्जटेः पत्नी वां वीं वागीश्वरी तथा ॥ १० ॥ क्रां क्रीं कूं कुञ्जिका देवि श्रां श्रीं श्रूं मे शुभं कुरु ॥ हूं हूं हूंकाररूपिण्यै ज्रां ज्रीं जूं भालनादिनी ॥ ११ ॥ श्रां श्रीं श्रूं भैरवी भद्रे भवान्यै ते नमो

नमः ॥ ॐ अं कं चं टं तं पं सां विदुरां विदुरां विमर्दय विमर्दय  
 ह्रीं क्षां क्षीं स्त्रीं जीवय जीवय त्रोटय त्रोटय जंभय जंभय दीपय  
 दीपय मोचय मोचय हूं फट् ज्रां वौषट् ऐं ह्रीं क्लीं रंजय रंजय  
 संजय संजय गुंजय गुंजय बंधय बंधय आं ह्रीं भ्रूं भैरवी भद्रे  
 संकुच संचल त्रोटय त्रोटय म्लीं स्वाहा ॥ १२ ॥ पां पीं पूं पार्वती  
 पूर्णा खां खीं खूं खेचरी तथा ॥ म्लां म्लीं म्लूं मूलविस्तीर्णा  
 कुञ्जिकास्तोत्रहेतवे ॥ अभक्ताय न दातव्यं गोपितं रक्ष पार्वति ॥  
 विहीना कुञ्जिकादेव्या यस्तु सप्तशतीं पठेत् ॥ न तस्य जायते  
 सिद्धिर्ह्यरण्ये रुदितं यथा ॥ १३ ॥ इति श्रीडामरतन्त्र ईश्वरपार्वती-  
 संवादे कुञ्जिकास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १८५. लघुसप्तशतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यत्कर्म धर्मनिलयं प्रवदन्ति तज्ज्ञा यज्ञादिकं  
 तदखिलं सकलं त्वयैव । त्वां चेतनायत इति प्रविचार्य चित्ते नित्यं  
 त्वदीयचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥ १ ॥ पाथोधिनाथतनयापतिरेव शेष-  
 पर्यंकलालितवपुः पुरुषः पुराणः । त्वन्मोहपाशविवशो जगदंब  
 सोऽपि व्याघूर्णमाननयनः शयनं चकार ॥ २ ॥ तत्कौतुकं जननि  
 यस्य जनार्दनस्य कर्णप्रसूतमलजौ मधुकैटभाख्यौ । तस्यापि यौ न  
 भवतः सुलभौ विहंतुं त्वन्मायया कवलितौ विलयं गतौ तौ ॥ ३ ॥  
 यन्माहिषं वपुरपूर्वबलोपपन्नं यन्नाकनायकपराक्रमजित्वरं च । यल्लोक-  
 शोकजननप्रतिबद्धहार्दं तल्लीलयैव दलितं गिरिजे भवत्या ॥ ४ ॥  
 यो धूम्रलोचन इति प्रथितः पृथिव्यां भस्मीबभूव समरे तव  
 हुंकृतेन । सर्वासुरक्षयकरे गिरिराजकन्ये मन्त्ये स्वमन्युदहने कृत  
 एष होमः ॥ ५ ॥ केषामपि त्रिदशनायकपूर्वकाणां जेतुं न जातु  
 सुलभाविति चंडमुंडौ । तौ दुर्मदौ तु परमांबरतुल्यरूपे मात-  
 स्तवासि कुलिशात्पतितौ विशीणौ ॥ ६ ॥ दौत्येन ते शिव इति



प्रथितप्रभावो देवोऽपि दानवपतेः सदनं जगाम । भूयोऽपि तस्य  
 चरितं प्रथयांचकार सा त्वं प्रतीति शिवदूतिविजृम्भितं तत् ॥ ७ ॥  
 चित्रं तदेतदमरैरपि ये न पेयाः शस्त्राभिघातपतिताद्रुधिरादपर्णे ।  
 भूमौ बभूवुरमिताः प्रतिरक्तबीजास्तेऽपि त्वयैव गगने गलिताः  
 समस्ताः ॥ ८ ॥ आश्चर्यमेतदखिलं यदभूः सुरारित्रैलोक्यवैभव-  
 विलुंठनजुष्टपाणी । शस्त्रैर्निहत्य भुवि शुंभनिशुंभसंज्ञौ नीतौ त्वया  
 जननि तावपि नाकलोकम् ॥ ९ ॥ त्वत्तेजासि प्रलयकालद्रुताशने-  
 ऽस्मिन्नस्तं प्रयांति भुवनान्यखिलानि सद्यः । तस्मिन्निपत्य शलभा  
 इव दानवेंद्रा भस्मीभवन्ति हि भवानि किमत्र चित्रम् ॥ १० ॥  
 किं वर्णयामि भवतीं भवति प्रतापसंवर्धनप्रणयिनी प्रणमज्जनेषु ।  
 तत्किं पृणामि भवतीं भवति प्रतापसंवर्धनि प्रणयिनीं विपदास्थि-  
 तेषु ॥ ११ ॥ वामे करे तदितरे च तथोपरिष्ठात् पात्रं सुधारस-  
 युतं वरमातुलिंगम् । खेटं गदां च दधतीं भवतीं भवानीं ध्यायन्ति  
 येऽरुणनिभां कृतिनस्त एव ॥ १२ ॥ यद्धारुणात्परमिदं जगदंब  
 यस्ते बीजं स्मरेदनुदिनं मदनादिरूढम् । मायांकितं तिलकितं  
 तरुणेन्दुबिन्दु नादैरतींद्रमिह राज्यमसौ भुनक्ति ॥ १३ ॥ आवाहनं  
 यजनवर्णनमग्निहोत्रं कर्मर्पणं तव विसर्जनमत्र देवि । मोहान्मया  
 कृतमिदं सकलापराधं मातः क्षमस्व वरदे बहिरन्तरस्थे ॥ १४ ॥  
 अन्तःस्थिताप्यखिलजन्तुषु तन्तुरूपा विद्योतसे बहिरिहाखिल-  
 वस्तुरूपा । का भूरिशब्दरचना वचनातिगासि दीनं जनं जननि  
 मामिह निष्प्रपञ्चम् ॥ १५ ॥ एतत्पठेदनुदिनं दनुजान्तकारि चण्डी-  
 चरित्रमतुलं भुवि यस्त्रिकालम् । श्रीमान्सुखी दनुजपूर्णभगः क्षमी  
 स्याद्योगी चिरन्तनवपुः कविचक्रवर्ती ॥ १६ ॥ इति लघुसप्तशती-  
 स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## १८६. देवीक्षमापनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अपराधसहस्राणि क्रियंतेऽहर्निशं मया । दासो-  
 ऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वरि ॥ १ ॥ आवाहनं न जानामि  
 न जानामि विसर्जनम् । पूजां चैव न जानामि क्षम्यतां परमेश्वरि  
 ॥ २ ॥ मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि । यत्पूजितं मया देवि  
 परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ ३ ॥ अपराधशतं कृत्वा जगदंबेति चोच्चरेत् ।  
 यां गतिं समवाप्नोति न तां ब्रह्मादयः सुराः ॥ ४ ॥ सापराधोऽस्मि  
 शरणं प्राप्तस्त्वां जगदंबिके । इदानीमनुकंप्योऽहं यथेच्छसि तथा  
 कुरु ॥ ५ ॥ अज्ञानाद्विस्मृतेभ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम् । तत्सर्वं  
 क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि ॥ ६ ॥ कामेश्वरि जगन्मातः  
 सच्चिदानंदविग्रहे । गृहाणार्चामिमां प्रीत्या प्रसीद परमेश्वरि ॥ ७ ॥  
 गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणासत्कृतं जपम् । सिद्धिर्भवतु मे देवि  
 त्वत्प्रसादात्सुरेश्वरि ॥ ८ ॥ इति देवीक्षमापनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## १८७. अंवाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ चेटीभवन्निखिलखेटीकदंबतरुवाटीषु नाकिप-  
 टलीकोटीरचारुतरकोटीमणीकिरणकोटीकरंबितपदा । पाटीरगंधकु-  
 चशटी कवित्वपरिपाटीमगाधिपसुता घोटी कुलादधिकधाटीमुदार-  
 मुखवीटीरसेन तनुताम् ॥ १ ॥ कूलातिगामिभयतूलावलज्वल-  
 नकीला निजस्तुतिविधाकोलाहलक्षपितकालामरी कलशकीलाल-  
 पोषणनभाः । स्थूला कुचे जलदनीला कचे कलितलीला कदम्ब-  
 विपिने शूलायुधप्रणतिशीला विभातु हृदि शैलाधिराजतनया  
 ॥ २ ॥ यन्नाशयो लगाति तन्नागजा वसतु कुत्रापि निस्तुलशुका  
 सुत्रामकालमुखसन्नाशनप्रकरसुत्राणकारिचरणा । छत्रानिलातिरयप-  
 त्राभिरामगुणमित्रामरीसमवधूः कुत्रासहन्मणिविन्वित्राकृतिः स्फुरि-

तपुत्रादिदाननिपुणा ॥ ३ ॥ द्वैपायनप्रभृतिशापायुधत्रिदिवसोपान-  
धूलिचरणा पापापहस्वमनुजापानुलीनजनतापापनोदनिपुणा । नीपा-  
लया सुरभिधूपालका दुरितकूपादुदंचयतु मां रूपाधिका शिखरि-  
भूपालवंशमणिदीपायिता भगवती ॥ ४ ॥ यालीभिरात्मतनुताली  
सकृत्प्रियकपालीषु खेलति भयव्यालीनकुल्यसितचूलीभरा चरण-  
धूलीलसन्मुनिवरा । बालीभृति श्रवसि तालीदलं वहति यालीक-  
शोभितिलका सालीकरोतु मम काली मनः स्वपदनालीकसेवनविधौ  
॥ ५ ॥ न्यंकाकरे वपुषि कंकादिरक्तपुषि कंकादिपक्षिविषये त्वं  
कामनामयसि किं कारणं हृदयपंकारिमेहि गिरिजाम् । शंकाशिला-  
निशितटंकायमानपदसंकाशमानसुमनोङ्गंकारिमानततिमंकानुपेत-  
शशिसंकाशिवक्त्रकमलाम् ॥ ६ ॥ कुंभावतीसमविडंबा गलेन नव-  
तुंबाभवीणसविधा शं बाहुलेयशशिर्बिंबाधिराममुखसंबाधितस्तन-  
भरा । अंबा कुरंगमदजंबालरोचिरिह लंबालका दिशतु मे  
बिंबाधरा विनतशंबायुधादिनकुरंबा कदंबविपिने ॥ ७ ॥ इंधानकीर-  
मणिबंधा भवे हृदयबंधावतीव रसिका संधावती भुवनसंधारणेऽ-  
प्यमृतसिंधाबुदारनिलया । गंधानुभानमुदुरंधालिवीतकचबंधा  
समर्पयतु मे शं धाम भानुमपि संधानमाशुपदसंधानमप्यगसुता  
॥ ८ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितमंवाष्टकं संपूर्णम् ॥

### १८८. भ्रमरांबाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ चांचल्यारुणलोचनाञ्जितकृपाचद्रार्कचूडामणिं  
चारुस्मेरमुखां चराचरजगत्संरक्षणीं तत्पदाम् । चञ्चच्चम्पकनासि-  
काग्रविलसन्मुक्तामणीरञ्जितां श्रीशैलस्थलवासिनीं भगवतीं श्रीमा-  
तरं भावये ॥ १ ॥ कस्तूरीतिलकाञ्जितेन्दुविलसत्प्रोद्भासिमाल-

स्थलीं कर्पूरद्रवमिश्रचूर्णखदिरामोदोल्लसद्दीप्तिकाम् । लोलापाङ्ग-  
 तरङ्गितैरधिकृपासारैर्नतानन्दिनीं श्रीशैलस्थलवासिनीं भगवतीं  
 श्रीमातरं भावये ॥ २ ॥ राजन्मत्तमरालमन्दगमनां राजीवपत्रे-  
 क्षणां राजीवप्रभववादिदेवमुकुटै राजत्पदाम्भोरुहाम् । राजीवायतमन्द-  
 मण्डितकुचां राजाधिराजेश्वरीं श्रीशैलस्थलवासिनीं भगवतीं  
 श्रीमातरं भावये ॥ ३ ॥ षट्पतारां गणदीपिकां शिवसतीं षड्वैरि-  
 वर्गापहां षट्चक्रान्तरसंस्थितां वरसुधां षड्योगिनीवेष्टिताम् ।  
 षट्चक्राञ्चितपादुकाञ्चितपदां षड्भावगां षोडशीं श्रीशैलस्थल-  
 वासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ॥ ४ ॥ श्रीनाथादृतपालित-  
 त्रिभुवनां श्रीचक्रसंसारिणीं ज्ञानासक्तमनोजयौवनलसद्गन्धर्वकन्या-  
 दृताम् । दीनानामतिवेलभाग्यजननीं दिव्यांबरालङ्कृतां श्रीशैलस्थ-  
 लवासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ॥ ५ ॥ लावण्याधिकभूषितांग-  
 तिलकां लाक्षालसद्गाणिणीं सेवायातसमस्तदेववनितां सीमंतभूषा-  
 न्विताम् । भावोल्लासवशीकृतप्रियतमां भण्डासुरच्छेदिनीं श्रीशैल-  
 स्थलवासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ॥ ६ ॥ धन्यां सोमविभाव-  
 नीयचरितां धाराधरश्यामलां मुन्याराधनमेधिनीं सुमवतां मुक्ति-  
 प्रदानव्रताम् । कन्यापूजनसुप्रसन्नहृदयां काञ्चीलसन्मध्यमां  
 श्रीशैलस्थलवासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ॥ ७ ॥ कर्पूरागरु-  
 कुंकुमांकितकुचां कर्पूरवर्णस्थितां कृष्टोत्कृष्टसुकृष्टकर्मदहनां कामेश्वरीं  
 कामिनीम् । कामार्क्षीं करुणारसार्द्रहृदयां कल्पांतरस्थायिनीं श्रीशैल-  
 स्थलवासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ॥ ८ ॥ गायत्रीं गरुड-  
 ध्वजां गगनगां गान्धर्वगानप्रियां गम्भीरां गजगामिनीं गिरिसुतां  
 गन्धाक्षतालङ्कृताम् । गङ्गागौतमगर्गसंनुतपदां गां गौतमीं गोमतीं

श्रीशैलस्थलवासिनीं भगवतीं श्रीमातरं भावये ॥ ९ ॥ इति श्रीम-  
त्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपादशिष्यस्य श्रीम-  
च्छंकरभगवतः कृतौ भ्रमरांवाष्टकं संपूर्णम् ॥

### १८९. तांत्रिकं देवीसूक्तम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।  
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥ १ ॥ रौद्रायै  
नमो नित्यायै गौर्यै धाम्न्यै नमो नमः । ज्योत्स्नायै चेंदुरुपिण्यै  
सुखायै सततं नमः ॥ २ ॥ कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो  
नमो नमः । नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः  
॥ ३ ॥ दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै । ख्यात्यै तथैव  
कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥ ४ ॥ अतिसौम्यातिरौद्रायै नता-  
स्तस्यै नमो नमः । नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः  
॥ ५ ॥ या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता । नमस्तस्यै  
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु चेत-  
नेत्यभिधीयते । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ७ ॥  
या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै  
नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ८ ॥ या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण  
संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ९ ॥ या  
देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै  
नमो नमः ॥ १० ॥ या देवी सर्वभूतेषु छाया रूपेण संस्थिता । नम-  
स्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ११ ॥ या देवी सर्वभूतेषु  
शक्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः  
॥ १२ ॥ या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता । नम-  
स्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १३ ॥ या देवी सर्व-  
भूतेषु क्षांतिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो

नमः ॥ १४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १५ ॥ या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण  
 संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १६ ॥ या  
 देवी सर्वभूतेषु शांतिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नम-  
 स्तस्यै नमो नमः ॥ १७ ॥ या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १८ ॥ या देवी सर्वभूतेषु  
 क्रांतिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः  
 ॥ १९ ॥ या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नम-  
 स्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २० ॥ या देवी सर्वभूतेषु वृत्ति-  
 रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २१ ॥  
 या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै  
 नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २२ ॥ या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण  
 संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २३ ॥ या  
 देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै  
 नमो नमः ॥ २४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।  
 नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २५ ॥ या देवी सर्व-  
 भूतेषु आतिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः  
 ॥ २६ ॥ इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या । भूतेषु  
 सततं तस्यै व्याप्त्यै देव्यै नमो नमः ॥ २७ ॥ चित्तिरूपेण या  
 कृत्स्नमेतद्व्याप्य स्थिता जगत् । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो  
 नमः ॥ २८ ॥ स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु  
 सेविता । करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहंतु  
 चापदः ॥ २९ ॥ या सांप्रतं चोद्धतदैत्यतापितैरस्माभिरीशा च  
 सुरैर्नमस्यते । या च स्मृता तत्क्षणमेव हंति नः सर्वापदो भक्ति-  
 विनम्रमूर्तिभिः ॥ ३० ॥ इति तांत्रिकं देवीसूक्तं संपूर्णम् ॥

## १९०. प्राधानिकरहस्यम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीसप्तशतीरहस्यत्रयस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा  
 ऋषयः, महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः, अनुष्टुप्  
 छंदः, नवदुर्गामहालक्ष्मीर्बीजं, श्रीं शक्तिः, ममाभीष्टफलसिद्धये  
 जपे विनियोगः ॥ राजोवाच ॥ भगवन्नवतारा मे चंडिका-  
 यास्त्वयोदिताः ॥ एतेषां प्रकृतिं ब्रह्मन् प्रधानं वक्तुमर्हसि ॥ १ ॥  
 आराध्यं यन्मया देव्याः स्वरूपं येन वै द्विज ॥ विधिना ब्रूहि  
 सकलं यथावत्प्रणतस्य मे ॥ २ ॥ ऋषिरुवाच ॥ इदं रहस्यं परम-  
 मनाख्येयं प्रचक्षते ॥ भक्तोऽसीति न मे किञ्चित्तवावाच्यं नराधिप  
 ॥ ३ ॥ सर्वस्याद्या महालक्ष्मीस्त्रिगुणा परमेश्वरी ॥ लक्ष्यालक्ष्य-  
 स्वरूपा सा व्याप्य कृत्स्नं व्यवस्थिता ॥ ४ ॥ मातुलिंगं गदां खेटं  
 पानपात्रं च बिभ्रती ॥ नागं लिंगं च योनिं च बिभ्रती नृप  
 मूर्धनि ॥ ५ ॥ तप्तकांचनवर्णाभा तप्तकांचनभूषणा ॥ शून्यं  
 तदखिलं स्वेन पूरयामास तेजसा ॥ ६ ॥ शून्यं तदखिलं लोकं  
 विलोक्य परमेश्वरी ॥ बभार रूपमपरं तमसा केवलेन हि ॥ ७ ॥  
 सा भिन्नांजनसंकाशा दंष्ट्रांचितवरानना ॥ विशाललोचना नारी  
 बभूव तनुमध्यमा ॥ ८ ॥ खड्गपात्रशिरःखेटैरलंकृतचतुर्भुजा ॥  
 कबंधहारं शिरसा बिभ्राणाहिशिरःस्रजम् ॥ ९ ॥ तां प्रोवाच  
 महालक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम् ॥ ददामि तव नामानि यानि  
 कर्माणि तानि ते ॥ १० ॥ महामाया महाकाली महामारी  
 क्षुधा नृषा । निद्रा नृपणा चैकवीरा कालरात्रिर्दुरत्यया ॥ ११ ॥  
 इमानि तव नामानि प्रतिपाद्यानि कर्मभिः ॥ एभिः कर्माणि ते  
 ज्ञात्वा योऽधीते सोऽश्नुते सुखम् ॥ १२ ॥ तामित्युक्त्वा महा-  
 लक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप ॥ सत्त्वाख्येनातिशुद्धेन गुणेनेदुप्रभं

दधौ ॥ १३ ॥ अक्षमालांकुशधरा वीणापुस्तकधारिणी ॥ सा  
 बभूव वरा नारी नामान्यस्यै च सा ददौ ॥ १४ ॥ महाविद्या  
 महावाणी भारती वाक् सरस्वती ॥ आर्या ब्राह्मी कामधेनुर्वेदगर्भा  
 सुरेश्वरी ॥ १५ ॥ अथोवाच महालक्ष्मीर्महाकालीं सरस्वतीम् ॥  
 युवां जनयतां देव्यौ मिथुने स्वानुरूपतः ॥ १६ ॥ इत्युक्त्वा ते  
 महालक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम् ॥ हिरण्यगर्भौ रुचिरौ स्त्रीपुंसौ  
 कमलासनौ ॥ १७ ॥ ब्रह्मन्विधे विरंचेति धातरित्याह तं नरम् ॥  
 श्रीः पद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता स्त्रियं च ताम् ॥ १८ ॥  
 महाकाली भारती च मिथुने सृजतः सह ॥ एतयोरपि रूपाणि  
 नामानि च वदामि ते ॥ १९ ॥ नीलकण्ठं रक्तबाहुं श्वेतांगं चन्द्र-  
 शेखरम् ॥ जनयामास पुरुषं महाकाली सितां स्त्रियम् ॥ २० ॥  
 स रुद्रः शंकरः स्थाणुः कपर्दी च त्रिलोचनः ॥ त्रयीविद्याकामधेनुः  
 सा स्त्री भाषास्वराक्षरा ॥ २१ ॥ सरस्वती स्त्रियं गौरीं कृष्णं च  
 पुरुषं नृप ॥ जनयामास नामानि तयोरपि वदामि ते ॥ २२ ॥  
 विष्णुः कृष्णो हृषीकेशो वासुदेवो जनार्दनः ॥ उमा गौरी सती  
 चंडी सुंदरी सुभगा शुभा ॥ २३ ॥ एवं युवतयः सद्यः पुरुषत्वं  
 प्रपेदिरे ॥ चक्षुष्मंतो नु पश्यन्ति नेतरे तद्विदो जनाः ॥ २४ ॥  
 ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं महालक्ष्मीर्नृप त्रयीम् ॥ रुद्राय गौरीं वरदां  
 वासुदेवाय च श्रियम् ॥ २५ ॥ स्वरया सह संभूय विरंचोऽण्डम-  
 जीजनत् ॥ विभेद भगवान् रुद्रस्तद्गौर्या सह वीर्यवान् ॥ २६ ॥  
 अंडमध्ये प्रधानादि कार्यजातमभून्नृप ॥ महाभूतात्मकं सर्वं  
 जगत्स्थावरजंगमम् ॥ २७ ॥ पुपोष पालयामास तल्लक्ष्म्या सह  
 केशवः ॥ महालक्ष्मीरेवमजा राजन् सर्वेश्वरेश्वरी ॥ २८ ॥  
 निराकारा च साकारा सैव नानाभिधानभृत् ॥ नामांतरैर्निरूप्यैषा



नाम्ना नान्येन केनचित् ॥ २९ ॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे प्राधानिकं रहस्यं संपूर्णम् ॥

### १९१. वैकृतिकं रहस्यम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऋषिरुवाच ॥ त्रिगुणा तामसी देवी सात्त्विकी या त्वयोदिता ॥ सा शर्वा चंडिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यते ॥ १ ॥ योगनिद्रा हरेरुक्ता महाकाली तमोगुणा ॥ मधुकैटभनाशार्थं यां तुष्टावांबुजासनः ॥ २ ॥ दशवक्त्रा दशभुजा दशपादांजनप्रभा ॥ विशालया राजमाना त्रिंशल्लोचनमालया ॥ ३ ॥ स्फुरद्दशनदंष्ट्रा सा भीमरूपापि भूमिप ॥ रूपसौभाग्यकांतीनां सा प्रतिष्ठा महाश्रियाम् ॥ ४ ॥ खड्गबाणगदाशूलशंखचक्रमुञ्जुंढिभृत् ॥ परिधं कार्मुकं शीर्षं निश्चोतद्रुधिरं दधौ ॥ ५ ॥ एषा सा वैष्णवी माया महाकाली दुरत्यया ॥ आराधिता वशीकुर्यात्पूजाकर्तुश्चराचरम् ॥ ६ ॥ सर्वदेवशरीरेभ्यो याविर्भूताऽमितप्रभा ॥ त्रिगुणा सा महालक्ष्मीः साक्षान्महिषमर्दिनी ॥ ७ ॥ श्वेतानना नीलभुजा सुश्वेतस्तनमंडला ॥ रक्तमध्या रक्तपादा रक्तजंघोरुहन्मदा ॥ ८ ॥ सुचित्रजघना चित्रमाल्यांबरविभूषणा ॥ चित्रानुलेपना कांतिरूपसौभाग्यशालिनी ॥ ९ ॥ अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती ॥ आयुधान्यत्र वक्ष्यंते दक्षिणाधःकरक्रमात् ॥ १० ॥ अक्षमाला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा ॥ चक्रं त्रिशूलं परशुः शंखो घंटा च पाशकः ॥ ११ ॥ शक्तिर्दंडश्चर्म चापं पानपात्रं कमंडलुः ॥ अलंकृतभुजामेभिरायुधैः कमलासनाम् ॥ १२ ॥ सर्वदेवमयीमीशां महालक्ष्मीमिमां नृप ॥ पूजयेत्सर्वलोकानां स देवानां प्रभुर्भवेत् ॥ १३ ॥ गौरीदेहात्समुद्भूता या सत्त्वैकगुणाश्रया ॥ साक्षात्सरस्वती प्रोक्ता

शुभासुरनिबर्हिणी ॥ १४ ॥ दधौ चाष्टभुजा बाणान्मुसलं शूल-  
 चक्रभृत् ॥ शंखं घंटां लांगलं च कार्मुकं वसुधाधिप ॥ १५ ॥ एषा  
 संपूजिता भक्त्या सर्वज्ञत्वं प्रयच्छति ॥ निशुंभमथिनी देवी शुभा-  
 सुरनिबर्हिणी ॥ १६ ॥ इत्युक्तानि स्वरूपाणि मूर्तीनां तव पार्थिव ॥  
 उपासनं जगन्मातुः पृथगासां निशामय ॥ १७ ॥ महालक्ष्मीर्यदा  
 पूज्या महाकाली सरस्वती ॥ दक्षिणोत्तरयोः पूज्ये पृष्ठतो मिथुन-  
 त्रयम् ॥ १८ ॥ विरंचिः स्वरया मध्ये रुद्रो गौर्या च दक्षिणे ॥  
 वामे लक्ष्म्या हृषीकेशः पुरतो देवतात्रयम् ॥ १९ ॥ अष्टादशभुजा  
 मध्ये वामे चास्या दशानना ॥ दक्षिणेऽष्टभुजा लक्ष्मीर्महतीति  
 समर्चयेत् ॥ २० ॥ अष्टादशभुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप ॥  
 दशानना चाष्टभुजा दक्षिणोत्तरयोस्तदा ॥ २१ ॥ कालमृत्यू च  
 संपूज्यौ सर्वारिष्टप्रशांतये ॥ यदा चाष्टभुजा पूज्या शुभासुर-  
 निबर्हिणी ॥ २२ ॥ नवास्याः शक्तयः पूज्यास्तदा रुद्रविनायकौ ॥  
 नमो देव्या इति स्तोत्रैर्महालक्ष्मीं समर्चयेत् ॥ २३ ॥  
 अवतारत्रयार्चायां स्तोत्रमंत्रास्तदाश्रयाः ॥ अष्टादशभुजा चैषा  
 पूज्या महिषमर्दिनी ॥ २४ ॥ महालक्ष्मीर्महाकाली सैव प्रोक्ता  
 सरस्वती ॥ ईश्वरी पुण्यपापानां सर्वलोकमहेश्वरी ॥ २५ ॥ महिषांत-  
 करी येन पूजिता स जगत्प्रभुः ॥ पूजयेज्जगतां धात्रीं चंडिकां  
 भक्तवत्सलाम् ॥ २६ ॥ अर्धादिभिरलंकारैर्गंधपुष्पैस्तथोत्तमैः ॥  
 धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नानाभक्ष्यसमन्वितैः ॥ २७ ॥ रुधिराक्तेन बलिना  
 मांसेन सुरया नृप ॥ प्रणामाचमनीयेन चंदनेन सुगंधिना  
 ॥ २८ ॥ सकर्पूरैश्च तांबूलैर्भक्तिभावसमन्वितैः ॥ वामभागेऽप्रतो  
 देव्याश्छिन्नशीर्षं महासुरम् ॥ २९ ॥ पूजयेन्महिषं येन प्राप्तं  
 सायुज्यमीशया ॥ दक्षिणे पुरतः सिंहं समग्रं धर्ममीश्वरम् ॥ ३० ॥

वाहनं पूजयेद्देव्या धृतं येन चराचरम् ॥ ततः कृतांजलिर्भूत्वा  
 स्तुवीत चरितैरिमैः ॥ ३१ ॥ एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयोरिह ॥  
 चरितार्थं तु न जपेज्जपल्लिङ्गमवाप्नुयात् ॥ ३२ ॥ स्तोत्रमंत्रैः  
 स्तुवीतेमां यदि वा जगदंबिकाम् ॥ प्रदक्षिणानमस्कारान्कृत्वा मूर्ध्नि  
 कृतांजलिः ॥ ३३ ॥ क्षमापयेज्जगद्धात्रीं मुहुर्मुहुस्तद्वितः ॥ प्रति-  
 श्लोकं च जुहुयात्पायसं तिलसर्पिषा ॥ ३४ ॥ जुहुयात्स्तोत्रमंत्रैर्वा  
 चंडिकायै शुभं हविः ॥ नमोनमःपदैर्देवीं पूजयेत्सुसमाहितः  
 ॥ ३५ ॥ प्रयतः प्रांजलिः प्रह्वः प्राणानारोप्य चात्मनि ॥ सुचिरं  
 भावयेद्देवीं चंडिकां तन्मयो भवेत् ॥ ३६ ॥ एवं यः पूजयेद्भक्त्या  
 प्रत्यहं परमेश्वरीम् ॥ भुक्त्वा भोगान् यथाकामं देवीसायुज्यमा-  
 नुयात् ॥ ३७ ॥ यो न पूजयते नित्यं चंडिकां भक्तवत्सलाम् ॥  
 भस्मीकृत्यास्य पुण्यानि निर्दहेत्परमेश्वरी ॥ ३८ ॥ तस्मात्पूज्य  
 भूपाल सर्वलोकमहेश्वरीम् ॥ यथोक्तेन विधानेन चंडिकां सुखमा-  
 प्स्यसि ॥ ३९ ॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे वैकृतिकं रहस्यं संपूर्णम् ॥

### १९२. मूर्तिरहस्यम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऋषिर्वाच ॥ नंदा भगवती नाम या भवि-  
 ष्यति नंदजा ॥ सा स्तुता पूजिता ध्याता वशीकुर्याज्जगन्नयम्  
 ॥ १ ॥ कनकोत्तमकांतिः सा सुकांतिकनकांबरा ॥ देवी कनक-  
 वर्णाभा कनकोत्तमभूषणा ॥ २ ॥ कनकांकुशपाशाब्जैरलंकृतचतु-  
 र्भुजा ॥ इंदिरा कमला लक्ष्मीः सा श्री स्वमांबुजासना ॥ ३ ॥  
 या रक्तदंतिका नाम देवी प्रोक्ता मयानघ ॥ तस्याः स्वरूपं  
 वक्ष्यामि शृणु सर्वभयापहम् ॥ ४ ॥ रक्तांबरा रक्तवर्णा रक्त-  
 सर्वांगभूषणा ॥ रक्तायुधा रक्तनेत्रा रक्तकेशातिभीषणा ॥ ५ ॥

रक्ततीक्ष्णनखा रक्तदशना रक्तदंष्ट्रिका ॥ पतिं नारीवानुरक्ता देवी  
 भक्तं भजेजनम् ॥ ६ ॥ वसुधेव विशाला सा सुमेरुयुगलस्तनी ॥  
 दीर्घौ लंबावतिस्थूलौ तावतीव मनोहरौ ॥ ७ ॥ कर्कशावतिकांतौ  
 तौ सर्वानंदपयोनिधी ॥ भक्तान्संपाययेद्देवी सर्वकामदुघौ स्तनौ  
 ॥ ८ ॥ खड्गपात्रं च मुसलं लांगलं च विभर्ति सा ॥ आख्याता  
 रक्तचामुंडा देवी योगेश्वरीति च ॥ ९ ॥ अनया व्याप्तमखिलं  
 जगत्स्थावरजंगमम् ॥ इमां यः पूजयेद्भक्त्या स व्याप्नोति चरा-  
 चरम् ॥ १० ॥ अधीते य इमं नित्यं रक्तदंष्ट्रा वपुःस्तवम् ॥ तं  
 सा परिचरेद्देवी पतिं प्रियमिवांगना ॥ ११ ॥ शाकंभरी नीलवर्णा  
 नीलोत्पलविलोचना ॥ गंभीरनाभिखिवलीविभूषिततनूदरी ॥ १२ ॥  
 सुकर्कशसमोत्तुंगवृत्तपीनघनस्तनी ॥ मुष्टिं शिलीमुखैः पूर्णं कमलं  
 कमलालया ॥ १३ ॥ पुष्पपल्लवमूलादिफलाढ्यं शाकसंचयम् ॥  
 काम्यानंतरसैर्युक्तं क्षुत्तृणमृत्युजरापहम् ॥ १४ ॥ कार्मुकं च  
 स्फुरत्कांतिं विभर्ति परमेश्वरी ॥ शाकंभरी शताक्षी स्यात् सैव  
 दुर्गा प्रकीर्तिता ॥ १५ ॥ शाकंभरीं स्तुवन्ध्यायन् जपन्संपूज-  
 यन्नमन् ॥ अक्षय्यमश्नुते शीघ्रमन्नपानादि सर्वशः ॥ १६ ॥  
 भीमापि नीलवर्णा सा दंष्ट्रादशनभासुरा ॥ विशाललोचना नारी  
 वृत्तपीनघनस्तनी ॥ १७ ॥ चंद्रहासं च डमरं शिरःपात्रं च  
 विभ्रती ॥ एकवीरा कालरात्रिः सैवोक्ता कामदा स्तुता ॥ १८ ॥  
 तेजोमंडलदुर्धर्षा आमरी चित्रकांतिभृत् ॥ चित्रभ्रमरसंकाशा  
 महामारीति गीयते ॥ १९ ॥ इत्येता मूर्तयो देव्या व्याख्याता  
 वसुधाधिप ॥ जगन्मातुश्चंडिकायाः कीर्तिताः कामधेनवः ॥ २० ॥  
 इदं रहस्यं परमं न वाच्यं यस्य कस्यचित् ॥ व्याख्यानं दिव्य-  
 मूर्तिनामधीष्वावहितः स्वयम् ॥ २१ ॥ देव्या ध्यानं तवाख्यातं

गुह्याद्गुह्यतरं महत् ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सर्वकामफलप्रदम् ॥ २२ ॥  
इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे खिलांशे मूर्तिरहस्यं संपूर्णम् ॥

### १९३. भगवतीस्तोत्रम् ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमामि त्वां मातर्द्रविणरहितोऽहं तव सुतो  
जगद्वन्धां स्वर्गे भुवि बलिगृहे चापि विदिताम् । पृथिव्यां  
कल्याणी मम भयहरा त्वं न च परा यतोऽहं यातस्त्वां भवगत-  
भयात्सांप्रतमुमे ॥ १ ॥ प्रसीदेशे नित्यं भगवति भवाम्भोधितरणे  
शरण्ये नास्त्यन्या विपदवहरा कापि जगति । जडो मूर्खोऽहं ते  
जननि नहि जाने विलसितमतोऽहं संयातस्तव पदपयोजे गिरि-  
सुते ॥ २ ॥ अहो संसारेऽस्मिन् जननि तव तुल्या नहि परा  
खलं दुष्टं पुत्रं जगति जननी रक्षति निजम् । परित्यक्त्वेदानीं  
सकलसुरवृन्दं गिरिसुते नमामि त्वां देवीं भवभयहरां मङ्गलकराम्  
॥ ३ ॥ जगन्मातर्दुर्गे भवभयविभङ्गैकनिपुणे मया संसारेऽस्मिन्  
तव चरणपूजाऽपि न कृता । न पुष्पाणां हारस्तव शिरसि शुभ्रो-  
ऽर्पित इति क्षमस्वागो मातर्मम बहुविधं शैलतनये ॥ ४ ॥ धना-  
द्धीनं दीनं परिजनविहीनं बहुशुचं तथा शत्रुप्रप्तं विविधभययुक्तं जड-  
मतिम् । भवत्याः संयातं निकटमयि भूमीधरसुते समाश्रितं दृष्ट्या कुरु  
जगति कीर्त्या च विदितम् ॥ ५ ॥ त्वमेका संसारे जनिमद-  
घनाशे प्रभुरहो त्वमेवैका मातर्भवभयलयाधाननिपुणा । तवाशा  
मे शश्वज्जननि निजदुःखैकदलने विहाय त्वां मातः कमिह ननु  
संयामि शरणम् ॥ ६ ॥ तथा पूर्वं काले प्रबलतरवीर्यौ दितिसुतौ  
प्रसिद्धौ सोदरौ भुविदिविगतौ भीषणतरौ । निशुम्भः शुम्भश्च  
प्रविततमहामोहगहनौ विनष्टौ त्वां प्राप्यामरवरनुते शम्भुदयिते  
॥ ७ ॥ सुरास्त्वां संयाता हरिहरनुतां दैत्यदलिताः सुराणां रक्षायै

असुरकुलनाशं कृतवती । अहो मूर्तिर्धन्या सकलसुरसंसेव्यचरणा  
त्वमेवैका मातर्जगति बहुरूपा विजयसे ॥ ८ ॥ भगवत्या इदं  
स्तोत्रं योगानन्देन निर्मितम् । यः पठेद्भक्तिभावेन फलमिष्टं लभेत  
सः ॥ ९ ॥ इति भगवतीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### १९४. देव्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ महादेवीं महाशक्तिं भवानीं भववल्लभाम् ।  
भवार्तिभञ्जनकरीं वन्दे त्वां लोकमातरम् ॥ १ ॥ भक्तप्रियां  
भक्तिगम्यां भक्तानां कीर्तिवर्धिकाम् । भवप्रियां सतीं देवीं वन्दे  
त्वां भक्तवत्सलाम् ॥ २ ॥ अन्नपूर्णां सदापूर्णां पार्वतीं पर्वपूजि-  
ताम् । महेश्वरीं वृषारूढां वन्दे त्वां परमेश्वरीम् ॥ ३ ॥ कालरात्रिं  
महारत्रिं मोहरात्रिं जनेश्वरीम् । शिवकान्तां शम्भुशक्तिं वन्दे त्वां  
जननीमुमाम् ॥ ४ ॥ जगत्कर्त्रीं जगद्धात्रीं जगत्संहारकारिणीम् ।  
मुनिभिः संस्तुतां भद्रां वन्दे त्वां मोक्षदायिनीम् ॥ ५ ॥ देवदुःख-  
हराम्बां सदा देवसहायकाम् । मुनिदेवैः सदासेव्यां वन्दे त्वां  
देवपूजिताम् ॥ ६ ॥ त्रिनेत्रां शंकरां गौरीं भोगमोक्षप्रदां शिवाम् ।  
महामायां जगद्धीजां वन्दे त्वां जगदीश्वरीम् ॥ ७ ॥ शरणागत-  
जीवानां सर्वदुःखविनाशिनीम् । सुखसंपत्करां नित्यां वन्दे त्वां  
प्रकृतिं पराम् ॥ ८ ॥ शरणागतजीवानां सर्वदुःखविनाशिनीम् ।  
सुखसंपत्करां नित्यां वन्दे त्वां प्रकृतिं पराम् ॥ ९ ॥ देव्यष्टकमिदं  
पुण्यं योगानन्देन निर्मितम् । यः पठेद्भक्तिभावेन लभते स परं  
सुखम् ॥ १० ॥ इति देव्यष्टकं संपूर्णम् ॥

### १९५. देवीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमस्तेऽस्तु दुर्गे सदानन्दरूपे सुरैः स्तूयमाने  
मुनीनां सुपूज्ये । नमस्ते जगद्गन्धपादारविन्दे नमस्ते भवाम्भोधि-

संतारदक्षे ॥ १ ॥ नमस्ते नमस्ते सदा दैवतेज्ये तथा दीनदुःखे  
 दयाक्रान्तचित्ते । नमस्ते महादेवमान्ये भवानि सुदीनं स्वदासं  
 जनं पाहि शश्वत् ॥ २ ॥ नमस्ते जगद्व्यापिके विश्वरूपे सदा योगि-  
 गम्ये स्वभक्त्यैकलभ्ये । रमाशारदाशम्भुकान्तास्वरूपे नमस्ते  
 महाकालिके शुद्धरूपे ॥ ३ ॥ नमस्तेऽम्बिके भक्तसंसेव्यपादे  
 नमस्तेऽधविध्वंसिके सर्वशक्ते । जगत्कानने क्रोधकामादिहिंस्रैः  
 परीतोऽस्मि मातः सदा रक्ष रक्ष ॥ ४ ॥ नमस्ते जगद्बीजरूपे  
 महेशि स्वभक्तेषु रक्ते शरण्ये त्रिनेत्रे । त्वदन्या न चास्ते विपन्नाश-  
 कारी सुसंपत्प्रदां त्वां सदा संनतोऽस्मि ॥ ५ ॥ अहं देवि  
 याचे पदाम्भोजसेवां भवत्यास्तथा भक्तिभावं भवेज्ज्ये । प्रसीदाम्ब  
 दासे सदा शैलपुत्रि शिवां शङ्करीं पार्वतीं त्वां भजामि ॥ ६ ॥  
 त्वदन्यो न मान्यो न चान्यश्च गण्यस्त्वमेकाऽसि मातर्जगज्जाल-  
 हेतुः । जगन्नाशिका पालिका च त्वमेव गिरेर्बालिकां कालिकां  
 संनतोऽहम् ॥ ७ ॥ श्रियं शारदां शम्भुशक्तिं महेशीं त्रिनेत्रां  
 च दुर्गां तथा कालरात्रिम् । तुषाराद्रिपुत्रीं जगद्दुःखहर्त्रीं स्मरन्  
 दुःखनाशो भवेन्मानवानाम् ॥ ८ ॥ इदं स्तोत्रं महादेव्या  
 योगानन्देन निर्मितम् । यः पठेत्प्रातरुत्थाय स नरो वाञ्छितं  
 लभेत् ॥ ९ ॥ इति देवीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

१९६. कल्याणवृष्टिस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्याणवृष्टिभिरिवामृतपूरिताभिर्लक्ष्मीस्वयं-  
 वरणमङ्गलदीपिकाभिः । सेवाभिरम्ब तव पादसरोजमूले नाकारि  
 किं मनसि भाग्यवतां जनानाम् ॥ १ ॥ एतावदेव जननि स्पृहणीय-  
 मास्ते त्वद्वन्द्वनेषु सलिलस्थगिते च नेत्रे । सांनिध्यमुद्यदरुणायुत-  
 सोदरस्य त्वद्विग्रहस्य परया सुधयाद्भुतस्य ॥ २ ॥ ईशत्वनाम-

कलुषाः कति वा न सन्ति ब्रह्मादयः प्रतिभवं प्रलयाभिभूताः ।  
एकः स एव जननि स्थिरसिद्धिरास्ते यः पादयोस्तव सकृत्प्रणतिं  
करोति ॥ ३ ॥ लब्ध्वा सकृन्निपुरसुन्दरि तावकीनं कारुण्यकन्द-  
लितकान्तिभरं कटाक्षम् । कन्दर्पकोटिसुभगास्त्वयि भक्तिभाजः  
संमोहयन्ति तरुणीर्भुवनत्रयेऽपि ॥ ४ ॥ ह्रींकारमेव तव नाम  
गृणन्ति वेदा मातस्त्रिकोणनिलये त्रिपुरे त्रिनेत्रे । त्वत्संस्मृतौ यम-  
भटाभिभवं विहाय दीव्यन्ति नन्दनवने सह लोकपालैः ॥ ५ ॥  
हन्तुः पुरामधिगतं परिपीयमानः क्रूरः कथं न भविता गरलस्य  
वेगः । नाश्वासनाय यदि मातरिदं तवार्थं देवस्य शश्वदमृताद्भुत-  
शीतलस्य ॥ ६ ॥ सर्वज्ञतां सदसि वाक्पटुतां प्रसूते देवि त्वदङ्घ्रि-  
सरसीरुहयोः प्रणामः । किं च स्फुरन्मुकुटमुज्ज्वलमातपत्रं द्वे चामरे  
च महतीं वसुधां ददाति ॥ ७ ॥ कल्पद्रुमैरभिमतप्रतिपादनेषु  
कारुण्यवारिधिभिरम्ब भवत्कटाक्षैः । आलोकय त्रिपुरसुन्दरि माम-  
नाथं त्वय्येव भक्तिभरितं त्वयि बद्धवृष्णम् ॥ ८ ॥ हन्तेतरेष्वपि  
मनांसि निधाय चान्ये भक्तिं वहन्ति किल पामरदैवतेषु । त्वामेव  
देवि मनसा समनुस्मरामि त्वामेव नौमि शरणं जननि त्वमेव  
॥ ९ ॥ लक्ष्येषु सत्स्वपि कटाक्षनिरीक्षणानामालोकय त्रिपुरसुन्दरि  
मां कदाचित् । नूनं मया तु सदृशः करुणैकपात्रं जातो जनिष्यति  
जनो न च जायते वा ॥ १० ॥ ह्रीं ह्यामिति प्रतिदिनं जपतां  
तवाख्यां किं नाम दुर्लभमिह त्रिपुराधिवासे । मालाकिरीटमद-  
वारणमाननीया तान्सेवते वसुमती स्वयमेव लक्ष्मीः ॥ ११ ॥  
संपत्कराणि सकलेन्द्रियतन्दनानि साम्राज्यदाननिरतानि सरोरु-  
हाक्षि । त्वद्वन्दनानि दुरिताहरणोद्यतानि मामेव मातरनिशं  
कलयन्तु नान्यम् ॥ १२ ॥ कल्पोपसंहृतिषु कल्पितताण्डवस्य



देवस्य खण्डपरशोः परमैरवस्य । पाशाङ्कुशैश्च वशरासनपुष्पबाणा  
 सा साक्षिणी विजयते तव मूर्तिरेका ॥ १३ ॥ लग्नं सदा भवतु  
 मातरिदं तवार्धं तेजः परं बहुलकुङ्कुमपङ्कशोणम् । भास्वत्किरीट-  
 ममृतांशुकलावतंसं मध्ये त्रिकोणनिलयं परमामृतार्द्रम् ॥ १४ ॥  
 ह्रींकारमेव तव नाम तदेव रूपं त्वन्नाम दुर्लभमिह त्रिपुरे  
 गृणन्ति । त्वत्तेजसा परिणतं वियदादिभूतं सौख्यं तनोति सरसी-  
 रुहसंभवादेः ॥ १५ ॥ ह्रींकारत्रयसंपुटेन महता मन्त्रेण संदीपितं  
 स्तोत्रं यः प्रतिवासरं तव पुरो मातर्जपेन्मन्त्रवित् । तस्य क्षोणिभुजो  
 भवन्ति वशगा लक्ष्मीश्चिरस्थायिनी वाणी निर्मलसूक्तिभारभरिता  
 जागर्ति दीर्घं वयः ॥ १६ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यकृतः कल्याण-  
 वृष्टिस्तवः संपूर्णः ॥

### १९७. नवरत्नमालिका ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ हारनूपुरकिरीटकुण्डलविभूषितावयवशोभिनीं  
 कारणेशवरमौलिकोटिपरिकल्प्यमानपदपीठिकाम् । कालकालफणि-  
 पाशबाणधनुरंकुशामरुणमेखलां फालभूतिलकलोचनां मनसि  
 भावयामि परदेवताम् ॥ १ ॥ गन्धसारधनसारचारुनवनागवल्लि-  
 रसवासिनीं सान्ध्यरागमधुराधराभरणसुन्दराननशुचिस्मिताम् ।  
 मन्थरायतविलोचनाममलबालचन्द्रकृतशेखरीमिन्दिरारमणसोदरीं  
 मनसि भावयामि परदेवताम् ॥ २ ॥ स्थेरचारुमुखमण्डलां विमल-  
 गण्डलम्बिमणिमण्डलां हारदामपरिशोभमानकुचभारभीरुतनु-  
 मध्यमाम् । वीरगर्वहरनूपुरां विविधकारणेशवरपीठिकां मारवैरसह-  
 चारिणीं मनसि भावयामि परदेवताम् ॥ ३ ॥ भूरिभारधरकुण्ड-  
 लीन्द्रमणिबद्धभूवल्लयपीठिकां वारिराशिभणिमेखलावल्लयवह्निमण्ड-  
 लशरीरिणीम् । वारिसारवहकुण्डलां गगनशेखरीं च परमात्मिकां

चारुचन्द्रविलोचनां मनसि भावयामि परदेवताम् ॥ ४ ॥ कुण्डल-  
त्रिविधकोष्ठमण्डलविहारषड्दलसमुल्लसत्पुण्डरीकमुखभेदिनीं च  
प्रचण्डभानुभासमुज्ज्वलाम् । मण्डलेन्दुपरिवाहितामृततरङ्गिणी-  
मरुणरूपिणीं मण्डलान्तमणिदीपिकां मनसि भावयामि परदेवताम्  
॥ ५ ॥ वारणाननमयूरवाहमुखदाहवारणपयोधरां चारणादिसुर-  
सुन्दरीचिकुरशेखरीकृतपदाम्बुजाम् । कारणाधिपतिचम्पकप्रकृति-  
कारणप्रथममातृकां वारणान्तमुखपारणां मनसि भावयामि परदेव-  
ताम् ॥ ६ ॥ पद्मकान्तिपदपाणिपल्लवपयोधराननसरोरुहां पद्मराग-  
मणिमेखलावलयनीविशोभितनितंबिनीम् । पद्मसंभवसदाशिवान्त-  
मयपञ्चरत्नपदपीठिकां पद्मिनीं प्रणवरूपिणीं मनसि भावयामि  
परदेवताम् ॥ ७ ॥ आगमप्रणवपीठिकाममलवर्णमङ्गलशरीरिणी-  
मागमावयवशोभिनीमखिलवेदसारकृतशेखरीम् । मूलमन्त्रमुख-  
मण्डलां मुदितादबिन्दुनवयौवनां मातृकां त्रिपुरसुन्दरीं मनसि  
भावयामि परदेवताम् ॥ ८ ॥ कालिकां तिमिरकुन्तलान्तघन-  
भृङ्गमङ्गलविराजिनीं चूलिकाशिखरमालिकावलयमल्लिकासुरभि-  
सौरभाम् । बालिकामधुरगण्डमण्डलमनोहराननसरोरुहां कालिका-  
मखिलनायिकां मनसि भावयामि परदेवताम् ॥ ९ ॥ नित्यमेव  
नियमेन जल्पतां भुक्तिमुक्तिफलदामभीष्टदाम् । शंकरेण रचितां  
सदा जपेन्नामरत्ननवरत्नमालिकाम् ॥ १० ॥ इति श्रीमत्परमहंस-  
परिव्राजकाचार्यस्य श्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपादशिष्यस्य श्रीमच्छंकर-  
भगवतः कृतौ नवरत्नमालिका संपूर्णा ॥

१९८. मीनाक्षीपंचरत्नस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ उद्यद्भानुसहस्रकोटिसदृशां केयूरहारोज्ज्वलां  
विम्बोष्ठीं स्मितदन्तपङ्क्तिरुचिरां पीताम्बरालंकृताम् । विष्णुब्रह्म-

सुरेन्द्रसेवितपदां तत्त्वस्वरूपां शिवां मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि संततमहं  
 कारुण्यवारांनिधिम् ॥ १ ॥ मुक्ताहारलसत्किरीटरुचिरां पूर्णेन्दु-  
 वक्त्रप्रभां शिञ्जन्नूपुरकिङ्किणीमणिधरां पद्मप्रभाभासुराम् । सर्वा-  
 भीष्टफलप्रदां गिरिसुतां वाणीरमासेवितां मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि संत-  
 तमहं कारुण्यवारांनिधिम् ॥ २ ॥ श्रीविद्यां शिववामभागनिलयां  
 ह्रींकारमन्त्रोज्ज्वलां श्रीचक्राङ्कितबिन्दुमध्यवसतिं श्रीभस्मभानाय-  
 कीम् । श्रीमत्पण्मुखविघ्नराजजननीं श्रीमज्जगन्मोहिनीं मीनाक्षीं  
 प्रणतोऽस्मि संततमहं कारुण्यवारांनिधिम् ॥ ३ ॥ श्रीमत्सुन्दर-  
 नायकीं भयहरां ज्ञानप्रदां निर्मलां श्यामाभां कमलासनार्चितपदां  
 नारायणस्यानुजाम् । वीणावेणुमृदङ्गवाद्यरसिकां नानाविधाडम्बिकां  
 मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि संततमहं कारुण्यवारांनिधिम् ॥ ४ ॥  
 नानायोगिमुनीन्द्रहृन्निवसतीं नानार्थसिद्धिप्रदां नानापुष्पविराजि-  
 ताङ्घ्रियुगलां नारायणेनार्चिताम् । नादब्रह्ममयीं परात्परतरां नाना-  
 र्थतत्त्वात्मिकां मीनाक्षीं प्रणतोऽस्मि संततमहं कारुण्यवारांनिधिम्  
 ॥ ५ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यस्य श्रीगोविन्दभग-  
 वत्पूज्यपादशिष्यस्य श्रीमच्छंकरभगवतः कृतौ मीनाक्षीपंचरत्नं  
 संपूर्णम् ॥

### १९९. मीनाक्षीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीविद्ये शिववामभागनिलये श्रीराजराजार्चिते  
 श्रीनाथादिगुरुस्वरूपविभवे चिन्तामणीपिठिके । श्रीवाणीगिरिजानु-  
 ताङ्घ्रिकमले श्रीशाम्भवे श्रीशिवे मध्याह्ने मलयध्वजाधिपसुते  
 मां पाहि मीनाम्बिके ॥ १ ॥ चक्रस्थेऽचपले चराचरजगन्नाथे जग-  
 त्पूजिते आर्तालीवरदे नताभयकरे वक्षोजभारान्विते । विद्ये वेद-  
 कलापमौलिविदिते विद्युलताविग्रहे मातः पूर्णसुधारसार्द्रहृदये मां

पाहि मीनाम्बिके ॥ २ ॥ कोटीराङ्गदरबकुण्डलधरे कोदण्डबाणा-  
 श्रिते कोकाकारकुचद्वयोपरिलसत्पलम्बहाराश्रिते । शिञ्जन्नूपुरपाद-  
 सारसमणीश्रीपादुकालंकृते मदारिद्र्यभुजङ्गासुखगे मां पाहि मीना-  
 म्बिके ॥ ३ ॥ ब्रह्मेशाच्युतगीयमानचरिते प्रेतासनान्तस्थिते पाशो-  
 दङ्कुशचापबाणकलिते बालेन्दुचूडाश्रिते । बाले बालकुरङ्गलो-  
 नयने बालार्ककोट्युज्ज्वले मुद्राराधितदैवते मां पाहि मीनाम्बिके  
 ॥ ४ ॥ गन्धर्वामरयक्षपन्नगनुते गङ्गाधरालिङ्गिते गायत्रीगण्डासने  
 कमलजे सुश्यामले सुस्थिते । खातीते खलदारुपावकशिखे  
 खद्योतकोट्युज्ज्वले मन्वाराधितदैवते मुनिसुते मां पाहि मीनाम्बिके  
 ॥ ५ ॥ नादे नारदतुम्बुराद्यविनुते नादान्तनादात्मिके नित्ये  
 नीललतात्मिके निरुपमे नीवारशूकोपमे । कान्ते कामकले कदम्ब-  
 निलये कामेश्वराङ्कस्थिते मद्विद्ये मदभीष्टकल्पलतिके मां पाहि  
 मीनाम्बिके ॥ ६ ॥ वीणानादनिमीलितार्धनयने विस्त्रस्तचूलीभरे  
 ताम्बूलारुणपल्लवाधरयुते ताटङ्कहारान्विते । श्यामे चन्द्रकलावर्तस-  
 कलिते कस्तूरिकाफालिके पूर्णे पूर्णकलाभिरामवदने मां पाहि  
 मीनाम्बिके ॥ ७ ॥ शब्दब्रह्ममयी चराचरमयी ज्योतिर्मयी  
 वाङ्मयी नित्यानन्दमयी निरञ्जनमयी तत्त्वंमयी चिन्मयी । तत्त्वा-  
 तीतमयी परात्परमयी मायामयी श्रीमयी सर्वैश्वर्यमयी सदाशिव-  
 मयी मां पाहि मीनाम्बिके ॥ ८ ॥ इति श्रीमत्परहंसपरिव्राज-  
 काचार्यस्य श्रीभगवत्पूज्यपादशिष्यस्य श्रीमच्छंकरभगवतः कृतौ  
 मीनाक्षीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२००. देवीशतकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अनन्तमहिमव्याप्तविश्वं वेधा न वेद याम् ।  
 या च मातेव भजते प्रणते मानवे दयाम् ॥ १ ॥ नतापनीत-

क्लेशायाः सुरारिजनतापनी । न तापनी तनुर्यस्यास्तुल्या नादीन-  
 तापनी ॥ २ ॥ वक्त्रपद्मा विधेर्भान्ति यया सर्गलयो दया । या  
 साक्षाद्या च जनितस्थितिसर्गलयोदया ॥ ३ ॥ याश्रिता पावनतया  
 यातनाच्छिदनीचया । याचनीया धिया मायायामायासं स्तुता  
 श्रिया ॥ ४ ॥ नमांसि ध्वंसमायान्ति यस्याः स्तुत्यादरेण वः ।  
 तस्याः सिद्धयै धियां मातुः कल्पन्तां पादरेणवः ॥ ५ ॥ ऋषीणां  
 सादयामास या तमांसि त्रयीमयी । पायाद्वः सा दयामाधिच्छिदं  
 जगति बिभ्रती ॥ ६ ॥ स्मरद्विषा या ययाचे यया चेयं विधेः  
 क्रिया । यां चाच्युतोऽपि तुष्टाव तुष्टा वः साऽस्तु पार्वती ॥ ७ ॥  
 या दमावनयागेन स्वाराथा नयसारया । हरिकैतवहास्याय सायामा  
 विजिता यया ॥ ८ ॥ यायताजिविमया सा यस्या हा वत कैरिह ।  
 या रसायनधारा स्वा न गेयानवमा दया ॥ ९ ॥ सा बुद्धि-  
 रुत्तमालोकः सतामार्या पुनातु वः । यद्धक्तेरुत्तमा लोकः प्रामोत्येष  
 विशुद्धताम् ॥ १० ॥ अयुद्ध साधुत्राणाय सामरा या सहारिणा ।  
 खड्गेन दीप्रा देवानां सामरायासहारिणा ॥ ११ ॥ चरणाघात-  
 निहतकासरा च रणाजिरे । रराज या नयजयैरराजसजनानता ॥ १२ ॥  
 सावताद्वोऽम्बिकाऽभ्यर्च्यनामा न न यशोभितः । तनोति प्रणतो  
 यस्या ना माननयशोभितः ॥ १३ ॥ संयतं याचमानेन यस्याः प्रापि  
 द्विषा वधः । संयतं या च मानेन युनक्ति प्रणतं जनम् ॥ १४ ॥  
 या दमानवमानन्दपदमाननमानदा । दानमानक्षमानित्यधनमानव-  
 मानिता ॥ १५ ॥ सा रक्षतादपारा ते रसकृद्गौरवाधिका । सारक्ष-  
 तादपारातेरसकृद्गौरवाधिका ॥ १६ ॥ अनुत्तमोहराशयो भवन्ति  
 यामनाश्रिताः । अनुत्तमो हराशयो यया चिरं च रञ्जितः ॥ १७ ॥  
 अनन्तरागतापायास्तारयित्री भवापदः । अनन्तरागतापायाः सा

वो गौरी हियाक्रियाः ॥ १८ ॥ यामायासजिदासक्तशोकजालस्य  
 पातिनी । या माता सर्वदा भक्तलोकजालस्य पालनी ॥ १९ ॥  
 सामरागमनायासं त्यक्त्वा सार्धं सुरारिभिः । सामरा गमनायास-  
 चुद्यता युधि यद्गणाः ॥ २० ॥ सामोदयाजया शतैः शस्त्रैः शत्रौ  
 हते यया । सामोदया जयाशा तैर्गीर्वाणैर्गर्वतो जहे ॥ २१ ॥  
 ययायायाय्यया यूयं यो योऽयं येययैय याम् । ययुयायिययेयाय  
 ययेऽयायाय याययुक् ॥ २२ ॥ साऽव्याद्वैरी सदा युष्मान्सदायु-  
 ष्मान्समृद्ध्यति । शरणं यां नरो गच्छन्न रोगच्छन्दमेति च ॥ २३ ॥  
 कृतास्पदा यया संपदधानि सुरवैरिषु । हन्ति या वाङ्मयी दूराद-  
 धानि सुरवैरिषुः ॥ २४ ॥ जितानया या नताजितारसाततसारता ।  
 न सावना नावसानयातनारिरिना तया ॥ २५ ॥ मनोभवारातिम-  
 नोभिरामया जरामयापाकरणैकदक्षया । मदक्षयान्निर्मलतां ददानया  
 सदा नयास्था क्रियतां तवार्यया ॥ २६ ॥ समाययाविन्द्रहिताय  
 या रणे समायया या न जितारिसेनया । स मा ययाचे हरमाश्रितः  
 स्फुटं समा यया मुग्धतया मनोज्ञताः ॥ २७ ॥ सा भावक्षालवर्या  
 नुतविभवितनुर्या वलक्षावभासा जानानस्याशयप्रा नवनलिनवनप्रा-  
 यशस्याननाजा । सातं वर्माननस्था रहसि रसिहरस्थाननर्मावितंसा  
 पायादक्ता रणत्रा मतनमनतमत्राणरक्ता दयापा ॥ २८ ॥ उपासते  
 कृष्टिकृतोदयां यां जना सदाराधनमीहमानाः । शंभोः प्रसिद्धा  
 तनुतां वहन्ती गौरी हितं सा भवतां विधेयात् ॥ २९ ॥ यां सद्य  
 एव त्रिदशैः पुमांसः समा नमस्यन्ति सदानभोगाः । अधानि यस्य  
 प्रणता विपक्षैः समानमस्यन्ति सदा नभोगाः ॥ ३० ॥ यस्याः  
 प्रभावो द्युसदां विपक्षसेना वधानन्दयिताहरस्य । मनोम्बुजस्यावहतु  
 श्रियै वः सेनावधानं दयिता हरस्य ॥ ३१ ॥ सुरा जिता भावित-

देवराजद्विपक्षमा यात रणादभीतम् । स्वापं न वो धाम हितं न  
 नाम सदैवसेना भवतोहितानाम् ॥ ३२ ॥ सुराजिता भावितदेव-  
 राजद्विपक्षमाया तरणादभीतम् । स्वापन्नबोधामहितं ननाम  
 सदैव सेना भवतो हितानाम् ॥ ३३ ॥ सुरानिति द्वेषिजनै-  
 रभिद्रुतानुदाहरद्या स्वयमाहवोद्यता । शिवोऽद्य तापप्रशमस्तया  
 तव प्रशस्तया तत्त्वदशा विधीयताम् ॥ ३४ ॥ वक्रं बिभ्र-  
 त्युपहितचन्द्रायासं या संमोहप्रशमनसूर्याकारा । कारानीतामर-  
 मरिमाचिक्षेप क्षेपत्यक्ता रणभुवि सा वः पायात् ॥ ३५ ॥ हिते-  
 हितेऽस्तु ते स्तुते जिताजितामितामिता । जयाजया जनोऽजनो यया  
 ययावलं बलम् ॥ ३६ ॥ सक्तिं वः सुकृतार्जने विदधती सत्रां यतां  
 त्रायतां दुर्गा दुर्ग्रहदूषितोद्धतधियामायासदा या सदा । साधूत्साह-  
 विधानलक्तमनसां मुख्या ततां ख्याततां संस्मृत्यैव... [मत्सर-  
 भरस्फीतापदां तापदाम्] ॥ ३७ ॥ या मूर्तिं किमपि स्मरारिव-  
 पुषा धत्ते समायोजितां यां दृष्ट्वैव विनाशमाप सहसा शुम्भः  
 समायोऽजिताम् । या नम्रैः सुरसिद्धिर्किनरनरैः खेदं विना शस्यते  
 सा हेतुर्भवतां त्रिलोचनवधूरश्रीविनाशस्य ते ॥ ३८ ॥ सायासाया-  
 स्त्रिलोक्याः शरणमकरुणक्षुण्णदैत्यप्रवीरा स्वैरं स्वैरंशसर्गैर्गहनतम-  
 महामोहहार्दं हरन्ती । शस्याशस्यादधाना सकलमभिहितं भक्ति-  
 भाजः स्मृतैव स्तादस्तादभ्रदोषा द्विषदुपशमनी सर्वतः पार्वती वः  
 ॥ ३९ ॥ सुरसुरचितचितनवनवभवभवनानादरादरायेये । लयलय-  
 चरणौ चरणौ न न मामि नतेन नमामि न ते ॥ ४० ॥ या विस्मयं  
 स्मरभिदा चक्रेऽङ्करोपिता नवं नारीणाम् । विदधे यच्चापस्य न च  
 क्रेकारोऽपि तानवं नारीणाम् ॥ ४१ ॥ या हन्तां च प्रयाता विहा-  
 यसा कंसमाह तारातिबलेन । कृष्णस्तव परमाया विहाय साकं

समाहतारातिबलेन ॥ ४२ ॥ तां नमत या च समरेष्वनेकशो भाति  
 भद्रकाली नतया । ख्याति यया जनतोज्ज्वलविवेकशोभातिभद्रा-  
 कालीनतया ॥ ४३ ॥ तां स्मरत या स्मृतैव हि मानवतामरसमा-  
 नता राति बलात् । यत्प्रणतं श्रीः श्रयते मानवतामरसमान ताराति  
 बलात् ॥ ४४ ॥ अनवरागसमुद्भवदेहतामुपगता दृष्टो गिरिशेन  
 या । अनवरागसमुद्भवदेह तामवनतोऽस्मि जगध्रियतां सतीम्  
 ॥ ४५ ॥ मेने नूनमनेन माननमुमानाम्ना नु मेनोन्मना नुन्नेनो-  
 मने निमानममुना नो नाम नानानुमे । मौनेनाममाननिम्नमनना-  
 न्नानामिनानूनिमे मुन्मिन्नाननमा नमी मुनिमनोमानाननोन्नामिनि  
 ॥ ४६ ॥ तां वन्देऽहं नवं देहं ज्ञानरूपं विधाय या । सुधीरस्यति  
 धीरस्य महामोहमयीं त्वचम् ॥ ४७ ॥ यां नुत्वा यान्ति हृद्यार्थ-  
 सज्जायां गिरि शस्यताम् । नौम्यहं भक्तिमास्थाय सज्जायां गिरि-  
 शस्य ताम् ॥ ४८ ॥ यदानतोऽयदानतो न यात्ययं नयात्ययम् ।  
 शिवे हितां शिवेहितां स्मरामितां स्मरामि ताम् ॥ ४९ ॥ सरस्वति-  
 प्रसादं मे स्थितिं चित्तसरस्वति । सरस्वति कुरु क्षेत्रकुरुक्षेत्रसरस्वति  
 ॥ ५० ॥ त्वद्भक्तिभावितधियो जगतामत्र ये त्रये । जन्मवत्तामहं  
 मन्ये तेषामेवानृणां नृणाम् ॥ ५१ ॥ जगतः सातिरेका त्वं गतिरस्य  
 स्थिराधिका । तरस्यत्रासतारारेः सास्यत्रासरसस्थिति ॥ ५२ ॥  
 त्वन्नामस्मरणादेव न लक्ष्मीश्चपलायते । सर्वतः पार्वति क्षिप्रम-  
 लक्ष्मीश्च पलायते ॥ ५३ ॥ जयन्ति भक्ता वित्तेशसमरायस्तबाहवे ।  
 तुभ्यं नमस्त्रिलोक्यर्थसमरायस्तबाहवे ॥ ५४ ॥ सत्त्वं सम्यक्त्वमुन्मील्य  
 हृदि भासि विराजसे । द्विषामरीणां त्वं सेनां वाहिनीमुदकम्पयः  
 ॥ ५५ ॥ दूरागततरसा धन्यः सेवतेयस्तव स्तुतीः । दूरागत रसाधन्यः  
 कल्पन्ते तस्य सिद्धयः ॥ ५६ ॥ मोहं हत्वास्पदं यासि सात्त्वमम्ब



रवासिना । या न संस्तूयसे केन सा त्वम्बरवासिना ॥ ५७ ॥  
 प्रकाश्य गृह्यपुंसस्यखेदच्छेदाम्बुदावली । प्रज्ञात्मनेनविमला स्थिता  
 दृश्यसि विद्वताम् ॥ ५८ ॥ भवानि ये निरन्तरं तव प्रणामलालसाः ।  
 मनस्तमोमलालसा भवन्ति नैय तु क्वचित् ॥ ५९ ॥ विभावना-  
 कुला त्वयि क्रमेण देवि भावना । वपुष्पतिस्थिरेतरे नितान्तमेव  
 पुष्यति ॥ ६० ॥ महोऽदयानामवधी रणेन महोदयानामवधी-  
 रणेन । महोदयानामवधीरणेनमहोदयानामवधीरणेन ॥ ६१ ॥ न  
 मज्जनेन तीर्थानां तदिह प्राप्यते शुभम् । नमज्जनेन तीर्थानां सेवया  
 यत्तवाम्बिके ॥ ६२ ॥ प्रयाति मोहे निःसारभारतीव्रतमेत्ययम् ।  
 त्वत्प्रसादाज्जनः सारभारतीव्रतमेत्ययम् ॥ ६३ ॥ शास्त्रप्रभावह-  
 सिताः सतां या निर्मला गिरः । शास्त्रप्रभावहसितास्त्वमम्बतिमि-  
 रच्छिदः ॥ ६४ ॥ शमीह ते समानतो विभावितोऽन्नसन्न यः ।  
 विभावितोऽन्न सन्नयः शमीहते स मानतः ॥ ६५ ॥ मातरं त्वा  
 पदं सद्य आश्रितास्ते कथं जनाः । मा तरन्त्वापदं सद्य आद्यं श्रेयः  
 समाश्रिताः ॥ ६६ ॥ भाति त्वत्तनुसंश्लेषे सत्यम्ब वपुरनुत्तरम् ।  
 संसाराब्धौ सदाहुस्ते सत्यं वपुरनुत्तरम् ॥ ६७ ॥ यच्छ मे नित्य-  
 संसङ्गि यच्छमे तदिदं मनः । स्वच्छलो भक्तियोगस्ते स्वच्छलो-  
 कविवेकसूः ॥ ६८ ॥ के वलन्ते वितन्वन्तकृतस्त्वत्प्रणता भवे ।  
 केवलं ते वितन्वन्त आसते विमलां धियम् ॥ ६९ ॥ देवि निर्दग्ध-  
 कामस्य त्वं निरावरणात्मनः । हरस्य शुभसंतानं तेनासौ भ्राजते  
 तथा ॥ ७० ॥ द्विषद्भिया सपदि विमुच्यते यतस्तवानतो जननि  
 जयाशया न कः । स्तवानतो जननिजया शयानकः करोति ते युधि  
 मधुसूदनस्वसः ॥ ७१ ॥ ज्यायोनिष्ठारिवर्याधिनिमनवरस्वैरदत्ता-  
 यताज्ञा स्वाराधत्वासमध्यानियजनजननि ज्ञेयसुस्थावभासा ।

नानापुण्यागमस्था जननमनमयज्ञाननन्द्या वरा धीर्याता नव्या  
 विभुत्वं नुतसरलमनस्तामसस्यावहास्ये ॥ ७२ ॥ स्येहाव स्या समस्ता-  
 नमलरसतनु त्वं भुवि न्यानतार्या धीरा वन्द्या न न ज्ञा यमनमनन-  
 जस्थामगण्या पुनाना । सा भावस्था सुयज्ञेऽनिनजनजयनि ध्यामस-  
 त्वाधरास्वा ज्ञातायत्तादरस्त्वैरवनमनिधिर्या वरिष्ठानियोज्या ॥ ७३ ॥  
 अलोलकमले चित्तललामकमलालये । पाहि चण्डि महामोहभङ्गभी-  
 मबलामले ॥ ७४ ॥ दुर्गापि मातः सुलभासि भक्त्या भवानुकूलापि  
 भवं क्षिणोषि । अध्येयतां यासि सदैव देवि ध्येयासि चित्रं चरितं  
 तवैतत् ॥ ७५ ॥ महदेसुरसंघर्मे तमवसमासङ्गमागमाहरणे ।  
 हरबहुसरणं तं चित्तमोहमवसर उमे सहसा ॥ ७६ ॥ वन्द्या  
 प्रभातसंध्येव सूर्यालोकप्रवर्तिनी । निवर्तयसि देवि त्वं महामोहमर्यां  
 निशाम् ॥ ७७ ॥ संवादिसारसंपत्तीसदागोरिजयेसुदे । तवसत्तीरदे  
 सन्तु संसारे सुसमानदे ॥ ७८ ॥ आगममणिसुदमहिमसमसंमद-  
 कृदपरजस्सु । किर सविभयवदितो समय उज्जलभावसहस्सु  
 ॥ ७९ ॥ त्वं वादे शास्त्रसङ्गिन्यां भासि वाचि दिवौकसः । तवा-  
 देशास्त्रसंस्काराज्जयन्ति वरदे द्विषः ॥ ८० ॥ सदाव्याजवशिध्याताः  
 सदात्तजपशिक्षिताः । ददास्यजन्तं शिवताः सूदात्ताजदिशि स्थिताः  
 ॥ ८१ ॥ हरेः स्वसारं देवि त्वा जनताश्रित्य तत्त्वतः । वेत्ति  
 स्वसारं देवित्वा योगेन क्षपिताशुभा ॥ ८२ ॥ सदाप्नोति यतिर्ज्यो-  
 तिस्तादृशं त्वत्प्रभावतः । प्रभावतः समो येन कल्पते मोहनुत्तितः  
 ॥ ८३ ॥ त्वं सद्गतिः सितापारा परा विद्योत्तितीर्षतः । संसारादत्र  
 चाग्रे त्वं सत्त्वं पासि विपत्तितः ॥ ८४ ॥ परमा या तपोवृत्तिरा-  
 र्यायास्तां स्मृतिं जनाः । परमायात पोषाय धियां शरणमादृताः  
 ॥ ८५ ॥ प्रवादिमतभेदेषु दृश्यस्ते महिमाश्रयः । भान्ति त्वन्निशि-

खस्येव शिखानामसमाश्रयः ॥ ८६ ॥ यच्चेष्टया तव स्फीतमुदारवसु  
 धामतः । यच्चेतो यात्यवहितमुदा रवसुधामतः ॥ ८७ ॥ सुरदेशस्य  
 ते कीर्तिं मण्डनत्वं नयन्ति यैः । वरदे शस्यते धीरैर्भवती भुवि  
 देवता ॥ ८८ ॥ तत्त्वं वीतावतततुत्तत्त्वं ततवती ततः । विन्तं वित्तव  
 वित्तत्वं वीतावीतवतां बत ॥ ८९ ॥ तारे शरणमुद्यन्ती सुरेशरण-  
 मुद्यमैः । त्वं दोषापासिनोदग्रस्वदोषा पासि नोदने ॥ ९० ॥  
 सुमातरक्षयालोक रक्षयात्तमहामनाः । त्वं धैर्यजननी पासि जननी-  
 तिगुणस्थितीः ॥ ९१ ॥ ख्यातिकल्पनदक्षैका त्वं सामर्ग्यजुषामितः ।  
 सदा सरक्षसांमुख्यदानवानामसुस्थितिः ॥ ९२ ॥ सिता संसत्सु  
 सत्तास्ते स्तुतेस्ते सततं सतः । ततास्तितैति तस्तेति सूतिः सूतिस्त-  
 तोऽसि सा ॥ ९३ ॥ त्वदाज्ञया जगत्सर्वं भासितं मलनुद्यतः ।  
 सदा त्वया सगन्धर्वं समिद्धमरिनुत्तितः ॥ ९४ ॥ यतो याति  
 ततोऽत्येति यथा तां तायतां यतैः । मातामितोत्तमतमा तमोतीतां  
 मतिं मम ॥ ९५ ॥ महत्तां त्वं श्रिता दासजनं मोहच्छिदा वस ।  
 यच्छुद्धत्वं गतः पापमन्यस्य प्रसभं जय ॥ ९६ ॥ त्वां साज्ञासु  
 जगन्मातः स्पष्टं ज्ञाता सुवर्त्मसु । प्रज्ञा मुख्या समुद्भासि  
 तत्पृथुत्वं प्रदर्शय ॥ ९७ ॥ आज्ञासु जगन्मातः स्पष्टं ज्ञाता  
 सुवर्त्मसु प्रज्ञा । भासि त्वं सा मुख्या समुत्पृथुत्वं प्रदर्शय तत्  
 ॥ ९८ ॥ हृद्यो रुषः क्षमा एता सदंक्षोभास्तमुन्नतः । सतेहितः  
 सेवते ताः सततं यः स ते हितः ॥ ९९ ॥ करोषि तास्त्वमुत्खात-  
 मोहस्थाने स्थिरा मतीः । पदं यतिः सुतपसा लभतेऽतः सशुक्लिम  
 ॥ १०० ॥ देव्या स्वमोदमादिष्टदेवीशतकसंज्ञया । देशितानुप-  
 मामाधादतो नोणसुतो नुतिम् ॥ १०१ ॥ हार्दध्वान्तनियन्त-  
 भास्वरवपुः स्वर्वासिनां सर्वतो दुर्वारारिपरिक्षयं विदधती ध्यातैव

निर्वाणसुः । देहार्धे निहिता भवेन भुवनत्राणैकतानात्मना देवि त्वं  
 त्वमिवापरा जगति का सत्केसरीन्द्रस्थितिः ॥ १०२ ॥ क्लेशोन्मा-  
 थकरी सतां भवहरानन्दैकहेतो गुरुमाता त्वं जगतां भवन्ति  
 विधवाः सर्वे तवानुग्रहात् । दुर्गे न क्वचिदेव सीदति जनस्त्वङ्ग-  
 क्तिपूताशयः स्तुत्या भर्तुरभिन्नयेति विबुधैस्त्वं स्तूयसे श्रीरिव  
 ॥ १०३ ॥ येनानन्दकथायां त्रिदशानन्दे च लालिता वाणी । तेन  
 सुदुष्करमेतत्स्तोत्रं देव्याः कृतं भक्त्या ॥ १०४ ॥ इति श्रीमदा-  
 नन्दवर्धनाचार्यविरचितं देवीशतकं संपूर्णम् ॥

### २०१. त्रिपुरसुन्दरीप्रातःस्मरणम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कस्तूरिकाकृतमनोज्ञललामभास्वर्धेन्दुमुग्ध-  
 निदिलाञ्चलनीलकेशीम् । प्रालम्बमाननवमौक्तिकहारभूषां प्रातः  
 स्मरामि ललितां कमलायताक्षीम् ॥ १ ॥ एणाङ्गचूडसमुपार्जित-  
 पुण्यराशिमुत्तप्तहेमतनुकान्तिद्वरीपरीताम् । एकाग्रचित्तमुनिमानस-  
 राजहंसीं प्रातः स्मरामि ललितापरमेश्वरीं ताम् ॥ २ ॥ ईषद्विका-  
 सिनयनान्तनिरीक्षणेन साम्राज्यदानचतुरां चतुराननेड्याम् ।  
 ईशाङ्गवासरसिकां रससिद्धिदात्रीं प्रातः स्मरामि मनसा ललिता-  
 धिनाथाम् ॥ ३ ॥ लक्ष्मीशपद्मभवनादिपदैश्वर्यैः संशोभिते  
 च फलकेन सदाशिवेन । मञ्चे वितानसहिते ससुखं निषण्णां प्रातः  
 स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ ४ ॥ हींकारमब्रजपतर्पण-  
 होमतुष्टां ह्रीङ्कारमब्रजलजातसुराजहंसीम् । ह्रीङ्कारहेमनवपञ्जर-  
 सारिकां तां प्रातः स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ ५ ॥ हल्ली-  
 सलास्यमृदुगीतिरसं पिबन्तीमाकूणिताक्षमनवद्यगुणांबुराशिम् ।  
 सुसोत्थितां श्रुतिमनोहरकीरवाग्भिः प्रातः स्मरामि मनसा ललिता-  
 धिनाथाम् ॥ ६ ॥ सच्चिन्मयीं सकललोकहितैषिणीं च संपत्करी-

हयमुखीमुखदेवतेढ्याम् । सर्वानवद्यसुकुमारशरीररम्यां प्रातः  
 स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ ७ ॥ कन्याभिरर्धशशिमुग्ध-  
 किरीटभास्वच्छाभिरङ्कगतहृद्यविपञ्चिकाभिः । संस्तूयमानचरितां  
 सरसीरुहाक्षीं प्रातः स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ ८ ॥  
 हत्वाऽसुरेन्द्रमतिमात्रबलावलितभण्डासुरं समरचण्डमघोरसैन्यम् ।  
 संरक्षितार्तजनतां तपनेन्दुनेत्रां प्रातः स्मरामि मनसा ललिताधि-  
 नाथाम् ॥ ९ ॥ लज्जावनम्ररमणीयमुखेन्दुबिम्बां लाक्षारुणाङ्घ्रि-  
 सरसीरुहशोभमानाम् । रोलम्बजालसमनीलसुकुन्तलाढ्यां प्रातः  
 स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ १० ॥ ह्रींकारिणीं हिममही-  
 धरपुण्यराशिं हीङ्कारमन्त्रमहनीयमनोज्ञरूपाम् । हीङ्कारगर्भमनु-  
 साधकसिद्धिदात्रीं प्रातः स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ ११ ॥  
 सञ्जातजन्ममरणादिभयेन देवीं संफुलपद्मनिलयां शरदिन्दुशुभ्राम् ।  
 अर्धेन्दुचूडवनितामणिमादिवन्द्यां प्रातः स्मरामि मनसा ललिता-  
 धिनाथाम् ॥ १२ ॥ कल्याणशैलशिखरेषु विहारशीलां कामेश्वरा-  
 ङ्कनिलयां कमनीयरूपाम् । काद्यर्णमन्त्रमहनीयमहानुभावां प्रातः  
 स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ १३ ॥ लम्बोदरस्य जननीं  
 तनुरोमराजीं बिम्बाधरां च शरदिन्दुमुखीं मृडानीम् । लावण्य-  
 पूर्णजलधिं जलजातहस्तां प्रातः स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम्  
 ॥ १४ ॥ हीङ्कारपूर्णनिगमैः प्रतिपाद्यमानां हीङ्कारपद्मनिलयां हत-  
 दानवेन्द्राम् । हीङ्कारगर्भमनुराजनिषेव्यमाणां प्रातः स्मरामि मनसा  
 ललिताधिनाथाम् ॥ १५ ॥ श्रीचक्रराजनिलयां श्रितकामधेनुं  
 श्रीकामराजजननीं शिवभागधेयाम् । श्रीमद्ब्रह्मस्य कुलमङ्गलदेवतां  
 तां प्रातः स्मरामि मनसा ललिताधिनाथाम् ॥ १६ ॥ इति त्रिपुर-  
 सुन्दरीप्रातःस्मरणं समाप्तम् ॥

## २०२. त्रिपुरसुन्दरीसात्रिध्यस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्पभानुसमानभास्वरधाम लोचनगोचरं किं  
 किमित्यतिविस्मिते मयि पश्यतीह समागताम् । कालकुन्तलभार-  
 निर्जितनीलमेघकुलां पुरश्चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये  
 ॥ १ ॥ एकदन्तषडाननादिभिरावृतां जगदीश्वरीमेनसां परिपन्थि-  
 नीमहमेकभक्तिमदर्चिताम् । एकहीनशतेषु जन्मसु संचितात्सुकृ-  
 तादिमां चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ २ ॥ ईदृशीति  
 च वेदकुन्तलवाग्भिरप्यनिरूपितामीशपङ्कजनाभसृष्टिकृतादिवन्द्य-  
 पदाम्बुजाम् । ईक्षणान्तनिरीक्षणेन मदिष्टदां पुरतोऽधुना चक्रराज-  
 निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ ३ ॥ लक्षणोज्ज्वलहारशोभि-  
 पयोधरद्वयकैतवालीलयैव दयारसस्त्रवदुज्ज्वलत्कलशान्विताम् ।  
 लाक्षयाङ्कितपादपातिमिलिन्दसन्ततिमग्रतश्चक्रराजनिवासिनीं त्रिपु-  
 रेश्वरीमवलोकये ॥ ४ ॥ हीमिति प्रतिवासरं जपसुस्थिरोऽहमुदा-  
 रया योगिमार्गनिरुढयैक्यसुभावनां गतया धिया । वत्स हर्षम-  
 वाप्तवत्यहमित्युदारगिरं पुरश्चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये  
 ॥ ५ ॥ हंसवृन्दमलक्तकारुणपादपङ्कजनूपुरकाणमोहितमादरादनु-  
 धावितं मृदु शृण्वतीम् । हंसमन्त्रमहार्थतत्त्वमयीं पुरो मम भाग्य-  
 तश्चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ ६ ॥ सङ्गतं जलम-  
 भ्रवृन्दसमुद्भवं धरणीधराद्धारया वहदञ्जसा भ्रममाप्य सैकत-  
 निर्गतम् । एवमादिमहेन्द्रजालसुकोविदां पुरतोऽधुना चक्रराज-  
 निवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ ७ ॥ कम्बुसुन्दरकन्धरां कच-  
 वृन्दनिर्जितवारिदां कण्ठदेशलसत्सुमङ्गलहेमसूत्रविराजिताम् ।  
 कादिमन्त्रमुपासतां सकलेष्टदां मम संनिधौ चक्रराजनिवासिनीं  
 त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ ८ ॥ हस्तपद्मालसत्रिखण्डसुमुद्रिकामह-

माद्रिजां हस्तिकृत्तिपरीतकार्मुकवल्लरीसमचल्लिकाम् । हर्यजस्तुत-  
वैभवां भवकामिनीं मम भाग्यतश्चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरी-  
मवलोकये ॥ ९ ॥ लक्षणोल्लसदङ्गकान्तिशरीनिराकृतविद्युतं लास्य-  
लोलसुवर्णकुण्डलमण्डितां जगदम्बिकाम् । लीलयाखिलसृष्टि-  
पालनकर्षणादिवितन्वतीं चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये  
॥ १० ॥ ह्रीमिति त्रिपुरामनुस्थिरचेतसा बहुधार्चितां हादिमन्न-  
महाम्बुजातविराजमानसुहंसिकाम् । हेमकुम्भधनस्तनाञ्जलोल-  
मौक्तिकभूषणां चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ ११ ॥  
सर्वलोकनमस्कृतां जितशर्वरीरमणाननां शर्वदेवमनःप्रियां नव-  
यौवनोन्मदगर्विताम् । सर्वमङ्गलविग्रहां मम पूर्वजन्मतपोबला-  
च्चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ १२ ॥ कन्दमूलफला-  
शिभिर्बहुयोगिभिश्च गवेषितां कुन्दकुड्मलदन्तपङ्क्तिविराजितामप-  
राजिताम् । कन्दमागमवीरुधां सुरसुन्दरीभिरिहागतां चक्रराजनि-  
वासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ १३ ॥ लत्रयाङ्कितमन्नराट्सम-  
लंकृतां जगदम्बिकां लालनीलसुकुन्तलावलिनिर्जितालिकदम्बिकाम् ।  
लोभमोहविदारिणीं करुणामयीमरुणां शिवां चक्रराजनिवासिनीं  
त्रिपुरेश्वरीमवलोकये ॥ १४ ॥ ह्रींपदाख्यमहामनोरधिदेवतां  
भुवनेश्वरीं हृत्सरोजनिवासिनीं हरवल्लभां बहुरूपिणीम् । हारकुण्ड-  
लनूपुरादिभिरन्वितां पुरतोऽधुना चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमव-  
लोकये ॥ १५ ॥ श्रीं सुपञ्चदशाक्षरीमपि षोडशाक्षररूपिणीं श्रीसु-  
धार्षणवमध्यशोभिसरोजकाननचारिणीम् । श्रीगुहस्तुतवैभवां पर-  
देवतां मम सन्निधौ चक्रराजनिवासिनीं त्रिपुरेश्वरीमवलोकये  
॥ १६ ॥ इति त्रिपुरसुन्दरीसन्निध्यस्तवः संपूर्णः ॥

## २०३. त्रिपुरसुन्दरीषोडशोपचारपूजा ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्पलतादिसुरद्रुमवाटीकल्पितरत्नगृहाधि-  
 निवासाम् । कल्पशतार्जितपुण्यविशेषाच्चेतसि भावनयाहमुपासे  
 ॥ १ ॥ एणधराश्मकृतोन्नतधिष्ण्यं हेमविनिर्मितपादमनोज्ञम् ।  
 शोणशिलाफलकं च विशालं देवि सुखासनमद्य ददामि ॥ २ ॥  
 ईशमनोहररूपविलासे शीतलचन्दनकुङ्कुममिश्रम् । हृद्यसुवर्णघटे  
 परिपूर्णं पाद्यमिदं त्रिपुरेशि गृहाण ॥ ३ ॥ लब्धभवत्करुणोऽह-  
 मिदानीं रत्नसुमाक्षतयुक्तमनर्घम् । रुक्मविनिर्मितपात्रविशेषेष्वा-  
 र्घ्यमिदं त्रिपुरेशि ददामि ॥ ४ ॥ ह्रीमिति मन्त्रजपेन सुगम्ये  
 हेमलतोद्भवलदिव्यशरीरे । योगिमनःसमशीतजलेन ह्याचमनं  
 त्रिपुरेऽद्य विधेहि ॥ ५ ॥ हस्तलसत्कटकादिसुभूषा आदरतोऽम्ब  
 वरोप्य निधाय । चन्दनवासितमन्त्रिततोयैः स्नानमयि त्रिपुरेशि  
 विधेहि ॥ ६ ॥ सञ्चितमम्ब मया ह्यतिमूल्यं कुङ्कुमशोणमतीव मृदु  
 त्वम् । शङ्करतुङ्गतराङ्गनिवासे वस्त्रयुगं त्रिपुरे परिधेहि ॥ ७ ॥  
 कन्दलदंशुकिरीटमनर्घं कङ्कणकुण्डलनूपुरहारम् । अङ्गदमङ्गुलि-  
 भूषणमम्ब स्वीकुरु देवि पुराधिनिवासे ॥ ८ ॥ हस्तलसच्चतुरायु-  
 धजाले शस्ततरं मृगनाभिसमेतम् । सद्भनसारसुकुङ्कुममिश्रं चन्दन-  
 पङ्कमिदं च गृहाण ॥ ९ ॥ लब्धविकासकदम्बकजातीचम्पकपङ्क-  
 जकेतकयुक्तैः । पुष्पचयैर्मनसावचितैस्त्वामम्ब पुरेशि भवानि  
 भजामि ॥ १० ॥ ह्रीपदशोभिमहामनुरूपे धूरसिमन्त्रवरेण  
 मनोज्ञम् । अष्टसुगन्धरजःकृतमाद्ये धूपमिमं त्रिपुरेशि ददामि  
 ॥ ११ ॥ सन्तमसापहमुज्ज्वलपात्रे गव्यघृतैः परिवर्धितदेहम् ।  
 चम्पककुड्मलवृन्दसमानं दीपगणं त्रिपुरेऽद्य गृहाण ॥ १२ ॥  
 कल्पितमद्य धियाऽमृतकल्पं दुग्धसितायुतमन्नविशेषम् । माषवि-



निर्मितपूपसहस्रं स्वीकुरु देवि निवेदनमाद्ये ॥ १३ ॥ लङ्घितकेतक-  
वर्णविशेषैः शोधितकोमलनागदलैश्च । मौक्तिकचूर्णयुतैः क्रमुकाद्यैः  
पूर्णतराम्ब पुरस्तव पात्री ॥ १४ ॥ ह्रींत्रयपूरितमन्त्रविशेषं पञ्च-  
दशीमपि षोडशरूपम् । संचितपापहरं च जपित्वा मन्त्रसुमा-  
ज्जलिमम्ब ददामि ॥ १५ ॥ श्रीपदपूर्णमहामनुरूपे श्रीशिवकाम-  
महेश्वरजाये । श्रीगुहवन्दितादपयोजे श्रीललितापरमेशि नमस्ते  
॥ १६ ॥ इति त्रिपुरसुन्दरीषोडशोपचारपूजा संपूर्णा ॥

### २०४. त्रिपुरसुन्दरीविजयस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्पान्तोदितचण्डभानुविलसदेहप्रभामण्डिता  
कालाम्भोदसमानकुन्तलभरा कारुण्यवारांनिधिः । काद्यर्णाङ्कित-  
मन्त्रराजविलसत्कूटत्रयोपासिता श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते  
श्रीराजराजेश्वरी ॥ १ ॥ एतत्प्राभवशालिनीति निगमैरद्याप्यना-  
लोकिता हेमाम्भोजमुखी चलत्कुवलयप्रस्पर्धमानेक्षणा । एणाङ्गांश-  
समानफालफलकप्रोल्लासिकस्तूरिका श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते  
श्रीराजराजेश्वरी ॥ २ ॥ ईषत्फुल्लकदम्बकुड्मलमहालावण्यगर्वा-  
पहस्निग्धस्वच्छसुदन्तकान्तिविलसन्मन्दस्मितालङ्कृता । ईशित्वा-  
द्यखिलेष्टसिद्धिफलदा भक्त्या नतानां सदा श्रीचक्राधिनिवासिनी  
विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ३ ॥ लक्ष्यालक्ष्यवलम्बदेशविलसद्गो-  
मावलीवल्लरीवृत्तस्निग्धफलद्वयभ्रमकरोत्तुङ्गस्तनी सुन्दरी । रक्ता-  
शोकसुमप्रपाटलदुकूलाच्छादिताङ्गी मुदा श्रीचक्राधिनिवासिनी  
विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ४ ॥ ह्रीङ्करी सुरवाहिनीजलगभी-  
रावर्तनाभिर्वनश्रोणीमंडलभारमन्दगमना काञ्चीकलापोज्ज्वला ।  
शृण्ढादण्डसुवर्णवर्णकदलीकाण्डोपमोरुद्वयी श्रीचक्राधिनिवासिनी  
विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ५ ॥ हस्तप्रोज्ज्वलदिक्षुकार्मुकलस-

स्तुष्पेषुपाशाङ्कुशा हाद्यर्णाङ्कितमन्नराजनिलया हारादिभिर्भूषिता ।  
 हस्तप्रान्तरणसुवर्णवलयया हर्यक्षसंपूजिता श्रीचक्राधिनिवासिनी  
 विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ६ ॥ संरक्ताम्बुजपादयुग्मविलस-  
 न्मञ्जुकणन्नूपुरा संसारार्णवतारणैकतरणिर्लावण्यवारांनिधिः । लीला-  
 लोलतमं शुक्रं मधुरया संलालयन्ती गिरा श्रीचक्राधिनिवासिनी  
 विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ७ ॥ कल्याणी करुणारसाद्रहृदया  
 कल्याणसंदायिनी काद्यर्णाङ्कितमन्नलक्षिततनुस्तन्वी तमोनाशिनी ।  
 कामेशाङ्कविलासिनी कलगिरामावासभूमिः शिवा श्रीचक्राधि-  
 निवासिनी विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ८ ॥ हन्तुं दानवपुङ्गवं  
 रणभुवि प्रोच्चण्डभण्डाभिधं हर्यक्षाद्यमरार्थिता भगवती दिव्यां  
 तनूमाश्रिता । श्रीमाता ललितेत्यचिन्त्यविभवैर्नाम्नां सहस्रैः  
 स्तुता श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ ९ ॥  
 लक्ष्मीवागगजादिभिर्बहुविधै रूपैः स्तुतापि स्वयं नीरूपा  
 गुणवर्जिता त्रिजगतां माता च चिद्रूपिणी । भक्तानुग्रहकारणेन  
 ललितं रूपं समासादिता श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते  
 श्रीराजराजेश्वरी ॥ १० ॥ हीङ्कारैकपरायणार्तजनतासंरक्षणे  
 दीक्षिता हार्दं संतमसं व्यपोहितुमलंभूष्णुर्हरप्रेयसी । हत्यादिप्रक-  
 टाघसंघदलने दक्षा च दाक्षायणी श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते  
 श्रीराजराजेश्वरी ॥ ११ ॥ सर्वानन्दमयी समस्तजगतामानन्दसंदा-  
 यिनी सर्वोत्तुङ्गसुवर्णशैलनिलया सा सारसाक्षी सती । सर्वैर्योगिचरैः  
 सदैव विचिता साम्राज्यदानक्षमा श्रीचक्राधिनिवासिनी विजयते  
 श्रीराजराजेश्वरी ॥ १२ ॥ कन्यारूपधरा गलाब्जविलसन्मुक्तालता-  
 लङ्कता कादिक्षान्तमनुप्रविष्टहृदया कल्याणशीलान्विता । कल्पान्तो-  
 ऽदृताण्डवप्रमुदिता श्रीकामजित्साक्षिणी श्रीचक्राधिनिवासिनी विज-

यते श्रीराजराजेश्वरी ॥ १३ ॥ लक्ष्म्या भक्तिरसार्द्रहृत्सरसिजे सद्भिः  
सदाराधिता सान्द्रानन्दमयी सुधाकरकलाखण्डोच्चलन्मौलिका ।  
शर्वाणी शरणागतार्तिशमनी सच्चिन्मयी सर्वदा श्रीचक्राधिनिवासिनी  
विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ १४ ॥ ह्रीङ्कारत्रयसंपुटातिमहता मन्त्रेण  
संपूजिता होत्री चन्द्रसमीरणाग्निजलभूभास्वन्नभोरूपिणी । हंसः  
सोऽहमिति प्रकृष्टधिषणैराराधिता योगिभिः श्रीचक्राधिनिवासिनी  
विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ १५ ॥ श्रीङ्काराम्बुजहंसिका श्रितजन-  
क्षेमङ्करी शङ्करी शृङ्गारैकरसाकरस्य मदनस्योज्जीविका वल्लरी ।  
श्रीकामेशरहःसखी च ललिता श्रीमद्गुहाराधिता श्रीचक्राधिनिवा-  
सिनी विजयते श्रीराजराजेश्वरी ॥ १६ ॥ इति श्रीत्रिपुरसुन्दरी-  
विजयस्तवः संपूर्णः ॥

### २०५. त्रिपुरसुन्दरीपुष्पाञ्जलिस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्याणदात्रि कमनीयतनूलते त्वां कं चापि  
कालमनुचिन्त्य हृदब्जमध्ये । कामं ग्रहर्षभरितेन मया तवाद्य पुष्पा-  
ञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ १ ॥ एतन्मदीयसुकृतं परमं पुराणं  
यत्त्वामहं प्रतिदिनं मनसा भजामि । साक्षात्कृतेन तव रूपमनेन  
चाद्य पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ २ ॥ ईशादिदेवमहनीय-  
महानुभावे दीनं त्विमं भवभयेन परिस्फुरन्तस् । दीनार्तिहन्त्रि दयया  
परिपालयाशु पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ ३ ॥ लज्जां  
विहाय बहुधा बहवोऽपि देवाः संपूजिता जडधिया नतु कोऽपि  
दृष्टः । लब्धं तवैव रमणीयवपुर्दृशा मे पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब  
कीर्णः ॥ ४ ॥ ह्रीङ्कारमन्निलये बहुशो भवाब्धौ मग्नः परं तु न  
कदापि गतोऽस्मि पारम् । तत्तारणे निपुणयोस्त्रिपुरे मयाद्य पुष्पाञ्ज-  
लिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ ५ ॥ हस्तेषु पाशमहनीयसितेश्चुचापे  
पुष्पास्त्रमङ्कुशवरं ललितं दधाने । हेमाद्रितुङ्गतरशृङ्गनिवासशीले

पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ ६ ॥ सर्वेषु देवि समयेषु  
 गतिस्त्वमेव नान्यं कदापि मनसा समनुस्मरामि । सर्वत्र रूपमतुलं  
 तव पश्यताद्य पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ ७ ॥ कस्ते  
 पुरेशि विधिवत्तु समर्हणायां शक्तः समस्तपरिबर्हयुतोऽपि धीमान् ।  
 हृत्पङ्कजेन भवतीं भजता मयाद्य पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः  
 ॥ ८ ॥ हन्तातिरूक्षभवपावकशोषितेन कुत्राप्यलब्धशरणेन सरो-  
 जवक्त्रे । अन्ते मयात्रभवतीं शरणं गतेन पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरय-  
 मम्ब कीर्णः ॥ ९ ॥ लक्ष्यासि देवि बहुजन्मतपोबलेन लक्ष्मी-  
 शधातृपरिपूज्यपदाम्बुजाते । आलक्ष्य रूपमरुणं तव विस्मितेन  
 पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ १० ॥ ह्रीङ्कारमेव शरणं  
 जगतां वदन्ति ह्रीङ्कारमेव परमं भुवने रहस्यम् । ह्रीङ्कारमेव सततं  
 स्मरता मयाद्य पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ ११ ॥ सर्वस्य  
 देवि भुवनस्य निदानभूता त्वय्येव सर्वमनघे विलयं गतं स्यात् ।  
 संचिन्त्य चैतदधुना त्रिपुरे मया ते पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरमम्ब कीर्णः  
 ॥ १२ ॥ कश्चिद्यदा भवनिहन्त्रि विचिन्तयेत्त्वां दीनं तदैव हि  
 कटाक्षयसे दृशा त्वम् । एवं विचिन्त्य भवतीं स्मरता मयाद्य  
 पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरमम्ब कीर्णः ॥ १३ ॥ लब्ध्वा त्वदीयचरणा-  
 म्बुजमम्ब जन्तुर्नावर्तते पुनरपि प्रभवाय लोके । वेदोक्तिमेवमस-  
 कृत्स्मरता मयाद्य पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः ॥ १४ ॥  
 ह्रीङ्कारमेव जपता प्रतिवासरं च ह्रीङ्कारमेव भजता सकलेष्टसिद्धौ ।  
 ह्रीङ्कारमेव परमं शरणं गतेन पुष्पाञ्जलिश्चरणयोरयमम्ब कीर्णः  
 ॥ १५ ॥ श्रीङ्कारमन्नकनकाब्जनिवासशीले श्रीरूपधारिणि शिवे  
 श्रितकल्पवलि । श्रीमद्बुहस्तुतमहाविभवे पुरेशि पुष्पाञ्जलिश्चरण-  
 योरयमम्ब कीर्णः ॥ १६ ॥ इति श्रीत्रिपुरसुन्दरीपुष्पाञ्जलिस्तवः  
 संपूर्णः ॥

२०६. त्रिपुरसुन्दरीचक्रराजस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कर्तुं देवि जगद्विलासविधिना सृष्टेन ते  
मायया सर्वानन्दमयेन मध्यविलसच्छ्रीबिन्दुनालंकृतम् । श्रीम-  
त्सद्गुरुपूज्यपादकरुणासंवेद्यतत्त्वात्मकं श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं  
सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १ ॥ एकस्मिन्नणिमादिभिर्विलसितं भूमीगृहे  
सिद्धिभिर्बाह्याद्याभिरुपाश्रितं च दशभिर्मुद्राभिरुद्भासितम् ।  
चक्रेऽद्या प्रकटेऽद्यया त्रिपुरया त्रैलोक्यसंमोहनं श्रीचक्रं शरणं  
ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ २ ॥ ईड्याभिर्नवविद्रुमच्छ-  
विसमाभिख्याभिरङ्गीकृतं कामाकर्षणिकादिभिः स्वरदले गुप्ताभि-  
धाभिः सदा । सर्वाशापरिपूरके परिलसद्देव्या पुरेऽद्या युतं  
श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ ३ ॥  
लब्धप्रोज्ज्वलयौवनाभिरभितोऽनङ्गप्रसूनादिभिः सेव्यं गुप्तराभि-  
रष्टकमले संक्षोभकाख्ये सदा । चक्रेऽद्या पुरसुन्दरीति जगति  
प्रख्यातया संगतं श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम्  
॥ ४ ॥ ह्रीङ्काराङ्कितमन्त्रराजनिलयं श्रीसर्वसंक्षोभिणीमुख्याभि-  
श्रलकुन्तलाभिरुषितं मन्वस्त्रचक्रे शुभे । यत्र श्रीपुरवासिनी  
विजयते श्रीसर्वसौभाग्यदे श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्ट-  
सिद्धिप्रदम् ॥ ५ ॥ हस्ते पाशगदादिशस्त्रनिचयं दीपं वहन्तीभि-  
रुत्तीर्णाख्याभिरुपास्ययाऽतिशुभदे सर्वार्थसिद्धिप्रदे । चक्रे बाह्य-  
दशारके विलसितं देव्या पुरश्चयाख्यया श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं  
सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ ६ ॥ सर्वज्ञादिभिरिन्दुकान्तिधवलकाकाराभि-  
रारक्षिते चक्रेऽन्तर्दशकोणकेऽतिविमले नाम्ना च रक्षाकरे । यत्र  
श्रीपुरमालिनी विजयते नित्यं निगर्भास्तुता श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि  
सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ ७ ॥ कर्तुं मूकमनर्गलस्त्रवदतिद्राक्षादि-

वागवैभवं दक्षाभिर्वशिनीमुखाभिरभितो वाग्देवताभिर्युतम् । अष्टरे  
 पुरसिद्धया विलसितं रोगप्रणाशे शुभे श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि  
 सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ ८ ॥ हन्तुं दानवसङ्घमाहवभुवि स्वेच्छा-  
 समाकल्पितैः शस्त्रैरस्त्रचयैश्च चापनिवहैरत्युग्रतेजोभरैः । आर्तत्राण-  
 परायणैररिकुलप्रध्वंसिभिः संवृतं श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं  
 सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ ९ ॥ लक्ष्मीवागगजात्मभिः करलसत्पाशा-  
 सिघण्टादिभिः कामेश्यादिभिरावृतं शुभकरं श्रीसर्वसिद्धिप्रदम् ।  
 चक्रेऽशी च पुरास्त्रिका विजयते यत्र त्रिकोणे मुदा श्रीचक्रं शरणं  
 ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १० ॥ ह्रीङ्कारं परमं जपद्भिर-  
 निशं मित्रेशानाद्यादिभिर्दिव्यौघैर्मनुजौघसिद्धनिवहैः सारूप्यमुक्तिं  
 गतैः । नानामन्त्ररहस्यविद्भिरखिलैरन्वासितं योगिभिः श्रीचक्रं  
 शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ ११ ॥ सर्वोत्कृष्टवपुर्धरा-  
 भिरभितो देवीसमाभिर्जगत्संरक्षार्थमुपागताभिरसकृन्नित्याभिधा-  
 भिर्मुदा । कामेश्यादिभिराज्ञयैव ललितादेव्याः समुद्रासितं श्रीचक्रं  
 शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १२ ॥ कर्तुं श्रीललिता-  
 ङ्गरक्षणविधिं लावण्यपूर्णां तनूमास्थायस्त्रवरोल्लसत्करपयोजाताभि-  
 रध्यासितम् । देवीभिर्हृदयादिभिश्च परितो विन्दुं सदानन्दं  
 श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १३ ॥ लक्ष्मी-  
 शादिपदैर्युतेन महता मञ्चेन संशोभितं षट्त्रिंशद्भिरनर्धरत्नखचितैः  
 सोपानकैर्भूषितम् । चिन्तारत्नविनिर्मितेन महता सिंहासनेनोज्ज्वलं  
 श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १४ ॥ ह्रीङ्कारैक-  
 महामनुं प्रजपता कामेश्वरेणोषितं तस्याङ्के च निषण्णया त्रिजगतां  
 मात्रा चिदाकारया । कामेश्या करुणारसैकनिधिना कल्याणदान्या  
 युतं श्रीचक्रं शरणं ब्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १५ ॥

श्रीमत्पञ्चदशाक्षरैकलिलयं श्रीषोडशीमन्दिरं श्रीनाथादिभिरर्चितं  
च बहुधा देवैः समाराधितम् । श्रीकामेश्वरहःसखीनिलयनं श्रीमद्गु-  
हाराधितं श्रीचक्रं शरणं व्रजामि सततं सर्वेष्टसिद्धिप्रदम् ॥ १६ ॥  
इति श्रीमन्निपुरसुन्दरीचक्रराजस्तवः संपूर्णः ॥

### २०७. त्रिपुरसुन्दर्यपराधक्षमापनस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कञ्जमनोहरपादचलन्मणिनूपुरहंसविराजिते  
कञ्जभवादिसुरौघपरिष्टुतलोकविसृत्वरवैभवे । मञ्जुलवाङ्मयनिर्जि-  
तकीरकुलेऽचलराजसुकन्यके पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपरा-  
धिनमम्बिके ॥ १ ॥ एणधरोज्ज्वलफालतलोलसदैगमदाङ्कसमन्विते  
शोणपरागविचित्रितकन्दुकसुन्दरसुस्तनशोभिते । नीलपयोधर-  
कालसुकुन्तलनिर्जितभृङ्गकदम्बके पालय हे ललितापरमेश्वरि माम-  
पराधिनमम्बिके ॥ २ ॥ ईतिविनाशिनी भीतिनिवारणि दानवहन्नि  
दयापरे शीतकराङ्गितरत्नविभूषितहेमकिरीटसमन्विते । दीप्ततरायुध-  
भण्डमहासुरगर्वनिहन्नि पुराम्बिके पालय हे ललितापरमेश्वरि  
मामपराधिनमम्बिके ॥ ३ ॥ लब्धवरेण जगन्नयमोहनदक्षलतान्त-  
महेषुणा लब्धमनोहरसालनिषण्णसुदेहभुवा परिपूजिते । लङ्कित-  
शासनदानवनाशनदक्षमहायुधराजिते पालय हे ललितापरमेश्वरि  
मामपराधिनमम्बिके ॥ ४ ॥ ह्रीं पदभूषितपञ्चदशाक्षरषोडशवर्णसु-  
देवते ह्रीमति हादिमहामनुमन्दिररत्नविनिर्मितदीपिके । हस्तिवरान-  
नदर्शितयुद्धसमादरसाहसतोषिते पालय हे ललितापरमेश्वरि माम-  
पराधिनमम्बिके ॥ ५ ॥ हस्तलसन्नवपुष्पशरेश्चशरासनपाशमहाङ्कुशे  
हर्यजशंभुमहेश्वरपादचतुष्टयमञ्चनिवासिनि । हंसपदार्थमहेश्वरि  
योगिसमूहसमादृतवैभवे पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिन-  
मम्बिके ॥ ६ ॥ सर्वजगत्करणावननाशनकर्त्रि कपालिमनोहरे

स्वच्छमृणालमरालतुषारसमानसुहारविभूषिते । सज्जनचित्तविहारिणि  
 शङ्करि दुर्जननाशनतत्परे पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिन-  
 मम्बिके ॥ ७ ॥ कञ्जदलाक्षि निरञ्जनि कुञ्जरगामिनि मञ्जुलभा-  
 षिते कुङ्कुमपङ्कविलेपनशोभितदेहलते त्रिपुरेश्वरि । दिव्यमतङ्गसु-  
 ताधृतराज्यभरे करुणारसवारिधे पालय हे ललितापरमेश्वरि माम-  
 पराधिनमम्बिके ॥ ८ ॥ हलकचम्पकपङ्कजकेतकपुष्पसुगन्धित-  
 कुन्तले हाटकभूधरशृङ्गविनिर्मितसुन्दरमन्दिरवासिनि । हस्तिमु-  
 खाम्ब वराहमुखीधृतसैन्यवरे गिरिकन्यके पालय हे ललितापर-  
 मेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ ९ ॥ लक्ष्मणसोदरसादरपूजित-  
 पादयुगे वरदे शिवे लोहमयादिबहून्नतसालनिषण्णबुधेश्वरसंवृते ।  
 लोलमदालसलोचननिर्जितनीलसरोजसुमालिके पालय हे ललिता-  
 परमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ १० ॥ ह्रीमिति मन्त्रमहाजपसुस्थिर-  
 साधकमानसहंसिके हेपितशीतकराननशोभिनि हेमलतेव सुभा-  
 स्वरे । हार्दतमोगुणनाशनि पाशविमोचनि मोक्षसुखप्रदे पालय हे  
 ललितापरमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ ११ ॥ सच्चिदभेदसुखा-  
 मृतवर्षिणि तत्त्वमसीति सदादृते सद्गुणशालिनि साधुसमर्चितपाद-  
 युगे परशाम्भवि । सर्वजगत्परिपालनदीक्षितबाहुलतायुगशोभिते  
 पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ १२ ॥ कम्बुगले  
 वरकुन्दरदे रसरञ्जितपादसरोरुहे काममहेश्वरकामिनि कोकिल-  
 कोमलभाषिणि भैरवि । चिन्तितसर्वमनोरथपूरणकल्पलते करुणार्णवे  
 पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ १३ ॥ हस्तक-  
 शोभिकरोज्ज्वलकङ्कणकान्तिसुदीपितदिङ्मुखे शस्ततरत्रिदशालयकार्य-  
 समादृतदिव्यतनूज्वले । कश्चतुरो भुवि देवि पुरेशि भवानि तव  
 स्तवने भवेत्पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ १४ ॥



ह्रींपदलान्छितमन्नपयोनिधिमन्थनजातपराभृते हृद्यवहानिलभूयज-  
मानकखेन्दुदिवाकररूपिणि । हर्यजरुद्रमहेश्वरसंस्तुतवैभवशालिनि  
सिद्धिदे पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ १५ ॥  
श्रीपुरवासिनि हस्तलसद्गरचामरवाक्कमलानुते श्रीगुहपूर्वभवार्जित-  
पुण्यफले भवमत्तविलासिनि । श्रीवशिनीविमलादिसदानतपादचल-  
न्मणिनूपुरे पालय हे ललितापरमेश्वरि मामपराधिनमम्बिके ॥ १६ ॥  
इति श्रीमन्निपुरसुन्दर्यपराधक्षमापनस्तवः संपूर्णः ॥

### २०८. त्रिपुरसुन्दरीवेदसारस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कस्तूरीपङ्कभास्वद्गलचलदमलस्थूलमुक्ताव-  
लीका ज्योत्स्नाशुद्धावदाता शशिशिशुमुकुटालंकृता ब्रह्मपत्नी ।  
साहित्याम्भोजभृङ्गी कविकुलविनुता सात्त्विकीं वाग्विभूतिं देयान्मे  
शुभ्रवस्त्रा करचलवलया वल्लुकीं वादयन्ती ॥ १ ॥ एकान्ते योगि-  
वृन्दैः प्रशमितकरणैः क्षुत्पिपासाविमुक्तैः सानन्दं ध्यानयोगाद्विस-  
गुणसदृशी दृश्यते चित्तमध्ये । या देवी हंसरूपा भवभयहरणं  
साधकानां विधत्ते सा नित्यं नादरूपा त्रिभुवनजननी मोदमा-  
विष्करोतु ॥ २ ॥ ईक्षित्री सृष्टिकाले त्रिभुवनमथ या तत्क्षणेऽनु-  
प्रविश्य स्थेमानं प्रापयन्ती निजगुणविभवैः सर्वथा व्याप्य विश्वम् ।  
संहर्त्री सर्वभासां विलयनसमये स्वात्मनि स्वप्रकाशा सा देवी  
कर्मबन्धं मम भवकरणं नाशयत्वादिशक्तिः ॥ ३ ॥ लक्ष्म्या या  
चक्रराजे नवपुरलसिते योगिनीवृन्दगुप्ते सौवर्णे शैलशृङ्गे सुरगण-  
रचिते तत्त्वसोपानयुक्ते । मन्त्रिण्या मेचकाङ्गया कुचभरनतया कोल-  
मुख्या च सार्धं साम्राज्ञी सा मदीया मदगजगमना दीर्घमायुस्त-  
नोतु ॥ ४ ॥ ह्रीङ्काराम्भोजभृङ्गी हयमुखविनुता हानिवृद्धादिहीना  
हंसोऽहंमन्त्रराज्ञी हरिहयवरदा हादिमन्त्रार्थरूपा । हस्ते चिन्मुद्रि-

काढ्या हतबहुदनुजा हस्तिकृत्तिप्रिया मे हार्दं शोकातिरेकं शमयतु  
 ललिताधीश्वरी पाशहस्ता ॥ ५ ॥ हस्ते पङ्केरुहामे सरससरसिजं  
 बिभ्रती लोकमाता क्षीरोदन्वत्सुकन्या करिवरविनुता नित्यपुष्टाब्ज-  
 गेहा । पद्माक्षी हेमवर्णा मुररिपुदयिता शेवधिः सम्पदां या सा मे  
 दारिद्र्यदोषं दमयतु करुणादृष्टिपातैरजस्रम् ॥ ६ ॥ सच्चिद्ब्रह्मस्वरूपां  
 सकलगुणयुतां निर्गुणां निर्विकारां रागद्वेषादिहर्त्रीं रविशशिनयनां  
 राज्यदानप्रवीणाम् । चत्वारिंशत्रिकोणे चतुरधिकसमे चक्रराजे  
 लसन्तीं कामाक्षीं कामितानां वितरणचतुरां चेतसा भावयामि  
 ॥ ७ ॥ कन्दर्पे शान्तदर्पे त्रिनयननयनज्योतिषा देववृन्दैः साशङ्कं  
 साश्रुपातं सविनयकरुणं याचिता कामपदया । या देवी दृष्टिपातैः  
 पुनरपि मदनं जीवयामास सद्यः सा नित्यं रोगशान्त्यै प्रभवतु  
 ललिताधीश्वरी चित्रकाशा ॥ ८ ॥ हव्यैः कव्यैश्च सर्वैः श्रुतिचय-  
 विहितैः कर्मभिः कर्मशीला ध्यानाद्यैरष्टभिश्च प्रशमितकलुषा  
 योगिनः पर्णभक्षाः । यामेवानेकरूपां प्रतिदिनमवनौ संश्रयन्ते  
 विधिज्ञाः सा मे मोहान्धकारं बहुभवजनितं नाशयत्वादिमाता  
 ॥ ९ ॥ लक्ष्या मूलत्रिकोणे गुरुवरकरुणालेशतः कामपीठे यस्या  
 विश्वं समस्तं बहुतरविततं जायते कुण्डलिन्याः । यस्याः शक्ति-  
 प्ररोहादविरलममृतं विन्दते योगिवृन्दं तां वन्दे नादरूपां प्रणव-  
 पदमयीं प्राणिनां प्राणदात्रीम् ॥ १० ॥ हीङ्काराम्भोधिलक्ष्मीं  
 हिमगिरितनयामीश्वरीमीश्वराणां ह्रींमन्नाराध्यदेवीं श्रुतिशतशिखरै-  
 र्मृग्यमाणां मृगाक्षीम् । ह्रींमन्नान्तैस्त्रिकूटैः स्थिरतरमतिभिर्धार्य-  
 माणां ज्वलन्तीं ह्रीं ह्रीं ह्रीमित्यजस्रं हृदयसरसिजे भावयेऽहं  
 भवानीम् ॥ ११ ॥ सर्वेषां ध्यानमात्रात्सवितुरुदरगा चोदयन्ती  
 मनीषां सावित्री तत्पदार्थां शशियुतमुकुटा पञ्चशीर्षा त्रिनेत्रा ।

हस्ताग्रैः शङ्खचक्राद्यखिलजनपरित्राणदक्षायुधानां बिभ्राणा वृन्द-  
मम्बा विशदयतु मतिं मामकीनां महेशी ॥ १२ ॥ कर्त्री लोकस्य  
लीलाविलसितविधिना कारयित्री क्रियाणां भर्त्री स्वानुप्रवेशा-  
द्वियदनिलमुखैः पञ्चभूतैः स्वसृष्टैः । हर्त्री स्वेनैव धात्रा पुनरपि  
विलये कालरूपं दधाना हन्यादामूलमस्मत्कलुषभरमुमा भुक्ति-  
मुक्तिप्रदात्री ॥ १३ ॥ लक्ष्या या पुण्यजालैर्गुहवरचरणाम्भोज-  
सेवाविशेषादृश्या स्वान्ते सुधीभिर्दरदलितमहापद्मकोशेन तुल्ये ।  
लक्षं जप्त्वापि यस्या मनुवरमणिमासिद्धिमन्तो महान्तः सा नित्यं  
मामकीने हृदयसरसिजे वासमङ्गीकरोतु ॥ १४ ॥ ह्रीं श्रीमैमन्नरूपा  
हरिहरविनुताऽगस्त्यपत्नीप्रदिष्टा हादिः कावर्णतत्त्वा सुरपतिवरदा  
कामराजप्रदिष्टा । दुष्टानां दानवानां मदभरहरणा दुःखहृत्त्री  
बुधानां साम्राज्ञी चक्रराज्ञी प्रदिशतु कुशलं मह्यमोङ्काररूपा  
॥ १५ ॥ श्रीमन्नार्थस्वरूपा श्रितजनदुरितध्वान्तहृत्त्री शरण्या  
श्रौतस्मार्तक्रियाणामविकलफलदा फालनेत्रस्य दाराः । श्रीचक्रा-  
न्तर्निषण्णा गुहवरजननी दुष्टहृत्त्री वरेण्या श्रीमत्सिंहासनेशी  
प्रदिशतु विपुलां कीर्तिमानन्दरूपा ॥ १६ ॥ श्रीचक्रवरसाम्राज्ञी  
श्रीमन्निपुरसुन्दरी । श्रीगुहान्वयसौवर्णदीपिका दिशतु श्रियम्  
॥ १७ ॥ इति श्रीमन्निपुरसुन्दरीवेदसारस्तवः संपूर्णः ॥

### २०९. श्रेयस्करीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रेयस्करि श्रमनिवारिणि सिद्धविद्ये स्वानन्दपूर्ण-  
हृदये करुणातनो मे । चित्ते वस प्रियतमेन शिवेन सार्धं माङ्गल्य-  
पातनु सदैव मुदैव मातः ॥ १ ॥ श्रेयस्करि श्रितजनोद्धरणैकदक्षे  
दाक्षायणि क्षपितपातकतूलराशे । शर्मण्यपादयुगले जलजप्रमोदे  
मेत्रे त्रयीप्रसूमरे रमतां मनो मे ॥ २ ॥ श्रेयस्करि प्रणतपामर-

पारदानज्ञानप्रदानसरणिश्रितपादपीठे । श्रेयांसि सन्ति निखिलानि  
 सुमङ्गलानि तत्रैव मे वसतु मानसराजहंसः ॥ ३ ॥ श्रेयस्करीति  
 तव नाम गृणाति भक्त्या श्रेयांसि तस्य सद्ने च करी पुरस्तात् ।  
 किं किं न सिध्यति सुमङ्गलनाममालां धृत्वा सुखं स्वपिति शेष-  
 तनौ रमेशः ॥ ४ ॥ श्रेयस्करीति वरदेति दयापरेति वेदोदरेति  
 विविशङ्करपूजितेति । वाणीति शम्भुरमणीति च तारिणीति श्रीदेशि-  
 केन्द्रकरुणेति गृणामि नित्यम् ॥ ५ ॥ श्रेयस्करि प्रकटमेव तवाभि-  
 धानं यत्रास्ति तत्र रविवत्प्रथमानवीर्यम् । ब्रह्मेन्द्ररुद्रमरुदादिगृहाणि  
 सौख्यैः पूर्णानि नाममहिमा प्रथितस्त्रिलोक्याम् ॥ ६ ॥ श्रेयस्करि  
 प्रणतवत्सलता त्वयीति वाचं शृणुष्व सरलां सरसां च सत्याम् ।  
 भक्त्या नतोऽस्मि विनतोऽस्मि सुमङ्गले त्वत्पादाम्बुजे प्रणिहिते मयि  
 सन्निधत्स्व ॥ ७ ॥ श्रेयस्करीचरणसेवनतत्परेण कृष्णेन भिक्षुव-  
 पुषा रचितं पठेद्यः । तस्य प्रसीदति सुरारिविमर्दनीयमम्बा तनोति  
 सद्नेषु सुमङ्गलानि ॥ ८ ॥ यथामतिकृतस्तुतौ मुदमुपैति माता  
 न किं यथाविभवदानतो मुदमुपैति पात्रं न किम् । भवानि तव  
 संस्तुतिं विरचितुं न चाहं क्षमस्तथापि मुदमेष्यसि प्रदिशसीष्टमम्ब  
 त्वरात् ॥ ९ ॥ इति श्रीमत्परमहंसश्रीकृष्णानंदसरस्वतीप्रणीतं  
 श्रेयस्करीमङ्गलस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २१०. दुर्गापद्मद्वारस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमस्ते शरण्ये शिवे सानुकम्पे नमस्ते जगद्वा-  
 पिके विश्वरूपे । नमस्ते जगद्वन्द्यपादारविन्दे नमस्ते जगत्तारिणि  
 त्राहि दुर्गे ॥ १ ॥ नमस्ते जगच्चिन्त्यमानस्वरूपे नमस्ते सहायोगिनि  
 ज्ञानरूपे । नमस्ते नमस्ते सदानन्दरूपे नमस्ते ० ॥ २ ॥ अनाथस्य  
 दीनस्य तृष्णातुरस्य भयार्तस्य भीतस्य बद्धस्य जन्तोः । त्वमेका

गतिर्देवि निस्तारकर्त्री नमस्ते० ॥ ३ ॥ अरण्ये रणे दारुणे शत्रुम-  
 ध्येऽनले सागरे प्रान्तरे राजगेहे । त्वमेका गतिर्देवि निस्तारनौका  
 नमस्ते० ॥ ४ ॥ अपारे महादुस्तरेऽत्यन्तघोरे विपत्सागरे मज्जतां  
 देहभाजाम् । त्वमेका गतिर्देवि निस्तारहेतुर्नमस्ते० ॥ ५ ॥ नमश्चण्डिके  
 चण्डदुर्दण्डलीलासमुखिण्डिताखण्डिताशेषशत्रो । त्वमेका गतिर्देवि  
 निस्तारबीजं नमस्ते० ॥ ६ ॥ त्वमेवावभावाधृतासत्यवादीर्न जाता-  
 जिताक्रोधनात्क्रोधनिष्ठा । इडा पिङ्गला त्वं सुषुम्णा च नाडी नमस्ते०  
 ॥ ७ ॥ नमो देवि दुर्गे शिवे भीमनादे सरस्वत्यरुन्धत्यमोघस्वरूपे ।  
 विभूतिः शची कालरात्रिः सति त्वं नमस्ते० ॥ ८ ॥ शरणमसि सुराणां  
 सिद्धविद्याधराणां मुनिमनुजपशूनां दस्युभिस्त्रासितानाम् । नृपति-  
 गृहगतानां व्याधिभिः पीडितानां त्वमसि शरणमेका देवि दुर्गे  
 प्रसीद ॥ ९ ॥ इदं स्तोत्रं मया प्रोक्तमापदुद्धारहेतुकम् । त्रिस-  
 न्ध्यमेकसन्ध्यं वा पठनाद् घोरसङ्कटात् ॥ १० ॥ मुच्यते नात्र  
 सन्देहो भुवि स्वर्गे रसातले । सर्वं वा श्लोकमेकं वा यः पठेद्भक्ति-  
 मान् सदा ॥ ११ ॥ स सर्वं दुष्कृतं त्यक्त्वा प्राप्नोति परमं पदम् ।  
 पठनादस्य देवेशि किं न सिध्यति भूतले ॥ १२ ॥ स्तवराजमिमं  
 देवि संक्षेपात्कथितं मया ॥ १३ ॥ इति श्रीसिद्धेश्वरीतन्त्रे उमा-  
 महेश्वरसंवादे श्रीदुर्गापदुद्धारस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २११. वाग्वादिनीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीवाग्वादिनीमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः,  
 देविविजयागायत्री छंदः, वाग्वादिनी देवता, ॐ बीजम्, मौं  
 शक्तिः, ह्रीं कीलकम्, श्रीवाग्वादिनीदेवताप्रीत्यर्थं जपे विनि-  
 योगः । एतैर्न्यासं कृत्वा संविदपठनीयो मन्त्रं ॐ वद वद ह्रीं

वाग्वादिनीं मौं स्वाहा, इत्यनेन सप्तभिर्गृहीत्वा मंत्रं भक्षयेत् ।  
 अथवा 'ॐ जय जय विजय परब्रह्मस्वरूपिणि सर्वजनं मे वक्ष्य-  
 मानय आनंदय जंभू स्वाहा' इत्यनेन वा जप्त्वा भक्षयेत् । अथवा  
 स्वर्गृहीतमंत्रेण जपित्वा भक्षयेत् । अथानंतरतो देवीसमयास्तोत्र-  
 मुत्तमम् । यैः स्तुता सिद्धिदा मूली भक्षिता फलदा भवेत् ॥ १ ॥  
 संविदे ब्रह्मसंभूते ब्रह्मपुत्रि सदानधे । भैरवानंदग्रीत्यर्थं पवित्रा भव  
 सर्वदा ॥ २ ॥ नमामि कामिनीं नाथलेखालंकृतकुण्डलाम् । भवानीं  
 भवसंतापनिर्वापणसुधानिधिम् ॥ ३ ॥ सिद्धिमूलिप्रिये देवि हीन-  
 बोधप्रबोधिनि । राजप्रजावशंकरि कालकंठे त्रिशूलिनि ॥ ४ ॥ अज्ञाने-  
 ऽनधीतेऽपि ज्ञानाग्निज्वालरूपिणि । आनंदाद्याहुतिः प्रीतिः सम्य-  
 ग्ज्ञानं प्रयच्छ मे ॥ ५ ॥ दंडादिरूढपरिपूरितमोक्षभोगान् शुण्डक्रमेण  
 मदनांचनकामिनीं ताम् । आराधयामि बहुशत्रुपराजयंतीं विश्वेश्वरीं  
 त्रिभुवनां विजयादिदेवीम् ॥ ६ ॥ आनंदनंदिनीनंदे सदा वंदे पद-  
 द्वयम् । उल्लासकदलीकंदे स्वच्छंदे बोधरूपिणि ॥ ७ ॥ कवयः  
 कवितालहरीं कृते तत्त्वार्थदर्शनात् । आसदूरितदुरितनिलयं किं न  
 करोति सा ॥ ८ ॥ संविदासवयोर्मध्ये संविदेव गरीयसी । भक्षिता  
 भवनाशाय निर्गंधबोधरूपिणी ॥ ९ ॥ सुसंविच्छूलिनी देवी विजया  
 संविदेच्चुरी । वैष्णवी तुलसी तुंगा तेजोवल्ली रसेश्वरी ॥ १० ॥  
 वीरसूर्देवरत्ना च वीरलक्ष्मीर्महेश्वरी । शमया मोहनं चैव सिद्ध-  
 मूली महौषधी ॥ ११ ॥ मातुलानी ज्ञानरूपा सिद्धविद्या सरस्वती ।  
 यानि चैतानि नामानि सेवयेत्सिद्धमूलिकाम् ॥ १२ ॥ स प्राप्नोति  
 परां विद्यां मुक्तिं मुक्तिं च वाञ्छितम् । पाण्डित्यं च कवित्वं च  
 मंत्रसिद्धिं च विंदति ॥ १३ ॥ इति श्रीरुद्रयामलतंत्रे वाग्वादिनी-  
 स्तोत्रं संपूर्णम् ॥